ओं

महात्मन्,

यह श्रीमद्भगवद्गीता दास आप के भेंट करता है, आशा है, कि आप इस दास पर अपनी अपार कृपा रख कर अपनी उच्च उदारता का परिचय देंगे,,

तिथि ६.१२.८३

दास दीना नाथ चोपड़ा
जेनाकदल निर्वृत्ती,

# भगवद्गीतासटीक ॥

जिसमें
श्री मत्परमहंस परिब्राज श्रीस्वामी
आनन्दगिरि महाराज की बनाई
हुई श्री भगवद्गीता उपनिषदों
की भाषा टीका संयुक्त है ॥

जो

श्रीमत् ब्राह्मण वंश विद्वज्जनैर्वन्दिता श्री वैष्णव
सम्प्रदाय चन्द्रिका परमउदार श्री जानकी
देवी जी की आज्ञानुसार दिल्ली में छपी थी
वही
तीसरीबार
विष्णुभक्त उपासकों और हरिपद
प्रेमानुरागियों के अनुरागार्थ ॥

लखनऊ

मुन्शीनवलकिशोर के छापेखाने में छपी
जनवरी सन् १८८७ ई० ॥

नामकिताब

( छ )

छन्दोर्णवपिंगल

( ज )

जातकालंकार

जातकाभरण

जगद्विनोद

जातकचंद्रिका

( त )

तुलसीकृतरामायण

तयरीहुलहरूफउर्दूवना०

( द )

दुर्गास्तोत्रमूल व सटीक

दुर्गायननवकाण्ड

देवीभागवतभाषाबार-
होस्कंध

दास्तानअमीरहमज़ा

दैवज्ञाभरण

दोहावलीरत्नावली

( न )

निर्णयसिंधु

नाममाहात्म्य

नानार्थनवसंग्रहावली

नवीनसंग्रह

नवरत्नभाष्य

निघंटभाषा

नारीबोध

नामकिताब

( प )

परमार्थसार

प्रेमसागर

पारसभाग

प्रेमरत्न

प्रेमामृतसार

पद्मावतभाषा

पत्रासंवत्१९४३

पटवारियोंकीपुस्तकके
तीनों भाग

प्रबोधचन्द्रोदयनाटक

पत्रहितैषिणीना०वक्रै०

प्रेमप्रकाश

पद्यसंग्रह

( ब )

बृहज्जातक

बृहत्संहिता

बिनयपत्रिका मूल व
टीका सहित

ब्रजबिलास

ब्रजबिलाससारावली

ब्रह्मोत्तरखण्ड

बिष्णुपुराणभाषा

बाराहपुराण

बीजककबीरदास

बीजगणितदोभाग

नामकिताब

बैतालपचीसी

बकावलीसुमन

बैद्यजीवन

बैद्यमनोत्सव

बैद्यप्रिया

बालशिक्षा दो भाग

( भ )

भक्तमाल

भविष्यपुराण

भोजप्रबन्धसार

भाषाव्याकरण

भाषातत्त्वदीपिकाव्या०

भूगोलतत्त्व

भाषाचन्द्रोदय

भूगोलवर्णन

( म )

मार्कण्डेयपुराणसटीक

माधवनिदान

मुहूर्त्तचक्रदीपिका

मुहूर्त्तचिन्तामणिसटीक

मुहूर्त्तमार्तण्डसटीक

मुहूर्त्तगणपति

मुहूर्त्तदीपक

महाभारतदर्पण

तथाअलगरउन्नीसोंपर्व

महाभारतसबलसिंह

नामकिताब

कोकनाई
मिश्रितमाहात्म्य
मनमोहनी
मनमोहन
महारामायण
मनुस्मृति
मंगलकोष

( य )

याज्ञवल्क्यस्मृति
योगवाशिष्ठ
युगलसंवादबोधप्रकाश
यमुनालहरी
युगलबिलास

( र )

रेखागणितदोनोंभाग
रघुवंशसंस्कृतवभाषादो
जिल्दोंमें
रामायणमूलतुलसीकृत
मोटेअक्षरकी
रामायणमूलतुलसीकृत
रामायणतुलसीकृतमूल
छो० मैकांड
तथा मोटे औरचिकने
कागज़की
रामायणतु०कृ०छापाटैप
रामायणतुलसीकृतस०

नामकिताब

रामायणशुकदेवजी की
मै कांड
रामायणटीकारामचरण
की मैकांड
रामायणकीमानसप्रचा०
रामायण तुलसीकृतका
शब्दार्थकोष
रामा०तु०कृ०काइतिहास
रामायण तुलसीकृतकी
मानसदीपिका
रामायणकबितावलीतु-
लसीकृतमूलवसटीक
तथा श्रीवैद्यनाथजीकी
टीकासहित
रामायणगीतावलीमूल
तुलसीकृत व सटीक
श्रीमद्वाल्मीकीयरामा-
यणभाषामैकांड
रामचन्द्रिका सटीक
रामायणरामबिलास
अद्भुत रामायण
रामायणअध्यात्मबिचार
रामब्याहोत्सव
रासलीला
रामगीता
रसचंद्रोदय व रसवृष्टि
रागप्रकाश
रागसंग्रह

नामकिताब

रा०बिनुसनूकूसोकाइति
रसमंजूषा
रसायनप्रकाश
राजनीति

( ल )

लघुसिद्धांत कौमुदी
लग्नचंद्रिका
लिपिपुस्तकरसेद्दन०लक
लिंगपुराण
लोधेश्वरमाहात्म्यउर्दू
व नागरी
लक्ष्मी सरस्वती संबाद
दोनोंभाग

( श )

शार्ङ्गधरभाषाटी०स०
शिवसहस्रनाम
शनिश्चरकी कथा
शिवविवाहववंशावली
शंकर दिग्विजय
शिवपुराण भाषा
शंकरचरित्रसुधा
शृङ्गारलतिका
शिवसिंहसरोज
शृङ्गारबत्तीसी
शुकबहत्तरी
शिक्षापत्र
इत्यादि




# भगवद्गीतासटीक

## मंगलाचरण

---

### ओम् तत्सत् १ ओम् तत्सत् २ ओम् तत्सत् ३

ओम् श्रीगणेशायनमः ॥ ओम् श्री सच्चिदानन्दस्वरूप परमअनूप श्री महाराजाधिराज श्री स्वामी श्री कृष्णचंद्र जी महाराज के चरण कमलों को बारम्बार साष्टांग दण्डवत् नमस्कार करके श्री महाराजजी की कृपा और आज्ञासे परमानन्द की प्राप्तिके लिये अपनी बुद्धि के अनुसार ब्रह्म-विद्या योग शास्त्र श्री भगवद्गीता उपनिषदोंका तात्पर्यार्थ हरद्वार मथुराजी के मध्यस्थ नगर निवासियों की प्राकृत देशभाषा में निरूपण करताहूं कैसेहैं श्रीकृष्णचंद्र महाराज कि नित्यमुक्त पूरणब्रह्म सनातन उत्तम पुरुष शुद्धआत्मा स्वयंप्रकाश एकरस स्वतंत्र श्रेष्ठ परात्पर परम-पुरुष परमधाम परमगति परमपद परमपवित्र परमआत्मा निराकार नि-र्बिकार निरवयव निरंजन निर्गुण अद्वैत अरूप अखण्ड अज अमर अचल अच्युत अक्षर अव्यक्त अगोचर अप्रमेय अचिन्त्य अनन्त हैं, और भी विष्णु शिव शक्ति चिति देवादि अनन्त विशेषण हैं फिर कैसे हैं श्री महाराज कि चरणहस्त नेत्रादि अवयव अनूपम महासुन्दर मनोहर हैं जिनके पीताम्बरादि वस्त्र धनुषादि शस्त्र वंशी चकडोर मुकुट पंखमोर मकरवत् आकृतिवाले कलकुण्डल और रविवत् आकृति वाले बाले श्वेत रक्त हरित मोतियों के सहित जटित पंचरंगी मणि मोतियों की माला और अनेकरंगवाले फूलों की माला कड़े पैंजनी जड़ाऊतगड़ी पहुंची अं-गूठी छल्ले अंगदादि आभूषण धारण कर रक्खे हैं जिन्होंने बालोंमें अतर मस्तकपर केसर का प्रातिपादिक चन्द्रवत् तिलक जिसके बीच में सूर्यवत्

विन्दा चन्दन का लगा रक्खा है जिन्होंने किसी समय धूलि भस्म भी अखंड धारण रखते हैं पान इलायची चाबते रहतेहैं बाल किशोर तरुण अवस्था हैं जिनकी अकेले वा युगलरूप होकर वा स्वामी सखा बनकर बनोंमें और चित्र विचित्र मन्दिरोंमें लीला बिहार करते रहतेहैं मन्द मुसकान सहित बोलनाहै जिनका इसप्रकार अचिंत्य अलौकिक आश्चर्य अगोचर अतर्क्य अप्रमेय अनन्त प्रभाव प्रभुताशक्ति बलवीर्य्य विद्यावान् हैं जैसे अपने बलके अनुसार आकाश में पक्षी की गति है इसी प्रकार वेद शास्त्र ऋषीश्वर मुनीश्वर शेष शारदा सन्त महन्त महात्मा साधु भक्त पण्डित असंख्यात कल्पोंमें अबतक परमानन्द स्वरूप श्रीकृष्णचंद्र महाराज मेरे स्वामीके गुणों को पूर्वोक्त रीति करके वर्णन करते चलेआतेहैं तोभी पारनहीं पाते परमानन्द स्वरूप होने से श्री महाराज सबको प्यारे लगते हैं आनन्द स्वरूप से किसीका बैरनहीं किसीको आनन्द की असूया करता हुआ सुना भी न होगा और जो आनन्द पदार्थ को परमानन्द स्वरूप श्रीकृष्णचंद्र महाराजसे पृथक् एकगुण विलक्षण पदार्थ समझतेहैं और श्रीमहाराज को आनंदजनक और आनंदगुणक रूपादिमान पदार्थवत् समझतेहैं तोभी परमानंदस्वरूप श्रीकृष्णचंद्र महाराजसे सिवाय श्रेष्ठ और कोई पदार्थ आनन्दगुणक और आनन्दजनक नहीं श्री कीर्ति सत्य संतोष समता शमदमादि यह सब उसी भगवत्की बिभूतिहैं जोकदाचित् वेद शास्त्रमूर्तिमान् होकर औरशेषशारदा और ऋषीश्वरमुनीश्वरऔर वर्तमान कालमें जो सन्त महन्त पण्डित हैं यह सब मुझसे ऐसा कहैं कि परमानन्द स्वरूप श्रीकृष्णचंद्र महाराज से पृथक् श्रेष्ठस्थावर वा जंगम सावयव वा निरवयव प्रमेय वा अप्रमेय कोई और पदार्थहै प्रत्युत प्रत्यक्ष अनुभवभी करादें तौ भी मुझको उस पदार्थकी चाह नहीं और नमैं जिज्ञासा करता हूं और न कुछ इस बात के निर्णय करने में मेरा किसी से वाक्य बादहै और जो श्री महाराज भी यही कहैं तो उनका कहना मेरेशिर माथेपरहै परन्तु मुझ में तो यह सामर्थ्य नहीं कि परमानन्द स्वरूप श्री महाराजसे मैं पृथक् होजाऊं जो श्रीमहाराज यह जानें कि किसी प्रकार हमसे पृथक् हो सक्ताहै तो श्रीमहाराजमें अनन्त अचिंत्य शक्तिहै श्री महाराजही मुझको आपसे पृथक् करदें यह मेरी प्रीति नाता सम्बन्ध ऐसाहै कि जो श्रीमहाराज भी इसको कदाचित् पृथक् किया चाहें तोभी नहीं होसक्ता फिर औरोंको तो क्या सामर्थ्यहै क्योंकि यह सम्बन्ध लौकिक वैदिक नहीं कि जो शाब्द अनुमानादि प्रमाणों से जाता रहे यह

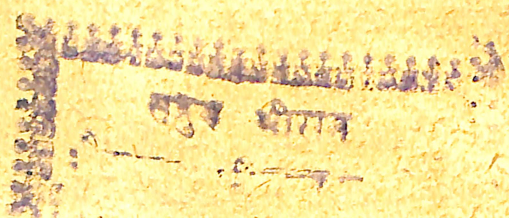
अनादि तादात्म्य सम्बन्ध है जो श्रीमहाराजमें सद्गुण समझकर मेरी प्रीतिहुई हो तो असद्गुण जानकर जाती रहे मेरी प्रीति स्वाभाविकी सनातन है प्रमाणजन्य नहीं औरजो भगवद्भक्त श्री महाराज को भक्त-वत्सलादि सद्गुणाकर लौकिक वैदिक बिद्यामें नागर राजराजेश्वर सुरेश्वर ईश्वर परमेश्वर महेश्वर परात्पर दुःखदरिद्रहर श्रीमान् समर्थवान् शोभा सुन्दरकी खानि सुकुमार परमउदार दाता जगत्का कर्ता भर्ता अन्तर्यामी जगत्स्वामी हिरण्यगर्भ बिराट बिश्वरूपादि कहकर प्रत्यक्ष शाब्द अनुमानादि प्रमाणों करके सिद्धकरते हैं ऋषीश्वर मुनीश्वरशेष शारदादि को साक्षी देतेहैं सोवे कहो समझो इसीप्रकार प्रीतिकरो उनको इतना सावकाश है मुझको तो चर्चाकरनेका वा आपसे पृथक्पदार्थमें मनलगाने का न सावकाशहै न समर्थहै मेरी प्रार्थना तो श्रीमहाराजसे यहहै किजो कुछ अबतक मुझसे मूर्खताहुई सो तो हुई और मेरेभजनेकेलिये मेरेनिमित्त अब तक जो कुछ आपको मेरी जानमें विक्षेप हुआ सो भी हुआ परंतु अब श्रीमहाराजको मेरे निमित्त किंचित् मात्रभी विक्षेप न हो मुझको यह बड़ाआश्चर्यहै कि वे कैसे आपके भक्तथे जिन्होंनेआपसे सहायचाही द्रौपदी गजेन्द्रादि की ऐसी क्या क्षतीहोती थी जो आपने प्यारेको विक्षेप दिया श्रीरामचन्द्र अवतारमें आपने हनुमान्जी से यह कहा कि हे वीर जो कुछ तुमने हमारी सहाय भक्तिकरी सो लोकोंमें प्रसिद्धहै उसके प्रत्युपकारमें यह बरदानदेताहूं कि ऐसाकोई काल न हो जो मैंतुम्हारा सहाय करूं हे भगवन् यहीमैंभी चाहताहूं औरलिखेदेताहूं कि ऐसोही आपकाचिन्तवन्और निश्चय मेरेलियेहो अबतक जोजो अनुग्रह आपने मुझपरकिये कहां तक कहूं अनन्त हैं जो कुछ आपने मेरा उपकार और उद्धार अपनी तरफ़ देखकर किया उसकी तो अवधि होचुकी और जोकुछ मुझको करना चाहिये था उसका प्रारंभ भी न होने पाया केवल अपनी राज्य करते हुयेही आपने सफल करके मुझको सनाथ और कृतार्थ करदिया जबकि यह आप की महिमा है तो मैं सिवाय आपके और किसको श्रेष्ठ उत्तम ब्रह्म परमेश्वर मानूं और इस जगह कैमुतिकन्याय है कि प्रथम मैं सकाम संसारके दुःखोंमेंदुःखी अनेक जंजाल झगड़ोंमें फँसा हुआथा एकसमय बिषयानन्दमें मनको बहलानेकेलिये आपकीलीलानुकरण और स्वरूपानुकरण को देखा मैंने सो वह अनुकरण आपके स्वरूप और लीलाके सामने लेशमात्रभी नहीं था और प्राकृत भाषामें आपके गुणों को सुना अब तक सिवाय आपकी कृपा के नहीं जानता हूं कि इसमें क्या कारणथा जो आपने

आप बिना यत्नके आपके गुण स्वरूप में प्रीति होने लगी और दुःखों की निवृत्ति और आनन्द का आविर्भाव होनेलगा तब तो मैंने केवल आपके चरित्र और गुणों के श्रवण कोही दुःखों का दूर करने वाला और परमानन्द को प्राप्त करने वाला समझा फिर ऐसा हुआ कि वेद शास्त्रों में और बड़े बड़े महात्मा सन्त महन्त पण्डितों के मुखसे आपकी बड़ाई सुनी आपका बड़ा प्रभाव सुना फिर वेद गीतादि शास्त्र और सुपात्र सज्जन आपके भक्तों को प्राणों से भी प्यारा मैंने जानकर उनमेंमन लगाया शास्त्र और सद्गुरों की कृपा और आपके प्रथम अनुग्रह से मुझको यह ज्ञानहुआ कि आपही साक्षात् परमानन्द ज्ञानस्वरूप हैं जिसके वास्ते सब लोग नानाप्रकार के यत्न करते हैं आपके जानने में कुछ भी यत्न नहीं और न किसी साधन की इच्छा है क्योंकि आप स्वयम्प्रकाश ज्ञानस्वरूप हैं आप को बुद्ध्यादि जड़ पदार्थ कैसे प्रकाश कर सक्ते हैं इस प्रकार अपने आप साक्षात् आप मुझको अनुभव अपरोक्ष हुये अब मैं भला आपसे कैसे पृथक् हो सक्ता हूं तात्पर्य जब गृहस्थ आश्रम में अनेक संसारके झगड़ों में और शास्त्रार्थ जानने के लिये मत मतांतर के झगड़ों में लगाहुआथा तबतो सबको त्यागकर आपके सन्मुख हुआ फिर अब आपसे कैसे जुदा हो सक्ता हूं +

॥ यह मंगलाचरण समाप्त हुआ ॥

---

20.63



बक्तव्य अर्थ को मनमें रखकर उसकी संगतिके लिये प्रथम और कथा कहनी उसको उपोद्घात कथा कहतेहैं तात्पर्य्य गीता और गीता पर टीका जैसे और जिसवास्ते बनी सो कथा लिखतेहैं बिना उपोद्घात कथा सुने तात्पर्यार्थ गीताका समझमें न आवेगा सोईसुनो श्रीमत्परमहंस परिब्राज श्रीस्वामी मलूक गिरिजी महाराज मुझ आनन्दगिरि इस सज्जन मनोरंजनी टीकाकार के गुरुदेवहैं उनके चरण कमलों का पूजनेवाला अनुचर शिष्यहूं में और श्रीपण्डितराज पण्डितजी श्री मोहनलाल जी महाराज रहनेवाले कुरुक्षेत्रान्तर्गत कपिस्थल नगरके मेरे विद्यागुरु हैं सुयश कीर्त्ति और माहात्म्य इनदोनों महामुनीश्वरों का वर्त्तमान काल के महात्मा सज्जनलोग सबही जानतेहैं मैं क्यालिखूं यह दोनों महाराज वर्त्तमान कालमें साक्षात् श्रीवेदव्यास भगवान् और श्रीभगवत् पूज्यपाद श्रीशंकराचार्य महाराज हैं इन दोनों महाराज और श्रीकृष्णचंद्र महाराज और श्री स्वामी आत्मागिरिजी महाराजकी कृपा सहाय से और अन्य महा पुरुषोंकी भी सहायसे मुख्य बीबी बीरा ब्राह्मणी प्रसिद्ध बीबी झुनिया देवीके निमित्त यह भाषा टीका बनाईहै जिस बीबी बीरा ने श्री बीर बिहारीजी महाराज और श्रीबीरेश्वर महादेवजी महाराज का मन्दिर सिकंदराबाद में बनाकर और विधिवत् सम्बत् १९२७ में प्रतिष्ठा करके जो कुछद्रव्य उसके पासथा जिसजगह उसका स्वत्वथा जो उसके आश्रयथा समस्त श्रीमहाराजके समर्पण करके उसीदिन विधिवत् सर्वस्व दानका संकल्प करदिया एक पुरानी धोती अपने पासरक्खी और कुछ अपने पास नहींरक्खा फिर श्रीवृन्दाबनमें जाकर वासकिया पहलेभीपुष्करादि बहुत तीर्थोंका सेवनकिया श्रीजगन्नाथस्वामी श्रीकेदारनाथ बदरी नारायण स्वामी श्रीनाथजी के दर्शन किये ऐसे ऐसे पुण्य करनेसे उनका अन्तःकरण शुद्धहुआ और भगवत्तत्त्व जाननेकी उनको इच्छाहुई, सुखपूर्वक उनकोब्रह्मतत्त्व जाननेके लिये मुख्य बीबीबीरा ब्राह्मणीके निमित्त यह टीका बनाई गईहै विशेष करके शंकरभाष्य और आनन्दगिरि जी की टीकानुसार मैंने अर्थलिखाहै और किसी किसी जगह श्रीधरी टीकानुसार और किसी किसी जगह महापुरुषों केमुखारविन्द का श्रवण किया हुआ अर्थ और किसी किसी जगह अपनी बुद्धिके अनुसारभी लिखाहै श्री कृष्णचंद्रका अर्जुन से जैसे सम्बादहुआ प्रथम सो सुनना अवश्य है इस वास्ते वह प्रसंग लिखते हैं, श्रीकृष्णचंद्र महाराज जीके अर्जुन परमभक्त थे अर्जुन को बिना ब्रह्मज्ञान युद्धके प्रारंभ समय शोक मोह होगया श्री

महाराज उस समय अर्जुनके पासथे जानगये कि अज्ञानसे इसको यह शोक मोह हुआ है ब्रह्मज्ञान सुनाने से दूरहोगा यह बिचारकर परम-करुणा की खानि श्री भगवान् ने समस्त वेदोंका सार ब्रह्मज्ञान साधनोंके सहित उपदेश कर स्वधर्म्म में स्थित कर दिया क्योंकि विना स्वधर्म का अनुष्ठानकिये और विना अंतरङ्ग उपासना किये ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति नहीं ऐसे विक्षेप समय श्री महाराज ने जो यह ब्रह्मज्ञान अर्जुन को उपदेश किया इस का तात्पर्य यहहै कि कोई वक्ता तो ऐसी रीतिसे कथा कहतेहैं कि जोश्रोता का चित्त भले प्रकार एकाग्र हो तब वक्ता का तात्पर्य्य समझ में आताहै और किसी वक्ताकी कथा विक्षेप चित्तकोभी एकाग्र करदेतीहै सिवाय इसके महत् पुरुषोंके वाक्य में सा-मर्थ्य होती है श्रीमहाराज ने अर्जुन को ऐसी रीतिसे उपदेश किया कि क्षिप्तचित्तभी एकाग्र होजावे महात्मा सर्वज्ञजन देशकालवस्तु के सहित अधिकार समझकर कहतेहैं वेदोंमें जो विस्तारपूर्वक ब्रह्मविद्या का निरूपण है वहां देशकाल बस्तुके सहित अधिकार देखना चाहिये और गीतामें संक्षेप करके जो ब्रह्मज्ञान निरूपण कियाहै यहां भी देश काल बस्तुके सहित अधिकार देखना योग्यहै सत्ययुग द्वापर त्रेताकाल में ब्राह्मण राजा बनमें बास करके तपसे पापोंको नाश कर ब्रह्म विद्याका बिचार करतेथे अवस्था उनकी बहुत होतीथी रोगी कम होतेथे उनके वास्ते वेदोंमें बिस्तारके सहित ब्रह्मबिद्या का उपदेश युक्तहै दूसरे यह कि वह उपदेश समष्टिके वास्तेहै किसी एक अपने प्यारेके वास्ते नहीं कि जो बिचार २ अर्थ लिखाजावे और यह उपदेश एक अपने प्यारे सखा परम भक्तके वास्ते इसहेतुसे श्री महाराजने बहुत बिचारके सहित यह गीता ग्रंथ कहाहै सिवाय इसके श्री महाराजने यहभी समझा किअर्जुन से ऐसी रीतिके साथकहना चाहिये कि जो शीघ्र अर्जुनकी समझमें आ-जावे नहीं तो प्रथम हँसी हमारी है क्योंकि (**वक्तुरेवहितज्जाड्यं यत्र श्रोता न बुद्ध्यते**) तात्पर्य कहने वालेकी भाषाअच्छी नहीं कि जोश्रोता नहीं समझताहै अब भले प्रकार बिचार करना योग्यहै कि यह गीताग्रंथ कैसा उत्तमहै कि जिसके बक्ता श्रीकृष्णचंद्र महाराज पूरण ब्रह्म और श्रोता अर्जुन और वेदव्यासजी कर्ताहैं इन तीनोंकी महिमा जगत्में प्रसिद्ध है परम करुणाकर श्री वेदव्यास नागरने यह बिचारकर कि विशेष करके कलियुगमें मन्दबुद्धि आलसी कुतर्की मन्द भाग्य कम अवस्था वाले रोगी होंगे और खेती बनज नौकरी भिक्षा इन चार प्रकार की आजीविकाही में

दिन रात्रि खेवेंगे उनके उद्धार वास्तेभी यत्न करदेना योग्यहै क्योंकि कलियुगमें वेदोंका पढ़ना सुनना तो पृथक् रहा वेदोंकी पोथी भी वास्ते प्रमाण देनेके मिलनी कठिन होगी जो अर्थ जिसके मनमें आवेगा संस्कृत वा भाषाकी पोथी बनाकर कहदिया करेगा कि यह ग्रंथ अनादिहै वा वेदों के अनुसार है उसीरास्तेपर मूर्ख अनजान चलने लगेंगे वह समय अब वर्तमान हो रहाहै कैसे कि असंख्यात नाममात्रके पण्डितोंने वेद की पोथीभी नहीं देखी और बातवेदोंका प्रमाण देकर बोलतेहैं प्रत्युत बहुत लोक वेदोंसेभी परेकी बात कहतेहैं और जो जो झगड़े उपाधिजल्प बितण्डा जीवोंके आपसमें परमार्थका निर्णय करने के लिये फैलरहाहै सो प्रसिद्धहै एक जीवका एकज्ञानी शत्रु हो रहाहै और अनेक पुरुषोंकी इन झगड़ोंमें जानजाती रही और परमार्थ की जगह परमार्थ फैलगया ॥

तात्पर्य ऐसी ऐसी व्यवस्था समझकर व्यासजी ने श्रद्धावानों के लिये उसी अर्थको जो श्रीभगवान्ने युद्ध के प्रारंभ समय अर्जुन को उपदेशकिया था उसीको सबसे श्रेष्ठ समझकर युक्ति के साथ सातसौ ७०० श्लोकों में लिखकर श्रीभगवद्गीता उपनिषद् उनभगवद्गीता मंत्रों का नामरक्खा अठारह अध्याय किये हर एकअध्यायके अन्त में श्रीभगवद्गीता उपनिषद् ब्रह्मविद्या योगशास्त्र उसग्रंथ को लिखा तात्पर्य यह ग्रंथयोगशास्त्र है भोगशास्त्र नहीं और इसमें ब्रह्मविद्याका निरूपणहै कर्मउपासनायोग इस ब्रह्मज्ञानकासाधन कहाहै और यह श्रीभगवान्के कहेहुयेउपनिषद्हैं सब श्लोकइस ग्रंथके मंत्र हैं औररक्षाके लिये इसग्रंथकोमहाभारतमें जमाया उन सातसौ मंत्र में बहुतमंत्रतो साक्षात्श्रीकृष्णचंद्र महाराजजीके मुखारविन्द से प्रकट हुयेहैं और कुछ श्लोक व्यासजीके बनायेहुयेहैं इसगीताके श्लोक का चौथा भाग अर्द्धभागभी मंत्र है इसहेतु से मंत्रशास्त्र वाले इसगीताको माला मंत्र कहतेहैं और मंत्र शास्त्रकी विधिपूर्वक पाठकरतेहैं जो सकाम पाठ करतेहैं उनको तो मनवांछित फल होताहै और जोनिष्काम पाठ करतेहैं उनका अन्तःकरण शुद्ध होकर ब्रह्मज्ञान द्वारा उनको परमानन्द की प्राप्ति होतीहै गीता माहात्म्यके ग्रंथ बहुतहैं उनमें एकएक अध्याय के श्रवण पाठ करनेका माहात्म्य और अर्द्ध अर्धार्द्ध श्लोकोंके पढ़ने सुननेका माहात्म्य जुदा जुदा इतिहासों के सहित लिखाहै उनग्रंथोंसे प्रतीत होताहै कि असंख्यात पापी अंत्यज दुराचार प्रत्युत पशुपक्षी भूत प्रेत राक्षसादि गीताजीके एक एक अध्याय आधे आधे श्लोकोंको पक्षी राक्षसोंके मुखसे अनजान में अश्रद्धापूर्वक श्रवण करके और गीता पाठीको चिताके

धूम और उसके देहकोभस्मका स्पर्शकरके और उसकेअस्थिसम्बन्धि जलका स्पर्शकर अन्तकाल में परमपद को प्राप्त हुये यहां कैमुतिकन्यायहै किजो अधिकारी विधिश्रद्धा सहित श्रोत्रीय ब्रह्मनिष्ठोंसे पढ़ते सुनते हैं वे मुक्त होजावें तो इसमेंक्या कहनाहै जिसको इतिहासोंके सहित गीतामाहात्म्य के श्रवण करनेकी इच्छाहोवे तो पद्मपुराणमें पृथक् पृथक् अठारह अध्यायों के अठारहमाहात्म्यहैं लक्ष्मीनारायण का और सदाशिव पार्वती जीका सम्वादहै उसमें और स्कन्दादि पुराणों में भी बहुतहैं सिवाय इस के प्रत्यक्ष प्रमाणमें किसी और प्रमाणकी कुछ इच्छा नहीं होती बहुत महात्मा वर्तमान कालमें प्रत्यक्षदेखलो कि जो केवल गीताजीके प्रतापसे महात्मा सन्त साधुसज्जन होगयेहैं इस गीता पर बावन टीका प्रसिद्धहैं और दो भाष्यहैं एक तो हनुमान् जीका बनाया हुआ और दूसरा श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीमत् शङ्कराचार्य जीका बनायाहुआ जिस पर श्री स्वामी आनन्दगिरि जीकी टीकाहै और हनुमान् भाष्यपर श्री महाराज पण्डितराज मोहन लालजीकी टीका है और श्रीसंप्रदाय और माधवी संप्रदाय और निम्बार्क संप्रदायवाले भी अपने आचार्यों के किये हुये भाष्य गीतापर कहतेहैं सो उन भाष्योंको उनकी संप्रदाय वाले पढ़ते सुनतेहैं इसीप्रकार बावन टीकासे सिवायहैं कमनहीं और देश भाषा और यामिनी भाषामें भी बहुतहैं और इस ग्रंथमें किसीप्रकारका संशय नहीं जैसे कोई मनुष्यकृत श्लोकों को श्रुति स्मृति बतादेताहै और कोईश्रुति स्मृति को मनुष्य कृत बतादेते हैं जैसे श्रीमद्भागवत को कोई कहते हैं कि यही व्यासकृत है और कोई कहतेहैं कि भगवति भागवत व्यासकृत है यह मनुष्य कृतहै तात्पर्य गीता ऐसा ग्रंथनहीं इस ग्रंथको अन्य द्वीपोंके निवासी भी सब ग्रंथों से श्रेष्ठ बताते हैं सिवाय इसके बड़े बड़े पण्डित साधु विरक्त षट्शास्त्रों के पढ़ेहुये कि जो राजलक्ष्मी पुत्रादि पदार्थों को त्यागकरके ब्रह्मलोकादिको तृणकी बराबर समझकर बनबास करतेहैं वे भी एक पुस्तक गीताजी की अवश्य अपनेपास रखतेहैं सदा पाठकरते रहते हैं तात्पर्य जितनी स्तुति महिमा श्री भगवद्गीता जी की लिखी जावै वहकमसे भी कमहै जिसकी परमानन्द की इच्छाहो वह श्रद्धा विधि सहित श्रोत्रीय ब्रह्मनिष्ठोंसे गीता पढ़े सुने नित्यपाठकरे ॥ धर्म्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे इस श्लोक से पूर्व्व जो नव श्लोक अंग करन्यासादिके जो मंत्र हैं वे सातसौ श्लोकों की संख्या से पृथक् सिवाय हैं उनके सहित पाठ करना योग्य है धर्म्मक्षेत्रे यहां से लेकर दूसरे अध्याय के दश श्लोक

तक सत्तावन श्लोक कृष्णार्जुन सम्बाद की सङ्गति के लिये हैं फिर समस्त गीता में मुक्ति का साक्षात् कारण केवल ज्ञाननिष्ठा का वर्णन है और ज्ञाननिष्ठाका उपाय कर्म्मनिष्ठा का निरूपण है समस्त गीता शास्त्रमें ये दो निष्ठा हैं उपासना का कर्मनिष्ठाही में अन्तर्भाव है प्रथम के छः अध्यायों में कर्मकाण्डका वर्णनहै और सातवें अध्यायमें बारहतक उपासना का वर्णन है और तेरह से अठारह तक ज्ञाननिष्ठा का निरूपण है जैसे वेदों में कर्म उपासना ज्ञान तीनकाण्ड हैं ऐसेही गीता जी में तीन काण्ड हैं ये तीनोंकाण्ड परस्पर सापेक्ष हैं अर्थात् स्वतंत्र ये तीनों मुक्तिके कारणनहीं कर्म तो उपासना ज्ञानकी अपेक्षा रखताहै और उपासना प्रथम कर्मको और फिर ज्ञानकी अपेक्षा रखताहै और ज्ञान प्रथम कर्म उपासना दोनोंकी अपेक्षा रखताहै कर्म करनेसे अन्तःकरण शुद्ध होताहै उपासना से चित्त एकाग्र होताहै फिर ज्ञानद्वारा मुक्तिहोतीहै इसप्रकारये तीनों काण्ड परस्पर सापेक्ष हैं इसको क्रमसमुच्चय कहतेहैं सम समुच्चय इसको समझना न चाहिये क्योंकि एक कालमें एक पुरुष से कर्मनिष्ठा और ज्ञान निष्ठा इन दोनोंका अनुष्ठान नहीं होसक्ता इनका स्थित गतिवत् विरोध है कर्त्ताभी और अकर्त्ताभी एक कालमें कैसे समझाजावे तात्पर्य्य यह है कि प्रथम कर्मनिष्ठा मुख्यरहतीहै और ज्ञाननिष्ठा गौण ॥ जब कर्मनिष्ठा परिपाक होजाती है तब ज्ञाननिष्ठा मुख्य होजातीहै और कर्मनिष्ठा गौण फिर ज्ञाननिष्ठा परिपाक होकर समस्त दुःखोंको मूलके सहित नाश करके परमानन्दको प्राप्तकरदेती है सब संत महंत महात्मा वेदशास्त्रोंका यही सिद्धान्त है ॥ यह नियम है कि महा वाक्यार्थज्ञान के बिना मुक्ति कभी नहीं होती है और महावाक्यार्थ का ज्ञान जब होता है प्रथम पदार्थ का ज्ञान होजावे महावाक्यमें तीनपदहैं ॥ तत् १ त्वम् २ असि ३ तत् और त्वम् इन पदों का अर्थ वाच्य और लक्ष्यभेद से दो दो प्रकार हैं श्री भगवद्गीतामें बिचारना चाहिये कि महावाक्यार्थ किस प्रकार और कहां निरूपण हुआ सोसुनो समस्तगीतामें महावाक्यार्थही श्रीमहाराजने निरूपण किया है ॥ तत्रतु प्रथमेकाण्डे कर्मतत्त्याग वर्त्मना त्वंपदार्थो विशुद्धात्मासोपपत्तिनिरूप्यते १ अ० प्रथमकाण्डमें कर्मकरना उसकेफल को न चाहना संग आशक्ति रहित कर्म करना इस मार्ग करके त्वंपद का अर्थ दोप्रकार का वाच्य और लक्ष्य निरूपण किया है शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप जीवका त्वम् पदका लक्ष्यार्थ है और अविद्या में और अविद्या के कार्य गुण कर्म फलमें जो सक्त सोत्वम् पदका वाच्यार्थ है १ द्वितीये भ-

भगवद्भक्ति निष्ठा वर्णन वर्त्मना भगवान् परमानन्दस्तत्पदार्थो विधीयते २ अ० दूसरे काण्ड में भक्तिनिष्ठा मार्ग करके तत्पद का अर्थ निरूपण किया अर्थात् श्री भगवान् को परमानन्द स्वरूपादिमान जो कहा सो तो तत्पद का लक्ष्यार्थहै और सर्वज्ञ सर्व शक्तिमान कर्त्ता हर्त्तादि स्वरूप भगवत् का तत्पद का वाच्यार्थ है २ तृतीयेतुतयोरैक्यं वाक्यार्थोवर्णितः स्फुटः एवमप्यत्र काण्डानां सम्बन्धोस्ति परस्परम ३ अ० तीसरे काण्ड में दोनों पदोंकी एकतालक्ष्यार्थ में निरूपणकरी सब क्षेत्रों में क्षेत्रज्ञ मुझकोही जान तू इत्यादि श्लोकों करके स्पष्टमहावाक्यार्थ निरूपणकिया इसप्रकार तीनों काण्डोंका परस्पर सम्बन्ध है ३ ॥

## अथ संकेत लिख्यते ॥

इस टीकामें जो संकेत हैं उनको प्रथमकण्ठ करलेनायोग्यहै क्योंकि हर एक जगह काम पड़ेगा सोई लिखते हैं॥ मू० यहमूलकासंकेत है ॥ अ० यह अर्थ का संकेत है ॥ सि० । यह सिवायका संकेत है जो अर्थ मूल पदसे सिवाय श्लोकार्थ के बीच में लिखाहै वह इस + फूल के संकेत पर्यन्त होगा ॥ टी० यह टीकाका संकेत है जिस जगह पद का अर्थ भले प्रकार नहीं लिखागया उसको फिर टीकामें बिस्तारसहित लिखा है ॥ पू० यह संकेत पूर्णका है पदके पूर्ण करने के लिये चकार एवकारादि श्लोकमें प्रायशः लिखेहोतेहैं किसीजगहअर्थभी देतेहैं जिस जगह पद पूर्णार्थ चकारादि होंगे वहां अर्थ में । पू० यहसंकेतलिखाहोगा ॥ उ० यहसंकेतउत्थानिका और उपोद्घातकाहै++यह संकेत श्लोक के अंकका है पाठ करनेके समय सि० मू० टी० इन संकेतोंको मनमेंही समझ लेना उच्चारण नहीं करनातात्पर्य इन संकेतों को छोड़कर शेषका उच्चारण करना योग्यहै ॥ अर्थ तो सब पदोंका लिखाजावेगा परंतु टीका सब पदों की न होगी ॥

## देश भाषाकी स्तुति ॥

प्रथम देश भाषा सुनकर मुझको बोध हुआ है इस हेतुसे मुझकोदेश भाषा प्रिय लगती है मनुष्यलोक में देव भाषा तो कोईकोईबोलते समझते हैं प्रायशः सब प्राकृत देश भाषा बोलते समझते हैं और इस लोक में यह चाल है कि जो देशभाषा के ग्रंथों को पढ़ाते सुनाते हैं तो अर्थ उनका देशभाषाही में समझाते हैं और प्रसिद्ध है कि असंख्यात सन्त महात्मा साधु देशभाषामेंही भगवत् के गुणानुबाद सुनकर भगवत् को

प्राप्त हुये और असंख्यात जन वर्तमान काल में भगवत् के सन्मुख हैं मैं नहीं जानता कि कोई २ मूर्ख भाषा की निन्दा क्योंकरताहै और अपनी हंसी कराकर क्यों पाप का भागी होता है हँसी तो उसकी ऐसी होती है कि एक आदमी देवभाषा में कथा बांचता हुआ देशभाषा में अर्थ समझाता था वह बक्ता देशभाषा में बोला कि देश भाषाका प्रमाण नहीं उसका पढ़ना सुनना निष्फल है यह सुनकर समझने वाले श्रोता सब उठ खड़ेहुये और देशभाषामें कहनेलगे कि बक्तातोबड़ाही मूर्ख है बक्ता को क्रोध आगया सुननेवालों को नास्तिक मूर्ख शूद्र वर्णसङ्कर यह कहकर देश भाषामें गाली देनेलगा सुनने वालोंने बक्तासे कहा कि सुनो महाराज हमारे तो देशभाषा प्रमाण सफल है गालियोंका फल दुःखहमको होता है और तुम्हारे तो देशभाषा प्रमाणनहीं निष्फल है तुमने हमारे कहनेका क्यों बुरामाना और हमतोतेरे कहने में बदतो व्याघात दोष समझकर और तुझकोकृतघ्नी समझकर उठखड़ेहुये जो बोलता है उसीकी बुराई करता है जिस देश भाषाकी कृपासे तेरे अनेक व्यवहार सिद्ध होते हैं उसके उपकार को नहीं मानता प्रत्युत असूया करता है यह सुनकर वह बक्ता चुपहुआ फिर सब श्रोता उसकी हँसी करते हुये चले गये अकेले बक्ता जी बकते रहे और पाप का भागी ऐसे होता है कि जिसे देवभाषा समझने की तो सामर्थ्य नहीं उसको देशभाषा से भी हटादेना कितना बड़ा अनर्थ है इसमें सन्देह नहीं कि देवभाषा मुमुक्षु के लिये अत्यंत हितकारी है परंतु मन्दमति क्या करे प्रायशः चारों वर्ण जो अपने धर्म इष्टदेव मत से अनजान होरहे हैं और अन्यद्वीप निवासियों के पंजे में फँसे चलेजाते हैं इसमें यही हेतुहै कि वे लोग तो सब अपनी देश-भाषामें इष्ट उपासना को सुन पढ़कर शीघ्र समझलेते हैं और यहवर्णा-श्रमी देश भाषा को निष्फल अप्रमाण मूर्खोंसे सुनकर पशुवत् बनेरहतेहैं तात्पर्य मेरा यहहै कि जिसको देवभाषा के पढ़ने सुनने समझने की सामर्थ्य है वह तो भूलकर भी देशभाषा की पोथियोंको न पढ़े न सुने और जो असमर्थहैं वे देश को परमहितकारी समझें देशदेश भाषाभाषा में निन्दास्तुति सुनी हुई तो फलदाता है भगवत् के गुण सुने हुये स-फल क्यों न होंगे तात्पर्य देशभाषा बे सन्देह प्रमाण सफल है अबदेश भाषा में परमानन्द स्वरूप श्रीकृष्णचन्द्र महाराज जी के गुणों को साव-धान होकर सुनो जो पुरुष ब्रह्म बिद्या की प्रक्रिया को न जानताहो वह प्रथम ब्रह्म बिद्या को प्रक्रियाको याद करे तब गीता का तात्पर्य

सिद्धान्त समझ में आवेगा क्योंकि ब्रह्मविद्या वेदान्त शास्त्र में गीता सिद्धान्त ग्रंथ है प्रक्रिया के प्रकरण पृथक् हैं सज्जनमनोरंजनी इसदेश भाषा की टीका से पृथक् एक ब्रह्मविद्याकी प्रक्रिया देश भाषा में मैंनेभी वर्णन करी है जिसका नाम आनन्दामृतवर्षिणी प्रसिद्ध है उसको इस टीका का अंग और एक देश पूर्व भाग समझना योग्यहै जब कि आनन्दामृतवर्षिणी प्रक्रिया इस टीका का पूर्वभाग है इसी हेतुसे वेदांत संज्ञाका इस टीका में मैंने निरूपण नहीं किया केवल सिद्धान्त पदार्थों का निरूपण है और इसी हेतु से सज्जन विद्वान् साधु महात्मा पण्डितों से कुछ इसमें प्रार्थना नहीं करी न सम्बन्ध अधिकारि इत्यादिकों का लक्षण कहा है आनन्दामृतवर्षिणी में अधिकारि सम्बन्धादिकों का लक्षण लिख चुकाहूं सज्जन साधु अपनी सज्जनता साधुता की तरफ़ देखकर बिगड़ी अशुद्ध कविता को भी शुद्धकर देते हैं और दुष्ट शुद्धमें भी दोष निकाला करते हैं इन दोनों का यह स्वभाव अनादिअभङ्ग है सज्जन तो यह समझते हैं कि एक पुरुष से जो कुछ प्रयत्नहोसका वह उसने किया सुधारदेना हमको चाहिये निर्दोष कविता सर्वज्ञजनों की होती है असर्वज्ञ के कहने में जो दोष प्रतीत होताहो तो उसकोग्रहण न करना चाहिये दो एक दोष प्रतीत होनेसे उसके समस्त पुरुषार्थका क्यों नाश करना चाहिये सिवाय इसके यह भी समझना चाहिये कि मुझको जो यह दोष प्रतीत होता है तो मैं सर्वज्ञ हूं वा अल्पज्ञहूं जो सर्वज्ञ गुण दोषों का निर्णय करे तब तो सबको प्रमाण होता है नहीं तो निन्दक दुष्ट कहलाता है क्योंकि गुण को गुण और दोष को दोष सर्वज्ञही नियम करके कह सक्ता है जो अभाग्य दोष निकालता है उसके बकने को मूर्ख मानता है सज्जन हंसको सदृश सारग्राही होते हैं इसीहेतुसे निन्दक दुष्टोंसे भी प्रार्थनाकरनी व्यर्थहै सज्जनोंके चरणों को नमस्कारकरके सज्जनमनोरंजनी यहश्रीभगवद्गीता उपनिषदोंकी टीका अर्थात्श्रेष्ठजनोंके मनकोरंजनआनन्ददेनेवाली टीकाका प्रारंभ करताहूं ॥

श्रीगणेशायनमः मू० ओम् १ अस्य २ श्रीभगवद्गीता मालामंत्रस्य ३ श्रीभगवान् ४ वेदव्यास ऋषिः ५ अनुष्टुपछन्दः ६ श्रीकृष्णः ७ परमात्मा ८ देवता ९ ॥ अ० यह नाम परमात्मा का है वास्ते मङ्गलाचरण के प्रथम इसको उच्चारण करते हैं १ इस २ श्रीभगवद्गीता मालामंत्र के ३ श्री भगवान् ४ वेदव्यास ऋषि ५ सि० हैं और इस माला मंत्रका अनुष्टुप् छन्द ६ सि० है और इस मंत्र के श्रीकृष्ण ७ परमात्मा ८ देवता

३ सि० हैं+ मू० अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे १ इति २ बीजम् ३ अ० यह मंत्रहै अर्थ इसका आगे लिखाजावेगा १ यह २ बीज ३ सि० है इस मालामंत्र का ॥ मू० सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज १ इति २ शक्तिः ३ अ० यह २ ॥ मंत्र १॥ शक्तिः ३ सि० है इसकी+ मू०अहंत्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि माशुच १ इति २ कीलकम् ३ अ० यह २ ॥ १ ॥ कीलक ३ सि० है इसका + मू० नैनंछिन्दन्ति शस्त्राणि नैनंदहति पावक इत्यंगुष्ठाभ्यांनमः १ अ० यह मंत्रपढ़कर दोनों हाथ की तर्जनी अंगुली से दोनों हाथके अंगूठों का स्पर्श करते हैं अंगूठे के पास जो अंगुली है उसका नाम तर्जनी है १ ॥ मू० नचैनंक्लेदयंत्यापोनशोषयतिमारुत इति तर्जनीभ्यांनमः १ अ० यहमंत्र पढ़कर दोनों अंगूठोंसे दोनों तर्जनी अंगुलियोंका स्पर्श करते हैं १ मू० अछेद्योयमदाह्योयमक्लेद्योशोष्य एवच इति मध्यमाभ्यांनमः १ अ० दोनों अंगूठों से दोनों मध्यमाका १ मू० नित्यःसर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातन इत्यऽनामिकाभ्यांनमः १ अ०दोनों अनामिका का १मू०पश्यमपार्थरूपाणिशतशोथसहस्रशः इतिकनिष्ठिकाभ्यांनमः १ अ०दोनोंकनिष्ठिका, मू०नानाविधानिदिव्यानि नानावर्णाकृतीनिच। इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः १ अ० यह मंत्र पढ़कर प्रथम दाहने हाथ के नीचे बायां हाथ रखते हैं फिरबांयें हाथ के नीचे दाहना हाथ रखते हैं यह सब बिधि गुरुके बतलाने से अच्छी तरह आजातीहै ॥ यहां तक करन्यासहुआ ॥ अब अंगन्यास के मंत्रलिखते हैं मू० नैनंछिन्दन्ति शस्त्राणीति हृदयाय नमः १ अ० यहमंत्र पढ़कर पांचों अंगुलियों से हृदयका स्पर्शकरतेहैं १ मू०नचैनं क्लेदयंत्याप इति शिरसे स्वाहा १ अ०शिरका १ मू० अछेद्यो यमदाह्योय मिति शिखायै वषट् अ०१ चोटीका १ मू० नित्यः सर्वगतःस्थाणुरिति कवचायहुम् १ अ० यहमंत्रपढ़कर दाहने हाथ से बामखवे का और बाम हाथ से दाहने खवेका स्पर्श करतेहैं १ मू० पश्यमेपार्थरूपाणीतिनेत्रत्रयायवौषट् १ अ० दाहनेहाथसेदोनोंनेत्रों को छूते हैं १ मू० नानाविधानि दिव्यानीत्यस्त्रायफट् १ अ० यह मंत्र पढ़कर दाहने हाथ हाथकी तर्जनी और मध्यमा दोअंगुली बामहाथ की हथेलीपर मारतेहैं १यहां तक अंगन्यास हुआ मू०श्रीकृष्ण प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः इति संकल्पः १ अ० यह संकल्प पढ़कर यह चिंतवन करे कि यह पाठ श्रीकृष्णचन्द्रमहाराज जी के प्रसन्न होनेकेलिये करताहूं १

**मू०** **अथ ध्यानम्** १ **अ०** संकल्पकेपीछे श्रीकृष्णचंद्रमहाराजजीका ध्यान करना योग्यहै ॥ ध्यान । कुरुक्षेत्रके अन्तर्गत ज्योतीश्वरतीर्थपर दोनोंसेना के बीच में रथपर सवार इस स्वरूप से श्रीकृष्णचंद्रभगवान् अर्जुन को ब्रह्मज्ञान सुना रहे हैं कि चरण कमलोंके अंगूठों में सोनेके छल्लेपहरे हुये चरणों में कड़े सोनेके पैंजनी चांदी सोनेकी जिसमें पंचरंगी मणिजड़ीहुई पीली धोती जिसमें रक्त किनारी लगीहुई जिसपर अनेकप्रकार और नाना रंगों के बेल बूटे बनेहुये जिसकी चमकसे चंद्र सूर्यकी ज्योति फीकी प्रतीत होतीहै पहर रहे हैं पंचरंगा बेलदार अंगरखा जिसमें कलाबतून और गोटा पट्टा जगह जगह लगा हुआ है नीचे उसके रक्त कुरता पहरे हुये गलेमें पंचरंगी मणि मोतियोंकीमाला और नानरंगके फूलोंकी माला पहर रहे हैं हाथों में सोने चांदी के छल्ले अंगूठी कड़े पहुंची बाजूबन्द जड़ाऊ पहर रहे हैं गुलेनारी डुपट्टेसे कमर कसी हुई घूंघरवाले बालों में अतर फुलेल पड़ाहुआ शिरसे बसन्ती डुपट्टा किनारीदार बँधा हुआ कानों में तीन तीन बाले रक्त श्वेत हरित मोतियोंके सहित लटकरहे हैं एक हाथमें तोछड़ीशोभित दूसरे में ज्ञान मुद्रा बनाये हुये १४—१५ वर्षकीसीअवस्थाप्रतीत होती है मन्द मुसकान सहित अर्जुनकोसमझाते हैं बिजली की तरह दांतोंकी चमक प्रातःकालके सूर्यवत् होठोंपरलाली कमलवत् बड़े बड़े नेत्र हैं जिनके जिनमें सुरमा लगाहुआ रक्तडोरे खिंचे हुये हैं भरा हुआ चेहरा चौड़ी उभरी हुई छातीहै जिनकी नील कमल नील नीरधर नीलमणिवत् रंगहै जिनका जिसमें उत्कट लाली झलकरही है प्रसन्न मुख मस्तक पर प्रातिपदिक चन्द्रवत् तिलक धारण कर रक्खाहै जिन्हों ने ऐसे श्रीकृष्णचन्द्र महाराजमेरे मनमें बास करो॥

**मू० पार्थाय प्रतिबोधिता भगवता नारायणेन स्वयं व्यासेन ग्रथिता पुराणमुनिना मध्येमहाभारते अद्वैतामृतवर्षिणीं भगवतीमष्टादशाध्यायिनी मम्बत्वा मनसा दधामि भगवद्गीतेभवद्वेषिणीम् ॥**

अम्ब १ भगवद्गीते २ त्वा ३ मनसा ४ दधामि५ नारायणेन६ भगवता ७ स्वयम् ८ पार्थाय ९ प्रतिबोधिता १० महाभारते ११ मध्ये १२ पुराणमुनिना १३ व्यासेन १४ ग्रथिता १५ अद्वैतामृतवर्षिणीम् १६ भगवतीम् १७ अष्टादशाध्यायिनीम् १८ भवद्वेषिणीम् १९+१+ **अ०** हे मात १ हे भगवद्गीते २ तुमको ३ मन करके अर्थात् मन से ४ धारण करता हूं ५ सि० हृदय

में कैसीहोतुम कि जो+नारायण भगवान् ने ६ । ७ आप ८ अर्जुन से ९ कही १० सि० और महाभारत के मध्य में ११ । १२ प्राचीन मुनि व्यास ने १३ । १४ गूंदी १५ तात्पर्य व्यास जी ने महाभारत के छठे भीष्म पर्व में श्रीभगवद्गीता ब्रह्म विद्या कही है १५ सि० फिर कैसी हो तुम हे भगवद्गीते+अद्वैत अमृत बर्षता है जिसमें १६ सि० पुनः + भगवती १७ सि० पुनः +अठारह अध्याय हैं जिसमें १८ सि० पुनः + संसार से द्वेषहै जिसका १९ सि० ऐसीतुम हो+टी० भगवान् ने जो कहे उपनिषद उनको भगवद्गीता उपनिषद कहते हैं व्याकरण की रीति से सम्बोधन में ऐसा बोलते हैं कि हे भगवद्गीते बहुत जगह इसी प्रकार अक्षरों का बदल होजाता है जैसे माता का हे माता १ । २ पूर्ण ब्रह्म का नाम नारायण है भगवान् का विशेषण है ६ ऐश्वर्य वीर्य यश लक्ष्मी ज्ञान वैराग्य इन छः का नाम भग है जिसमें यह पूर्ण हो सो भगवान् और स्त्री हो तो भगवती अथवा उत्पत्ति नाश गति अगति विद्या अविद्या इनछः को जो जानता है सोभगवान् भगवती यह ग्रंथ पूर्णब्रह्म भगवान् का कहा हुआ है इसहेतु से बहुत प्रमाणहैं ७ भेदबादी जीव ब्रह्म के भेद को सिद्धान्त कहते हैं उसका खण्डन करनेके लिये यह बिशेषण है १६ उन्नीसवें पद का यह अर्थ प्रतीत होता है कि गीता और संसार का बैरहै परन्तु यह प्रतीत नहीं होता था कि इनदोनों में बलवान् कौन है इस वास्ते यह बिशेषण है १७ तात्पर्य इसश्लोकका यहहै किगीताजी का पढ़नेवाला पाठ करनेवाला प्रथम गीताजीका ध्यान और स्तुतिकरता है हे गीते तुमको साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र ने अर्जुन से कही और व्यासजी ने महाभारत के बीचमें लिखी तुममाता सेभी सिवाय हित चाहनेवाली दुःख रूप संसार को नाश करनेवाली ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य्यादि करके युक्त हो अठारह विद्यामें जो अर्थ है सोई तुम्हारे अठारह अध्यायों में है उस अर्थके विचारने से सब वेदोंका सिद्धान्त अद्वैत जीव ब्रह्मको एकता है उसका अपरोक्ष ज्ञान होजाता है इस वास्ते हे मात तुमको मैं मनसे अपने हृदयमें धारण करता हूं + १ + मू० **नमोऽस्तुते व्यास विशालबुद्धे फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र येनत्वया भारततैलपूर्णः प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः** +२ +व्यास १ विशालबुद्धे २ फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र ३ ते ४ नमः ५ अस्तु ६ येन ७ त्वया ८ भारततैलपूर्णः ९ ज्ञानमयः १० प्रदीपः ११ प्रज्वालितः १२ + २ + अ० हे व्यास १ हे विशाल बुद्धे २ हे फुल्लारविन्दायतपत्रनेत्र ३ आपकेअर्थ ४ नमस्कार ५ हो ६ जिन

७ आपने ८ भारत तैलकरके पूर्ण ९ ज्ञानरूप १० दीपक ११ प्रज्वलितकिया जलाया १२ टी० बड़ी बुद्धि है जिनकी २ फूले कमल के चौड़े पत्र वत नेत्रहैं जिनके ३ इन दो बिशेषणों का तात्पर्य्य यह है कि भूत भविष्यत् वर्तमान काल की व्यवस्था व्यास जी सब देखते समझते हैं क्योंकि स-र्वज्ञ हैं + २ + मू० प्रपन्नपारिजाताय तोत्रवेत्रैकपाणये ज्ञान-मुद्राय कृष्णाय गीतामृतदुहेनमः + ३ + कृष्णाय १ नमः २ प्रपन्न-पारिजाताय ३ तोत्रवेत्रैकपाणये ४ ज्ञानमुद्राय ५ गीतामृतदुहे ६ + ३ + अ० श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजीको १ नमस्कार २ सि० है कैसेहैं श्रीमहाराज + भक्तों के लिये कल्पवृक्ष ३ सि० है पुनः + छड़ीएक हाथमें है जिनके ४ सि० पुनः + ज्ञानमुद्रा है जिनकी अर्थात् तर्जनी अंगुली से अंगूठा मिलायेहुये अर्जुन को समझाते हैं ५ गीतारूप अमृत दुहा है जिन्होंने ६ + ३ + मू० सर्वोपनिषदोगावो दोग्धागोपालनन्दनः पार्थोव-त्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धंगीतामृतंमहत् + ४ + सर्वोपनिषदः १ गावः २ दोग्धा ३ गोपालनन्दनः ४ पार्थः ५ वत्सः ६ सुधीः ७ भोक्ता ८ दुग्धम् ९ गीतामृतम् १० महत् ११ ४ अ० सब उपनिषद १ गौ २ अर्थात्गौओंकीसदृश हैं २ दुहनेवाले ३ श्रीकृष्णचन्द्र महाराज जी ४ अर्जुन ५ बच्छा ६ सुन्दर बुद्धिवाला ७ पीनेवाला ८ दूध ९ गीतारूपअमृत १० सि० कैसाहै यह + बड़ा ११ तात्पर्य श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजीने सब उपनिषदों का सार सारअर्थ अर्जुन के निमित्त करके शुद्धान्तः करणवालों के लिये कहा है गीताजी का अर्थ जानकर फिर सन्देह नहींरहता इस वास्ते महत् बिशेषण है और फिर शरीर धारण नहीं करता गीतापाठी इसवास्तेअमृत बिशेषण है + ४ + मू० वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् देव-कीपरमानन्दं कृष्णंवन्दे जगद्गुरुम् + ५ + कृष्णम् १ वन्दे २ जगद्गुरुम् ३ वसुदेवसुतं ४ देवम् ५ कंसचाणूरमर्दनं ६ देवकीपरमानन्दम् ७ + ५ + अ० श्रीकृष्णचन्द्रमहाराजजीको १ नमस्कारकरताहूं मैं २ सि० कैसे हैं श्रीमहाराज + जगत्के गुरू ३ वसुदेवजीके पुत्र ४ ज्ञानस्वरूप अथवा दीप्तिमान् मूर्त्तिवाले ५ कंस चाणूरके मारनेवाले ६ देवकीजी को परमा-नन्द के देनेवाले ७ श्लोक में श्लोक अवस्था का ध्यान है + ५ + मू० भीष्मद्रोणतटा जयद्रथजला गान्धारनीलोत्पला शल्यग्राहवती कृपेण वहिनी कर्णेनवेलाकुला अश्वत्थाम विकर्ण घोरमकरा दुर्यो-धनावर्त्तिनी सो त्तीर्णाखलुपाण्डवैः कुरुनदी कैवर्त्तककेशवे + ६ +

केशवे १ कैवर्तके २ खलु ३ पाण्डवैः ४ सा ५ कुरुनदी ६ उत्तीर्णा ७ भीष्मद्रोणतटा ८ जयद्रथजला ९ गांधारनीलोत्पला १० शल्यग्राहवती ११ कृपेण १२ वहिनी १३ कर्णेन १४ वेलाकुला १५ अश्वत्थाम विकर्णघोरमकरा १६ दुर्योधनावर्त्तिनी १७ + ६ + अ० श्रीकृष्णचन्द्र महाराज जो १ मल्लाहहुये सन्ते २ अर्थात् श्रीकृष्णचन्द्र मल्लाह होनेसेही १। २ निश्चय ३ पाण्डवन ने ४ सो ५ कुरुनदी ६ उतरी ७ अर्थात् पाण्डवन ने कुरुवंशी दुर्योधनादि को जीता ७ सि० कैसीहै वहनदी + भीष्म और द्रोणाचार्य्य किनारे हैं जिसके ८ जयद्रथ है जल जिसमें गांधारी के पुत्र नीले कमल हैं जिसमें १० शल्यग्राह है जिसमें ११ कृपाचार्य्य करके १२ बहनेवाली १३ कर्ण करके १४ बेल व्याप्त होरही है जिसमें १५ अश्वत्थामा और विकर्ण घोरमकर हैं जिसमें १६ दुर्योधन चक्रहै जिसमें १७ तात्पर्य्य श्रीकृष्णचन्द्र महाराजजी पाण्डवन के सहाय करने वाले थे तब पाण्डवन ने कौरवन को जीता + ६ + **मू० पाराशर्यवचः सरोजममलंगीतार्थ गन्धोत्कटं नानाख्यानककेशरंहरिकथासम्बोधनाबोधितं। लोकेसज्जनषट्पदैरहरहः पेपीयमानंमुदा भूयाद्भारत पङ्कजंकलिमलप्रध्वन्सिनः श्रेयसे** + ७ + भारतपङ्कजम् १ नः २ श्रेयसे ३ भूयात् ४ कलिमलप्रध्वन्सि ५ पाराशर्य्यवचः सरोजम् ६ अमलं गीतार्त्थ गन्धोत्कटं ८ नाना ९ आख्यनक केसरम् १० हरिकथा सम्बोधना बोधितम् ११ लोके १२ सज्जनषट्पदैः १३ अहरहः १४ मुदा १५ पेपीयमानम् १६ + ७ + अ० भारत रूप कमल १ हमारे २ कल्याण के अर्थ ३ हो ४ अर्थात् हमारा भ०ा करो २। ३।४ सि० कैसाहै सो भारत कमल+कलियुगके पापों का नाशकरने वाला ५ व्यासजी के वचन रूप सरमें जमाहै ६ सि० पुनः + निर्मल ७ गीताका जो अर्थ सोई उत्कट तीव्र गन्धहै जिसमें ८ नाना भांतिभांतिकी तरहतरहकी ९ कथाकेसर हैं जिसमें १० हरिकथ सम्बोधनों करके जाग रहाहै ११ अर्थात् श्रीकृष्णचन्द्र महाराज की कथा का जो ज्ञान समझना उस करके खिलाहुआ है १२ जगत्में १२ सज्जन रूप भ्रमर १३ आनन्द पूर्वक १४ दिनंदिन प्रति नित्य१५ सि० उस कमल के रसको + पीतेहैं १६ तात्पर्य जिस महाभारतमें भगवत् सम्बन्धी कथा है और जिसके बीचमें श्री भगवद्गीता बिराजमान है जिस को श्रेष्ठ लोग पढ़ते सुनतेहैं आनन्द सहित ऐसानिर्दोष महाभारत हमाराभलाकरो +७ + **मू० मूकं करोतिवाचालं पंगुंलंघयतेगिरिं। यत्कृपातमहं**

वन्देपरमानन्दमाधवं +८+ अहम् १ तम् २ परमानन्दमाधवम् ३ वन्दे ४ यत्कृपा ५ मूकम् ६ वाचा ७ अलम् ८ करोति ९ पंगुम् १० गिरिम् ११ लंघयते १२ +८+ अ० मैं १ तिन २ परमानन्दस्वरूप लक्ष्मी जी के पतिको ३ नमस्कार करताहूं ४ जिन की कृपा ५ गूंगे को ६ बाणी करके ७ पूर्ण ८ करदेहै ९ अर्थात् जिन की कृपासेगूंगा तरह तरहके शब्द बोलने लगताहै ९ सि० और+पंगू १० पहाड़ ११ उलंघजाता १२ अर्थात् जिन की कृपासे लँगड़े को पर्वत उलंघन करादेती है १२+८+

**मू० यंब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुतःस्तुन्वन्तिदिव्यैःस्तवैर्वेदैःसाङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्तियंसामगाः। ध्यानावस्थिततद्गतेनमनसापश्यन्तियंयोगिनोयस्यान्तंनविदुःसुरासुरगणादेवायतस्मैनमः +९+**

ब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुतः १ दिव्यैः २ स्तवैः ३ यम् ४ स्तुन्वन्ति ५ सामगाः ६ साङ्गपदक्रमोपनिषदैः ७ वेदैः ८ यम् ९ गायन्ति १० योगिनः ११ ध्यानावस्थिततद्गतेन १२ मनसा १३ यम् १४ पश्यन्ति १५ सुरासुरगणाः १६ यस्य १७ अन्तं १८ न १९ विदुः २० तस्मै २१ देवाय २२ नमः २३ +९+ अ० ब्रह्मा वरुण इन्द्र रुद्र मरुत देवता १ दिव्य २ स्तोत्रों करके ३ जिसकी ४ स्तुति करते हैं ५ साम वेदके गानेवाले ६ अङ्ग और पदक्रम के सहित जो उपनिषद हैं तिन उपनिषदों के ७ सहित वेदों करके ८ जिनको ९ गातेहैं १० योगी ११ ध्यान में मनको ठहरायकर तद्गत १२ मन करके १३ अर्थात् परमेश्वर में मन प्राप्त करके अर्थात् लगाकर १३ जिनको १४ देखते हैं १५ देवता और असुरों के गण १६ जिनके १७ अन्तको १८ नहीं १९ जानते हैं २० तिन २१ देवता के अर्थ २२ नमस्कार २३ सि० है जिस देवता को नमस्कार है सो एक है बहुवचन यहां और आगे पीछेभी आदरार्थ जानना योग्यहै +९+ मू० इतिध्यानम् १ अ० यह ध्यानसमाप्तहुआ १ ॥



## प्रारम्भप्रथमअध्याय ॥

———✱———

**धृतराष्ट्रउवाच ॥ धर्मक्षेत्रेकुरुक्षेत्रेसमवेतायुयुत्सवः । मामकाःपाण्डवाश्चैवकिंकुर्वतसंजय + १ +**

धृतराष्ट्र १ उवाच २ अ० धृतराष्ट्र १ बोलताभया २ अर्थात् राजा धृतराष्ट्र संजय से यह बोला १।२ संजय १ मामकाः २ च ३ पाण्डवाः ४ एव ५ धर्म्मक्षेत्रे ६ कुरुक्षेत्रे ७ समवेताः ८ युयुत्सवः ९ किम् १० अकुर्वत ११ +१+ अ० हे संजय १ मेरे पुत्रादि दुर्योधनादि २ और ३ पांडुके पुत्रादि पांडु युधिष्ठिरादि ४ पू० ५ पद पूर्णार्त्थ यह एव पदहै ५ धर्मभूमि ६ कुरुक्षेत्र में ७ इकट्ठे होकर ८ युद्ध की इच्छावाले ९ क्या १० करतेभये ११ अर्थात् लड़ाई हुई वा एकता हो गई १०।११ तात्पर्य्य राजा धृतराष्ट्र नेत्रहीन था इस वास्ते लड़ाई में नहीं गया था संजय राजाका सारथी राजा के पास रहा उसको व्यासजीने यह बरदान दे दियाथा कि जो व्यवस्था कुरुक्षेत्र में होगी उसको तुम इसी जगह बैठे हुये साक्षात् देखोगे जोजो व्यवस्था कुरुक्षेत्र में हुई वह सब संजयने राजा धृतराष्ट्र से कही इस हेतुसे गीता में राजा धृतराष्ट्र और संजय का भी सम्बाद है ये दोनों हस्तिनापुर में रहे अर्थात् श्रीकृष्णार्जुन के सम्बाद को संजय ने धृतराष्ट्र से निरूपण कियाहै +१+

**संजयउवाच ॥ दृष्ट्वातुपाण्डवानीकं व्यूढंदुर्योधनस्तदा । आचार्यमुपसंगम्यराजावचनमब्रवीत् + २ +**

संजय १ उवाच २ संजय १ धृतराष्ट्रसे बोला २ मू० तदा १ राजा २ दुर्योधनः ३ व्यूढम् ४ पाण्डवानीकम् ५ दृष्ट्वा ६ तु ७ आचार्य्यम् ८ उपसंगम्य ९ वचनम् १० अब्रवीत् ११ +२+ अ० सि० जिस कालमें दोनों सेन सजकर युद्धके लिये आमने सामने खड़ी हुई + तिस कालमें १ राजा २ दुर्योधन ३ सि० चक्र कमलाकारादि + रची हुई ४ पाण्डवनकी सेनाको ५ देखकर ६ फिर ७ गुरुके ८ पास जाकर ९ सि० यह + वचन १०

बोला ११ सि० कि जो आगे नव श्लोकों में अर्थ है + टी० द्रोणाचार्य्य शस्त्र विद्याके गुरुहैं ८ तात्पर्य्य दुर्योधन पांडवनकी सेनाकोभले प्रकार सजी हुई देखकर मनमें डरा और यह जाना कि जहां यह रचनाहै तो फिर ये कैसे जीते जावेंगे जो हमारे गुरू इससे सिवाय रचनारचें तब भलाई की बातहै इस वास्ते राजा गुरू के पास जाकर बोला + २ +

**पश्यैतांपाण्डुपुत्राणामाचार्य्यमहतींचमूम् । व्यूढां द्रुपदपुत्रेणतवशिष्येणधीमता + ३ +**

आचार्य्य १ पांडुपुत्राणाम् २ एताम् ३ महतीम् ४ चमूम् ५ पश्य ६ धीमता ७ तव ८ शिष्येण ९ द्रुपदपुत्रेण १० व्यूढाम् ११ + ३ + अ० हे गुरो १ पांडवनकी २ इस ३ बड़ी ४ सेनाको ५ देखो ६ बुद्धिमान् ७ आप के ८ शिष्य ९ द्रुपद के पुत्रने १० रचीहै ११ तात्पर्य्य आपका शिष्य होकर आपका सामना करता है यह देखिये + ३ + उ० और इस सेना में जो शूरवीर हैं उनको भी देख लीजिये क्योंकि यथायोग्य जोड़ी के साथ लड़ना चाहिये ॥

**अत्रशूरामहेष्वासा भीमार्जुनसमायुधि । युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्चमहारथाः + ४ +**

अत्र १ शूरा २ महेष्वासा ३ युधि ४ भीमार्जुनसमा ५ युयुधानः ६ विराटः ७ च ८ द्रुपदः ९ च १० महारथः ११ + ४ + अ० इसमें अर्थात् इस सेनामें १ सि० जो + शूर २ सि० हैं + बड़े बड़े धनुषहैं जिनके ३ युद्ध में ४ भीम अर्जुन की बराबर ५ सि० नाम उनके यहहैं + युयुधान ६ और विराट ७, ८ और द्रुपद ९, १० सि० महारथः यह सबका विशेषण है कैसे हैं ये + महारथः ११ टी० असंख्यात शस्त्रधारियों से जो युद्ध करे और अस्त्र शस्त्र विद्यामें चतुर हो उसकोअतिरथ कहते हैं और दश सहस्र से जो अकेला युद्ध करे उसको महारथ कहते हैं और जो एकसे एक लड़े उसको रथी कहते हैं, इससे कमको अर्द्धरथी कहते हैं ११ + ४ +

**धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्चवीर्य्यवान् ॥ पुरुजित्कुन्तिभोजश्चशैब्यश्चनरपुंगवः + ५ +**

धृष्टकेतुः १ चेकितानः २ काशिराजः ३ च ४ वीर्य्यवान् ५ पुरुजित् ६

कुन्तिभोजः ७ च ८ शैब्यः ९ च १० नरपुङ्गवः ११ + ५ + अ० धृष्टकेतु १ चेकितान २ और काशिका राजा ३, ४ सि० कैसेहैं ये + बलवान् ५ सि० यह सबका विशेषण है + पुरुजित् ६ कुन्तिभोज ७, ८ और शैब्य ९, १० सि० कैसे हैं ये + पुरुषों में उत्तम ११ सि० यह तीनों का विशेषण है ११ + ५ +

**युधामन्युश्चविक्रान्त उत्तमौजाश्चवीर्य्यवान्। सौभद्रोद्रौपदेयाश्च सर्वएवमहारथाः + ६ +**

युधामन्युः १ च २ विक्रांतः ३ उत्तमौजाः ४ च ५ वीर्य्यवान् ६ सौभद्रः ७ द्रौपदेयाः ८ च ९ सर्वे १० एव ११ महारथाः १२ + ६ + अ० युधामन्यु १ पू० सि० कैसाहै यह + तेजस्वीसुन्दर ३ और उत्तमौजा ४, ५ बलवान् ६ अभिमन्यु ७ और द्रौपदीके पांचोपुत्र ८, ९ सि० ये + सब १० ही ११ महारथ १२ सि० हैं + ६ +

**अस्माकन्तुविशिष्टाये तान्निबोधद्विजोत्तम। नायकाममसैन्यस्य संज्ञार्थन्तान्ब्रवीमिते + ७ +**

द्विजोत्तम १ अस्माकम् २ ये ३ विशिष्टा ४ मम ५ सैन्यस्य ६ नायका ७ तान् ८ तु ९ निबोध १० ते ११ संज्ञार्थम् १२ तान् १३ ब्रवीमिते १४ + ७ + अ० हे ब्राह्मणों में उत्तम १ हमारी २ सि० सेना में + जो ३ श्रेष्ठ ४ सि० हैं और + मेरी ५ सेनाके ६ सि० जो सरदार अग्रणी ७ तिनको ८ भी ९ देखिये १० आपसे ११ भलेप्रकार जान लेने के लिये १२ तिनको १३ अर्थात् तिनके नाम कहता हूं मैं सि० अगले श्लोक में १४ तात्पर्य्य युद्धसे प्रथमही भले प्रकार इनको समझ लेना चाहिये वास्ते युद्ध करने के + ७ +,

**भवान्भीष्मश्चकर्णश्चकृपश्चसमितिंजयः। अश्वत्थामाविकर्णश्चसौमदत्तिस्तथैवच + ८ +**

भवान् १ भीष्मः २ च ३ कर्णः ४ च ५ कृपः ६ च ७ समितिंजयः ८ अश्वत्थामा ९ विकर्णः १० च ११ सौमदत्तिः १२ तथा १३ एव १४ च १५ + ८ + अ० आप १ और भीष्म जो २, ३ और कर्ण ४, ५ और कृपाचार्य्य ६, ७ समितिंजयः ८ अश्वत्थामा ९ और विकर्ण १०, ११

सोमदत्ति १२ तैसे १३ ही १४ और १५ सि० भी बहुत शूरवीरहैं + ८ +

**अन्येचबहवःशूरा मदर्थेत्यक्तजीविताः । नानाशस्त्रप्रहरणाःसर्वेयुद्धविशारदाः + ९ +**

अन्ये १ च २ बहवः ३ शूराः ४ मदर्थे ५ त्यक्तजीविताः ६ नाना ७ शस्त्रप्रहरणाः ८ सर्वे ९ युद्धविशारदाः १० + ९ + अ० सि० जिनके नाम पीछे कहे उन्होंसे सिवाय + और १ भी २ बहुत ३ शूर ४ सि० हैं हमारी सेनामें जिन्होंने + मेरे वास्ते ५ त्याग दीहै आशा जीवनेकी ६ अनेक प्रकार के ७ शस्त्र चलाने वाले ८ सब ९ युद्धमेंचतुर १० सि० हैं + ९ + उ० इस कथा कहने से राजा दुर्योधन का जो आशय है सो कहता है ॥

**अपर्याप्तन्तदस्माकंबलंभीष्माभिरक्षितम् । पर्याप्तन्त्विदमेतेषांबलंभीमाभिरक्षितम् + १० +**

तद् १ अस्माकम् २ बलम् ३ अपर्य्याप्तम् ४ भीष्माभिरक्षितम् ५ इदम् ६ तु ७ एतेषाम् ८ बलम् ९ पर्य्याप्तम् १० भीमाभिरक्षितम् ११ + १० + अ० सि० पीछे जो कहा + सो १ हमारा २ बल ३ सि० पाण्डवनके साथ लड़ने को + असामर्थ्य है वा बहुत है ४ सि० क्योंकि + भीष्मजी करके रक्षा किया गयाहै ५ अर्थात् भीष्मजी हमारे बल की रक्षा करने वालेहैं कैसेहैं भीष्मजी वृद्ध होने से सूक्ष्म बुद्धि वाले चतुर हैं ५ सि० और + यह ६ प० ७ इनका ८ बल ९ अर्थात् पीछे जो कहा पाण्डवन बल ९ सि० सो हमारे साथ लड़ने को + असमर्थ वा थोड़ाहै १० सि० क्योंकि संख्या में भी कमहै और चंचल बुद्धिवाले + भीम करके रक्षित है ११ अथवा हमारा बल पाण्डवन के साथ लड़ने को असमर्थ प्रतीत होता है क्योंकि भीष्मजी सेनापति वृद्ध हैं और वे उभय पक्षी हैं दोनों तरफ़ मिलेहुये हैं भीष्म जी प्रत्यक्ष तो हमारी तरफ़ हैं और जय पाण्डवन की चाहतेहैं श्रीकृष्णकी प्रसन्नताके लिये ॥ और पाण्डवनका बल हमारे जीतने को समर्थ प्रतीत होता है क्योंकि भीम बलवान् जवान एक पक्षवाला सेना का सरदार है सिवाय इसके श्रीकृष्णचन्द्र उनकी सहाय करने वाले हैं + टी० ४ । १० इन दोनों पदों का अर्थ बहुत और थोड़ा वा समर्थ और असमर्थ दोनों प्रकार का होसक्ता है जो पहले पदका अर्थ थोड़ा वा असमर्थ कियाजावेगा तो पिछले पदका अर्थ बहुत वा समर्थ किया जावेगा और जो

पहले पदका अर्थ वहुत वा समर्थ कियाजावेगा तो पिछले पदका अर्थ थोड़ा वा असमर्थ कियाजावेगा ४ । १० + १० +

**अयनेषुचसर्वेषु यथाभागमवस्थिताः। भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तःसर्वएवहि + ११ +**

भवन्तः १ सर्वे २ एव ३ हि ४ अयनेषु ७ च ६ सर्वेषु ५ यथाभागम् ८ अवस्थिताः ९ भीष्मम् १० एव ११ अभिरक्षन्तु १२ + ११ + अ० सि० मेरीप्रार्थना आपसेयह है कि + आप १ सब २ पू० ३ हि ४ सब ५ पू ६ मूर्चों में ७ अपने अपने ठिकाने पर ८ खड़े हुये ९ भीष्मजीको १० पू० ११ सब तरफ़ से रक्षा करते रहिये १२ तात्पर्य ऐसा न हो कोई भीष्मजी को धोखे से मारजावे उनके जीते रहने से हमारा भला है अथवा ऐसा न हो कि भीष्म जी पांडवन से मिलकर हमारी सेना मरवा दें क्योंकि भीष्मजी दुपक्षी प्रतीत होते हैं इस वास्ते नित्य उनकी रक्षा करते रहना + ११ + उ० राजा दुर्योधन को द्रोणाचार्य जी से बात करता हुआ देख भीष्मजीने जाना कि राजा को हमारी तरफ़ से कुछ खटका प्रतीत होता है इस वास्ते पांडवन से लड़ने के लिये भीष्मजीने उठकर शंख बजादिया ॥

**तस्यसञ्जनयन्हर्षं कुरुवृद्धःपितामहः। सिंहनादंविनद्योच्चैःशंखंदध्मौप्रतापवान् + १२ +**

कुरुवृद्धः १ प्रतापवान् २ पितामहः ३ उच्चैः ४ सिंह नादम् ५ विनद्य ६ तस्य ७ हर्षम् ८ संजनयन् ९ शंखम् १० दध्मौ ११ + १२ + अ० कुरुन में बड़े १ प्रताप वाले २ भीष्म जी ३ ऊंचा ४ सिंहशब्दवत् ५ शब्द करके ६ अर्थात् बहुत हँसकर ६ तिसको ७ अर्थात् राजा को ७ हर्ष उत्पत्ति करते हुये ८ अर्थात् राजा को प्रसन्न करने के लिये शंख ८ बजाते भये ९ टी० प्रतापवान् यह शंख का भी विशेषण होसक्ता है २ तात्पर्य प्रथम भीष्म जीने प्रताप वाला शंख बजाया + १२ +

**ततःशंखाश्चभेर्य्यश्चपणवानकगोमुखाः। सहसैवाभ्यहन्यन्तसशब्दस्तुमुलोभवत् + १३ +**

ततः १ शंखाः २ च ३ भेर्य्यः ४ च ५ पणवानक गोमुखाः ६ सहसा ७ एव ८ अभ्यहन्यन्त ९ स १० शब्दः १२ तुमुलः ११ अभवत् + १३ +

अ० पीछे उसके १ शंख २ और ३ नगारे ४ और ५ ढोल आनक गोमुख ६ एक बेर ७ ही ८ सि० राजा दुर्योधन की सेना में + सब तरफ़ से बजते भये ६ सो १० शब्द १२ उस समय बड़ा ११ होता भया १३ तात्पर्य जिस समय प्रथम भीष्म जीने शंख बजाया पीछे उसके नाना प्रकार के बाजे बजने लगे + टी० यह बाजों के नाम हैं ६+ १३ +

**ततः श्वेतैर्हयैर्युक्तेमहतिस्यन्दनेस्थितौ। माधवःपाण्डवश्चैव दिव्यौशंखौप्रदध्मतुः+ १४ +**

ततः १ माधवः २ पांडवः ३ च ४ एव ५ दिव्यौ ६ शंखौ ७ प्रदध्मतुः८ महति ६ स्यन्दने १० स्थितौ ११ श्वेतैः १२ हयैः १३ युक्ते १४ + १४ + अ० उ० जब राजादुर्योधन की सेना में शंखादि बाजे बजे पीछे उसके १ सि० राजा युधिष्ठिर की सेना में प्रथम+श्री कृष्णाचंद्र महाराज २ और अर्जुन ३।४ भी ५ दिव्य अलौकिक ६ शंखों को ७ बजाते भये ८ सि० कैसे हैं अर्जुन और श्री महाराज कि एक + बड़े ६ रथमें १० सवार हैं ११ सि० कैसा है वह रथ + श्वेत १२ घोड़ों करके १३ युक्त १५ सि० है अर्थात् श्वेत घोड़े उस रथमें जुड़े हुये हैं + १४ +

**पांचजन्यंहृषीकेशो देवदत्तंधनंजयः। पौंड्रं दध्मौ महाशंखं भीमकर्मावृकोदरः + १५ +**

हृषीकेशः १ पांचजन्यम् २ धनंजयः ३ देवदत्तम् ४ वृकोदरः ४ भीमकर्मा ६ पौंड्रम् ७ महाशंखम् ८ दध्मौ ६ + १५ + अ० उ० जिन शंखोंको माधवादि ने बजाया उनके नाम कहतेहैं + इन्द्रियों के स्वामी श्रीकृष्णाचन्द्र महाराज १ पांचजन्य नाम वाले २ सि० शंख को बजाते भये + अर्जुन ३ देवदत्तनामा ४ सि० शंखको बजाते भये + भीम ५ भयंकर कर्म्म है जिस का ६ सि० सो + पौंड्र नाम है जिस का ७ सि० उस महाशंख को ८ बजाता भया ६ तात्पर्य श्रीमहाराज ने पांचजन्य शंख बजाया अर्जुन ने देवदत्त शंख बजाया भीमने पौंड्र शंख बजाया + १५ +

**अनन्तविजयंराजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः। नकुलः सहदेवश्चसुघोषमणिपुष्पकौ+ १६ +**

कुन्तीपुत्रः १ राजा २ युधिष्ठिरः३अनन्तविजयं ४ नकुलः ५ च ६ सह-

देवः ७ सुघोषमणिपुष्पकौ ८ + १६ + अ० कुन्तीकेपुत्र १ राजा २ युधिष्ठिर ३ अनन्तविजयनामा ४ सि० शंखको बजातेभये नकुल ५ और ६ सहदेव ७ सुघोष और मणिपुष्पक शंखको ८ सि० बजातेभये + राजा ने अनन्तविजय शंख बजाया नकुल ने सुघोष शंख बजाया सह० देवने मणिपुष्पक शंख बजाया + १६ +

**काश्यश्चपरमेष्वासः शिखण्डीचमहारथः। धृष्टद्युम्नोविराटश्च सात्यकिश्चापराजितः + १७ +**

काश्यः १ च २ परमेष्वासः ३ शिखण्डी ४ च ५ महारथः ६ धृष्टद्युम्नः ७ विराटः ८ च ६ सात्यकिः १० च ११ अपराजितः १२ + १७ + अ० काशीका राजा १ पू० २ श्रेष्ठ है धनुष जिसका ३ और शिखण्डी ४। ५ महारथ ६ धृष्टद्युम्न ७ और विराट ८। ६ और सात्यकी १०। ११ सि० कैसे हैं यह तीनों + अपराजित १२ सि० हैं टी० न जीतसके दूसरा जिसको उसे अपराजित कहते हैं १२ तात्पर्य्य ये सब पृथक् २ अपना २ शंख बजाते भये इस श्लोकका अन्वय अगले श्लोक के साथहै + १७ +

**द्रुपदोद्रौपदेयाश्च सर्वशःपृथिवीपते। सौभद्रश्चमहाबाहुः शंखान्दध्मुःपृथक्पृथक् + १८ +**

पृथिवीपते १ द्रुपदः २ द्रौपदेयाः ३ च ४ सौभद्रः ५ च ६ महाबाहुः ७ सर्वशः ८ पृथक् ६ पृथक् १० शंखान् ११ दध्मुः १२ + १८ + अ० उ० संजय धृतराष्ट्र से कहता है + हे राजन् १ द्रुपद २ और द्रौपदी के पांचोपुत्र ३। ४ और अभिमन्यु ५। ६ बड़ी हैं भुजा जिसकी ७ सि० ये सब और जो पीछे कहे + सबतरफ़ से ८ पृथक् पृथक् ६। १० सि० अपने अपने + शंखों ११ को बजाते भये १२ + १८ +

**सघोषोधार्त्तराष्ट्राणां हृदयानिव्यदारयत्। नभश्च पृथिवींचैव तुमुलोव्यनुनादयन् + १६ +**

सः १ घोषः २ धार्त्तराष्ट्राणाम् ३ हृदयानि ४ व्यदारयत् ५ नभः ६ च ७ पृथिवीं ८ च ६ एव १० तुमुलः ११ व्यनुनादयन् १२ + १६ + अ० सो १ घोष २ दुर्योधनादि के हृदय को ३ फाड़ताभया ४ अर्थात् दुर्योधनादि उस शब्दको सुनकर डरे मारेडर के उनका हृदय कम्पनेलगा मानो फटने लगा ५ आकाश ६ और ७ पृथ्वीको व्याप्त करके अर्थात् आकाश पृथ्वी ८ में व्याप्त होकर + पू० + ६। १० बहुत ११ शब्द पर शब्द

होताहुआ १२ सि० दुर्योधनादि के हृदयको फाड़ता भया + तात्पर्य पृथ्वीसे लेकर आकाश पर्यन्त वह शब्द व्याप्त होगया + १९ +

**अथव्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्त्तराष्ट्रान्कपिध्वजः ।**
**प्रवृत्तेशस्त्रसम्पातेधनुरुद्यम्यपाण्डवः + २० +**

अथ १ कपिध्वजः २ धार्त्तराष्ट्राणाम् ३ व्यवस्थितान् ४ दृष्ट्वा ५ शस्त्र-सम्पाते ६ प्रवृत्ते ७ पाण्डवः ८ धनुः ९ उद्यम्य १० + २० + पृथ्वीपते १ तदा २ हृषीकेशम् ३ इदम् ४ वाक्यम् ५ आह ६ अर्जुनउवाच अच्युत ७ मे ८ रथम् ९ उभयोः १० सेनयोः ११ मध्ये १२ स्थापय १३ + २१ + अ० उ० बीसवें श्लोकका इक्कीसवें श्लोकके साथ सम्बन्ध है + शंखादि का शब्द सुनकर जो व्यवस्था दुर्योधनादि की हुई सो तो कही और वोही शब्द सुनकर अर्जुन ने जो किया सो कहता है संजय धृतराष्ट्र से + जब दोनों तरफ़ बाजा बजने लगा + पीछे उसके अर्जुन २ दुर्योधनादि को ३ भले प्रकार खड़ेहुये ४ देखकर ५ शस्त्रोंका चलना ६ प्रवृत्त हुआ चाहता था अर्थात् हथियार चलाही चाहते थे उस समय ७ अर्जुन ८ धनुष को ९ उठाकर १० अर्थात् तीर कमान दुरुस्त करिके सँवारिके १० टी० हनुमान् जी अर्जुन की ध्वजामें रहतेथे इस व्युत्पत्ति से अर्जुन का नाम कपिध्वज है २ + २० + हे राजन् धृतराष्ट्र १ सि० जिस काल में हथियार चलने वाले थे + तिस काल में २ श्रीकृष्णचन्द्र महाराज से ३ यह ४ वाक्य ५ बोला ६ अर्जुन बोला + हे अच्युत ७ मेरे ८ रथको ९ दोनों १० सेना के ११ बीचमें १२ खड़ा करो १३ टी० भक्ति का प्रताप देखना चाहिये कि भक्त भगवान् पर आज्ञा करते हैं और जो भक्त चाहतेहैं वैसाही श्रीभगवान् करते हैं १३ + २०।२१ +

**हृषीकेशंतदावाक्यमिदमाहमहीपते । अर्जुनउवाच**
**सेनयोरुभयोर्मध्येरथंस्थापयमेऽच्युत + २१ +**

इस श्लोक का अन्वय और अर्थ ऊपर बीसवें मंत्रके नीचे लिखा गया॥

**यावदेतान्निरीक्षेऽहंयोद्धुकामानवस्थितान् । कैर्मया**
**सहयोद्धव्यमस्मिन्रणसमुद्यमे + २२ +**

एतान् १ योद्धुकामान् २ अवस्थितान् ३ यावत् ४ अहम् ५ निरीक्षे ६ अस्मिन् ७ रणसमुद्यमे ८ मया ९ कैः सह ११ योद्धव्यम् १२ + + २२ +

टी० कब तक वहां रथ खड़ा किया जावे यह शंका करके कहता है अर्जुन कि + अ०ये जो युद्धकी कामना वाले खड़ेहुयेहैं इनको १।२।३ जब तक ४ मैं ५ देखूं ६ अर्थात् यह मैं देखा चाहता हूं कि ६ इसरणके प्रारंभ समय ७।८ मुझको ६ किनके १० साथ ११ युद्ध करना योग्यहै १२ तात्पर्य्य अर्जुन का तमाशा देखने में नहीं है १२ + २२ +

**योत्स्यमानानवेक्षेहंयएतेऽत्रसमागताः। धार्तराष्ट्रस्यदुर्बुद्धेर्युद्धेप्रियचिकीर्षवः + २३ +**

योत्स्यमानान् १ अहम् २ अवेक्षे ३ ये ५ एते ४ अत्र ६ युद्धे ७ समागताः ८ दुर्बुद्धेः ६ धार्तराष्ट्रस्य १० प्रियचिकीर्षवः ११ + २३ + अ० सि० इन + युद्ध करने वालों को १ मैं २ देखूं ३ सि० तेकि + ये ४ जो ५ इस युद्ध में ६।७ आयेहैं ८ सि० कैसेहैं ये + दुर्बुद्धि दुर्योधन की ६।१० जय चाहते हैं ११ + २३ +

**संजयउवाच॥ एवमुक्तोहृषीकेशोगुडाकेशेनभारत सेनयोरुभयोर्मध्येस्थापयित्वारथोत्तमम् + २४ + भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषांचमहीक्षिताम्। उवाचपार्थपश्यैतान्समवेतान्कुरूनिति + २५ +**

भारत १ गुडाकेशेन २ एवम् ३ उक्तः ४ हृषीकेशः ५ उभयोः ६ सेनयोः ७ मध्ये ८ भीष्मद्रोणप्रमुखतः ६ सर्वेषाम् १० च ११ महीक्षिताम् १२ रथोत्तमम् १३ स्थापयित्वा १४ इति १५ उवाच १६ पार्थ १७ एतान् १८ समवेतान् १६ कुरून् २० पश्य २१ + २४ + २५ + अ० सि० इन दोनों श्लोकों का अन्वय एकहै + संजय धृतराष्ट्र से कहताहै + हे राजन् १ अर्जुन करके २ इस प्रकार ३ कहे हुये ४ श्रीभगवान् ५ अर्थात् अर्जुनने श्रीभगवान् से जब यह कहा कि मेरा रथ दोनों सेनाके बीच में खड़ा कीजिये यह सुनकर श्रीभगवान् ५ दोनों सेनाके ६।७ बीचमें ८ भीष्म और द्रोणाचार्य्य के सामने ६ और सब राजोंके १०।११।१२ सि० सामने + उत्तम रथको १३ खड़ा करके १४ यह १५ बोले १६ हे अर्जुन १७ इन १८ मिले हुये १६ कौरवों को २० देख २१ तात्पर्य्य ये सब योद्धा प्रत्यक्ष हैं इनको तू देख + २४ + २५ +

**तत्रापश्यत्स्थितान्पार्थःपितॄनथपितामहान्। आचा-**

**श्यानाचार्य्यान्मातुलान्भ्रातृन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा + २६ +**

अथ १ पार्थः २ तत्र ३ पितॄन ५ स्थितान् ४ अपश्यत् ६ पितामहान् ७ आचार्य्यान् ८ मातुलान् ६ भ्रातॄन् १० पुत्रान् ११ पौत्रान् १२ सखीन् १३ तथा १४ + २६ + भा० सि० ढाई श्लोक तक एक अन्वयहै + जब श्रीभगवान् ने कहा कि अर्जुन देख इनको + पीछे उसके १ अर्जुन २ तिस सेना में ३ चाचा आदिको ५ सि० युद्धके लिये + खड़े हुये ४ देखता भया ६ तात्पर्य्य अर्जुन ने चाचा आदिको देखा ६ पितामह को ७ आचार्यों को ८ मामाओं को ६ भाइयोंको १० भतीजे आदिकों को ११ पौत्रों को १२ मित्रों को १३ सि० जैसे चाचा आदिकों को देखा अर्जुन ने + तैसेही १४ सि० आचार्य्यादिकों को देखा + छठें पदवाली क्रिया का६ सब कर्मों के साथ सम्बन्ध है + २६ +

**श्वशुरान्सुहृदश्चैव सेनयोरुभयोरपि। तान्समीक्ष्यस-कौंतेयःसर्वान्बंधूनवस्थितान् + २७ + कृपयापरयावि-ष्टोविषीदन्निदमब्रवीत्। अर्जुनउवाच॥ दृष्ट्वेमंस्वजनंकृ-ष्णायुयुत्सुंसमुपस्थितम् + २८ + सीदन्तिममगात्राणिमु-खंचपरिशुष्यति । वेपथुश्चशरीरेमेरोमहर्षश्चजा-यते + २६ +**

श्वशुरान् १ सुहृदः २ च ३ एव ४ तान् ५ सर्वान् ६ बन्धून् ७ अव-स्थितान् ८ समीक्ष्य ६ उभयोः १० सेनयोः ११ अपि १२ स १३ कौंतेयः + २७ + परया १ कृपया २ आविष्टः ३ विषीदन् ४ इदम् ५ अब्रवीत् ६ अर्जुन ७ उवाच ८ कृष्ण ६ इमम् १० स्वजनं ११ युयुत्सुम् १२ + २८ + मम १ गात्राणि २ सीदन्ति ३ मुखं ४ च ५ परिशुष्यति ६ वेपथुः ६ च १० शरीरे ८ मे ७ रोमहर्षः ११ च १२ जायते + २६ + भा० श्वशुरों को और सुहृदों को २।३ भी ४ सि० देखा अर्जुन ने तिन ५ सब ६ सम्बन्धियों को ७ सि० युद्ध में मरने के लिये + जमे हुये ८ देखकरके ६ सि० वे सबकौन से हैं इस अपेक्षा में यह कहते हैं कि + दोनों १० ही ११ सेना के १२ सि० सम्बन्धियों को देख करके + सो १३ अर्जुन १४ + २७ + परम कृपा करके १।२ युक्त ३ दुःखमें भरा हुआ ४ यह ५ बोला ६ सि० जो अध्याय की समाप्ति पर्य्यन्त कहना है + अर्जुन ७ बोलता भया ८ हे

कृष्ण ८ इन अपने सम्बन्धि युद्धकी इच्छा वालों को १०।११।१२ लि० रणमें मरने के लिये + स्थित हुये १३ देखकर १४ + २८ + मेरे १ हाथ पांव आदि अंग २ ढीले हुये जातेहैं ३ और मुख ४।५ सूखताहै ६ मेरे ७ शरीरमें ८ कम्पा ६ और १० रोमावली ११ भी १२ उत्पत्ति होतीहै १३+२६+

**गाण्डीवंस्रंसतेहस्तात्त्वक्चैवपरिदह्यते। नचशक्नोम्यवस्थातुंभ्रमतीवचमेमनः + ३० +**

हस्तात् १ गाण्डीवम् २ स्रंसते ३ त्वक् ४ च ५ एव ६ परिदह्यते ७ अवस्थातुम् ८ न ६ च १० शक्नोमि ११ मे १२ मनः १३ भ्रमति १४ इव १५ च १६ + ३० + अ० लि० मेरे + हाथसे १ गाण्डीव धनुष २ गिरताहै ३ और त्वचा ४।५ भी ६ लि० मारे शोकके + जलती है ७ लि० इस युद्धमें + खड़ा रहने को नहीं समर्थहूं मैं ८।१०।११ मेरा १२ मन १३ लि० ऐसा हो रहाहै + भ्रमताहै १४ तैसे १५।१६ लि० कोई तात्पर्यमेरे मनमें नाना प्रकार के संकल्प विकल्प उत्पन्नहोतेहैं + ३० +

**निमित्तानिचपश्यामि विपरीतानिकेशव। नचश्रेयोनुपश्यामि हत्वास्वजनमाहवे + ३१ +**

केशव १ विपरीतानि २ निमित्तानि ३ च ४ पश्यामि ५ आहवे ६ स्वजनम् ७ हत्वा ८ न ६ च १० श्रेयः ११ अनुपश्यामि १२ + ३१ + अ० हे केशव १ विपरीत शकुनों को २।३ पू० ४ देखता हूं मैं ५ लि० इन हेतुसे + युद्धमें ६ अपने सम्बन्धियों को ७ मारकर ८ पीछे कल्याणनहीं देखता हूं मैं ६।१०।११।१२ तात्पर्य्य अपने सम्बन्धियोंको मारकर मुझको अपना भला नहीं प्रतीत होताहै + ३१ +

**नकांक्षेविजयंकृष्ण नचराज्यंसुखानिच। किंनोराज्येनगोविन्द किंभोगैर्जीवितेनवा + ३२ +**

अ० उ० इनको मारकर पीछे तेरी विजयहोगी तुझको राज्यमिलेगा सुख होगा यह भला होगा वा नहीं यह शंका करके कहता है हे कृष्ण १ विजय २ नहीं ३ चाहता हूं मैं ४ राज्य और सुखको ५।६ भी ७ नहीं ८।६ लि० चाहता हूं मैं+हे भगवन् १० राज्य करके ११ क्या १२ भोगों करके १३ जीवने करके १४ हमको १५ क्या १६ तात्पर्य न कुछ राज्य करने में आनन्द है केवल परमानन्द स्वरूप आत्मा के यथार्थ जानने मेंहीं परमानन्द है ऐसी समझ वाले को विवेकी कहतेहैं + ३२ +

**एषामर्थेकांक्षितन्नो राज्यंभोगाःसुखानिच । तइ-मेवस्थितायुद्धेप्राणांस्त्यक्त्वाधनानिच + ३३ +**

नः १ एषाम् २ अर्थे ३ राज्यम् ४ भोगाः ५ सुखानि ६ च ७ कांक्षितम् ८ ते ९ इमे १० युद्धे ११ प्राणान् १२ धनानि १३ च १४ त्यक्त्वा १५ अवस्थिताः १६ ॥ + ३३ + ॥ अ० हम को १ जिन २ वास्ते ३ राज्य ४ भोग ५ सुख की ६ इच्छा है ७ अर्थात् जिनके वास्ते राज्य भोग सुख हम चाहते हैं ८ वे ९ सि० ही + ये १० युद्ध में ११ प्राणों को १२ और धन को १३। १४ त्यागकर १५ अर्थात् प्राण और धनकी आशा त्याग कर वा प्राण और धनत्यागने के लिये आखड़े हैं १६ ॥ + ३३ +

**आचार्याःपितरःपुत्रास्तथैवचपितामहाः । मातुलाःश्वशुराःपौत्राःश्यालाःसम्बन्धिनस्तथा + ३४ +**

आचार्य्याः १ पितरः २ पुत्राः ३ तथा ४ एव ५ च ६ पितामहाः ७ मातुलाः ८ श्वशुराः ९ पौत्राः १० श्यालाः ११ तथा १२ सम्बन्धिनः १३ ॥ अ० उ० वे ये हैं गुरू १ चाचाआदि २ भतीजे आदि ३ पु० ४ । ५ । ६ पितामह ७ मामा ८ श्वशुर ९ पौत्र १० साले ११ सि० जैसे ये हैं + तैसेही १२ सि० और + सम्बन्धि १३ सि० हैं + ३४ +

**एतान्नहंतुमिच्छामि घ्नतोपिमधुसूदन । अपित्रैलोक्यराज्यस्य हेतोःकिंनुमहीकृते + ३५ +**

घ्नतः २ अपि ३ एतान् १ न ५ हन्तुम् ४ इच्छामि ६ मधुसूदन ७ त्रैलोक्यराज्यस्य ८ हेतोः ९ अपि १० किम् ११ नु १२ महीकृते १३ + ३५ + अ० इन मारने वालों को १ । २ भी ३ नहीं ५ मारने की ४ इच्छा करता हूं मैं ६ अर्थात् मैं यह जानता हूं कि ये दुर्योधनादि हमको मारेंगे तो भी इनके मारने की हमको इच्छा नहीं है कृष्णचंद्र ७ त्रैलोक्य राज्यके ८ हेतुसे ९ भी १० अर्थात् जो इनके मारने में मुझको तीनों लोकों का राज्य मिले तो भी इनको नहीं मारूंगा क्या ११ फिर १२ पृथिवी की प्राप्ति के लिये १३ सि० मारूं + ३५ +

**निहत्यधार्त्तराष्ट्रान्नः काप्रीतिःस्याज्जनार्दन । पापमेवाश्रयेदस्मान्हत्वैतानाततायिनः + ३६ +**

जनार्द्दन १ धार्त्तराष्ट्रान् २ निहत्य ३ नः ४ का ५ प्रीतिः ६ स्यात् ७

एतान् ८ आततायिनः ९ हत्वा १० अस्मात् ११ पापम् १२ एव १३आ-श्रयेत् १४+३६+ अ० हे जनार्द्दन १ दुर्योधनादि को २ मारकर ३ हम को ४ क्या ५ सुख ६ होगा ७ अर्थात् किंचित्मात्र भी सुख न होगा ७ सि० प्रत्युत + इन आततायियों को ८। ९ मारकर १० हमको ११पाप ही १२। १३ आश्रय है १४ अर्थात् उलटा हमको पापही लगेगा १५ टी० अग्नि का देनेवाला विष खिलानेवाला शस्त्र हाथमें लेकर वास्ते मारने के जो आवे धन का हरनेवाला खेत मकानादि का हरने वाला स्त्रीका हरनेवाला ये छः आततायी कहलाते हैं दुर्योधनादि में ये सब दोष थे नीति शास्त्र में लिखा है कि जो आततायी सामने आजावे तो समर्थ-वान् बिना बिचार आततायी को मारडाले मारनेवालेको दोषनहीं परन्तु इस वाक्य से विशेष वाक्य धर्म्मशास्त्र का यह है कि सदोषको भी नहीं मारना प्रत्युत वाणी से भी उसको दुःख न देना न मन में उसके बुरे करनेका संकल्प करना यही आशय अर्जुन का है ६ + ३६ +

**तस्मान्नार्हावयंहंतुं धार्त्तराष्ट्रान्स्वबान्धवान्। स्व-जनंहिकथंहत्वासुखिनःस्याममाधव + ३७ +**

तस्मात् १ स्वबान्धवान् २ धार्त्तराष्ट्रान् ३ हन्तुम् ४ वयम् ५ न ६ अर्हा ७ माधव ८ स्वजनम् ९ हि १० हत्वा ११ कथम् १२ सुखिनः १३ स्याम १४ + ३७ + अ० उ० किसी जीवमात्र को भी मारना बे योग्य है और यह तो दुर्योधनादि हमारे सम्बन्धि हैं + तिस कारण से १ अपने सम्बन्धि दुर्योधनादि के २। ३ मारने को ४ हमें ५ नहीं योग्य हैं ६। ७ अर्थात् इस योग हम नहीं कि अपनेही सम्बंधियों को मारैं ७ हे कृष्णचन्द्र ८ अपने सम्बंधियों ९ हीं को १० मारकर ११ किस प्रकार १२ सुखी १३ होंगे १४ अर्थात् अपने सम्बंधियोंको मारकर हमको किसी प्रकार भी सुख न होग १५ + ३७ +

**यद्यप्येतेनपश्यन्तिलोभोपहतचेतसः। कुलक्षयकृतं दोषंमित्रद्रोहेचपातकम् + ३८ + कथंनज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्त्तितुम्। कुलक्षयकृतंदोषंप्रपश्यद्भिर्ज-नार्दन + ३९ +**

यद्यपि १ एते २ कुलक्षयकृतम् ३ दोषम् ४ मित्रद्रोहे ५ च ६ पात-

कम् ७ न ८ पश्यन्ति ६ लोभोपहतचेतसः १० ॥ + ३८ + जनार्दन १ कुलक्षयकृतम् २ दोषम् ३ प्रपश्यद्भिः ४ अस्माभिः ५ अस्मात् ६ पापात् ७ निवर्तितुम् ८ कथम् ६ न १० ज्ञेयम् ११॥ + ३६ + अ० उ० जिस पापकातू बिचार करताहै यह ज्ञान दुर्योधनादि को भी है वा नहीं यह शंका करके कहताहै + यद्यपि १ ये २ सि० दुर्योधनादि + कुलके क्षय करने में नाश करने में जो दोष है उसको ३ । ४ और मित्रके द्रोहमें जो पातकहै उसको ५ । ६ । ७ नहीं ८ देखतेहैं ६ सि० क्योंकि + लोभ करके मैला होगया है अन्तःकरण जिनका १० तात्पर्य दुर्योधनादिका अन्तःकरण लोभ करके मैला होगया है इस हेतु से वे इन दोनों पातकों को नहीं समझतेहैं सो वे यद्यपि नहीं समझते हैं तोमत समझो + ३८ + सि० परंतु + हे कृष्णचन्द्र १ कुलक्षयकृत् दोष के २ । ३ देखनेवाले हमने ४ । ५ इस पापसे ६ । ७ निवृत्त होने को ८ किस प्रकार ६ नहीं १० जानना योग्यहै ११ तात्पर्य कुलके नाश करने में और मित्र के द्रोहमें जो दोष है उसको हम आपकी कृपासे ज्ञानचक्षुकरके देखते समझतेहैं हेभगवन् देख समझ करभी इसपाप से हम क्यों न बचें अर्थात् इसपापसे निवृत्त होनाचाहिये यह हमको जानना योग्य है + ३६ +

**कुलक्षयेप्रणश्यन्तिकुलधर्म्माःसनातनाः । धर्म्मेनष्टे कुलंकृत्स्नमधर्म्मोभिभवत्युत + ४० +**

कुलक्षये १ सनातनाः २ कुलधर्माः ३ प्रणश्यन्ति ४ धर्मे ५ नष्टे ६ कृत्स्नम् ७ कुलम् ८ अधर्म्मः ६ अभिभवति १० उत ११ ॥ + ४० + अ० कुलके नाश होनेमें १ सनातन कुलके धर्म्म २ । ३ नाश होजाते हैं ४ धर्म्म नाश होने में ५ । ६ समस्त कुल ७ । ८ अधर्म्मी ६ होजाता है १० पू० ११ + ४० +

**अधर्म्माभिवात्कृष्णप्रदुष्यन्तिकुलस्त्रियः । स्त्रीषुदुष्टासुवार्ष्णेयजायतेवर्णसंकरः + ४१ +**

कृष्ण १ अधर्म्माभिभवात् २ कुलस्त्रियः ३ प्रदुष्यन्ति ४ वार्ष्णेय ५ दुष्टासु ६ स्त्रीषु ७ वर्णसंकरः ८ जायते ६ ॥ + ४१ + अ० हे कृष्णचन्द्र १ अधर्म के बढ़ने से २ कुलकी स्त्री ३ भ्रष्ट होजाती हैं ४ हे भगवन् ५ दुष्ट स्त्रियोंके विषय ६ । ७ वर्णसंकर ८ उत्पन्न होताहै ६

टी० वृष्णि बंशमें जो उत्पन्नहो उसको वार्ष्णेय कहते हैं यह नाम श्री-कृष्णभगवान् का है ५ + ४१ +

**संकरोनरकायैवकुलघ्नानांकुलस्यच। पतन्तिपितरोह्येषांलुप्तपिंडोदकक्रियाः + ४२ +**

कुलघ्नानाम् १ कुलस्य २ च ४ संकरः ३ नरकाय ५ एव ६ एषाम् ७ पितरः ८ हि ९ पतन्ति १० लुप्तपिण्डोदकक्रियाः ११ + ४२ + अ० कुलनाश करने वालों के १ कुलका २ वर्णसङ्कर ३ भी ४ नरक के वास्ते ५ ही ६ सि० है + और + इनके ७ अर्थात् कुलघ्नों के ७ पितर ८ भी ९ पतित होजाते हैं १० अर्थात् स्वर्गते वे भी नरकमें गिरपड़तेहैं १० सि० क्योंकि + लोप होगई है पिण्ड और जलकी क्रिया जिनकी ११ अर्थात् न कोई उनका जलदाता रहता है पिण्डका देनेवाला वर्णसंकर आप भी नरक में जाता है औ जिस कुल में उत्पन्न होता है वह कुल भी नरक में जाता है ११ + ४२ +

**दोषैरेतैःकुलघ्नानां वर्णसंकरकारकैः। उत्साद्यन्ते जातिधर्म्माः कुलधर्म्माश्चशाश्वताः + ४३ +**

वर्णसंकरकारकैः १ एतैः २ दोषैः३ कुलघ्नानाम् ४ शाश्वताः ५ जातिधर्म्माः ६ कुलधर्म्माः ७ च ८ उत्साद्यन्ते ९ + ४३ + अ० वर्णसंकर करनेवाले इन दोषों ने १ । २ । ३ अर्थात् कुलका नाश करना मित्रों से कपट करना आदि जो दोषहैं इन दोषोंने ३ कुलघ्नों के ४ सनातन ५ कुलधर्म ६ और जातिधर्म ७ । ८ लोप किये हैं ९ तात्पर्य यहदोष जातिधर्म और कुलधर्मों का लोप करते हैं ९ + ४३ +

**उत्सन्नकुलधर्म्माणां मनुष्याणांजनार्दन। नरकेनियतंवासो भवतीत्यनुशुश्रुमः + ४४ +**

जनार्दन १ उत्सन्नकुलधर्म्माणाम् २ मनुष्याणाम् ३ नरके ४ नियतम् ५ वासः ६ भवति ७ इति ८ अनुशुश्रुमः ९+४४+ अ० हे जनार्दन १ लोपहोजाते हैं कुलके धर्म्म जिनके सि० ऐसे +ऐसेमनुष्यों का ३ नरक में ४ सदा ५ बास ६ होताहै ७ यह ८ पीछे सुनते हैं रहे हैं हम ९ सि० पुराणादि में + ४४ +

**अहोवतमहत्पापं कर्त्तुंव्यवसितावयं। यद्राज्यसुखलोभेन हंतुंस्वजनमुद्यताः + ४५ +**

अहोवत १ वयम् २ महत्पापम् ३ कर्तुम् ४ व्यवसिताः ५ यद् ६ राज्यसुखलोभेन ७ स्वजनम् ८ हन्तुम् ९ उद्यताः १० + ४५ + अ० उ० सन्ताप करने से भी पाप दूरहोजाता है जो आगे को पाप न करने का नियम करै यह समझ कर अर्जुन सन्ताप करता है अर्जुन ने अपने सम्बंधियों के साथ युद्ध करने का जो मनोराज्य किया इसको भी पाप समझा + बड़े कष्ट की बात है + ऐसी जगह अहोवत बोलाकरते हैं अर्जुन कहते हैं कि अहोवत १ हम २ बड़ा पापकरने को ३। ४ निश्चय हुये अर्थात् हमने बड़े पाप करने का निश्चयकिया ५ जो ६ राज्य सुखका लोभकर के ७ अपने संबंधियों के मारने को ८। ९ उद्यत हुये १० तात्पर्य अपने सम्बन्धियों के मारने के लिये हमने यत्नकिया १०। + ४५ +

**यदिमामप्रतीकारमशस्त्रंशस्त्रपाणयः। धार्त्तराष्ट्रारणोहन्युस्तन्मेक्षेमतरंभवेत + ४६ +**

शस्त्रपाणयः १ धार्तराष्ट्राः २ यदि ३ माम् ४ अप्रतीकारम् ५ अशस्त्रम् ६ रणे ७ हन्युः ८ तत् ९ मे १० क्षेमतरम् ११ भवेत् १२। + ४६ + अ० उ० प्राणधारी को प्राणसे भी श्रेष्ठ परमधर्म अहिंसा है यही समझकर अर्जुन कहता है + दुर्योधनादि २ शस्त्र है हाथ में जिनके १ जो ३ मुझ अप्रतीकार अशस्त्र को ४। ५। ६। रणमें ७ मारें ८ तो ९ मेरा १० बहुत भला ११ हो १२ टी० जो अपने साथ बुराई करे उसके साथ बुराई न करे उसको अप्रतीकार कहते हैं ५ धनुषादि शस्त्र अर्जुन ने उस समय हाथ में से रखदिये थे इस हेतु से अर्जुन ने अपने आपको अशस्त्र कहा ६। + ४६ +

**संजयउवाच॥ एवमुक्त्वार्जुनःसंख्येरथोपस्थउपाविशत्। विसृज्यसशरंचापंशोकसंविग्नमानसः + ४७ +**

अ० संजय १ उवाच २ अर्जुनः ३ संख्ये ४ एवम् ५ उक्त्वा ६ सशरम् ७ चापम् ८ विसृज्य ९ रथोपस्थे १० उपाविशत् ११ शोकसंविग्नमानसः १२

+४७+ अ० संजय धृतराष्ट्र से कहताहै १।२ सि० हेराजन् + अर्जुन ३ रणमें ४ इस प्रकार ५ कहकर ६ सि० जो पीछे कहा ५। ६और + सहित शरके ७ धनुषको ८ विसर्जन करके ६ अर्थात् कमान का चिल्ला उतार और तीर तरकस में रखकर ६ रथके पिछले भाग १० में बैठगया ११ शोकमें डूबगया है मन जिसका १२ तात्पर्य अर्जुनको उस समय शोकमोह हुआ + ४७ + इति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुनसंवादे अर्जुनविषादो नाम प्रथमः अध्यायः १ ॥

---

## द्वितीय अध्याय का प्रारम्भहुआ॥

**संजयउवाच। तंतथाकृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम्। विषीदन्तमिदंवाक्यमुवाचमधुसूदनः + १ +**

मधुसूदनः १ तं २ इदम् ३ वाक्यम् ४ उवाच ५ तथा ६ कृपया ७ आविष्टम् ८ अश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ६ विषीदन्तम् १०+१+ उ० संजय धृतराष्ट्र से कहता है कि हे राजन्+ अ० श्री भगवान् १ तिस २ सि० अर्जुन से + यह ३ वाक्य ४ बोलते भये ५ सि० कैसा है वह अर्जुन + तिस प्रकार ६ कृपा करके ७ युक्त है ८ अर्थात् जो गति अर्जुन की पिछले अध्याय में कही और + आंसू करके पूर्ण और व्याकुल हो रहे हैं नेत्र जिस के ६ अर्थात् अर्जुन के नेत्रों में आंसू भरगये और+बिषादको प्राप्तहो रहा है १० + १ +

**श्रीभगवानुवाच॥ कुतस्त्वाकश्मलमिदंविषमेसमुपस्थितम्। अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन + २ +**

अर्जुन १ त्वा २ इदम् ३ कश्मलम् ४ विषमे ५ कुतः ६ समुपस्थितम् ७ अनार्यजुष्टम् ८ अस्वर्ग्यम् ६ अकीर्त्तिकरं १० + २ + अ० हे अर्जुन १ तुम को २ यह ३ कायरपना ४ रणमें ५ कहां से प्राप्त हुआ ७ सि० कैसा है यह कायरपना + नहीं हैं श्रेष्ठ जो जन ६ उनकरके सेवन करने के योग्य है ८ अर्थात् तूतोउत्तमश्रेष्ठ है यह तेरे योग्य नहीं अश्रेष्ठों के योग्य है फिर कैसा है यह कायरपना कि + स्वर्गको प्राप्त करनेवाला नहीं ६ सि० प्रत्युत + अयशकरने वाला है १० + २ +

**क्लैब्यंमास्मगमःपार्थनैतत्त्वय्युपपद्यते। क्षुद्रंहृदय-दौर्बल्यंत्यक्त्वोत्तिष्ठपरंतप + ३ +**

पार्थ १ क्लैब्यं २ मास्मगमः ३ एतत् ४ त्वयि ५ न ६ उपपद्यते ७ परन्तप ८ क्षुद्रं ९ हृदयदौर्बल्यं १० त्यक्त्वा ११ उत्तिष्ठ १२ + ३ + अ० हे अर्जुन १ नपुंसक पने को २ मतप्राप्त हो ३ यह ४ तुझ में ५ नहीं ६ शोभा पाता है ७ हे परन्तप अर्जुन ८ नीचता को ९ और हृदय की दुर्बलता को १० त्याग करके ११ लि० युद्ध के लिये + खड़ा हो ॥ १२ + ३ +

**अर्जुनउवाच ॥ कथंभीष्ममहंसंख्येद्रोणंचमधुसूदन। इषुभिःप्रतियोत्स्यामिपूजार्हावरिसूदन + ४ +**

मधुसूदन १ संख्ये २ द्रोणं ३ च ३ भीष्मम् ४ प्रति ५ इषुभिः ६ कथं ७ योत्स्यामि ८ अरिसूदन ९ पूजार्हौ १० + ४ + अ० उ० नपुंसक पने से मैं युद्ध नहीं करता हूं यह न समझिये किंतु मुझको युद्ध करने में अन्याय प्रतीतहोताहै यह प्रकट करताहै अर्जुन + हे मधुसूदन १ रणमें २ द्रोणाचार्य ३ और ३ भीष्म पितामह के ४ प्रति ५ अर्थात् द्रोणाचार्य और भीष्म जी के साथ + बाणों करके ६ कैसे ७ युद्ध करूं ८ हे बैरियों के मारने वाले श्रीकृष्णचन्द्र ९ लि० भीष्म और द्रोणाचार्य दोनों + पूजा करनेके योग्य हैं १० तात्पर्य जिनपर फूलचढ़ने योग्य हैं उनके साथ लड़ना यह बाणी से कहना भी अयोग्य है फिर तीरों से उनके साथ कैसे लड़ना चाहिये इत्यभिप्रायः + ४ +

**गुरूनहत्वाहिमहानुभावान् श्रेयोभोक्तुंभैक्ष्यमपीहलोके। हत्वार्थकामांस्तुगुरूनिहैवभुंजीयभोगान्रुधिरप्रदिग्धान् + ५ +**

महानुभावान् १ गुरून् २ अहत्वा ३ हि ४ भैक्ष्यं ५ अपि ६ भोक्तुं ७ श्रेयः ८ इह ९ लोके १० अर्थकामान् ११ गुरून् १२ हत्वा १३ तु १४ इह १५ एव १६ रुधिरप्रदिग्धान् १७ भोगान् १८ भुंजीय १९ + ५ + अ० बड़ा प्रभाव है जिनका १ लि० ऐसे गुरुको २ न मार करके ३ हि ४ भिक्षा का अन्न ५ भी ६ भोगना ७ श्रेष्ठ है ( इस लोक में ९ । १० अर्थात् यही बातश्रेष्ठहै कि गुरूको कभी न मारना गुरू के न मारनेसे भीख मांगकर

खाना श्रेष्ठ है और + अर्थकी कामना वाले ११ गुरूको १२ मारकरके १३ तो १४ इसलोक में १५ ही १६ रुधिर रक्त के सनेहुये भोगों को १७।१८ हम भोगेंगे १६ तात्पर्य्य वे भोग हमको नरक प्राप्त करेंगे १६ टी० अर्थकामान् यह भोगों का भी विशेषण हो सक्ता है + ५ +

**नचैतद्विद्मःकतरन्नोगरीयो यद्वाजयेमयदिवानोजयेयुः। यानेवहत्वानजिजीविषामस्तेवस्थिताः प्रमुखे धार्त्तराष्ट्राः + ६ +**

नः १ कतरत् २ गरीयः ३ एतत् ४ न ५ च ६ विद्मः ७ यद्वा ८ जयेम ६ यदि १० वा ११ नः १२ जयेयुः १३ यान् १४ हत्वा १५ न १६ जिजीविषामः १७ ते १८ एव १६ धार्त्तराष्ट्राः २० प्रमुखे २१ अवस्थिताः २२ + ६ + भा० उ० पीछे बहुत जगह और इस अध्याय में भी इसी पिछले श्लोक में अर्जुन को बिपर्य्यय स्पष्ट प्रतीत होता है और इस छठे श्लोक मे संशय और इस से अगले आठवें श्लोक में अज्ञान स्पष्ट प्रतीत होता है अज्ञान संशय बिपर्य्यय ये तीनों ब्रह्मज्ञान से जाते हैं ब्रह्म बिद्या श्रवण करने से अज्ञान मनन करने से संशय निदिध्यासन करने से बिपर्य्यय का नाश होता है + अर्जुन कहता है हे भगवन् + हमको १ लि० भिक्षाका अन्न श्रेष्ठ है वा गुरू आदि को मारकर राज्य भोगना श्रेष्ठ है इन दोनों में + क्या २ श्रेष्ठ है ३ यह ४ नहीं ५ । ६ जानते हैं हम ७ लि० और जो इनके साथहम लड़ें भी तौभी हमको यह संशय है कि + यद्वा ८ लि० उनको + हम जीतेंगे ६ यदि वा १० । ११ हमको १२ वे जीतेंगे १३ लि० और जो हम उनको जीतभी लेंगे तौ भी वह हमारी जीत किसी कामकी नहीं क्योंकि + जिनको १४ मार करके १५ नहीं १६ जीनाचाहते हैं हम १७ वे १८ ही १६ दुर्योधनादि २० सन्मुख २१ लि० मरने को + खड़े हैं २२ + ६ +

**कार्पण्यदोषोपहतस्वभावःपृच्छामित्वांधर्म्मसंमूढचेताः। यच्छ्रेयःस्यान्निश्चितंब्रूहितन्मे शिष्यस्तेहं शाधिमांत्वांप्रपन्नम + ७ +**

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः १ धर्म्मसंमूढचेताः २ त्वां ३ पृच्छामि ४ मे

५ यत् ६ निश्चितम् ७ श्रेयः ८ स्यात् ९ तत् १० ब्रूहि ११ अहम् १२ ते १३ शिष्यः १४ त्वां १५ प्रपन्नम् १६ मां १७ शाधि १८ +०+ अ० उ० अर्जुन को जब अत्यन्त शोक सन्ताप हुआ और कर्त्तव्याकर्त्तव्य का विचार भी जाता रहा तब फिर धैर्य करके मनको सावधान किया और यह विचार किया कि वेदों में महात्माओं के मुख से मैंने यह सुना है कि शोकके समुद्र को आत्माका जाननेवाला तरता है धन धर्म्म कर्म्म पुत्रादि करके मोक्ष नहींहोता है जीव + तरति शोक माऽऽत्मवित् + न कर्म्मणा न प्रजया न धनेन न त्यागे नैकेन अमृतस्वमानशुः + इन श्रुतियों का अर्थ बेसन्देह सत्यहै क्योंकि धर्म्म कर्म्म में सब जानताहूं करताहूं धर्म का अवतार साक्षात् मेरेभाई हैं वेदोक्त कर्म काण्ड के जानने अनुष्ठान करने में मेरे किंचित् सन्देह नहीं और भेद उपासना परमेश्वर की भक्तिका फल साक्षात् श्रीकृष्णचंद्र महाराज मेरेस्वामी सखाभाई मेरेपास हैं तो भी यह मुझको शोक है इसी हेतु से स्पष्ट यह प्रतीत होताहै कि शोक आत्मा के ज्ञानसे ही नाश होता है वही मुझको नहीं यह पूर्वोक्त विचार कर अर्जुन ब्रह्मविद्या श्रवण करनेके लिये प्रथम ब्रह्मविद्या में अपना अधिकार प्रकट करता है दो श्लोकों में अर्थात् ब्रह्मविद्या के अधिकारों का लक्षण कहता है + दीनतारूप दोषकरके दूषित होगया है स्वभाव जिसका १ अर्थात् जो आत्माको नहीं जानता है उसको कृपण कहते हैं कृपणता कृपणपना दीनता इन सब पदोंका एक ही अर्थ है + योवाएतदक्षरमविदित्वागार्ग्यस्माल्लोकात् प्रैतिसकृपणः + यह बृहदारण्य उपनिषद् श्रुति है तात्पर्य्यार्थइसका यह है कि जो बिना आत्मज्ञान के मरजाता है वह कृपण दीन है इस पद में अर्जुन का तात्पर्य यहीहै कि मैं भी अबतक कृपण अज्ञानी हूं १ सि० और + ब्रह्म में संमूढ़ है चित्त जिसका २ सि० सो मैं + आप से बूझता हूं ४ मुझको ५ जो ६ निश्चित श्रेय ७। ८ हो ९ भी १० कहो ११ सि० शिष्य वा पुत्रसेसिवाय और + किसी से ब्रह्मज्ञान नहीं कहना यह शंकाकरके कहता है कि + मैं १२ आपका १३ शिष्य १४ सि० हूं बाणी करके + अनन्य गुरु भक्त को गुरु ने ज्ञान सुनाना योग्य है यह शंकाकरके कहता है कि + आपकी शरणागत १५। १६ सि० हूं मैं आपही मेरे रक्षा करनेवाले हैं सब प्रकार मुझको आप का ही आश्रय है आप + मुझको १७ उपदेश कीजिये १८ टी० जो धारण किया जावे उसको धर्म कहते हैं धारयतीति धर्म्मः इस व्युत्पत्तिसे धर्म्म भी एक ब्रह्मकानाम है वेदोक्त धर्म्म को तो अर्जुन

भले प्रकार जानता था उस धर्म्म में अपने को मूढ़ क्यों कहता २ एक अनित्य श्रेय होताहै जैसे ब्राह्मणादि आशीर्वाद दिया करते हैं तुम्हारा श्रेय कल्याण भलाहो ऐसे श्रेय को मैं नहीं बूझताहूं किन्तु जो निश्चय सदा बनारहै तात्पर्य मेरामोक्ष सेहै परमश्रेय मोक्षको ही कहते हैं जिस को दुःखों की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति नित्य कहते हैं उसका साधन मुख्य साक्षात् मुझ से कहो यह मेरा तात्पर्य है ७। ८ + ७ +

**नहिप्रपश्यामिममापनुद्याद्यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम् । अवाप्यभूमावसपत्नमृद्धंराज्यंसुराणामपिचाधिपत्यम् + ८ +**

भूमौ १ असपत्नम् २ ऋद्धम् ३ राज्यम् ४ च ५ सुराणाम् ६ आधिपत्यम् ७ अपि ८ अवाप्य ६ इन्द्रियाणाम् १० उच्छोषणम् ११ यत् १२ शोकम् १३ मम १४ अपनुद्यात् १५ न १६ हि १७ प्रपश्यामि १८ । + ८ + अ० उ० वेदों में यह कथाहै कि नारदजी ने सनकादिकन से यह प्रश्नकिया कि महाराज मुझको सब विद्या सांगोपांग आती हैं और जैसा उनमें कहाहै वैसा मैं अनुष्ठान करता हूं और ब्रह्मलोक के पदार्थों पर्यन्त सब पदार्थ मुझको प्राप्त हैं परंतु मेरा शोक नहींगया सनकादि महाराज ने उत्तर दिया कि आत्मविद्या तुमने नहीं पढ़ीहोगी नारदजीने कहा कि यहतो मैंने नाम भी नहीं सुना नहीं तो मैं अवश्य पढ़ता सनकादि ने नारदजीसे यह कहा कि उसी विद्या से शोकका नाशहोता है फिर नादजी ने ब्रह्म विद्या सनकादिकन से ब्रह्मजिज्ञासा करके श्रवण करी तब उनका शोक नाशहुवा यही विचार करके अर्जुन कहता है इस मंत्र में + पृथ्वीमें १ सि० तो + शत्रुरहित पदार्थों के भरेहुये राज्य को २। ३। ४ सि० प्राप्तहोकर + और ५ देवतों के ६ आधिपत्य को ७ भी ८ प्राप्तहोकर ६ सि० परलोक में + अर्थात् देवतों का अधिपति स्वामी इन्द्र ब्रह्मा विष्णु शिवादि होकर ६ इन्द्रियों का १० सुखाने वाला सन्ताप करने वाला ११ जो १२ शोक १३ मेरा १४ दूरहो नाश हो १५ सि० यह बात बिना ब्रह्म ज्ञान के + नहीं देखता हूं मैं १८ सि० क्योंकि नारदजी से वैष्णव महात्मा ने बरसों अंगोंके सहित वेद और सबविद्या शास्त्र पढ़े बरसों अनुष्ठान किये भेद भक्तिकारी ब्रह्माजी के साक्षात् पुत्र विष्णु भगवान् के परम प्यारे जब उनकाही बिना ब्रह्मविद्या शोकनाश

न हुआ तो फिर मेरा कैसेहोगा इस श्लोक से साफ़ प्रतीत होता है कि शोक आत्म ज्ञानसेही नाश होताहै सिवाय आत्मज्ञान से और कोईकर्म उपासना योगादि साक्षात् मुख्य उपाय नहीं भेदवादी उपासक जो यह कहते हैं कि केवल मूर्तिमान् विष्णु शिव राम कृष्णादि देवतों के दर्शन करने से शोक दूर हो जाता है विचार करना चाहिये कि जैसा दर्शन अर्जुन को था ऐसा तो इस समय भेद बादियों को स्वप्नमें भी होना कठिन है अर्जुन का तो शोक मोह बिना ब्रह्म विद्याके गयाही नहीं औरोंका बिना ब्रह्मज्ञान के कैसे नाशहोगा देवतों का दर्शनादि अन्तःकरण की शुद्धि में हेतु है फिर ज्ञानद्वारा मोक्षका हेतु है + ८ +

**संजयउवाच ॥ एवमुक्त्वाहृषीकेशं गुडाकेशःपरंतपः । नयोत्स्यइतिगोविन्दमुक्त्वातूष्णींबभूवह +९+**

संजय १ उवाच २ परंतपः ३ गुडाकेशः ४ हृषीकेशं ५ एवं ६ उक्त्वा ७ न ८ योत्स्येऽइति १० गोविन्दम् ११ उक्त्वा १२ तूष्णीं १३ बभूव १४ह१५ + ९ + अ० संजय धृतराष्ट्र से कहता है १ । २ सि० कि हे राजन् + परंतप ३ अर्जुन ४ श्रीकृष्णचन्द्र से ५ इसप्रकार ६ कहकर ७ सि० कि जैसे पीछेकहा + और अभी + नहीं ८ युद्ध करूंगा ९ यह १० गोविन्दजीसे ११ कहकर १२ चुप १३ होगया १४ पू० १५ टी० निद्राअर्जुनके बशमेंथी इस हेतुसे गुडाकेश अर्जुन का नामहै १४ इन्द्रियांके स्वामी हैं श्रीकृष्णचन्द्र महाराज इसहेतु से हृषीकेश श्रीमहाराजका नाम है ५ तत्वमस्यादि वेदोंके महावाक्यों करकेही श्रीकृष्णचन्द्र महाराजकी प्राप्ति होती है इस व्युत्पत्ति से श्रीमहाराजका नाम गोविन्द है ११ तात्पर्य अर्जुन का यह है कि युद्ध से प्रथम ब्रह्मज्ञान मुझ को उपदेश करदीजिये क्योंकि जो यह पूर्वोक्तअज्ञान संशयविपर्यय मेराबनारहा और मैंमारा गया तो मैं कृपण दीनही रहा मेरी परमगति न होगी बिचार करनाचाहिये कि अर्जुन कैसे संकोच असावकाश के समय ब्रह्मज्ञान श्रवण करने केलिये कैसी श्रीमहाराजसे प्रार्थना करता है मैं आपका चेलाहूं आपकी शरणागत हूं मुझको उपदेश कीजिये राज्यादि मुझको नहींचाहनेहैं अब इससमय लाला मुंशी साहूकारादि कहते हैं कि साहब शास्त्रोंके सुनने का किसको सावकाशहै यहां मरने का भी सावकाश नहीं ऐसे कामियोंके पास जब यमदूत आवेंगे तब कामकी गति उनको प्रतीतहोगी यमदूतोंसेभी यही

कहना चाहिये कि अभी हमको मरनेका सावकाश कहांहै तुमकोसूझता नहीं हम अपने काममें लगेहुये हैं जैसे गृहस्थ अतिथि अभ्यागतों से कहतेहैं + ९ +

**तमुवाचहृषीकेशःप्रहसन्निवभारत । सेनयोरुभयोर्मध्येविषीदन्तमिदंवचः + १० +**

भारत १ उभयोः २ सेनयोः ३ मध्ये ४ विषीदन्तम् ५ तम् ६ प्रहसन् ७ इव ८ हृषीकेशः ९ इदम् १० वचः ११ उवाच १२ + १० + अ० उ० जब अर्जुन चुप होगया पीछे क्या हुआ इस अपेक्षा में संजय कहताहै कि + हे राजन् १ दोनों सेनाके २।३ मध्यमें ४ अति दुःखित तिसको ५।६ उपहास करतेहुये ५ जैसे ६ अर्थात् जैसे किसीका उपहास करे हैं ऐसे ६ श्रीभगवान् ७ अति दुःखित तिसके प्रति ८।९ अर्थात् अर्जुन से ९ यह १० वचन ११ बोले १२ सि० जो आगे समाप्तिपर्य्यन्त कहना है टी० बिना ब्रह्मज्ञान के बड़े २ लोगोंका उपहास होता है अर्जुन का उपहास श्रीमहाराजनेकिया तो इसमें क्या आश्चर्यहै ५।६ ॥ **इतिहास** ॥ एक समय बड़े २ ब्रह्मज्ञानी और भेदबादी भक्त भी बहुत श्रीरामचन्द्रजी महाराजके पास बैठे थे । हनुमान् जी सेवा में थे श्रीमहाराजने अपनी ऐसा भक्तिका माहात्म्य प्रकट करने के लिये हनुमान् जी से यह पूछा कि तुम कौन हो हनुमान्जी ने शोचा कि जो यह कहताहूं कि आपका सेवक दास हूं तो यह सब ब्रह्मज्ञानी मुझको अज्ञानी समझ कर मेरा उपहास करेंगे और यह समझेंगे कि इनको सेवा भक्ति कैसीहै जो अब तक आत्मज्ञान न हुआऔर जोमैं ब्रह्महूं यह कहताहूं तो यह सब भक्त यह समझेंगे कि इनको कैसी यह भक्ति है और श्रीमहाराजमें कैसायह भावहै कि जो अपनेहीको ब्रह्म कहतेहैं फिर तात्पर्य्य श्रीमहाराजका समझ कर यह बोले हनुमान् जी कि देह दृष्टि करके तो आपका दासहूं और जीव बुद्धि करके आपका अंशहूं और वास्तव जो आपहैं शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म सोई मैं हूं ॥

**देहंदृष्ट्वातुदासोहंजीवबुद्ध्यात्वदंशकः । वस्तुतस्तुतदेवाहमितिमेनिश्चितामतिः ॥**

यह सुनकर सब प्रसन्न हुये समस्त श्रीभगवद्गीता का सारार्थ यहीहै

समस्त गीता शास्त्रमें इसी का बिस्तारार्थ उपाय और उपेय अंग अंगी-वत् कर्म निष्ठा और ज्ञान निष्ठा का निरूपण है + १० +

**श्रीभगवानुवाच। अशोच्यानन्वशोचस्त्वंप्रज्ञावादां श्चभाषसे। गतासूनगतासूंश्च नानुशोचंतिपंडिताः+११+**

श्रीभगवान् १ उवाच २ त्वम् १ अशोच्यान् २ अन्वशोचः ३ प्रज्ञावा-दान् ४ च ५ भाषसे ६ पण्डिताः ७ गतासून् ८ अगतासून् ९ च १० न ११ अनुशोचन्ति १२ + ११ + अ० उ० परम कृपाकी खानि श्री भगवान् अर्जुन को ब्रह्मज्ञान सुनाते हैं समस्त गीता शास्त्र में केवल एक ज्ञान निष्ठा काही निरूपण है अष्टांग योग सांख्य योग भेद भक्ति योग कर्म-योगादि का जो किसी जगह प्रसंग है वह ज्ञान निष्ठा का अंगही श्री महाराज ने कहा है और जैसे श्रीरामायण में रामचरित्रों से सिवाय और भी अनेक कथाहैं परंतु मुख्य श्रीरामजी के चरित्र हैं इसी प्रकार इस श्री भगवद्गीता उपनिषद् ब्रह्म विद्या योगशास्त्र में ज्ञाननिष्ठा का निरूपण है उसी को मैं आनन्द गिरि नाम वाला श्रीमत्परमहंस परिव्राज-काचार्य श्री स्वामी मलूक गिरि जी महाराज का अनुचर शिष्य सेवक दास श्रीमहाराज अपने स्वामी गुरुदेवके चरण कमलोंका पूजनेवाला श्री महाराजकी कृपासे निरूपण करता हूं श्रीभगवान् अर्जुनसे कहतेहैं कि हे अर्जुन + १। २ तू नहीं शोच करने के योग्य जो हैं तिनके निमित्त २ लि० तो + शोच करता है ३ और पण्डितों के से शब्दों को ४। ५ बोलता है ६ अर्थात् पण्डितों कीसी बातें कहता है राज सुख भोगों करके हमको क्या हैइत्यादि ६ पण्डित ७ जो मरेहुओं का ८। १० नहीं ११ शोच करते हैं १२ टी० भीष्म द्रोणादि के निमित्त व्यवहार में भी शोच करना वे योग है क्योंकि सदाचारी हैं मरकर सद्गति को प्राप्त होंगे और परमार्थ में भी शोच करना न चाहिये क्योंकि नित्य अविनाशी हैं अर्थात् न वाच्यार्थ में शोच बनता है न लक्ष्यार्थ में २ उनके बिना हम कैसे जीवेंगे इनको कैसे सुख होगा ६ लि० यह सब अज्ञान का धर्म है विद्वानों को यह नहीं होता इस हेतु से प्रतीत होता है कि तू ज्ञानी पण्डित नहीं दो चार बात पण्डितों कीसी सीख कर बोलता है अहिंसा परमधर्म है इत्यादि + **इतिहास** ॥ एक पुरुष के दो लड़के जवान बहुत गुणवान् ब्याहेहुये दैवयोग से एक ही दिन एक ही काल

में मरगये नगर के लोग उसको समझाने लगे पण्डितों ने अनेक श्लोक उसको त्याग ज्ञान वैराग्य के सुनाये और इस मंत्र का उत्तरार्द्ध भी सुनाया वह पुरुष सुनतेही इस आधे श्लोक को प्रसन्न मुख होकर उत्तर दिशा को चला पण्डितों ने बूझा कहां जातेहो उसने उत्तर दिया कि मैंने दुःख रूप गृहस्थाश्रम का संन्यास किया विद्वत् संन्यासी होकर बिचरूंगा पण्डितों ने कहा कि अभी तुम्हारी तरुण अवस्था है और तुम्हारे घरमें तीन तरुण स्त्री एक तुम्हारी दो तुम्हारे लड़कों की और मा बाप तुम्हारे वृद्ध विद्यमान हैं दोनों लड़के तुम्हारे घरमें मरे पड़े हैं यह समय संन्यास का है किंचित् तुम को मरे जीवतों का शोच नहीं उसने उत्तर दिया कि जो श्लोक तुमने पढ़ा उसका अर्थ विचार कर तुमको भी तो अनुष्ठान करना योग्य है नहीं तो ॥ पर उपदेश कुशल बहुतेरे। जे आचरहिं ते नर न घनेरे ॥ बिना अनुष्ठान के पण्डिताईकिस काम की है मरे जीवतों का शोच उसी को है जिसने यह मंत्र कहा है मेरा शोच करना निष्फल है और यह वेद की आज्ञा है कि जिससमय वैराग्य हो उसी समय संन्यास करे ॥ यदहरेवविरज्येत तदहरेवप्रव्रजेत् यह कहकर उसी समय बिरक्त होगया विचारना चाहिये कि गीता का सुनना इसको कहते हैं जिस श्लोक का उत्तरार्द्ध सुनकर यह पुरुष कृतार्थ हुआ इसका अर्थ सबही जानते हैं कहते हैं सुनते हैं परंतु कहना जानना सुनना सबनिष्फल है क्योंकि रोटी के जानने कहने सुनने से पेट किसी का नहीं भरता है खानेसेही पेट भरता है यही आशय गीता के अर्थ का है ऐसा पुरुष कोई होगा कि सत्य सन्तोष त्याग वैराग्य भक्ति शम दमादि का अर्थ और फल न जानता होगा परन्तु सुन समझकर अनुष्ठान नहीं करते हैं इसी हेतु से भटकतेरहते हैं भगवत् बाक्य में बिश्वास करके अनुष्ठान करने के लिये कमर बांधनी चाहिये और शोचना योग्य है देखो तो श्रीमहाराज अपने मुखारबिन्द से यह कहते हैं कि मरे जीवतों का शोच नहीं करना यह बात भले की है वा नहीं शोच करने में क्या बुराई है न शोच करने में क्या भलाई है और शोच वास्तव है या भ्रान्ति है यह मुझमें कबसे है इसका क्या स्वरूप है क्या अधिष्ठान है जीव गत है वा अन्तःकरण गत है एक रस रहता है वा घटता बढ़ता रहता है किस बातसे बढ़ता है किस साधन से घटताहै क्या इसकी समूल निवृत्ति का उपाय है ऐसा बिचार करके समस्त गीता

के अर्थ का अनुष्ठान करना योग्य है जब गीता का अर्थ जानना सुनना कहना सफल है + ११ +

**नत्वेवाहंजातुनासं नत्वंनेमेजनाधिपाः। नचैव न भविष्यामः सर्वेवयमतःपरम् + १२ +**

जातु १ अहम् २ न ३ आसम् ४ न ५ तु ६ त्वम् ७ न ८ इमे ९ १० जनाधिपाः ११ न १२ अतः १३ परम् १४ वयम् १५ सर्वे १६ न १७ भविष्यामः १८ न १९ च २० एव २१ +१२+ अ० उ० आत्मा नित्य है इस हेतुसे शोच करना न चाहिये आत्मा को अद्वैत नित्य सिद्ध करते हुये शोच न करने में हेतु कहते हैं + पीछे क्या कभी १ मैं २ नहीं ३ होता भया ४ सि० यह + नहीं ५ पू० ६। ७ अर्थात् पीछे मैं था ७ सि० और + तू ८ सि० क्या पीछे + नहीं ९ सि० था यह नहीं अर्थात् तू भी पीछे था और + ये १० राजा ११ सि० क्या पीछे + नहीं १२ सि० थे यह नहीं अर्थात् यह भी पीछे थे तू और येसब राजा वर्त्तमान में विद्यमान ही हैं और + इससे १३ पीछे १४ अर्थात् इस स्थूल शरीर त्यागसे पीछे १४ हम १५ सब १६ सि० क्या + नहीं १७ होंगे १८ सि० यह + नहीं १९ पू० २०।२१ अर्थात् तू और मैं और ये राजा अवश्य आगे को भी होंगे क्योंकि सच्चिदानन्दरूप आत्मा एकनित्य है + तात्पर्य तू और ये राजा और मैं सब वास्तव एकही त्रिकाला-बाध्यहैं त्वम् पदार्थ का तत्पदार्थ के साथ लक्ष्यार्थ शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप में एकता जाननी योग्यहे इस मंत्रमें जीवोंको नानात्व जोप्रतीत होताहै यह औपाधिक भेद है वास्तव जीव एकही है अथवा समस्त श्लोकका अन्वय करके सर्वे वयम् इन दोनों पदोंको हेतु करदेना अर्थात् जीव एकही है कुतः कियतः सर्वे वयम् अर्थात् तू और मैं और येराजा क्या आगे न होंगे यह नहीं अवश्य होंगे कुतः कियतः सर्वेवयम् बहु-वचन आदर के लिये है अर्थात् सब जीव आत्माही है + १२ +

**देहिनोऽस्मिन्यथादेहे कौमारंयौवनंजरा। तथादेहा-न्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्रनमुह्यति १३ ॥**

देहिनः १ यथा २ अस्मिन् ३ देहे ४ कौमारम् ५ यौवनम् ६ जरा ७ तथा ८ देहान्तरप्राप्तिः ९ धीरः १० तत्र ११ न १२ मुह्यति १३ + १३ + अ० उ० आप अपने को जो नित्य कहते हो यह तो सत्य है

परंतु जीव नित्य कैसे हो सक्ताहै प्रत्यक्ष जन्म लेता है मरता है यह शङ्का करके श्रीमहाराज कहते हैं + जीवको १ जैसे २ तिं० स्थूल+ इस देह में ३।४ कौमार ५ यौवन ६ जरा ७ तिं० अवस्था होतीहैं + तैसेही ८ दूसरी देहकी प्राप्ति ९ तिं० होजाती है + धीरजवाला १० तहां ११ अर्थात् देहों की उत्पत्ति नाश में ११ नहीं १२ मोहको प्राप्त होताहै १३ अर्थात् जीवको मरा जन्मवान् नहीं मानताहै १२ तात्पर्य्य जैसे जीव स्थूल शरीरमें प्रथम बालक कहा जाताहै फिर उसीको जवान कहते हैं फिर उसी को बूढ़ा कहते हैं जीव तीनों अवस्था में वास्तव एकही रस रहता है तैसेही दूसरी देहमें एक रस रहताहै मरना उत्पन्न होना देहोंका धर्म्म है जीव सदा एक रस नित्य है यथा अहम् और जैसे मुसाफिर एक सराय छोड़कर दूसरी सरायमें बस कर अपनेको मरा जन्मा नहीं मानता तैसेही जीव मुसाफिर की तरह और शरीर सरायकी तरह है यह समझकर शरीर छूटने का कुछ शोच करना न चाहिये आगे बहुत शरीर मिलेंगे सराय की तरह आत्मा असंख्यात बरसोंका मुसाफिरहै नये शरीर में जाकर पिछले की गति दुःख सुखादि भूल जाता है और दूसरी अवस्था में जैसे जीव अन्य जात नहीं होजाता अपने को वही मानताहै जो बालक अवस्था में मानता था तैसेही दूसरे शरीर में भी वही एकरस सच्चिदानन्द आत्मा का समझना चाहिये सदाचारी पुण्यात्मा पुरुष तो देहके छूटने से आनन्द को प्राप्त होते हैं क्योंकि इस देहके पीछे सुन्दर दिव्य देह की प्राप्ति होगी बुरा मकान छूटकर जो अच्छा मन्दिर मिले तो उसके निमित्त क्या शोक करना चाहिये + १३ +

**मात्रास्पर्शास्तुकौंतेय शीतोष्णसुखदुःखदाः। आगमापायिनोऽनित्यास्तांतितिक्षस्वभारत + १४ +**

कौंतेय १ मात्रास्पर्शाः २ तु ३ शीतोष्णसुखदुःखदाः ४ आगमापायिनः ५ अनित्याः ६ भारत ७ तान् ८ तितिक्षस्व ९ + १४ + अ० टी० न जानिये दूसरा देह कैसा मिलेगा शीतोष्णादि का उस में आराम होगा वा नहीं इस हेतुसे बर्तमान इष्ट पदार्थों के बियोग में दुःख प्रतीत होता है इस देहके छूटते ही सब इष्ट पदार्थों का बियोग हो जायगा यह शङ्का करके श्रीमहाराज यह मंत्र कहते हैं कि + हे अर्जुन १ इन्द्रियों की वृत्तियों का शब्दादि विषयों के साथ जो सम्बन्ध है इसको मात्रास्पर्शाः कहते हैं २ अर्थात् देखना भोजनादि ये सब २ शीत उष्ण सुख दुःख के देनेवाले

३ सि० हैं किसी कालमें शीत किसी कालमें गरमी कभी ये अनुकूल कभी प्रतिकूल इस हेतुसे कभी सुख कभी दुःख बनाही रहताहै + कैसे हैं येभोजनादि पदार्थ कि दिन रात्रिवत् + आने जाने वाले ५ सि० हैं इसी हेतुसे सब पदार्थ + अनित्य ६ हे अर्जुन ७ तिनको ८ अर्थात् जाग्रत अवस्था के भोगों को ८ सि० स्वप्न पदार्थवत् समझकर + सहन कर ९ अर्थात् तिनके निमित्त वृथा हर्ष विषाद मतकर हर्ष बिषाद के बश मतहो ९ तात्पर्य इष्ट पदार्थों का संयोग वियोगादि झूंठी भ्रान्ति है वास्तव आत्माका न किसी के साथ सम्बंध है न वियोग है सिवाय आत्मा के और कोई पदार्थ सुखदायी नहीं सो नित्य प्राप्त है सिवाय इसके बिचार कर जो सहन करता है उसको दुःख कमहोता है नहीं तो सहना सब कोही पड़ता है अनित्य पदार्थों में क्या तो हर्षकरना क्या शोक करना कितने कालके लिये क्योंकि क्षण पीछे हर्षक्षणपीछे शोकहोताही रहताहै इनको अनित्य समझकर इनके बश नहीं होना यही इनका सहना है इष्ट पदार्थके लिये तो यत्न नहीं करना और उसके वियोग में कुछ दुःख नहीं मानना और अनिष्ट पदार्थों में उद्वेग नहीं करना वर्तमान में जैसाहो वही हर्ष शोक रहित भोगना यही एक अनुष्ठान बहुतहै + १४ +

**यंहिनव्यथयन्त्येतेपुरुषंपुरुषर्षभ। समदुःखसुखंधीरंसोमृतत्वायकल्पते + १५ +**

पुरुषर्षभ १ एते २ यम् ३ पुरुषम् ४ न ५ व्यथयन्ति ६ समदुःख सुखम् ७ धीरम्सः ८ हि १० अमृतत्वाय ११ कल्पते १२ + १५ + अ० उ० प्रयत्न करके दुःख दूर करदेना चाहिये और सुख सम्पादन करना चाहिये शीतोष्णादि को क्यों सहना यह शंकाकरके श्रीभगवान् का इस मंत्र में आशय यह है कि प्रयत्न करने से उनका सहना हज़ार जगह श्रेष्ठतम है क्योंकि सहने का बड़ा फल है सो हमसे सुन सिवाय इस के यह नियम नहीं कि प्रयत्न करने से अवश्यही दुःख शीतोष्णादि दूर हो जावें प्रत्युत प्रयत्न करना दूने दुःखका हेतु है क्योंकि एकतो प्रथम दुःख था दूसरे यत्नमें महा दुःख हुआ और जब वह कार्यसिद्ध न हुआ तब और भी महा दुःखहुआ सहनेसे प्रयत्न करने में क्लेशही क्लेशहै इस हेतुसे सहन ही श्रेष्ठतम है सोई सुन + हे अर्जुन १ ये २ सि० मात्रा स्पर्श शीतोष्णादि + जिस पुरुष को ३।४ नहीं ५ विषाद के वश करते हैं ६ सि० कैसा है वह पुरुष + समान हैं सुख दुःख जिसके ७ सि०

और बुद्धिमान् + धीर ८ मि० है जो + सो ६ ही १० मुक्तिके वास्ते ११ योग्य है वा समर्थ है १२ अर्थात् जो मानापमानादि को प्रारब्धकर्म्म का भोग समझकर सहता है निवृत्ति प्राप्तिके लिये यत्न नहीं करता है सोई मुक्तिके योग्य है वही मुक्तहोगा + तात्पर्य दुःखादि में आत्माकी कुछ भी क्षतिनहीं समझताहै इसमें हेतु यह है कि बिचारवान् है विचार वान् ब्रह्मनिष्ठ ज्ञानीही अपमानादि को सहसक्ताहै और वही मोक्षका अधिकारी है इस वास्ते ज्ञान सम्पादन करना योग्य है+१५+

**नासतोविद्यतेभावो नाभावोविद्यतेसतः। उभयोरपि दृष्टोन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः + १६ +**

असतः १ भावः २ न ३ विद्यते ४ सतः ५ अभावः ६ न ७ विद्यते ८ अपि ६ तु १० अनयोः ११ उभयोः १२ अन्तः १३ तत्त्वदर्शिभिः १४ दृष्टः १५ + १६ + अ० उ० परमार्थ दृष्टि करके तो शीतोष्णादि पदार्थ वास्तव तीनोंकाल में नहीं नित्य अखंड पूर्णआत्मा ही है उसका अभाव नहीं होता और शीतोष्णादि पदार्थों का भाव नहीं होता यह बिचारकर विद्वानों को शीतोष्णादि बाधा नहीं करते जो कोई यहकहै कि शीतोष्णादि का सहना अत्यन्त कठिन है वह कैसे सहा जावै कदाचित् अत्यन्त सहने में आत्मा का नाश न होजाय उस के उत्तर में यह कहते हैं + असत् को १ सत्ता २ नहीं ३ है ४ सत् को ५ असत्ता ६ नहीं ७ है ८ मि० यह नहीं समझना कि इनका निर्णय किसी ने नहीं किया है + अपि तु ६।१० इन दोनोंका ११।१२ अंत १३तत्त्वदर्शी पुरुषों ने १४ देखा है १५ अर्थात् ब्रह्मज्ञानियों ने इन दोनों सत् असत् का तत्त्व यही निर्णय किया है कि सत्स्वरूप आत्मा निर्लेप असंस्पर्श पदार्थ है और असत्स्वरूप शीतोष्णादि की आत्मा में गंध मात्र भी नहीं सोई वेदों ने भी यह कहा है **मंत्र ॥ ननिरोधोनचोत्पत्तिर्नवद्धोनचसाधकः। नमुमुक्षुर्नवैमुक्तइत्येषापरमार्थता ॥** तात्पर्य इस मंत्र का यही है कि सिवाय आत्मा के कभी कुछ हुआहो नहीं फिर निवृत्ति किसकी करनी चाहिये और जो किसी को सिवाय आत्मा के कुछ प्रतीत होता है वह भ्रांति है क्योंकि भले प्रकार कोई भी किसी पदार्थ का करामलकवत् निःसंशय निश्चय नहीं करते कोई कुछ कहता है कोई कुछ कहता है सबका सम्मत न होनेसे ही स्पष्ट प्रतीत होता है कि वास्तव सिवाय आनन्द स्वरूप आत्मा के और कुछ नहीं सिवाय

इसके इस बातको ऐसे समझो कि जैसे दश महल्लों का नाम एक नगर है बीस हवेलियों का नाम एक महल्ला है मृत्तिका पाषाण काष्ठादि का नाम हवेली है पृथ्वीके परमाणुओं का जो संघात है उसको मृत्तिकाकाष्ठादि कहते हैं ऐसे विचार करते करते परमाणु एक पदार्थ सिद्ध होता है परमाणु उस को कहते हैं जो किनका नेत्र का तो विषय नहीं परन्तु अनुमान द्वारा ऐसे निश्चय करते हैं कि मकानमें पृथ्वी के किन के उड़ते नहीं दीखपड़ते झरोखे की चांदनी में दीख पड़ते हैं इसहेतुसे प्रतीतहोताहै कि और भी इससे सूक्ष्महोंगे सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म किनके को परमाणु कहते हैं जब यह जीव अनुमान में चतुर होजाता है तब इसको प्रत्यक्षानुमान शाब्दादि प्रमाणोंसे आत्मा का भाव और जगत् का अभाव साक्षात्प्रतीत होने लगता है यह विचार बहुत सूक्ष्महै अवश्य इसका मनन करना योग्य है जैसे पीछे विचार करते करते सब पदार्थों का अभावहोगया सब कल्पित प्रतीत होनेलगे एक परमाणु रहगया जब भले प्रकार बुद्धिनिर्मल हो जातीहै तबवह भी कल्पित प्रतीत होने लगता है फिर उसका अत्यन्ताभाव होजाता है इसवास्ते जबतक यह विषय समझ में न आवे तबतक अन्तःकरण की शुद्धिका उपाय कर्म उपासना करे ॥ १६ ॥

**अविनाशितुतद्विद्धियेनसर्वमिदंततम्। विनाशमव्ययस्यास्यनकश्चित्कर्तुमर्हति ॥ १७ ॥**

येन १ इदम् २ सर्वम् ३ ततम् ४ तत् ५ तु ६ अबिनाशि ७ विद्धि ८ अस्य ९ अव्ययस्य १० विनाशम् ११ कर्तुम् १२ कश्चित् १३ न १४ अर्हति १५ ॥ १७ ॥ अ० उ० सामान्य करके तो आत्मा को नित्य प्रतिपादन किया अबफिर विशेष करके दूसरे प्रकारसे आत्माको नित्य प्रतिपादन करते हैं जैसे पिछले श्लोक में आत्माको सत् शब्द करके निरूपणकिया तैसेही इस मंत्र में अबिनाशी शब्द करके निरूपण करते हैं आत्मा अति सूक्ष्म पदार्थ है इसवास्ते श्री महाराज उसको अनेक शब्दों करके बर्णन करते हैं पुनरुक्ति समझनी न चाहिये इस प्रकरण में बहुत जगह तो अर्थ में पुनरुक्ति प्रतीत होतीहै जैसे सत्नित्य अबिनाशि इन शब्दोंका एकही अर्थ है और बहुत जगह एक वही शब्द लिखा है यह बारम्बार अनेक युक्तियों के साथ उपदेश वास्ते जल्द समझने के है पुनरुक्ति दोष नहीं ॥ जिसकरके १ अर्थात् सत् स्वरूप आत्मा करके परमानन्द स्वरूप

आत्मा से १ यह २ सब ३ सि० जगत् + व्याप्त ४ सि० है होरहा है + तिसको ५ अर्थात् आत्माको ५ ही ६ अबिनाशी ७ जानतू ८ इसका अर्थात् अबिनाशी निर्विकार का ९। १० नाशकरनेको ११।१२ कोई १३ नहीं १४ योग्य है वा नहीं समर्थ है १५ अर्थात् ऐसा कोई समर्थ नहीं कि जो आत्मा का नाशकरै वा कमकरै १५ तात्पर्य यह जगत् आत्मा करके व्याप्त है इसको ऐसे समझना चाहिये कि आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप है बिचार करो जगत् में ऐसा कोई भी बुरा भला पदार्थ नहीं कि जिसमें कुछ आनन्द न हो आनन्द करके यह जगत् पूर्ण है और आनन्द करके ही इसकी स्थिति है वही आनन्द अबिनाशि है साक्षात् स्वयं प्रकाश है तीनों अवस्था में इस हेतु से प्रत्यक्ष ज्ञान-स्वरूप है + १७ +

**अन्तवन्तइमेदेहा नित्यस्योक्ताःशरीरिणः। अना-शिनोऽप्रमेयस्यतस्माद्युध्यस्वभारत + १८ +**

इमे १ देहाः २ अन्तवन्तः ३ उक्ताः ४ शरीरिणः ५ नित्यस्य ६ अना-शिनः ७ अप्रमेयस्य ८ तस्मात् ९ युध्यस्व १० भारत ११ + १८ + अ० उ० सत् पदार्थ आत्मा को तो नित्य सिद्धकिया अब असत् पदार्थ दे-हादि अनात्मा को अनित्य सिद्ध करतेहैं अर्थात् असत् पदार्थों का अ-भावकहते हैं + ये १ सि० आविद्यक भवतिक कल्पितदेह२ अन्तवाले ३ अर्थात् अनित्य कहे हैं ४ देहधारी जीवके ५ अर्थात् अध्यारोप में आ-त्मा को देही शरीरी कहते हैं और बिबर्त्तवाद में उसको नित्यकहते हैं बास्तव वह अनिर्बाच्य है और देहोंका भाव बास्तव है नहीं देहोंको अनित्य कहना जीवको नित्य कहना यह सब बिबर्त्तबाद है + सि० कैसा है वह आत्मा कि + सदा एक रूप है ६ अर्थात् सदा उसका एक सच्चिदानन्द निर्विकार नित्यमुक्तरूप है इसी हेतु से सो + अबिनाशि है ७ सि० जो ऐसा है तो सबको सत्त्वादि पदार्थोंवत् समझ में क्यों नहीं आता है यह शंका करके कहते हैं किसी आत्मा + अप्र-मेय है ८ अर्थात् बुद्ध्यादिका विषय नहीं क्योंकि बुद्धिका आदि है इसी हेतु से बुद्धि से परे श्रेष्ठ है बुद्धिका साक्षी है यही उसकी पहचान है जैसे कोई यह कहे कि मेरी आंख मुझको दिखाओ उत्तर उसकायही है कि जिसकरके तू सबको देखता है वही तेरी आंख है ऐसेही जिस करके बुद्धिका भी ज्ञानहै वह ज्ञान स्वरूप स्वयम् सिद्धहै और जो अब

भी इतने बिशेषणों से आत्माका स्वरूप तेरी समझ में न आया हो क्योंकि आत्मा अति सूक्ष्म है जब कि आत्मा अति सूक्ष्म है + तिस कारण से ८ अर्थात् इसीवास्ते ८ युद्ध कर तू १० हे अर्जुन ११ सि० यह मैं तुझसे कहता हूं + तात्पर्य स्वधर्म का अनुष्ठान करने से अन्तःकरण शुद्धद्वारा आत्मा का स्वरूप समझ में आजाता है चर्चा चतुराईका वहां कुछ काम नहीं अथवा जब कि आत्मा नित्य है न उसका नाश है न उसको दुःख सुखादि का सम्बन्ध है तिसकारणसे हे अर्जुन स्वधर्म मत त्याग सुख दुःखादि का सहन कर + नित्यस्य अनाशिनः अप्रमेयस्य ये तीनों शरीरिणः के विशेषण हैं अर्थात् सदा एक रस अबिनाशी अप्रमेय देहधारी जीवके शरीर अन्तवाले कहे हैं अबिनाशिका जो देहोंकेसाथ अविद्यक सम्बंध है इस हेतुसे देहप्रवाह रूप करके नित्यप्रतीत होते हैं बास्तव नित्य अनित्य हैं नहीं + १८ +

**यएनंवेत्तिहन्तारं यश्चैनंमन्यतेहतम्। उभौतौनवि-जानीतो नायंहन्तिनहन्यते + १९ +**

यः १ एनम् २ हन्तारम् ३ वेत्ति ४ यः ५ च ६ एनम् ७ हतम् ८ मन्यते ९ तौ १० उभौ ११ न १२ विजानीतः १३ अयम् १४ न १५ हन्ति १६ न १७ हन्यते १८ + १९ + अ० उ० भीष्मादि के मरने में जो शोक करता था अर्जुन कि ये मरेंगे वह तो श्रीमहाराज ने दूरकिया परन्तु अर्जुन को अपने निमित्त भी यह शोक है कि भीष्मादि के मारने में मुझको पाप होगा इसको भी दूरकरते हैं अर्थात् श्रीमहाराज अर्जुन से यह कहते हैं कि जैसे मारना हनन रूप क्रिया में कर्म को अर्थात् भीष्मादि को नित्य निर्विकार अबिनाशि समझा तैसेही कर्त्ता को अर्थात् अपने को अकर्त्ता समझ तात्पर्य किसी क्रिया में भी आत्मा कर्त्ता कर्म्म नहीं यह कहते हैं अब श्री महाराज + जो १ इस को २ अर्थात् आत्मा को २ सि० हनन क्रिया में + मारने वाला ३ अर्थात् कर्त्ता ३ जानता है ४ और जो ५।६ इस आत्मा को ७ मरा हुआ ८ अर्थात् कर्म्म मानता है ९ वे १० दोनों ११ नहीं १२ जानते १६ यह १३ आत्मा १४ न १५ मारता है सि० किसी को + १६ न १७ मारता है १८ तात्पर्य जो आत्मा को किसी क्रिया में भी कर्ता कर्म जानते हैं वे पाप पुण्य के भागी होते हैं तू तो आत्मा को अक्रिय अकर्त्ता जान कर युद्ध कर तुझको पाप न होगा आत्मा न कर्ता है न कर्म्म है + १९ +

**नजायतेम्रियतेवाकदाचिन्नायंभूत्वा भविताबान भूयः। अजोनित्यःशाश्वतोयंपुराणोनहन्यतेहन्यमाने शरीरे + २० +**

अयम् १ कदाचित् २ न ३ जायते ४ न ५ म्रियते ६ वा ७ भूत्वा ८ भूयः ९ अभविता १० वा ११ न १२ अयम् १३ अजः १४ नित्यः १५ शाश्वतः १६ पुराणः १७ शरीरे १८ हन्यमाने १९ न २० हन्यते २१ + २० + भा० टी० उत्पन्न होना व्यवहारिक सत्ताको प्राप्त होना बढ़ना और का और रूप होजाना घटनेलगना नाश होजाना ये छः धर्म्म देह के हैं आत्मा के नहीं सोई इस श्लोक में कहते हैं + यह १ आत्मा १ कभी २ न ३ जन्मता है ४ न ५ मरता है ६ और ७ होकर ८ फिर ९ न रहे १० वह ११ सि० ऐसा भी यह आत्मा + नहीं १२ अर्थात् जिनका जन्म होता है वे अवश्य मरते हैं आत्मा का न जन्म है न नाश है क्योंकि सादि पदार्थों का नाश होता है आत्मा अनादि है परन्तु छः अनादि पदार्थों में अविद्यादि पदार्थ भी अनादि कहे जाते हैं उनका ज्ञान काल में नाश सुनाजाता है अर्थात् अविद्या पदार्थों का भी जन्म नहीं क्योंकि वे अनादि हैं परन्तु होकर अर्थात् हुये फिर नहीं रहते हैं ऐसा भी यह आत्मा नहीं यह अर्थ है नवें पद से लेकर बारहवें पद तक १२ सि० फिर कैसा है + यह १३ आत्मा १३ जन्म रहित १४ एक रस १५ नित्य १६ सनातन १७ सि० है + शरीर के मारे जाने में १८। १९ नहीं २० मारा जाता है २१ अर्थात् शरीर का नाश होताहै आत्मा २१ + २० +

**वेदाविनाशिनंनित्यं यएनमजमव्ययं। कथंसपुरुषः पार्थ कंघातयतिहन्तिकं + २१ +**

यः १ एनम् २ अविनाशिनम् ३ नित्यम् ४ अजम् ५ अव्ययम् ६ वेद ७ पार्थ ८ सः ९ पुरुषः १० कम् ११ कथम् १२ हन्ति १३ कम् १४ घातयति १५ + २१ भा० टी० ज्ञान दृष्टि करके सब क्रिया में आत्मा प्रेरक भी निर्विकार है इस हेतुसे मैं तेरा प्रेरक भी असंग हूं मेरे निमित्त भी तुझको किसी प्रकार का शोच करना न चाहिये अर्थात् यहभी मतसमझ कि श्रीभगवान् मुझको हिंसा में प्रेरते हैं कभी ऐसा नहो कि इस पापके यही भागी हों इस श्लोक में यह कहते हैं + जो १ इस २ आत्मा

को २ अविनाशि ३ नित्य ४ अज ५ निर्विकार ६ जानता है ७ हे अर्जुन ८ सो ६ पुरुष १० किसको ११ किस प्रकार १२ मारता है १३ अर्थात् आत्मा किसी को किसी प्रकार नहीं मारता है १३ सि० और + किसको १४ सि० किस प्रकार + मरवाता है १५ अर्थात् किसी को किसी प्रकार भी नहीं मरवाता है आत्मा किसी क्रिया में कर्त्ता का प्रेरक नहीं तात्पर्य श्रीमहाराज ने जैसे अपने को निर्विकार अकर्त्ता असङ्ग निरूपण किया वैसेही जीवको भी निर्विकार कहा इस कहने से स्पष्ट जीव ब्रह्मकी एकता सिद्धहै इस प्रकरण का यही सिद्धान्तहै + २१ +

**वासांसिजीर्णानियथाविहाय नवानिगृह्णातिनरोपराणि। तथाशरीराणिविहायजीर्णान्यन्यानिसंयातिनवानिदेही + २२ +**

यथा १ नरः २ जीर्णानि ३ वासांसि ४ विहाय ५ अपराणि ६ नवानि ७ गृह्णाति ८ तथा ६ जीर्णानि १० शरीराणि ११ विहाय १२ अन्यानि १३ नवानि १४ संयाति १५ देही १६ + २२ + अ० उ० आत्मा को तो अविनाशि निर्विकार समझा मैंने आत्माके निमित्त तो मुझको अब किसी प्रकार का शोच नहीं अर्थात् आत्मा किसी क्रिया में न कर्त्ता है न प्रेरक न कर्म्म है आत्मा के नाश करने में वा कम करने में न कोई साधन है परंतु आत्माका शरीरसे जो वियोग होता है इसके निमित्त तो शोच करना चाहिये यह शङ्का करके कहते हैं + जैसे १ मनुष्य २ जीर्ण ३ वस्त्रों को ४ त्याग करके ५ और ६ नये ७ सि० वस्त्रोंको+ग्रहण करता है ८ तैसेही ६ जीर्ण १० शरीरों को ११ त्याग करके १२ और १३ नये १४ सि० शरीरको + प्राप्त होताहै १५ आत्मा जीव १६ सि० न जानिये दूसरा शरीर कैसा मिले पहले से अच्छा न मिले इसके निमित्त भी शोच करना न चाहिये क्योंकि धर्मात्मा पुरुषों को बेसन्देह उत्तमशरीर मिलते हैं पापियों को यह शोच करना चाहिये धर्मात्मा पुरुषों को पुण्यकीतारतम्यता से देवतों के शरीर मिलते हैं पापात्मा नरक में जाते हैं उनको नारकी शरीर मिलते हैं मिलेहुये कर्म्म करनेवालों को मनुष्यों के शरीर मिलते हैं ज्ञानी महापुरुष मुक्त होते हैं तात्पर्य बिना ब्रह्म ज्ञानके सब को दूसरा शरीर मिलता है चौदहवें अध्याय में विशेष निरूपण करेंगे इसप्रसंग को गरुड़ पुराणादि की प्रक्रिया भी इसी सिद्धान्त से मिल जाती है श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठोंके मुखसे श्रवण करने से + २२ +

नैनंछिन्दन्तिशस्त्राणि नैनन्दहतिपावकः। नचैनं क्लेदयन्त्यापो नशोषयतिमारुतः + २३ +

एनम् १ शस्त्राणि २ न ३ छिन्दन्ति ४ पावकः ५ एनम् ६ न ७ दहति ८ आपः ६ एनम् १० न ११ च १२ क्लेदयन्ति १३ मारुतः १४ न १५ शोषयति १६ + २३ + अ० उ० पीछे कहा था कि आत्माकिसी प्रकार भी नहीं मारा जाताहै अर्थात् आत्मा किसी साधन करके साध्य सिद्ध होनेके योग्य नहीं उसी को अब स्फुट करते हैं + इस आत्माको १ शस्त्र २ नहीं ३ छेदन करतेहैं ४ अग्नि ५ इसको ६ नहीं ७ जलाती है ८ जल ६ इसको १० नहीं ११। १२ गलाता है १३ पवन १४ नहीं १५ सुखाताहै १६ तात्पर्य अन्य और भी किसी साधनकरके साध्य नहीं आत्मा स्वयम् सिद्ध निर्विकार है निरवयव होने से क्रिया सावयव हैं इसी हेतुसे आत्मा अक्रिय है + २३ +

अच्छेद्योयमदाह्योयमक्लेद्योशोष्यएवच। नित्यः सर्वगतःस्थाणुरचलोयंसनातनः + २४ +

अयम् १ अच्छेद्यः २ अदाह्यः ३ अक्लेद्यः ४ अशोष्यः ५ एव ६ च ७ नित्यः ८ सर्वगतः ६ स्थाणुः १० अचलः ११ अयम् १३ सनातनः १२ + २४ + अ० उ० शस्त्रादि साधनों करके आत्मा इस हेतु से साध्य नहीं कि आत्मा निर्विकारादि विशेषणों करके विशेषित है यह कहते हैं डेढ़श्लोक में + यह १ आत्मा १ नहीं है छेदन करने के योग्य २ नहीं है जलानेके योग्य ३ नहीं है गलाने के योग्य ४ नहीं है सुखाने के योग्य ५ अर्थात् आत्मा न छिद सक्ता है न जल सक्ता है न गल सक्ताहै + सि० क्योंकि +नित्य ८ सब जगह व्याप्त ६ स्थाणुवत् स्थिर १० निश्चल ११ सनातन १२ सि० है+यह १३ सि० आत्मा यहां पदों में पुनरुक्ति प्रतीत होती है इसका उत्तर प्रथमही हमलिख आये हैं + २४ +

अव्यक्तोयमचिन्त्योयमविकार्य्योयमुच्यते। तस्मा-देवंविदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि + २५ +

अयम् १ अव्यक्तः २ अयम् ३ अचिंत्यः ४ अयम् ५ अविकार्य्यः ६ उच्यते ७ तस्मात् ८ एवम् ६ एनम् १० विदित्वा ११ अनुशोचितुम् १२ न १३ अर्हसि १४ + २५ + अ० यह आत्मा १ अव्यक्त २ मूर्तिरहित ३ सि०

है + यह आत्मा ३ अचिंत्य ४ लि० है अर्थात् चिंतवन करनेमें नहीं आता है अन्तःकरण का विषय नहीं + यह आत्मा ५ अविकारी ६ कहा है ७ लि० इस क्रिया का नित्यादि सब पदोंके साथ सम्बन्धहै + जब कि यह आत्मा ऐसा है + तिस कारण से ८ इस प्रकार ६ इस आत्माको १० जानकर ११ पीछे शोच करने को १२ नहीं १३ योग्यहै तू १४ तात्पर्य जो लक्षण आत्मा का पीछे निरूपण किया उसको जानसमझ कर शोच नहीं रहता है + २५ +

**अथचैनंनित्यजातं नित्यंवामन्यसेमृतम्। तथापित्वं महाबाहो नैवंशोचितुमर्हसि + २६ +**

अथ १ च २ एनम् ३ नित्यजातम् ४ मन्यसे ५ वा ६ नित्यम् ७ मृतम् ८ महाबाहो ९ तथा १० अपि ११ एवम् १२ न १३ शोचितुम् १४ त्वम् १५ अर्हसि १६ + २६ + अ० उ० जो कदाचित् देही के साथ आत्मा का जन्म मरण तू समझताहो तौभी शोच करना न चाहिये यह कहते हैं + और जो ११२ लि० कदाचित् + इस आत्मा को ३ नित्य-जात ४ मानता है ५ अर्थात् जीवका देहों के साथ सदा जन्म होता है ५ वा ६ सदा ७ मारताहै ८ लि० देहोंके साथ + हे अर्जुन ६ तोभी १० ११ लि० जैसे अगले श्लोक में कहता हूं इसप्रकार १२ नहीं १३ शोच करने को १४ तू १५ योग्य है १६ + २६ +

**जातस्यहिध्रुवोमृत्युर्ध्रुवंजन्ममृतस्यच। तस्मादप-रिहार्य्येर्थे नत्वंशोचितुमर्हसि + २७**

हि १ जातस्य २ मृत्युः ३ ध्रुवः ४ मृतस्य ५ च ६ जन्म ७ ध्रुवम् ८ तस्मात् ९ अपरिहार्य्ये १० अर्थे ११ त्वम् १२ शोचितुम् १३ न १४ अर्हसि १५ + २७ + + अ० जब कि १ जन्मवालेका २ मरण ३ निश्चय ४ लि० है अर्थात् जो उत्पन्न हुआहै वह अवश्य मरेगा इसमें प्रमाण प्रत्यक्ष व्यवहार है + और जो मरे हुये का ५।६ जन्मा ७ निश्चय ८ लि० है अर्थात् जोमरता है उसका जन्म अवश्य होताहै क्योंकि कर्ता होकर मराहै अपने किये हुये कर्मोंका भोग करने के लिये अवश्य जन्म लेगा बिना भोग वा बिना ज्ञान कर्मों का कभी नाश नहीं होताहै + तिस कारण से ९ अवश्य भावि काममें १० । ११ तू १२ शोचकरनेको १३ नहीं १४ योग्य है १५ टी० जो काम अवश्य होने वाला है जिसका कुछ इलाज यत्न परिहार प्रती-

कार नहीं उसमें क्या शोच करना चाहिये जो होनीहै वह अवश्यहोगी और जो न होनी है वह कभी न होगी + यद्भाविनतद्भाविभाविचेन्नतदन्यथा। अवश्यंभाविभावानांप्रतीकारोभवद्यदि। तदादुःखैर्नलिप्येरन्नलरामयुधिष्ठिराः॥

जो भावि का प्रतीकार होता तो राजा नल राम युधिष्ठिरादि को क्यों दुःख होता १० । ११ तात्पर्य भीष्मादि का इन देहों से एक दिन अवश्य वियोगहोना है तू क्यों शोच करता है वियोग अवश्य भावि है और राजधनादि के निमित्त भी शोच मत कर क्योंकि क्या तो भीष्मादि धन को छोड़ कर मर जावेंगे अथवा पहिले धनही उनको छोड़ देगा इस हेतु से तू मत शोचकर + २० +

**अव्यक्तादीनिभूतानि व्यक्तमध्यानिभारत। अव्यक्तनिधनान्येवतत्रकापरिदेवना + २८ +**

भारत १ भूतानि २ अव्यक्तादीनि ३ व्यक्तमध्यानि ४ अव्यक्तनिधनानि ५ एव ६ तत्र ७ का ८ परिदेवना ९+ २८+ अ० उ० जैसे सीपीमें चांदी रस्सी में सर्पकी भ्रांति है इसीप्रकार यह जगत् प्रतीत होता है फिर क्यों शोचकरता है यह कहते हैं+ हे अर्जुन १ लि० पृथिवी आदि अपने कार्य अन्तःकरणादि शरीर पुत्रादि के सहित ये सब पंच+ भूत २ लि० ऐसे हैं कि + अव्यक्त अदर्श न अनुपलब्धि आदि है जिनका अर्थात् आदि में ये भूत अदर्शनरूप थे इनका दर्शनमात्र भी नहीं था ३ लि० और + व्यक्त है मध्य जिनका ४ अर्थात् उत्पत्ति से पीछे नाश से पहले बीच में प्रतीत होते हैं शुक्तिमें रजत् वत ४लि० और अव्यक्तही है मरण जिनका ५ अर्थात् इनका जो अदर्शन है वही इनका मरण है नाशहुये पीछे भी ये नहीं दीखते हैं यह अभिप्राय है ५ निश्चय निस्सन्देह यह जगत् अविद्या भ्रांति से प्रतीत होता है बास्तव नहीं ६ तहां ७ अर्थात् ऐसे पदार्थों के निमित्त जिनकी गति पीछे कही० क्या ८ शोक प्रलाप बिलाप ९ लि० करना चाहिये भ्रान्ति के सर्प का काटा हुआ कोई नहीं मरता है जो आदि अन्तमें नहीं वही वर्तमान में भी नहीं श्रुति यही कहे है॥ आदावन्तेच यन्नास्ति वर्तमानेपितत्तथा। तात्पर्य यह संसार स्वप्नवत् है इस संसार में ये भीष्मादि और यह सब सेना और इनके साथ युद्ध करना राज्य भोगना ये सब स्वप्नके पदार्थ हैं इनके निमित्त वृथा बिलाप मतकर + शोक निमित्तस्य प्रलापस्य नाव-

कार्योऽस्तीत्यर्थः कः शोकनिमित्तो विलापः प्रतिबुद्धस्य स्वप्नदृष्टबन्धुषु इव शोको न युज्यते इत्यर्थः + २८ + ॥

**आश्चर्य्यवत्पश्यतिकश्चिदेनमाश्चर्य्यवद्वदतितथैवचान्यः । आश्चर्य्यवच्चैनमन्यःशृणोति श्रुत्वाप्येनं वेदनचैवकश्चित् + २९ +**

कश्चित् १ एनम् २ आश्चर्य्यवत् ३ पश्यति ४ तथा ५ एव ६ च ७ अन्यः ८ आश्चर्य्यवत् ९ वदति १० अन्यः ११ एनम् १२ आश्चर्य्यवत् १३ च १४ शृणोति १५ कश्चित् १६ श्रुत्वा १७ अपि १८ एनम् १९ न २० च २१ एव २२ वेद २३ + २९ + भा० उ० आत्मा का जानना एक आश्चर्य्य अलौकिक अद्भुत बात है आत्मा के जानने में बहुत प्रयत्न करना चाहिये + कोई १ इस आत्मा को २ शि० शमदमादि साधन सम्पन्नहुआ ज्ञान चक्षु करके असंख्यात पुरुषों में जो देखता है सो + आश्चर्य्यवत् ३ देखता है ४ अर्थात् लौकिक पदार्थों की तरह आत्माका देखना नहीं बन सक्ता है + और तैसेही ५ । ६ । ७ अन्य और कोई एक महात्मा ८ आश्चर्य्यवत् ९ कहता है १० शि० आत्माको अन्य और कोईमहात्मा ११ इस आत्माको १२ आश्चर्य्यवत् १३ ही १४ सुनता है १५ कोई १६ शि० साधन रहित पुरुष तत्त्वमसि अहम्ब्रह्मास्मि इत्यादि महावाक्यों को सुन कर १७ भी १८ इस आत्माको १९ नहीं २० । २१ भी २२ जानता है २३ तात्पर्य त्रिलोक वा चौदहोलोक वा चौदह से भी सिवाय जिसके मतमें कोई और ऊंचा वैकुंठादि लोक हो उनमें जितने नाम रूपवाले इन्द्रिय अन्तःकरणकाविषय जितने पदार्थ हैं उन सब पदार्थों को लौकिक कहते हैं पुरुष आत्माको लौकिक पदार्थवत् सुनाचाहता है वा देखा चाहता है वा कहा चाहता है यह कभी नहींहोसक्ता क्योंकि आत्मा लौकिक पदार्थवत् नहीं अलौकिक आश्चर्य्य वत् है जो इन्द्रिय अन्तःकरणका विषय तो है नहीं और सुना जावे कहा जावे देखा जावे जाना जावे अनुभव कियाजावे करामलकवत् यही आश्चर्य है + २९ +

**देहीनित्यमवध्योयन्देहेसर्वस्यभारत । तस्मात्सर्वाणिभूतानि नत्वंशोचितुमर्हसि + ३० +**

भारत १ अयम् २ देही ३ सर्वस्य ४ देहे ५ नित्यम् ६ अवध्यः ७ तस्मात् ८ सर्वाणि ९ भूतानि १० त्वम् ११ शोचितुम् १२ न १३ अर्हसि

१४ + ३० + अ० टु० ग्यारहवें श्लोक से आत्मा और अनात्मा का जो विवेक निरूपण करते हुये चले आते हैं इस प्रकरण को अब समाप्त करते हैं+हे अर्जुन १ यह २ लि०शुद्ध सच्चिदानन्द+आत्मा ३ सब के ४ देह में ५ लि० ब्रह्माजी से लेकर चींटी पर्य्यन्त+नित्य ६ अवध्य ७ लि० है अर्थात् इसका बध नहीं होसक्ता मरनहीं सक्ता तात्पर्य्य किसी क्रिया का बिषय नहीं अविकारी अक्रियहै+तिस कारणसे ८ सब भूतों को ९। १० अर्थात् कर्ता कर्म्मादि रूप भूतों के निमित्त १० तू ११ शोच करनेको १२ नहीं १३ योग्यहै १४ तात्पर्य्यमरे जीवतों के निमित्त तू शोचमतकर जो पण्डितोंकीसी बातें करता है तो फिरसच्चाही पण्डित होनाचाहिये पण्डित ब्रह्मज्ञानीका नामहै सो होना चाहिये इत्यभिप्राय: + ३० +

**स्वधर्म्ममपिचावेक्ष्य नविकम्पितुमर्हसि। धर्म्या-द्धियुद्धाच्छ्रेयोन्यत्क्षत्रियस्यनविद्यते + ३१ +**

स्वधर्म्मम् १ अपि २ च ३ अवेक्ष्य ४ विकम्पितुम् ५ न ६ अर्हसि ७ हि ८ धर्म्यात् ९ युद्धात् १० अन्यत् ११ श्रेय: १२ क्षत्रियस्य १३ न १४ विद्यते १५+३१+ अ०टु० लौकिक रीति से अब श्री महाराज अर्जुनको समझाते हैं आठ श्लोकों में अर्जुनने पीछे कहा था कि महाराज अपने सम्बन्धियों को युद्धमें मरता हुआ समझ कर मेरा शरीर कम्पताहै उस वाक्य का स्मरण करके श्री महाराज कहते हैं कि प्रथम तो बिचार दृष्टि करके तुझको घबराना न चाहिये सिवाय इसके अपने धर्म्मका स्मरण करके भी तुझको घबराना योग्यनहीं क्योंकि परमार्थ दृष्टि करके तो कम्पन का सावकाश है ही नहीं+और अपने धर्म्म को भी १।२।३ देखकर ४ कम्पा करनेको ५ नहीं योग्य है तू ६।७ लि० और यह जो तूने पीछे कहा कि रणमें अपने सम्बन्धियोंको मारकर अपना भला नहीं देखताहूं यह मत समझ+क्योंकि ८ धर्म्मयुक्त युद्धसे ९। १० लि० सिवाय पृथक्+ अन्यत् ११ लि० भिक्षाटनादि में+ क्षत्री का १२ कल्याण भला १३ नहीं है १४। १५ लि० इन आठों श्लोकों में इकतीसवें से अड़तीसवें तक प्रकरण का अर्थ तो वहीहै जो अक्षरार्थहै परंतु तात्पर्य इनआठों श्लोकों का परमार्थ भी है उसको ऐसे समझो कि क्षत्री अर्जुनकी जगह तो मुमुक्षु वा ज्ञानी और युद्धकी जगहअन्त:करण इन्द्रियादिका बिरोध+श्री महा-राज विद्वानोंको समझातेहैं कि बिचार दृष्टि करके भी शरीरादिकों का निरोध करना चाहिये घबराना योग्य नहीं और अपने धर्म्मको भी देख

कर इन्द्रियादिकोंका विषयोंसे निरोध करना योग्य है क्योंकि शास्त्र का तात्पर्य वहिर्मुखता में नहीं और जो पुरुष ज्ञाननिष्ठ नहीं पूर्व मीमांसा वा उपासना को इष्ट धर्म्म समझता है तौभी अन्तःकरणादि के निरोध रूप धर्म्मसे पृथक् अन्यत् वहिर्मुख होना आदि उनका भला करने वाला नहीं + ३१ +

**यदृच्छयाचोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम् । सुखिनःक्षत्रियाःपार्थ लभंतेयुद्धमीदृशम् + ३२ +**

पार्थ १ ईदृशम् २ युद्धम् ३ सुखिनः ४ क्षत्रियाः ५ लभन्ते ६ अपावृतम् ७ स्वर्गद्वारम् ८ यदृच्छया ९ च १० उपपन्नम् ११ + ३२ + अ० उ० आनन्दका मार्ग अपने आप तुझको प्राप्त हुआहै तू तो बड़ा भागीहै शोच क्योंकरता है+हे अर्जुन १ ऐसे युद्ध को २ । ३ सुखीक्षत्री ४ । ५ अर्थात् स्वर्गादि जन्य सुखके भोगने वाले ५ प्राप्त होतेहैं ६ अर्थात् ऐसायुद्ध भाग्यवान् क्षत्रियोंको प्राप्त होताहै ६ सि० कैसा है यह युद्ध कि+खुला स्वर्गका दरवाजाहै ७ । ८ और यदृच्छाकरके ९ । १० प्राप्त हुआहै ११ अर्थात् बिना बुलाये बिना प्रार्थना इच्छाकिये अपनेआप प्राप्तहुआहै११सि० परमार्थ यह है कि यह मनुष्य शरीर सुर दुर्लभ बड़े भाग्यसे अपने आप ईश्वरकी कृपा करके प्राप्त हुआहै इसमें अन्तःकरणादिकों का निरोध करना कैसा है कि खुलाहुआ मोक्षद्वार है परमानन्द जीवन्मुक्ति के भोगने वाले महात्मा संघातका निरोध करतेहैं इस शरीर के प्राप्त होने का फल शब्दादि भोग नहीं और परलोक के भोग भी अनित्य होने से दुःख देने वाले हैं इस शरीर से मोक्ष मार्गमें ही प्रयत्न करना योग्य है + ३२ +

**अथचेत्त्वमिमंधर्म्यं संग्रामंनकरिष्यसि । ततःस्वधर्मंकीर्त्तिंचहित्वापापमवाप्स्यसि + ३३ +**

अथ १ चेत् २ त्वम् ३ इमम् ४ धर्म्यम् ५ संग्रामम् ६ न ७ करिष्यसि ८ ततः ९ स्वधर्मम् १० कीर्त्तिम् ११ च १२ हित्वा १३ पापं १४ अवाप्स्यसि १५ + ३३ + अ० उ० व्यतिरेक मुखकरिके पक्षान्तर यह कहते हैं कि जो तू युद्ध न करेगा तो तेरी बड़ी क्षति होगी + और १ जो २ तू ३ इस ४ धर्म्म युक्त संग्राम को ४ । ५ । ६ न करेगा ७ । ८ सि० तौ+तिस कारण से ९ अपने धर्म्म को १० और कीर्त्ति को ११।१२ त्यागकर १३ पाप को १४ प्राप्त होगा १५ सि० परमार्थ यह है कि जो इन्द्रियादिकों का

निरोध रूप अपने धर्म्म को न करोगे तोतुम्हारा धर्म्म जाता रहने से तुम्हारी कीर्त्ति भी नाश हो जायगी ऐसा पापकरने से नरक को प्राप्तहोगे तात्पर्य धर्म्मात्मा वही हैं जिन का संघात निरोध है और जिनका यश सज्जनोंमेंहोवे वेही सुयश वाले हैं नहीं तो अपने अपने ऐसे जाती में कोई न कोई एक प्रधान कहलाता है + ३३ +

**अकीर्त्तिंचापिभूतानि कथयिष्यंतितेऽव्ययाम् । संभावितस्यचाकीर्त्तिर्मरणादतिरिच्यते** + ३४ +

भूतानि१ ते २ अकीर्त्तिम् ३ च ४ कथयिष्यन्ति ५ अव्ययाम् ६ सम्भावितस्य ७ च ८ अकीर्त्तिः ९ मरणात् १० अपि ११ अतिरिच्यते १२ + ३४+

**भ० उ०** यहनहीं समझना कि अकीर्त्ति होनेसे मेरी क्याक्षति होगी दो चार वर्ष कहकर सब चुप होजावेंगे अपितु तेरी अकीर्त्ति सदा बनीरहेगी यह कहते हैं + छोटे बड़े सब स्त्री पुरुष प्राणी मात्र १ तेरी २ अकीर्त्ति को ३ भी ४ कहेंगे ५ **लि०** और तुझको नरक भी होगा + कैसीहै वह अकीर्त्ति कि + सदा बनी रहैगी यह तात्पर्य है ६ **लि०** फिर इससेमेरी क्या क्षति होगी यह शंका करके कहतेहैं कि अकीर्त्ति सब के वास्तेही बुरीहै + और प्रतिष्ठा वाले पुरुष की ७।८ अकीर्त्ति ९ **लि०** तो + मरने से १० भी ११ सिवाय है१२ **लि०** परमार्थ यहहै कि जिस कीर्त्तिके वास्ते तुम दिन रात प्रयत्न करते हो यह चाहते हो कि हमारा नाम बनारहै सो परमधर्म्म जो संघात का निरोध करना इसके न करनेसे सदा जीते जी और मरकर दूसरे जन्म में इस प्रकार सदा अकीर्त्तिबनी रहेगी जीते जी तो लोगोंकी निन्दा सहनी पड़ेगी और मरकर यमराज के सामने दुर्दशा होवेगी वह क्लेश मरने से भी अधिक है + ३४ +

**भयाद्रणादुपरतंमंस्यन्तेत्वांमहारथाः । येषांचत्वंबहुमतोभूत्वायास्यसिलाघवम्** + ३५ +

महारथाः १ त्वाम् २ भयात् ३ रणात् ४ उपरतम् ५ मंस्यन्ते ६ येषाम् ७ च ८ त्वम् ९ बहुमतः १० भूत्वा ११ लाघवम् १२ यास्यसि १३ + ३५ +

**भ० उ०** लोग यह नहीं समझेंगे कि अर्जुन युद्धमें हिंसापाप समझ कर उपराम हुआहै यह नहीं समझेंगे तोफिर क्या समझेंगे यह शंका करके श्रीमहाराज यह कहते हैं + शूरबीर दुर्योधनादि १ तुझ को २ **लि०** मरनेके+भयसे ३ रणसे ४ हटाहुआ ५ मानेंगे ६ अर्थात् यह समझेंगे कि

मरने का भय करके अर्जुन रण मेंसे भागगया हटगया सि० जोवे ऐसा-ही समझेंगे तो मेरी इसमें क्याक्षति होगी यह शंका करके श्रीमहाराज यह कहते हैं+ जिनको ७ अर्थात् दुर्योधनादि को ७ और ८ सि० सिवाय उनके अन्य बहुत पुरुषोंका+तू ९ बड़ा १० सि० कहलाता है दुर्योधनादि तुझको बहुत गुण वाला मानते हैं ऐसा + होकर ११ छुटाईको १२ प्राप्त होगा १३ अर्थात् वेही दुर्योधनादि कि जो तुझको बहुत गुण वाला शूरबीर मानतेहैं तुझको कातर नपुंसक मूर्ख बतावेंगे यहतेरी क्षतिहोगी जिनके बीचमें तू बहुगुणवाला मानाजाताहै उनकेही बीचमें छुटाईको प्राप्तहोगा १३ परमार्थ यह है कि जितेन्द्रिय महात्मा महापुरुष अजितेन्द्रिय बहि-र्मुखोंको ऐसा समझेंगे कि शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण का निरोध करना तो कठिन समझ रक्खाहै रोचक वाक्योंका आश्रय लेकर भोग भोगेहैं धन्य समझ और धन्य साधन किंचित् मात्र भी शास्त्र का तात्पर्य न समझा अग्निको अग्निसे बुझाते हैं अन्तःकरणादि के निरोध को बखेड़ा बताते हैं महात्मा लोग ऐसे पुरुषोंको आलसी, प्रमादी, विषयी,वहिर्मुख मानते हैं ज्ञान भक्ति कर्म्मका आश्रय लेकर जो वहिर्मुख अजितेंद्रिय होंगे तो नीचता को प्राप्त हो जावेंगे +३५ +

**अवाच्यवादांश्चबहून्वदिष्यन्तितवाहिताः । निन्द-न्तस्तवसामर्थ्यंततोदुःखतरंनुकिम् + ३६ +**

तव १ सामर्थ्यम् २ निन्दन्तः ३ तव ४ अहिताः ५ बहून् ६ अवाच्य-वादान् ७ च ८ वदिष्यन्ति ९ ततः १० दुःखतरम् १० किम् ११ नु १२ + ३६ + अ० उ० तुझको छोटा भी समझेंगे और + तेरे १ पराक्रम को निन्दा करते हुये २ । ३ तेरे ४ बैरी ५ सि० तेरे निमित्त + बहुत अ-बाच्य बचनों को ६ । ७ भी ८ अर्थात् न कहने के योग्य जो बचन तिनको भी ८ कहेंगे ९ सि० इससे मेरी क्या क्षतिहोगी यह शङ्काकरके कहतेहैं+ तिससे १० अर्थात् समर्थ होकर दुर्बाक्य सुननेसे सिवाय और १० विशेष दुःख ११ क्या १२ सि० होगा + यह शब्द बितर्क में बोलाजाताहै जैसे कोई किसी को ताना धिक्कार देकर बोले कि और इसको कर्म्मसे सिवाय क्या होगा ऐसे ही अर्जुन को ताना देकर श्रीमहाराज कहते हैं कि दु-र्बाक्य सहने से सिवाय और क्या दुःख होगा यह इस नु शब्द का ता-त्पर्य्यार्थ है १३ परमार्थ यह है कि संसार में जो अजितेन्द्रिय वहिर्मुख हैं और दैवयोग से उनको धन प्राप्त होगया है वा राज्यादि अधिकार

मिलगया है उनको कोई बुरा न कहे उनके अवगुण समझकर चुपरहे यह नहीं समझना किन्तु वेद वेदान्त पातंजलि शास्त्र उनकी निन्दाकरते हैं सिवाय उनके सज्जन साधु लोग निस्पृही सब उनको बुरा समझतेहैं प्रसङ्ग से कह भी देतेहैं और जो गृहस्थ लोग मुखपर नहीं कहते तो पीछे बुरा कहते हैं विचारो इससे सिवाय उन निभागों को और विशेष दुःख क्या होगा और उनके सिवाय और कौन बुरा है जिनकी वेदशास्त्र महात्मा बुराई करें + ३६ +

**हतोवाप्राप्स्यसिस्वर्गंजित्वावाभोक्ष्यसेमहीम्। तस्मादुत्तिष्ठकौन्तेययुद्धायकृतनिश्चयः + ३७ +**

हतः १ वा २ स्वर्गम् ३ प्राप्स्यसि ४ वा ५ जित्वा ६ महीम् ७ भोक्ष्यसे ८ कौन्तेय ९ तस्मात् १० उत्तिष्ठ ११ युद्धाय १२ कृतनिश्चयः १३ अ० टी० पीछे अर्जुन ने कहाथा कि न जानिये मुझको जीतेंगे वा मैं इनको जीतूंगा उस बाक्यका स्मरण करके श्रीमहाराज यह कहते हैं कि तेरा दोनों प्रकार भलाहोगा + सि० युद्ध में + जो मरगया १। २ सि० तू तो मरकर स्वर्ग को ३ प्राप्त होगा ४ और ५ सि० जो जीतगया तो + जीतकर ६ पृथिवी को ७ भोगेगा ८ अर्थात् राज्य करेगा ८ हे अर्जुन ९ तिस कारण से १० उठखड़ा हो ११ अर्थात् दोनों प्रकार अपनी भलाई समझ कर युद्धकर ११ सि० कैसा है तू + युद्धके लिये १२ किया है निश्चय जिसने १३ अर्थात् युद्ध करने का निश्चयकरके तो तू यहां आयाहै अब क्यों कायरपन करता है तात्पर्य + पहलेही अर्जुन ने युद्ध करने का निश्चय कर लियाहै कुछ श्री महाराज का तात्पर्य युद्ध कराने में नहीं तू युद्धकर खड़ाहो यह प्रासंगिक लौकिक रीति है अभिप्राय श्रीमहाराज का परमार्थ मेंहीं है + परमार्थ यहहै कि श्रीमहाराज भक्तोंसे कहते हैं जो तुम शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण का निरोध करते करते मरगये इस परम धर्ममें तो बड़े २ लोक को प्राप्त होगे और जो अन्तःकरणादि को तुमने जीतलिया बशमें करलिया तो ज्ञान द्वारा जीवतेही जीवन्मुक्ति का आनन्द भोगोगे ऐसा विचारकर सावधान होके इन्द्रियादिकों का निरोध करो दोनों पक्ष में आनन्द है नर शरीर दुर्लभ है ॥ नरतनु पाय विषय मन देहीं। पलटि सुधाते शठ विष लेहीं + ३७ +

**सुखदुःखेसमेकृत्वालाभालाभौजयाजयौ। ततोयुद्धाययुज्यस्वनैवंपापमवाप्स्यसि + ३८ +**

सुख दुःखे १ समे २ कृत्वा ३ लाभालाभौ ४ जयाजयौ ५ ततः ६ युद्धाय ७ युज्यस्व ८ एवम् ९ पापम् १० न ११ अवाप्स्यसि १२ + ३८ + अ० उ० पीछे अर्जुन ने कहा था कि युद्ध करने में मुझे पाप होगा उस वाक्य का स्मरण करके श्री महाराज यहकहते हैं + सुखदुःख को १ समान २ करके ३ अर्थात् इन दोनों को फल में बराबर समझ कर लाभ अलाभ को ४ जय अजय को सि० भी समान समझ कर + पीछे उसके ५ युद्ध के वास्ते ७ चेष्टा कर ८ अर्थात् युद्ध कर ८ इसप्रकार ९ पाप को १० नहीं ११ प्राप्तहोगा तू १२ तात्पर्य सुख दुःख का कारण लाभ अलाभ है लाभा लाभका कारण जय अजयहै इन सब में राग द्वेष रहित होकर युद्ध कर कभी पाप न होगा + परमार्थ यह है कि अन्तःकरणादि के निरोध काल में सुख दुःखको इष्ट अनिष्ट की प्राप्ति को बराबर समझना चाहिये हर्ष शोक न करना प्रथम अन्तःकरणादि के निरोध कालमें विघ्न दुःख अपमानादि बहुत होतेहैं और फिरसुख सन्मानादि भी बहुत होते हैं दोनों में हर्ष शोक त्याग करके अन्तःकरण का निरोध करताही रहे इस प्रकार बन्धन को नहीं प्राप्त होंगे और जो दुःख सुख विघ्न सन्मानादि के झपट्टे में आगये वा स्वर्गादि फल में फँस गये तो फिर बन्धन से छूटना कठिन है तात्पर्य अन्तःकरणादि का निरोध निष्काम होकर करना योग्य है इस प्रकार बहिरङ्ग कर्म्मों के त्याग में पाप न होगा + ३८ +

**एषातेभिहितासांख्येबुद्धिर्योगेत्विमांशृणु । बुद्ध्यायुक्तोययापार्थकर्मबन्धंप्रहास्यसि + ३९ +**

एषा १ सांख्ये २ बुद्धिः ३ ते ४ अभिहिता ५ योगे ६ तु ७ इमाम् ८ शृणु ९ पार्थ १० यया ११ बुद्ध्या १२ युक्तः १३ कर्म्मबन्धम् १४ प्रहास्यसि १५ + ३९ + अ० उ० ग्यारहवें श्लोक से लेकर तीसके श्लोक तक बीस श्लोकों में अर्जुन का शोक मोह दूर करने के लिये ब्रह्मज्ञान उपदेश किया फिर आठ श्लोकों में लौकिक न्याय करके अर्जुन को समझाया अब उस लौकिक न्याय को समाप्त करके ज्ञान निष्ठा में अर्जुन को तत्पर करने के लिये ज्ञाननिष्ठा का जो साधन भगवत् भक्ति आदि निष्काम कर्म्म योग उसको फलके सहित निरूपण करतेहैं + हे अर्जुन ग्यारहवें श्लोकसे लेकर तीसवें श्लोक तक बीस श्लोकों में जो तुझको ज्ञान उपदेशकिया + यह १ आत्मा तत्त्व के विषय २ ज्ञान ३ तेरे अर्थ ४ तुझसेकहा ५ सि० मैंने अर्थात् यह तो मैंने ब्रह्मज्ञान उपदेश किया परन्तु यह अत्यंत सूक्ष्म

अलौकिक आश्चर्य पदार्थ है जो तेरी समझ में न आया हो तो इसकी प्राप्ति और समझके लिये इसका साधन भगवत् भक्तिआदिनिष्काम कर्म + योग विषय ६ भी ७ सि० ज्ञानमें अब कहता हूं + इसको ८ सुन तू ६ हे अर्जुन १० सि० यह वह ज्ञान तुझको सुनाता हूं + कि जिस ज्ञान करके ११। १२ युक्त १३ सि० हुआ तू अर्थात् जिस ज्ञान का अनुष्ठान करके अन्तःकरण शुद्धिद्वारा + कर्म्मरूप बन्धनको अर्थात् धर्म्माधर्म्मरूप बन्ध न को १४ भले प्रकार त्यागदेगा १५ अर्थात् बन्धनसे छूटजायगा मुक्त हो जायगा १५+३६+

**नेहाभिक्रमनाशोऽस्तिप्रत्यवायोनविद्यते। स्वल्पमप्यस्यधर्म्मस्यत्रायतेमहतोभयात् + ४० +**

इह १ अभिक्रमनाशः २ न ३ अस्ति ४ प्रत्यवायः ५ न ६ विद्यते ७ अस्य ८ धर्म्मस्य ६ स्वल्पम् १० अपि ११ महतः १२ भयात् १३ त्रायते १४ + ४० + अ० उ० जैसे खेती आदि में फलपर यत्न अनेक विघ्न होतेहैं ऐसेही इस भगवत् आराधनादि निष्काम कर्म योगमें भी होंगे तो फिर अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञानकी प्राप्ति कठिन प्रतीतहोतीहै तात्पर्य फलकी प्राप्ति पर यत्न निर्विघ्न समाप्तहोना निष्काम कर्म्म योग का कठिन प्रतीत होताहै यह शङ्काकरके कहतेहैं + निष्काम कर्म्मयोग में १ सि० किसी प्रकारका बीचमें बिघ्न भी हो जावे तो भी + प्रारंभका नाश २ नहीं है ३। ४ सि० जैसे किसी ने माघ मास में प्रातःकाल स्नान करनेका प्रारंभकिया और दो चार दिनके पीछे उसमहीने के बीचमें कुछ विघ्न होगया कि जिसकरके वह निष्काम पुरुष महीना भर स्नान न करसका तो उस थोड़ेही कालमें स्नान करनेका अर्थात् प्रारंभ मात्रका भी नाशनहीं होताहै तात्पर्य वह सकाम कर्म्मवत् और खेती आदि कर्म्मवत् निष्फलनहीं जाताहै एक न एक दिन अवश्यहो निष्काम पुरुषको निष्काम कर्म्मयोग के फिर सन्मुखकरके अन्तःकरण शुद्धि द्वारा ज्ञाननिष्ठा करके मोक्षकरेगा + द्वितीय शंका यहहै कि जैसे मंत्रका जप वा पाठ बिधिवत् न होसके तो उसमें उलटापापहोताहै अथवा रोग दूरकरनेके लिये औषध खातेहैं जो कदाचित् वैद्यकी समझ में रोग न आवे तो उलटा औषध खानेसेही प्राणी मरजाताहै यह निष्काम कर्म्म भी ऐसाही होगा क्योंकि प्रथम तो धर्म्म कर्म्म भक्ति आदिका स्वरूप यथार्थही जानना कठिनहै सब पण्डित आचार्य्योंका एक सिद्धान्त नहीं और जो किसी एक मतमें निश्चय भी किया तो उस कर्म्मका अनुष्ठान विधिवत् होना कठिनहै और जो दूसरेके वाक्यमें विश्वासकरके अनुष्ठान किया और

बतलानेवालेने बुद्धिके भ्रमसे वा मत मतान्तरकी खैंचसे यथार्थ न बतलाया तो फलदेनातो पृथक् रहा उलटा पापलगने से डर लगता है यह शंकाकरके श्रीमहाराज कहतेहैं कि ये दोष सकाम कर्म्मयोगमेंहैं निष्काम कर्म्मयोगमें + प्रत्यवाय पाप ५ नहीं है ६। ७ इसधर्मका ८ । ९ थोड़ा १० भी ११ सि० अनुष्ठान किया हुआ प्रारंभ मात्रभी + बड़े भयसे १२ १३ अर्थात् दुःख आलय संसार से १३ रक्षा करताहै १४ तात्पर्य भगवत् आराधनादि निष्काम कर्म्म योग थोड़ा भी अपनी शक्तिके अनुसार किया हुआ अन्तःकरण शुद्धि द्वारा ज्ञान निष्ठाकी प्राप्ति करके जन्म मरण दुःख रूप संसार से छुटाकर पूर्ण ब्रह्म परमानन्द स्वरूप आत्माको प्राप्त करता है पिछले पूर्व पक्षमें कहे हुये दोष सब सकाम कर्म्मोंमें हैं निष्काम कर्म और सकाम कर्म्मों का बड़ा भेद है + ४० +

**व्यवसायात्मिकाबुद्धिरेकेहकुरुनन्दन। बहुशाखाह्यनन्ताश्चबुद्धयोऽव्यवसायिनाम् + ४१ +**

कुरुनन्दन १ इह २ व्यवसायात्मिका ३ बुद्धिः ४ एका ५ अव्यव सायिनाम् ६ बुद्धयः ७ अनन्ताः ८ च ९ बहुशाखाः १० हि ११ + ४१ + अ० उ० जबकि निष्काम कर्म योगका यह अद्भुत माहात्म्य आप कहते हो तो सब लोग इसीका अनुष्ठान क्यों नहीं करते मूर्त्तिमान् परमेश्वर का दर्शन बैकुण्ठ स्वर्गादि फल क्यों चाहते हैं यह शंका करके श्री महाराज कहते हैं यह + हे अर्जुन १ इस मोक्ष मार्ग में २ सि० मुमुक्षु अन्तर्मुख व्यवसायी पुरुषों के विषय + निश्चय स्वरूप वाली ३ अर्थात् निश्चय करने वाली आत्माकी ३ बुद्धि ४ अर्थात् ज्ञान ४ एक ५ सि० ही है तात्पर्य इस अर्थमें जिस बुद्धिका निश्चय है अर्थात् निश्चल है जो बुद्धि इस अर्थ में कि निष्काम भगवत् आराधनादि कर्म्मयोग करके अन्तःकरणकी शुद्धि होती है तब शुद्धान्तःकरण होय निस्सन्देह परात्पर परमानन्द पूर्ण ब्रह्म आत्माको कि जिसको परमगति कहते हैं प्राप्त होता है जीव इसका नाम व्यवसायात्मिका बुद्धिहै सो यह मोक्ष मार्गमें एकही है अर्थात् इस एकज्ञान के सिवाय और दूसरा कोई ६ ज्ञान मोक्षका हेतु नहीं और जिनके यह निश्चय नहीं उनको + अव्यवसायी बहिर्मुख प्रमाणजनित विवेक बुद्धिरहित कहते हैं उनके ६ ज्ञान ७ अनन्त ८ और ९ बहुत शाखा भेद वाले १० भी ११ सि० हैं तात्पर्य वैदिक मार्ग तो सनातन से एकही चला आता है कि जो पूर्व निरूपण

किया स्मार्तमत से उसका बिरोध नहीं और कल्पितमत अनन्त हैं और एक एक में भी नानाभेद हैं जिस वास्ते नये मतलोगों ने कल्पित किये हैं श्रौत स्मार्तमार्ग सनातन को छोड़ दिया है इसका हेतु तेंतालीस के श्लोक में श्री महाराज कहेंगे + ४१ +

**यामिमांपुष्पितांवाचंप्रवदन्त्यविपश्चितः। वेदवादरताःपार्थ नान्यदस्तीतिवादिनः + ४२ +**

याम् १ वाचम् २ पुष्पिताम् ३ प्रवदन्ति ४ इमाम् ५ पार्थ ६ वेदवादरताः ७ अविपश्चितः ८ न ९ अस्ति १० अन्यत् ११ इति १२ वादिनः १३ + ४२ + अ० टी० प्रमाणजनित विवेक बुद्धि रहित बहिर्मुख अव्यवसायी जिनको आप कहते हैं वे क्या बिना प्रमाण के कर्म्म उपासना करते हैं यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं यह कि उनके प्रमाणों को सुन + सि० वेदों का सिद्धान्त तात्पर्य जानने वाले महात्मा व्यवसायिनः + जिसबाणी को १।२ पुष्पिता ३ कहते हैं ४ तात्पर्य जैसे किसी वृक्ष में फूल तो बहुतसुन्दर दीखे परन्तु फल उस में नहीं लगता है वा लगता है तो कड़वा ऐसे ही वेदों में रोचक वाक्य हैं अर्थात् अर्थ बाद वाली श्रुति हैं सुनने में तो वे बहुत प्रिय प्रतीत होती हैं फलउनका कुछ नहीं अर्थात् जो फल उसका अव्यवसायी कहते हैं वह फल उस श्रुति का नहीं जैसे व्रत तीर्थादि का माहात्म्य अर्थबाद है तात्पर्य उन का अन्तःकरण की शुद्धि और चित्तकी एकाग्रता में है स्वर्ग बैकुंठ पुत्रादि में नहीं ऐसी ऐसी बाणीको कि जिसको वेद पुष्पिता कहते हैं + हे अर्जुन इसको ५ सि० ही अव्यवसायिनः मोक्षका साधन सिद्धान्त कहते हैं + कैसे हैं वे अव्यवसायिनः + ६ वेदवाद में है प्रीति जिनकी ७ अर्थात् वेदों में अर्थबाद रोचक वाक्य हैं वे उनको प्रिय लगते हैं और वास्ते चर्चा करने के अपनी पण्डिताई दिखाने के लिये उन अर्थबादों को कंठकर लेते हैं ऐसे + ७ अविवेकी मन्दमति बहिर्मुख ८ सि० फिर कैसे हैं ये लोग कि आप अज्ञानी बनेतो बने ब्रह्मज्ञान का भी खण्डन करते हुये ब्रह्मज्ञानियों को अज्ञानी बताते हैं तात्पर्य वे यह कहते हैं कि जो हमारा मत है अर्थात् भेद सिद्धान्त है इससे सिवाय + नहीं ९ है १० अन्यत ११ सि० और कोई मत सिद्धान्त अद्वैत ब्रह्मज्ञान ज्ञाननिष्ठा संन्यास जो हम कहते हैं यही सिद्धान्त है। यह १२ कहने का स्वभाव है जिनका १३ तात्पर्य वेदान्त में दोषनिकालने यही बकनेका

स्वभावहै जिनका और भी इनके विशेषण अगले श्लोक में हैं +४२+

**कामात्मानःस्वर्गपराजन्मकर्म्मफलप्रदाम् । क्रिया-विशेषबहुलांभोगैश्वर्य्यगतिंप्रति + ४३ +**

कामात्मानः १ स्वर्गपराः २ जन्मकर्मफलप्रदाम् ३ भोगैश्वर्यगतिम् ४ प्रति ५ क्रियाविशेषबहुलाम् ६ + ४३ + अ० उ० ऐसा अनर्थ वे क्यों करते हैं इस अपेक्षा में श्रीमहाराज यह कहते हैं कि वे + काम भी विषयी वहिर्मुख १ सि० हैं फिर कैसे हैं कि + स्वर्गही है परा पुरुषार्थ अवधि जिनके २ सि० इस विशेषण से स्पष्ट यह प्रतीतहोता है कि यज्ञ दान व्रत तीर्थ भगवत् आराधनादि जो करते हैं ये तो कैवल्य मोक्ष के लिये नहीं करते किन्तु भोगों के लिये करते हैं +स्वर्गपद तो उपलक्षण है अर्थात् बैकुंठ गोलोकादि सावयव लोक सब आगये + पिछले श्लोक में जो कहाथा कि वे इस पुष्पिता बाणी को सिद्धान्त कहते हैं उस बाणी के विशेषण और भी सुन + कैसी है वह बाणी + जन्म कर्मफल की देनेवाली ३ सि० है अर्थात् उस बाणी के अनुसार जो कर्मकिया जाता है उस कर्म्म का यही फल है कि बारम्बार संसार में जन्महोना जन्मही उस कर्मका फलहै + फिर कैसी है + भोग ऐश्वर्य की प्राप्तिके प्रति ४।५ सि० तात्पर्य्य भोग ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये साधन है वह बाणी + उस बाणी के अनुसार अनुष्ठान करने से भोग ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है + फिर कैसी है वह बाणी + क्रिया विशेष बहुत हैं जिसमें६ सि० अर्थात् उस बाणी में नाना प्रकार की क्रिया हैं और एक एक क्रिया का अन्त नहीं प्रतीतहोता है क्योंकि अनन्त बहुतहैं हे अर्जुन उन अव्यवसाइयों के ऐसे ऐसे वाक्योंका प्रमाण है ऐसी ऐसी बाणी बकते हुये संसार में भ्रमते रहते हैं ऐसे पुरुषों के साक्षात् मोक्ष की साधन रूप व्यवसायात्मिका बुद्धिनहीं उत्पन्न होतीहै अगले श्लोक के साथ इसका अन्वय है + ४३ +

**भोगैश्वर्यप्रसक्तानांतयापहृतचेतसाम् । व्यवसाया-त्मिकाबुद्धिःसमाधौनविधीयते + ४४ +**

भोगैश्वर्यप्रसक्तानाम् १ तया २ अपहृतचेतसाम् ३ समाधौ ४ व्यवसायात्मिका ५ बुद्धिः ६ न ७ विधीयते ८ + ४४ + अ० उ० भेदवादी सदा ब्रह्म ज्ञान से विमुख रहकर संसार में भ्रमते हैं यह कहते हैं श्री

महाराज + भोग ऐश्वर्यमें जो आसक्त हैं १ सि० और + तिस करके २ अर्थात् उस पुष्पिता बाणी करके २ हरा गया है चित जिनका ३ अर्थात् उसपुष्पिता बाणी करकेउनकी विवेक बुद्धि आच्छादित हो गई ढक गई है उनके ३ अन्तःकरण में ४ व्यवसायात्मिकाबुद्धिः ५।६ नहीं ७ उत्पन्न होती है ८ वा नहीं स्थिर होती८ तात्पर्य उनकाचित्त शान्त नहीं होता क्योंकि सदा इस लोक परलोक के विषयोंमें तत्पर रहते हैं+टी० जो स-माधान किया जावे उसको भी समाधि कहते हैं इस व्युत्पत्तिसे यहां स-माधिका अर्थ अन्तःकरण है + ४४ +

**त्रैगुण्यविषयावेदानिस्त्रैगुण्योभवार्जुन। निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थोनिर्योगक्षेमआत्मवान् + ४५ +**

त्रैगुण्यविषयाः १ वेदाः २ अर्जुन ३ निस्त्रैगुण्यः ४ भव ५ निर्द्वन्द्वः ६ नित्यसत्त्वस्थः ७ निर्योगक्षेमः ८ आत्मवान् ९ + ४५ + प्र० उ० जब कि वेदों ही में पुष्पितावाणी रोचक निष्फल वाक्य हैं तो उन वाक्यों के कहनेवाले का और उन वाक्यों के अनुसार अनुष्ठान करनेवाले का क्या दोष है यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं कि क्या वेदों में केवल पुष्पिता बाणी ही है साक्षात् मोक्षका साधन क्या उसमें नहीं अर्थात् वेदों में रोचक बाक्य भी हैं और साक्षात् मोक्ष के साधन मंत्रभी हैं प्रत्युत मारण उच्चाटनादि मंत्र बहुत हैं परन्तु मुमुक्षुको सिवाय साक्षात् मोक्षसाधने के और वाक्यों से कुछ काम नहीं इस गीताशास्त्रमें ब्रह्मविद्या साक्षात् मोक्षका साधन निरूपण करताहूं मैं समस्त वेद वाक्योंसे यहांकुछ प्रयोजन नहीं जो उनका प्रमाण दिया जावे मुमुक्षुका प्रयोजन केवल मोक्षके साधनोंसे है सोई सुन + सतोगुणी रजोगुणी तमोगुणी कामना वाले पुरुषोंका विषय १ सि० भी है + वेद २ अर्थात् जैसे को तैसा फलके देने वाले भीहैं और साक्षात्मोक्षका साधन भी हैं वेद २ हे अर्जुन ३ सि०परन्तु तुझको तोमैं ब्रह्मविद्या साक्षात् मोक्षका साधन सुनाताहूं इस समय तूतो + गुणातीत निष्काम ४ हो ५ सि० रोचक वाक्योंकी तरफ़ दृष्टिमतकर गुणातीत होने के साधन यह हैं द्वंद्वरहित ६ सि०हो अर्थात् प्रारब्धवशात् जो सुखदुःख इष्टानिष्टादि प्राप्त हों सबको सहनकर सुख दुःखादि की प्राप्ति में हर्षबिषाद के बश मत हो निर्द्वंद्व होनेमें हेतु यह साधन है कि + नित्यसत्त्व जो आत्मा उसमें स्थित ७ सि० हो अर्थात् आत्मनिष्ठ हो अथवा सदा सत्त्व-गुणमें दीर्घ काल स्थिति होसको है इसी वास्ते यह कहते हैं कि+ योग

क्षेम रहित ८ सि० हो अर्थात् जो पदार्थ लौकिक प्राप्त नहीं उसकी प्राप्तिका तो उपाय मत कर और जो प्राप्त है उसकी रक्षामें प्रयत्न मतकर + पूर्वोक्त साधनें का हेतु यह साधनहै कि + अप्रमत्त ६ सि० हो अर्थात् प्रमादी प्रमत्त मत हो सदा चैतन्य अनालस्य रहना योग्य है विषयों से बिमुख होकर आत्माके सन्मुख होनाचाहिये पूर्वोक्त साधन जिसके नहीं उससे मोक्षमार्ग में प्रयत्न होना कठिनहै + ४५ +

**यावानर्थउदपाने सर्वतःसंप्लुतोदके । तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्यविजानतः + ४६ +**

यावान् १ अर्थः २ उदपाने ३ सर्वतः संप्लुतोदके ५ तावान् ६ सर्वेषु ७ वेदेषु ८ विजानतः ९ ब्राह्मणस्य १० + ४६ + अ० उ० इस लोक परलोक के सुन्दर भोगों से हटाकर निष्काम गुणातीतहोना आपकहते हो इसमें क्या आनन्द है यहतो रूखी सूखी शिलाप्रतीतहोती है सुन्दर कर्म्म उपासना करके स्वर्ग बैकुंठादि में जाकर आनन्द भोगना योग्य है यह शङ्का करके श्रीमहाराज कहते हैं कि + सि० जैसे + जितना १ प्रयोजन २ उदपानमें ३ सि० जगह जगह यत्र कुत्र भ्रमनेसे सिद्धहोता है अर्थात् जलपान किया जावे जिसमें उसको उदपान कहते हैं कूप सर सरितादिकों का नाम उदपान है कूपादि के जलों में स्नानतिरना नावका चलना इत्यादि प्रयोजन एक जगह सिद्ध नहीं होसक्ता जहां तहां भ्रमने से सिद्ध होता है तात्पर्य जितना प्रयोजन उदपान में जहांतहां भ्रमने से सिद्धहोता है वह + समस्त ४ समुद्र में ५ सि० एक जगहही सिद्ध होजाता है तात्पर्य जैसे समुद्र में सब प्रयोजनउदपानों का सिद्ध होजाताहै तैसेही जितना + सब वेदों में ६।७ सि० जो फल है अर्थात् समस्त वेदोक्त कर्म्म उपासना योगादि के अनुष्ठान करने से जो फल आनन्द जगह २ स्वर्गबैकुंठादि में भ्रमनेसे परिच्छिन्न आनन्द प्राप्त होता है + उतनाही ८ अर्थात् वह सब फल प्रत्युत उससे भी बिशेष पूर्ण निरतिशयानन्द फल ८ परमार्थ तत्व के जानने वाले परमहंस ब्रह्मविज्ञानी ब्राह्मणको ९।१० सि० प्राप्तहोता है तात्पर्य स्वर्ग बैकुंठादि साधन हैं आनन्द के मुख्य फल परमानन्द हैं सोई गुणातीत निष्काम ब्रह्मज्ञानी का स्वरूप है पूर्ण परमानन्द विद्वानों को ही प्राप्त होताहै सिवाय ब्रह्मबिदों के औरों को पूर्ण परमानन्द नहीं प्राप्तहोता है जैसे कूपादि जलों से सब प्रयोजन नहीं सिद्धहोता है इस हेतु से गुणातीत निष्काम ब्रह्मनिष्ठ होनाही सबसे श्रेष्ठ है + ४६ +

**कर्मण्येवाधिकारस्ते माफलेषुकदाचन । माकर्म-फलहेतुर्भूर्मातेसंगोस्त्वकर्मणि + ४७ +**

ते १ अधिकारः २ कर्म्मणि ३ एव ४ मा ५ फलेषु ६ कदाचन ७ कर्म्म-फलहेतुः ८ मा ९ भूः १० ते ११ अकर्म्मणि १२ संगः १३ मा १४ अस्तु १५ + ४७ + अ० उ० जो ब्रह्मज्ञानी को सब फल की प्राप्ति होती है तो ब्रह्मज्ञान का ही अनुष्ठान करके इस लोक परलोक के सब भोगों को भोगना योग्य है अल्पफलदायक कर्म्म उपासना योगादि का अनुष्ठानकरना कुछ आवश्यक नहीं प्रयोजन तो हमारा फल से है सो ज्ञाननिष्ठा से ही प्राप्त होजायगा यह शंका करके श्रीमहाराज कहते हैं कि + तेरा १ अधिकार २ सि० तो + कर्म्म में ३ ही ४ सि० है और + नहीं है ५ फल में ६ कभी ७ सि० तेरा अधिकार अर्थात् साधन अवस्था वा सिद्ध अवस्था में किसी अवस्था में भी तेरा अधिकार स्वर्ग बैकुंठादि फल भोगों में नहीं क्योंकि तू मुमुक्षु है तूने परमश्रेय का साधन मुझ से बूझा है हे अर्जुन मुमुक्षु का अधिकार अन्तःकरण की शुद्धि के लिये कर्मों में तो है परंतु स्वर्ग बैकुंठादि के भोगों में अधिकार नहीं क्योंकि प्रथम तो वे अनित्यादि दोषों करके दूषित हैं और मोक्ष में प्रतिबन्ध हैं इस हेतु से + कर्मों के फल में हेतु ८ मत ९ हो १० अर्थात् मन में कर्मों के फल की तृष्णा मतरख कि जिससे कर्मों के फलकी प्राप्ति का हेतु तुझको होनापड़े तात्पर्य कर्मों के फल की प्राप्ति में हेतु तृष्णा है उसको त्याग और १० तेरा ११ अकर्म में १२ संग प्रीति निष्ठा १३ मत १४ हो अर्थात् जब तक अन्तःकरण शुद्ध होवे तब तक कर्म में तेरी निष्ठा रहे यह उपदेश भी है और आशीर्वाद भी है वास्ते निर्विघ्नता के + ४७ +

**योगस्थःकुरुकर्माणि संगंत्यक्त्वाधनंजय । सिद्ध्य-सिद्ध्योःसमोभूत्वा समत्वंयोगउच्यते + ४८ +**

धनंजय १ योगस्थः २ संगं ३ त्यक्त्वा ४ सिद्ध्य सिद्ध्योः ५ समः ६ भूत्वा ७ कर्माणि ८ कुरु ९ समत्वम् ११ योगः १० उच्यते १२ + ४८ + अ० उ० कर्म करने की विधि कहते हैं + हे अर्जुन १ योग में स्थित हुआ २ सि० कर्मों में और कर्मों के फल में + आसक्तिको ३ त्याग करके ४ सि० और कर्मों की + सिद्धि असिद्धि में ५ समहोकर ६। ७ कर्मों को। ८ कर ९ योग १० समता को ११ कहते हैं १२ तात्पर्य समता में स्थित होकर कर्म्मकर + ४८ +

**दूरेणह्यवरंकर्म बुद्धियोगाद्धनंजय । बुद्धौशरणम-न्विच्छ कृपणाःफलहेतवः + ४९ +**

धनंजय १ बुद्धियोगात् २ कर्म ३ दूरेण ४ हि ५ अवरम् ६ बुद्धौ ७ शरणम् ८ अन्विच्छ ६ फलहेतवः १० कृपणाः ११ + ४६ + अ० हे धनंजय १ ज्ञान योग से २ कर्म ३ अत्यन्त ४।५ निकृष्ट ६ सि० हैं अर्थात् श्रेष्ठ नहीं इस वास्ते ज्ञान में ७ रक्षाकरनेवाले को ८ प्रार्थनाकर ६ तात्पर्य अभय प्राप्ति का जो कारण परमार्थज्ञान उसकी प्रार्थना जिज्ञासाकर उसकी शरणहो परमार्थ ज्ञान का आश्रयले + कामनावाले फल को तृष्णावाले १० दीन अज्ञानी ११ सि० होते हैं तात्पर्य कर्मों से अन्तःकरण शुद्ध करके ज्ञाननिष्ठ होना चाहिये स्वर्गादि की इच्छा नहीं रखनी + ४६ +

**बुद्धियुक्तोजहातीह उभेसुकृतदुःकृते। तस्माद्योगाय युज्यस्व योगःकर्मसुकौशलम् + ५० +**

बुद्धियुक्तः १ इह २ सुकृतदुःकृते ३ उभे ४ जहाति ५ तस्मात् ६ योगाय ७ युज्यस्व ८ योगः ६ कर्मसु १० कौशलम् ११ + ५० + अ० ज्ञान-युक्त १ जातिही २ पुण्य पाप दोनों को ३।४ त्याग देता है ५ तिस कारण से ६ ज्ञानयोग के वास्ते ७ प्रयत्न कर ८ ज्ञान योग ६ कर्मों में १० चतुरता ११ सि० है तात्पर्य कर्म करनेमें चतुरता क्या है कि बंधनरूप कर्मों में से ज्ञान को प्राप्त हो जाना अर्थात् कर्म करके अकर्म हो जाना यही कर्म करने में चतुरता है नहीं तो जो कर्म करने से इसी जन्म में ब्रह्मज्ञान न हुआ तो कर्मों का करना निष्फल हुआ + ५० +

**कर्मजंबुद्धियुक्ताहिफलंत्यक्त्वामनीषिणः । जन्म-बन्धविनिर्मुक्ताः पदंगच्छन्त्यनामयम् + ५१ +**

बुद्धियुक्ताः १ हि २ मनीषिणः ३ कर्मजम् ४ फलम् ५ त्यक्त्वा ६ जन्म-बन्धविनिर्मुक्ताः ७ अनामयम्८पदम् ६ गच्छन्ति १० ॥ +५१+ अ० ज्ञान-युक्त १ ही २ पण्डित ३ कर्मजम् ४ फल को ५ त्याग करके६ जन्म रूप बन्धन से छूटे हुये ७ समस्त उपद्रव रहित पदको८ । ६ प्राप्त होतेहैं १० तात्पर्य कर्मों से उत्पन्न होते हैं प्राप्त होते हैं जो स्वर्ग बैकुंठादि फल विशेष उनकोत्याग करके ज्ञानी ही पण्डित मोक्ष होतेहैं कर्म्मी उपासक योगी पण्डित अपने किये हुये कर्म्मों के फल को प्राप्त होते हैं मोक्ष 1 नहीं प्राप्त होते + ५१ +

**यदातेमोहकलिलंबुद्धिर्व्यतितरिष्यति । तदागन्तासिनिर्वेदंश्रोतव्यस्यश्रुतस्यच + ५२ +**

यदा १ ते २ बुद्धिः ३ मोहकलिलम् ४ व्यतितरिष्यति ५ तदा ६ श्रोतव्यस्य ७ श्रुतस्य ८ च ९ निर्वेदं १० गंतासि ११ + ५२ + अ०उ० यह कर्म्म करते २ मैं किस कालमें ब्रह्मज्ञानका अधिकारी हूंगा और मेराचित्त शांत होकरआत्मामें कब आत्माकार होगा इसअपेक्षा में श्रीमहाराज अर्जुनके प्रति २ श्लोकों में यह कहते हैं + जिसकाल में१ तेरी २ बुद्धि ३ मोहरूपी कीचको ४ भले प्रकार तरेगी५ तात्पर्य देहादि पदार्थों में जो तेरी आत्मबुद्धि है देहादि पदार्थों को जो तू अपना आपा समझता है वा उनमें ममता करनी वा उन के साथ आत्मा की एकता करनी वा तादात्म्य अध्यास करना इसी को मोह रूप कीच कहते हैं यह अविवेक तेरा जब दूर होगा+तिस काल में ६ श्रुत और श्रोतव्य के ७।८। ९ वैराग्य को १० प्राप्त होगा तू ११ अर्थात् पीछे जो जो सुना हुआ है औरआगे को जो जो सुनने के योग्य समझ रक्खा है इन सबसे तुझको वैराग्य हो जायगा न कुछ सुनने की इच्छा करेगा और न पिछले सुने में कुछ संशय रहेगा इस प्रकार शुभाशुभ कर्मों से उपराम होकर जब फिर ब्रह्मज्ञान को प्राप्त होगा+उक्तंच + ग्रंथमभ्यस्य मेधावी विचार्यच पुनः पुनः + पलालमिवधान्यार्थी त्यजेद्ग्रंथमशेषतः । अर्थ इसका यहहै कि मुमुक्षु प्रथमग्रंथों का भले प्रकार अभ्यास करके बारम्बार बिचार करे फिर अपने स्वरूप को प्राप्त होकर ग्रंथों को त्याग देता है जैसे धान की इच्छावाला पयाल को त्याग देता है धान ग्रहण करलेताहै श्रुत श्रोतव्य से वैराग्य होना इसी को कहतेहैं + ५२ +

**श्रुतिविप्रतिपन्नाते यदास्थास्यतिनिश्चला । समाधावचलाबुद्धिस्तदायोगमवाप्स्यसि + ५३ +**

यदा १ ते २ बुद्धि ३ समाधौ ४ निश्चला ५ अचला ६ स्थास्यति ७ तदा ८ योगम् ९ अवाप्स्यसि १० श्रुतिविप्रतिपन्ना ११ + ५३ + अ०सि० और जिसकालमें १ तेरी २ बुद्धि ३ आत्मामें ४ विक्षेपरहित ५ विकल्परहित ६ स्थित होगी ७ तिसकाल में ८ समाधि योगको ९ प्राप्तहोगा तू १० सि० अब तक कैसी है वह तेरी बुद्धि कि अनेक शास्त्र पुराण इतिहासादि और श्रुतिस्मृति आदिकों का + श्रवण करने से विक्षेप को प्राप्त है ११

तात्पर्य जब तक पूर्वापर वाक्यों का अविरोध समन्वय नहीं समझेगा तब तक चित्तकी शांति कभी न होगी और न वेद शास्त्रमें अवश्य श्रद्धा विश्वास करके आत्मनिष्ठ होना योग्य है रोचक वाक्योंमें नहीं अटकना यही इस प्रकरणका अभिप्राय है +५३+

**अर्जुनउवाच ॥ स्थितप्रज्ञस्यकाभाषा समाधिस्थस्यकेशव । स्थितधीःकिंप्रभाषेत किमासीतव्रजेत किम + ५४ +**

केशव १ समाधिस्थस्य २ स्थितप्रज्ञस्य ३ का ४ भाषा ५ स्थितधीः ६ किम् ७ प्रभाषेत ८ किम् ९ आसीत १० किम् ११ व्रजेत १२ + ५४ अ० उ० ब्रह्मज्ञानी के लक्षण जानने की इच्छा करके अर्जुन श्री भगवान् से प्रश्न करताहै+हे केशव १ सि०स्वभाव से ही जो निर्विकल्प समाधिमें स्थित है २ सि० और अहम् ब्रह्मास्मि इस महावाक्यार्थ में दृढ़+स्थित है बुद्धि जिसकी तिसकी ३ क्या ४ भाषा ५ सि० है अर्थात् और लोग उसको कैसा कहते हैं कहाजावे अन्य करके उसको भाषा कहते हैं तात्पर्य उसका लक्षण क्या है और आत्मस्वरूप में ही निश्चल है बुद्धि जिसकी सो ६ कैसे ७ बोलता है ८ कैसे ९ बैठता है १० कैसे ११ चलता है १२ अर्थात् उस ज्ञानीका बोलना बैठना चलना किसप्रकार का है यह तीन प्रश्न उस ज्ञानीके प्रति हैं कि जो सविकल्प समाधि में स्थित है और पहला प्रश्न निर्विकल्प समाधि वाले ज्ञानीके प्रति है तात्पर्य ब्रह्मज्ञानी की किसी समय निर्विकल्प समाधि स्वाभाविक बनी रहती है किसी समय प्रयत्न से और किसी समय सविकल्प अन्तःकरण की वृत्ति हो जाती है ज्ञानीका अर्जुन दोनों प्रकार के ज्ञानियों का लक्षण बूझता है + ५४ +

**श्रीभगवान् उवाच ॥ प्रजहातियदाकामान्सर्वान् पार्थमनोगतान् । आत्मन्येवात्मनातुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते + ५५ +**

पार्थ १ यदा २ सर्वान् ३ कामन् ४ प्रजहाति ५ मनोगतान् ६ आत्मना ७ आत्मनि ८ एव ९ तुष्टः १० तदा ११ स्थित प्रज्ञः १२ उच्यते १३ +५५+ अ० उ० साधक के लिये जो ज्ञानके साधन हैं वेही सिद्ध के स्वाभाविक लक्षण हैं अर्जुन के प्रश्न के अनुसार ज्ञानीका लक्षण

श्रीमहाराज निरूपण करते हैं और साधकके लिये यही अंतरङ्गज्ञानके साधन हैं अध्याय के समाप्ति पर्य्यन्त प्रथम प्रश्नका उत्तर कहते हैं दो श्लोकोंमें + हे अर्जुन १ जिस कालमें २ सबकामना को ३ । ४ त्यागदेता है ५ सि० जो महा पुरुष + कैसी हैं वेकामना कि इस लोक परलोकके पदार्थोंकी सूक्ष्म बासना + मनमें प्रवेश हो रहीहैं ६ तात्पर्य जिस कालमें सूक्ष्म बासना सहित समस्त इस लोक परलोककी बासना त्याग देता है और पूर्णानन्द स्वरूप + आत्मा करके ७ आत्मामें ८ हि ९ तृप्त १० सि० है जिसकाल में जो महापुरुष उसको + तिसकाल में ११ स्थितप्रज्ञ १२ कहते हैं १३ तात्पर्य ब्रह्माकार वृत्ति में निश्चल होरहीहै बुद्धि जिसकी उसको ब्रह्मज्ञानी कहते हैं महात्मा और निर्विकल्प समाधि ब्रह्म ज्ञानका साधन समस्त वासना का त्याग सार है ॥ वासनासम्परित्यागः ॥ यही वसिष्ठ में भी कहा है + ५५ +

**दुःखेष्वनुद्विग्नमनाःसुखेषुविगतस्पृहः। वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते + ५६ +**

दुःखेषु १ अनुद्विग्नमनाः २ सुखेषु ३ विगतस्पृहः ४ वीतरागभयक्रोधः ५ स्थितधीः ६ मुनिः ७ उच्यते ८ + ५६ + अ० दुःखोंमें १ नहीं होता है उद्विग्न क्षोभित विक्षिप्त मनजिसका २ सुखों में नाश होगई है इच्छा जिस की ४ जाते रहेहैं राग भय क्रोध जिस से ५ सि० ऐसे महात्मा को + ब्रह्म ज्ञानी ६ परमहंस संन्यासी ७ कहते हैं ८ सि० बिद्वान् पण्डित और दुःखसुखादि में सम होना यही ब्रह्मज्ञानकेसाधनहैं + ५६ +

**यःसर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम्। नाभिनन्दतिनद्वेष्टि तस्यप्रज्ञाप्रतिष्ठिता + ५७ +**

यः १ सर्वत्र २ अनभिस्नेहः ३ तत् ४ तत् ५ शुभाशुभम् ६ प्राप्य ७ न ८ अभिनन्दति ९ । १० द्वेष्टि ११ तस्य १२ प्रज्ञा १३ प्रतिष्ठिता १४ + ५७ + अ०उ० कैसे बोलता है ज्ञानी इस दूसरे प्रश्न का उत्तर कहते हैं + जो १ सर्वत्र २ सि० पुत्र पोथी देहादि पदार्थोंमें + स्नेह प्रीति रहित ३ सि० है + और + तिस तिस ४ । ५ शुभ अशुभ को ६ प्राप्त होकर ७ अर्थात् जो शुभ पदार्थ हैं अपने को इष्ट प्रिय अनुकूल हैं तिसको प्राप्त होकर तो + नहीं ८ हर्ष करता है ९ सि० और जो अशुभ पदार्थ हैं अपने को अनिष्ट प्रतिकूल है तिसको प्राप्त होकर+नहीं १० द्वेष करता है ११ सि० जो महापुरुष + तिसकी १२ बुद्धि १३ निश्चल १४ सि० है

ब्रह्मस्वरूप में और जो पूर्वोक्त साधन करेगा उसकी वृत्ति ब्रह्माकार होजायगी तात्पर्य बोलने से रागद्वेष आदि गुण दोष सबके प्रतीत होजाते हैं यह बात प्रसिद्धहै परन्तु ज्ञानी के नहीं प्रतीत होते हैं क्योंकि ज्ञानी हर्ष द्वेषादि के कारण हुये सन्ते भी उदासीन हुआ बोलता है यह उदासीनवत् बोलनाही ज्ञानीकालक्षण है इत्यभिप्रायः + ५७ +

**यदासंहरतेचायं कूर्मोंगानीवसर्वशः। इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्यप्रज्ञाप्रतिष्ठिता + ५८ +**

यदा १ अयम् २ सर्वशः ३ इन्द्रियाणि ४ इन्द्रियार्थेभ्यः ५ संहरते ६ च ७ तस्य ८ प्रज्ञा ९ प्रतिष्ठिता १० कूर्म्मः ११ अङ्गानि १२ इव १३ +५८+ अ० जिसकाल में १ यह २ सि० मुमुचुः + सब तरफ़ से ३ इन्द्रियों को ४ इन्द्रियों के अर्थोंसे ५ संकोच करलेता है ६ और ७ सि० चित्तमें स्मरण भी नहीं करता है तिसकाल में + तिसविद्वान् की ८ बुद्धिः ९ निश्चल १० सि० सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा में और इसी साधन से मुमुचु की होजायगी इन्द्रियों के निरोध में विद्वानको आयासदुःख नहीं होता है इसबात को दृष्टान्त से स्पष्ट करते हैं श्रीमहाराज + कछुवा ११ सि० अपने हाथ पांव + अङ्गोंको १२ जैसे १३ सि० स्वाभाविक संकोच करलेता है इसीप्रकार विद्वान् स्वाभाविकविषयों से इन्द्रियों को निरोध करलेता है + ५८ +

**विषयाविनिवर्त्तन्ते निराहारस्यदेहिनः। रसवर्ज्जं रसोप्यस्यपरंदृष्ट्वानिवर्त्तते + ५९ +**

निराहारस्य १ देहिनः २ विषयाः ३ विनिवर्त्तन्ते ४ रसवर्ज्जम् ५ अस्य ६ परम् ७ दृष्ट्वा ८ रसः ९ अपि १० निवर्त्तते ११ +५९+ अ० उ० इन्द्रियों का विषयों में प्रवर्त्तन होना यहलक्षण जो ब्रह्मज्ञानी का श्रीमहाराज कहतेहैं इसमें तो अति व्याप्ति दोष आता है क्योंकि ऐसे तो निराहारी रोगीभी होतेहैं यह शङ्का करके श्री महाराज कहतेहैं कि + निराहारी जीवके १।२ सि० भी + विषय ३ निवृत्त होजाते हैं ४ सि० यह तो सत्यहै परन्तु + रसवर्जित ५ सि० निवृत्त होतेहैं अर्थात् बिषयोंसे राग उसका नहीं दूर होताहै तात्पर्य विषयों में उसकी तृष्णा और सूक्ष्म कामना बनी रहती है और + इस ब्रह्म ज्ञानीका ६ पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द आत्माको ७ देख करके ८ अर्थात् आनन्द स्वरूप आत्मा को प्राप्त

होकर ज्ञानीका + रस ६ भी १० निवृत्त होजाताहै ११ ति० इसप्रकार समझनेसे पूर्वोक्त लक्षण में अतिव्याप्ति दोषनहीं +५९+

**यततोह्यपिकौन्तेयपुरुषस्यविपश्चितः। इन्द्रियाणिप्रमाथीनिहरन्तिप्रसभंमनः +६०+**

कौन्तेय १ यततः २ हि ३ विपश्चितः ४ पुरुषस्य ५ अपि ६ इन्द्रियाणि ७ प्रमाथीनि ८ प्रसभम् ९ मनः १० हरन्ति ११ + ६० + अ० उ० बिना इन्द्रियों के संयम कियेहुये ज्ञान होना दुर्लभहै इसवास्ते साधन अवस्था में तो इन्द्रियों के निरोध करनेमें अत्यन्त प्रयत्न करना योग्यहै यह कहतेहैं दो श्लोकोंमें + हे अर्जुन १ ति० मोक्षमें + प्रयत्न करने वाले की २ ति० इन्द्रिय + भी ३ ति० और + विद्वान् विवेकी पुरुषकी ४। ५ भी ६ इन्द्रिय ७ प्रमथन स्वभाव वाली क्षोभ करने वाली ८ बल करके ९ मनको १० हरलेतीहै ११ अर्थात् जबरदस्ती से मनको बिषयों में बिक्षिप्त करदेती हैं जब कि बिद्वान् की इन्द्रिय भी विद्वान्के मनको विषयोंमें बिक्षिप्त करदेतःहैं तो फिर मुमुक्षु साधकको तो साधम अवस्थामें भले प्रकार चैतन्य रहकर प्रयत्न करना योग्य है **इतिहास** एकसमय व्यासजो जैमिनि अपने शिष्यको यही श्लोक सुनारहेथे जैमिनि जीने कहा कि आपका कहना तो सब सत्य है परन्तु यह नहीं होसक्ता कि जो इन्द्रिय विद्वान्के मनकोभी विषयोंमें बिक्षिप्त कर देवें अबिद्वान् के मनको बिक्षिप्त करसक्तीहैं व्यासजीने बहुत उनको समझाया परन्तु ब्यासजीके इस वाक्य में उनको विश्वास न आया व्यासजीने कहा कि इस श्लोक का अर्थ फिर किसी कालमें तुमको समझावेंगे यहकहकर चलदिये उसी दिन दोघड़ीदिनरहे ऐसी माया रची कि दश ग्यारह स्त्री तरुण मायाकी रचकर और आपभी एक सुन्दर स्वरूप स्त्री का बनकर जैमिनि की कुटीके सामने जाकर हँसी चोहल खेल बिहारका प्रारम्भ करदिया जिसकाल में बारीक़ बस्त्र उन स्त्रियों का पवन से जो उड़ा और गेंद उछालते हुये जो हाथ उन स्त्रियों ने ऊपर को किये उसकाल में उदर जंघा स्तनादि अंग उन स्त्रियों के जैमिनि जी को दीखगये फिर उसी कालमें ऐसा बादल होगया जैसा भादोंमें होता है अंधेरा होगया मन्द मन्द बरसने लगा पवन चलने लगी वे सब स्त्री माया की तो लोप होगई व्यासजी का जो स्वरूप स्त्रीका बना हुआ था वही एक रह गया सो वह स्त्री जैमिनिजी के पासगई और कहा कि महाराज मेरेसंगकी सहेली

न जानिये कहां गई मैं अकेली रहगई अवरात्रिको कहां जाऊं आपआज्ञा करो तो रातभर एक मकानमें मैंभी पड़ीरहूंगी प्रथम तो जैमिनिजीने उस को रात्रि के समय अपने पास रखने से बहुत मने किया फिर उसकी दीन बोली सुनकर कुछ दया आगई उस स्त्रीसे यह कहा कि इस दूसरे मकान में जाकर भीतर से संकल लगाले यहां एक भूत रात्रि के समय आया करता है मेरीसी बोली बोलेगा उसके कहने से किवाड़ मतखोलियो नहीं तो वह भूत तुझको खाजायगा व्यासजीने मनमें कहा कि विद्वान् होने में तो इसके सन्देह नहीं यत्न तो बड़ाकिया है। जैमिनि जी का वह वाक्य सुनकर मकान के भीतर जाकर भीतर से संकललगा ली उस स्त्रीने जो व्यासजीका स्वरूपथा फिर निज स्वरूप होकर ध्यान में बैठगये जैमिनिजी जब ध्यान करने बैठे तब वह स्त्री याद आई बारम्बार मनको निरोधकरें मन शान्तहो नहीं जैमिनि जी ध्यान जप छोड़कर उठे उस मन्दिर के द्वारपर जाकर कहा कि हे प्रिये मैं जैमिनि हूं तुझसे बचने के लिये भूत की झूंठी कथा तुझको सुनादी थी अब तू बेसन्देह कपाट खोलदे तेरे बिना मुझको निद्रा नहीं आती है इसीप्रकार प्रार्थना करते करते हारगये मारे काम और बिरह के कोठे पर जाकर छत उखाड़कर भीतर कूदपड़े व्यासजीने एक थप्पड़ जैमिनि जीके मुख पर मारकर कहा कि तू विद्वान् वा अविद्वान् जैमिनिजी लज्जा को प्राप्त हुये व्यासजीने कहा कि तुम्हारी विद्वता साधुता में सन्देह नहीं जो चाहिये था वही तुमने किया कदाचित् इस प्रकार विद्वान् धोखा खाकर अनर्थकर बैठे उसको कभी प्रत्यवाय पातकनहीं + थोड़े दिन हुये ऐसी ही एक व्यवस्था दक्षिणदेश में हुई उसको भी सुनो दैवयोग से एक स्त्री भूली हुई रात्रिके समय किसी महात्माकी कुटी पर चली आई महात्मा ने इसी प्रकार भूतकी कथा सुनाकर दूसरे मकान में सुलादी रात्रिकेसमय थोड़ी रातरहे वे महात्मा भी छत उखाड़करकूदे सो उनके शरीरमें एक लकड़ी घुसगई उससे बड़ा भारी घाव होगया वह स्त्री इनको पहचान कर घबराई पछताई हुई कहनेलगी कि मुझ से बड़ा अपराध हुआ जो किवाड़ न खोले महात्मा ने उसको समझा दिया और यह कहा कि तू शोचमत कर और जो मैं मरजाऊं तो यह लिखाहुआ मेरा लोगों को दिखादेना यह कह उसी समय महात्मा ने अपने रक्तसे वह सब व्यवस्था संस्कृत श्लोकों में लिखदी नाम उस व्यवस्था का रक्तगीता लिखकर परमधाम को प्राप्त हुये सो वह रक्तगीता प्रसिद्ध है संसार से उपराम करने

वाली है तात्पर्य सारार्थ उसका यही है कि जो इस श्लोक का अर्थहै६०+

तानिसर्वाणिसंयम्ययुक्तआसीतमत्परः। वशेहिय-स्येन्द्रियाणितस्यप्रज्ञाप्रतिष्ठिता + ६१ +

तानि १ सर्वाणि २ संयम्य ३ युक्तः ४ मत्परः ५ आसीत ६ यस्य ७ इन्द्रियाणि ८ वशे ९ तस्य १० हि ११ प्रज्ञा १२ प्रतिष्ठिता १३ +६१+ अ० उ० जब कि इन्द्रिय यह अनर्थ करती हैं इसीवास्ते + तिन सब इंद्रियों को १।२ लि० विषयों से + रोककरके ३ सावधान हुआ ४ मुझ सच्चिदानन्द परायण ५ लि० हुआ अर्थात् मैं सच्चिदानन्द स्वरूप अद्वैत हूं सिवाय मुझ सच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्म के और कुछ पदार्थ तीनोंकाल में नहीं इस ध्यान में तत्पर हुआ + बैठता है ६ जिसकी ७ इंद्रिय ८वश में ९ लि० हैं आत्मा के + तिसकी १० हि ११ बुद्धि १२ निश्चल १३ लि० है सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्ण ब्रह्ममें वह ज्ञानी कैसे बैठता है इस प्रश्न का उत्तर इस मंच में कहा तात्पर्य ज्ञानी सब इंद्रियों को निरोध करके आत्मामें मग्नहुआ बैठा रहताहै + ६१ +

ध्यायतोविषयान्पुंसःसंगस्तेषूपजायते । संगात्सं-जायतेकामः कामात्क्रोधोभिजायते + ६२ + क्रोधा-द्भवतिसंमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः । स्मृतिभ्रंशाद्बु-द्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति + ६३ +

विषयान् १ ध्यायतः २ पुंसः ३ तेषु ४ संगः ५ उपजायते ६ संगात् ७ कामः ८ संजायते ९ कामात् १० क्रोधः ११ अभिजायते १२+ ६२ + क्रोधात् १ संमोहः २ भवति ३ संमोहात् ४ स्मृतिविभ्रमः ५ स्मृतिभ्रंशात् ६ बुद्धिनाशः ७ बुद्धिनाशात् ८ प्रणश्यति ९ + ६३ + अ० उ० इन्द्रियों के निरोधन करने में जो अर्थ होता है उसको तो निरूपण किया अब अन्तःकरण के निरोधन करने में जो अनर्थ होता है सो कहते हैं दो श्लोकों में + लि० गुण बुद्धि करके + विषयों का ध्यान करने से १ । २ पुरुष का ३ तिनमें ४ अर्थात् स्त्री शब्दादि बिषयों में ४आसक्ति ५ होजाती है ६ आसक्ति होजाने से ७ लि० फिर अधिक + कामना ८ होजातीहै ९ कामनासे १० क्रोध ११ लि० उत्पन्न होआताहै + ६२+ क्रोध से १ अविवेक २ होजाता है ३ अर्थात् मुझको यहकरनायोग्य है वा नहीं इस विचार का अभाव होजाता है+ अविवेकहोनेसे४स्मृति का

विभ्रम ५ सि० होजाता है अर्थात् जो कुछ शास्त्र आचार्योंसे सुन रक्खा था उस अर्थ की स्मृति का अभाव होजाता है उससमय कुछ नहीं स्मरण होताहै सिवाय उस विषय के कि जिसका चिन्तवन करनेसे जिस विषय में चित्त आसक्त होगया है फिर+स्मृति का अभाव होजानेसे ६ वा विचल जाने से वा भ्रंश होजाने से ६ बुद्धिका नाश ७ सि०होजाताहै अर्थात् समझ कर फिर भी चैतन्य होजावे यह बुद्धि नहीं रहतीहै+बुद्धि का नाश होने से ८ नाश होजाताहै ६ सि० वही पुरुष जिसकाविषयोंमें चिन्तवन करने से सूक्ष्म संग होगया था अर्थात् वह पुरुष मोक्ष मार्गसे भ्रष्ट होताहै उस तरफ़ से तो मानो मर गया ऐसे आदमीको मुरदेकी बराबरसमझना चाहिये कि जो सच्चिदानन्द स्वरूप से विमुखहोकर विषयोंके सन्मुख है वह जीता हुआही मुरदाहै क्योंकि परम पुरुषार्थ जोमोक्षहै उसके योग्य नहीं तात्पर्य सबअनर्थोंकी और पाप दुःखोंकी मूल मनोराज्यहै क्योंकि प्रथम स्त्री शब्दादि पदार्थों में गुण समझ कर अर्थात् स्त्रियादिको किसी एक अंश में सुख देने वाला समझ कर जो पुरुष उन विषयों का मनमें ध्यान करता रहता है फिर चिन्तवन करते करते पदार्थों में सूक्ष्म आसक्ति होकर अधिक कामना होजाती है फिर उसकी प्राप्ति के प्रयत्नों में नाना प्रकार के उपद्रव होजाते हैं उपाधि बढ़ते बढ़ते पशुवत् मनुष्य होजाता है इन दोनों श्लोकोंका अर्थ आनन्दामृत वर्षिणीके नवेंअध्याय में और भी स्पष्ट लिखा है +६३+

**रागद्वेषवियुक्तैस्तुविषयानिन्द्रियैश्चरन् । आत्मवश्यैर्विधेयात्माप्रसादमधिगच्छति + ६४ +**

विधेयात्मा १ इन्द्रियैः २ विषयान् ३ चरन् ४ तु ५ प्रसादम् ६ अधिगच्छति ७ रागद्वेषवियुक्तैः ८ आत्मावश्यैः ६+६४+अ०उ० श्रोत्रादि इन्द्रियों करके शब्दादि विषयोंको न भोगता हो ऐसातो कोईभी ब्रह्मज्ञानी भगवत्भक्त उपासक योगी कर्मी इत्यादि नहीं दीखता है और इन्द्रियों के असंयम आप अनर्थ कहते हो तो फिर ब्रह्मज्ञानी और अज्ञानी पुरुषों में क्या भेद हुआ यह शंका करके श्रीमहाराज दो श्लोकों में ज्ञानी के भोगनेकी रीति फलके सहित निरूपण करते हैं+विवेकी ब्रह्मज्ञानी आत्मउपासक १ इन्द्रियों करके २ विषयों ३ को भोगता हुआ ४ भी ५ निजानन्द को ६ प्राप्त होता है ७ सि० कैसी हैं वे इन्द्रिय कि जिन करके विषयों को भोगता हुआ मोक्षहो जाताहै+राग द्वेष रहित ८ सि०

हैं अर्थात् भोग समय ज्ञानीका बिषयों में रागद्वेष नहीं एक ता ज्ञानी और अज्ञानी में यह भेद है और दूसरे ज्ञानी की इंद्रिय + मनके बशमें हैं ६ टी० आठवां और नवां ये दोनों पद इंद्रिय इस दूसरे पद के बिशेषण हैं ८। ९ +६४+

**प्रसादेसर्वदुःखानांहानिरस्योपजायते। प्रसन्नचेतसोह्याशु बुद्धिःपर्य्यवतिष्ठते + ६५+**

सादे १ अस्य २ सर्वदुःखानाम् ३ हानिः ४ उपजायते ५ प्रसन्नचेतसः ६ हि ७ बुद्धिः ८ आशु ९ पर्य्यवतिष्ठते १० + ६५ +अ० उ० निजानन्द को प्राप्त होनेसे क्या होता है इस अपेक्षा में श्रीमहाराज यह कहते हैं+निजानन्द के। प्राप्त होनेसे १ इसके २ अर्थात् परमहंस ज्ञानी महापुरुषके २ दुःखोंकी ३ हानि ४ होजाती है ५ अर्थात्आध्यात्मिकादि सब दुःख नाश होजाते हैं ५ लि० और + निजानन्द को प्राप्त हुआ है अन्तःकरण जिसका अर्थात् आत्मा में स्थित हुआहै चित्त जिसका उसकी ६ हि ७ बुद्धि ८ शीघ्र जल्दी ९ निश्चल होतीहै १०लि० उसी आत्मामें+ टी०प्रसाद प्रसन्नता सुख आनन्द आत्मा इन शब्दोंका एकही अर्थहै इस जगह बिषयानन्द की प्रसन्नता से तात्पर्य्यार्थ नहीं १ + ६५+

**नास्तिबुद्धिरयुक्तस्यनचायुक्तस्यभावना। नचाभावयतःशान्तिरशान्तस्यकुतःसुखम् + ६६ +**

अयुक्तस्य १ बुद्धिः २ न ३ अस्ति ४ अयुक्तस्य ५ भावना६ न ७ च ८ अभावयतः ९ शान्तिः १० न ११ च १२ अशान्तस्य १३ सुखम्१४ कुतः १५ + ६६ + अ० उ० यतिः अन्तर्मुख ज्ञानी के। जो आनन्द पीछे निरूपण किया वह अयतिः बहिर्मुख अज्ञानीको नहीं होता है यह कहतेहैं श्रीमहाराज इस मंत्र में + लि० प्रथम ते। + अयतिः के १ बुद्धि २ लि० हि + नहीं ३ है ४ अर्थात् प्रथम ता आत्मा को निश्चय करने वाली व्यवसायात्मिका बुद्धि वहिर्मुख अज्ञानी के नहीं उदयहोती है इसी हेतु से अज्ञानीके। ५ आत्माका ध्यान ६ नहीं ७ अर्थात् जब कि वह आत्मा को जानता ही नहीं तो फिर आत्मा का ध्यान वह कैसे करे इसी हेतु से वह आत्म ध्यान रहित है और ८ ध्यान रहित को ९ शान्ति १० नहीं ११ फिर १२ बिक्षिप्त चित्त वाने को १३ सुख १४ कहां से १५ अर्थात् किस प्रकार हो सक्ता है तात्पर्य बिना ब्रह्म ज्ञान के परमानन्द की प्राप्ति नहीं + ६६+

**इन्द्रियाणांहिचरतांयन्मनोनुविधीयते। तदस्यहरतिप्रज्ञांवायुर्नावमिवाम्भसि + ६७ +**

चरताम् १ इन्द्रियाणाम् २ यत् ३ मनः ४ हि ५ अनुविधीयते ६ तद् ७ अस्य ८ प्रज्ञाम् ९ हरति १० अम्भसि ११ वायुः १२ नावम् १३ इव १४ + ६७ + अ० उ० अयुक्त पुरुष की बुद्धिः आत्मा में निश्चल क्यों नहीं होती इस अपेक्षा में श्री महाराज यह कहते हैं सि० अज्ञानी की इन्द्रियों का विषयों के साथ जिस समय सम्बन्ध है अर्थात् श्रोत्र इन्द्रिय जब शब्द को सुनता है नेत्र जिस समय रूप को देखता है इसी प्रकार सब इन्द्रियों को समझ लेना उस सम्बन्ध समय + विषय सम्बन्धी १ इंद्रियों के २ सि० साथ + जो ३ मन ४ भी ५ सि० कभी एक ही इन्द्रिय के साथ भी उसी विषय में प्रवृत्त होजावे ६ अर्थात् जिस रूपादि विषय में चक्षु आदि इन्द्रिय प्रवृत्त हो रहा हो उस काल में जो मन भी उसी विषय में उस इन्द्रिय के साथ प्रवृत्त हो जावे तो + सो ७ सि० इन्द्रिय कि जिसका साथी मन हुआ है वोही इन्द्रिय + इस अज्ञानी की ८ बुद्धि को ९ हर लेती है १० अर्थात् विषयों में विक्षिप्त कर देती है १० सि० इसमें दृष्टान्त यह है कि + जल में ११ पवन १२ नावको १३ जैसे १४ सि० उलट पुलट करता झकोले देता है + और जिस समय नाव को मल्लाह सँभालता है इसी प्रकार ज्ञानी मनको सावधान करते हैं अज्ञानी की सामर्थ्य नहीं तात्पर्य जबकि यह व्यवस्था है कि एक इंद्रिय के साथ मन लगा हुआ अनर्थ करता है तो फिर क्या कहना है जो सब इंद्रियों के साथ मिलकर मन अनर्थकरावे मृग हस्ती पतंग मच्छी भ्रमर ये पांचों शब्द स्पर्शरूप रसगंध विषयों में से क्रम से एक एक विषय के मारे हुये मरते हैं अज्ञानी जीव मनुष्य के तो पांचों प्रबल हो रही हैं इस कारण से अज्ञानी की बुद्धि आत्मा में निश्चल नहीं होती है इत्यभिप्रायः + ६७ +

**तस्माद्यस्यमहाबाहोनिगृहीतानिसर्वशः। इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्यप्रज्ञाप्रतिष्ठिता + ६८ +**

महाबाहो १ यस्य २ इंद्रियाणि ३ इन्द्रियार्थेभ्यः ४ सर्वशः निगृहीतानि ६ तस्मात् ७ तस्य ८ प्रज्ञा ९ प्रतिष्ठिता १० + ६८ + अ० उ० शरीर प्राण इन्द्रिय अन्तःकरण का जो निरोध संयम बश करना है यही मोक्ष का अन्तरंग साधन है और यही मुक्त पुरुषों का लक्षण है स्थित

पक्ष के प्रकरण में पीछे जितने मंत्र कहे और आगे जो और मंत्रकहने रहे हैं सब का तात्पर्य यहीहै सोई श्री महाराज सब का तात्पर्य इस मंत्र में कहते हैं+हे अर्जुन १ जिसकी २ इन्द्रिय ३ शब्दादि बिषयोंसे ४ सब प्रकार करके ५ निरोध है ६ जिस कारण से ७ तिसकी ८ अर्थात् परमहंस बिद्वान् ब्रह्म ज्ञानी की ८ बुद्धि ६ निश्चल १० स्थि० है परमानन्द स्वरूप में वा ज्ञानी की बुद्धि श्रेष्ठ सर्वोत्कृष्ट है यह जानना योग्यहै और साधक पक्ष में जिज्ञासु मुमुक्षु की बुद्धि निश्चल हो जाती है ब्रह्म में इन्द्रियादिकों का निरोध करने से इत्यभिप्राय: + ६८ +

**यानिशासर्वभूतानांतस्यांजागर्त्तिसंयमी।यस्यांजाग्रतिभूतानि सानिशापश्यतोमुनेः + ६९ +**

सवभुतानाम् १ या २ निशा ३ तस्याम् ४ संयमी ५ जागर्ति ६ यस्याम् ७ भूतानि ८ जाग्रति ६ सा १० निशा ११ पश्यत: १२ मुने: १३ + ६६ + भा० टी० सब प्रकार करके इंद्रियों का निरोध होना अर्थात् नैष्कर्म्य होना यह पूर्व्वोक्त लक्षण तो असंभावित प्रतीत होता है यह शंका करके श्री महाराज यह मंत्र कहते हैं तात्पर्य इस मंत्र का यह है कि ज्ञान निष्ठा जो ज्ञानी की है वहां क्रिया कारक की गंध मात्र भी नहीं निष्क्रिय ब्रह्म ज्ञानी को कोई ज्ञानीही जान सक्ता कर्मनिष्ठा पुरुष नैष्कर्म्य ज्ञाननिष्ठ को क्या जानें क्योंकि कर्मनिष्ठा और ज्ञाननिष्ठा का दिन रात्रिवत् अन्तर है इस हेतु से अज्ञानी जीव कर्मनिष्ठों को यह असम्भवित लक्षण प्रतीत होता है सोई दिखाते हैं इस मंत्र में + सब भूतों को १ अर्थात् अज्ञानी जीव कर्मनिष्ठों को १ जो २ स्थि० रात्रिवत् ज्ञाननिष्ठा+ रात्रि ३ स्थि० है + तिस में ४ अर्थात् ज्ञाननिष्ठा में ४ ब्रह्मज्ञानी सर्वकर्म संन्यासी ५ जागता है ६ तात्पर्य ज्ञाननिष्ठा अज्ञानी कर्मनिष्ठोंके लिये रात्रिवत् है क्योंकि ज्ञाननिष्ठा की व्यवस्था अज्ञानी नहीं जानते हैं और न उनका उसमें कुछ व्यापार होता है और वही ज्ञाननिष्ठा ज्ञानियों के दिनवत् है क्योंकि ज्ञानी उसमेंही बिचरते हैं और + जिसमें ७ अर्थात् कर्मनिष्ठा में ७ अज्ञानी कर्मनिष्ठ प्राणी ८ जागते हैं ६ अर्थात् जिसकर्मनिष्ठा में कर्मनिष्ठ व्यापार करते हैं कर्मों का अनुष्ठान करते हैं + सो१० अर्थात् कर्मनिष्ठा १० स्थि० रात्रिवत् + रात्रि ११ स्थि० है किसके ब्रह्मतत्व को + देखते हुये ज्ञानी संन्यासी के १२। १३ तात्पर्य ज्ञानी का कर्मनिष्ठा में किंचित् लेश मात्र भी व्यापार नहीं इस हेतु से कर्म-

निष्ठा विद्वान् की रुचि है इस मंत्र में समुच्चय का भी खंडन स्पष्ट प्रतीत होता है + ६६ +

**आपूर्य्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापःप्रविशन्तिय-द्वत्। तद्वत्कामायंप्रविशन्तिसर्वे सशान्तिमाप्नोति नकामकामी + ७० +**

यद्वत् १ आपः २ समुद्रम् ३ प्रविशन्ति ४ आपूर्य्यमाणम् ५ अचलप्रतिष्ठम् ६ तद्वत् ७ सर्वे ८ कामाः ९ यम् १० प्रविशन्ति ११ सः १२ शान्तिम् १३ आप्नोति १४ कामकामी १५ न १६ + ७० + अ० उ० ऐसे कर्म संन्यासी कि जिनके कर्मनिष्ठा रुचिवत् है उनके शरीरका निर्बाह कैसे होता है इस अपेक्षा में यह मंत्र भी कहते हैं और चौंसठवें मंत्र में इस शंका का उत्तर अन्य प्रकार से दे भी चुके हैं इस मंत्र का तात्पर्य्य यह है कि बिना इच्छा किये हुये संसार के तुच्छ पदार्थ प्राप्त होजावें तो कितनी बात है प्रत्युत सब सिद्धि ऋद्धि महात्माके सामने हाथजोड़े खड़ी रहती हैं सदा यह इच्छा रखती है कि जिन के वास्ते परमेश्वरने हमको रचा है कभी कृपा करके वे भी तो हमको सफल करें दृष्टान्त के सहित इस बात को कहते हैं श्रीमहाराज इस मंत्र में + जैसे १ सि० बिना बुलाये नदी सरोवरादि के + जल २ समुद्र में ३ प्रवेश होतेहैं ४ सि० कैसा है वह समुद्र + सब तरफ़ से भराहुआ पूर्ण है ५ सि० और + अचल है प्रतिष्ठा मर्याद जिसकी ६ सि० यह तो दृष्टान्त है + तैसेही ७ सब ८ भोग ९ सि० प्रारब्ध के प्रेरे हुये + जिसको १० अर्थात् निष्काम ज्ञानी को १० प्राप्तहोते हैं ११ सि० कैसा है + सो १२ सि० ज्ञानी + शान्ति को १३ प्राप्त है १४ भोगों की कामनावाला १५ नहीं १६ अथवा जो भोगों की कामना वाला है सो शान्ति ब्रह्मानन्द को नहीं प्राप्त होता है + ७० +

**विहायकामान्यःसर्वान्पुमांश्चरतिनिस्पृहः। निर्ममोनिरहंकारः सशान्तिमधिगच्छति + ७१ +**

यः १ पुमान् २ सर्वान् ३ कामान् ४ विहाय ५ निस्पृहः ६ निर्ममः ७ निरहंकारः ८ चरति ९ सः १० शान्तिम् ११ अधिगच्छति १२ + ७१ + अ० उ० चतुर्थ आश्रम संन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठा सेही मोक्ष को प्राप्त होता है पुरुष गृहस्थी कर्मनिष्ठ मोक्ष के भागी नहीं शुभकर्म करने से

शुभ लोकोंको प्राप्त होते हैं यह नियम बिधि है और जो कदाचित् कोई कहे कि कर्मनिष्ठ गृहस्थ भी बिना संन्यास किये हुये मोक्ष हो जाते हैं तो चतुर्थ आश्रमका माहात्म्य वृथाही वेदों में प्रतिपादन किया है क्या काम है शीतोष्णादि सहनेका क्योंसंन्यास करना चाहिये और जनकादिकी कथाका तात्पर्य परार्थमें है स्वार्थमें नहीं अर्जुनने बूझाया ज्ञानी कैसे चलता फिरताहै इस चौथे प्रश्नका उत्तर इसमंत्रमें कहते हुये चतुर्थ आश्रम संन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठाका माहात्म्य और लक्षण निरूपण करते हैं श्रीमहाराज+ जो १ पुरुष २ सब भोगोंको ३ । ४ त्यागकर के ५ इच्छारहित ६ ममतारहित ७ अहंकाररहित ८ बिचरताहै ९ सो १० शान्तिको ११ अर्थात् मोक्षको ११ प्राप्त होताहै १२ अर्थात् जिसमें ये लक्षण नहीं वह मोक्षकी आशा न रक्खे यह नियमबिधिहै तात्पर्य कोई ज्ञानरहित त्यागी ऐसे होतेहैं कि उन को त्यागने के पीछे फिरउस त्यागे हुये पदार्थ की इच्छा हो आती है ज्ञानी देहादिक पदार्थोंके रहने कोभी इच्छा नहीं रखते पीछे त्यागने के त्यागे हुये पदार्थ की इच्छातो क्यों करने लगे हैं इस वास्ते निस्पृहः बिशेषण है और कोई ऐसे होतेहैं कि उनके पास त्यागने के पीछे आपही आप पदार्थ विना इच्छा प्राप्त होते हैं परन्तु उनमें उनकी ममता होजाती है और ज्ञानी के पास जो बिना इच्छा पदार्थ प्राप्त होते हैं उनमें ज्ञानी की ममता नहीं होती है इस वास्ते निर्ममः ज्ञानी का बिशेषण है और कोई ऐसे त्यागी होते हैं कि नतो उनकी इच्छा होती है और जो पराई इच्छा से पदार्थ आजावे उसमें ममता भी नहीं होती परन्तु इन तीनों बातों का अहंकार बना रहता है ज्ञानी के अहंकार भी नहीं होता यह ज्ञानी का लक्षण है इस को ज्ञाननिष्ठा कहते हैं + ७१ +

**एषाब्राह्मीस्थितिःपार्थनैनांप्राप्यविमुह्यति। स्थित्वास्यामन्तकालेपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति + ७२ +**

पार्थ १ एषा २ ब्राह्मीस्थितिः ३ एनाम् ४ प्राप्य ५ न ६ विमुह्यति ७ अन्तकाले ८ अपि ९ अस्याम् १० स्थित्वा ११ निर्वाणम् १२ ब्रह्म १३ अधिगच्छति१४+७२+अ०उ० ज्ञान निष्ठाकी महिमा वर्णन करते हुये इस स्थितप्रज्ञके प्रकरणको समाप्त करते हैं श्रीभगवान् + हे अर्जुन १ यह २ सि० जो पूर्वोक्त सर्व कर्म संन्यासपूर्वक + ब्रह्मज्ञाननिष्ठा में स्थितिः ३ सि० है+इसको ४ प्राप्तहोकर ५ सि० कोई संन्यासी +नहीं ६ मोहको

प्राप्त होता है ९ सि० ब्रह्मचर्य आश्रम से ही जो संन्यास आश्रम ग्रहण करके ज्ञाननिष्ठा में स्थित रहते हैं वे महात्मा मोक्ष को प्राप्त होवें तो इसमें क्या कहना है + अन्त काल में ८ भी ६ अर्थात् अवस्था के चौथे भाग में भी ६ इस में १० अर्थात् ब्रह्मनिष्ठा में चतुर्थाश्रम संन्यास पूर्वक + स्थित होकर ११ निर्वाण ब्रह्म को १२। १३ अर्थात् समस्त अनर्थों की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति है लक्षण जिस मोक्ष का उस को + प्राप्त होता है १४ + ७२ +

इति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योग-
शास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे सांख्ययोगो
नाम द्वितीयो ध्यायः ॥ २ ॥



——❋——

## तीसरे अध्याय का प्रारम्भ हुआ ॥

**अर्जुन उवाच । ज्यायसीचेत्कर्मणस्ते मताबुद्धिर्ज-नार्दन । तत्किंकर्मणिघोरेमांनियोजयसिकेशव +१+**

केशव १ चेत् २ कर्मणः ३ बुद्धिः ४ ज्यायसी ५ ते ६ मता ७ जनार्दन ८ तत् ९ माम् १० घोरे ११ कर्मणि १२ किम् १३ नियोजयसि १४ + १ + अ० उ० अर्जुन ने समझा कि श्री भगवान् को ज्ञान निष्ठा सम्मत है क्योंकि द्वितीय अध्याय में ज्ञाननिष्ठा की बहुत प्रशंसा करी और यहभी कहा कि चतुर्थ आश्रम संन्यासपूर्वक ज्ञाननिष्ठाही मोक्ष का हेतु है जो श्री महाराज को ज्ञाननिष्ठा श्रेष्ठ प्रिय है तो मुझको क्यों लगाते हैं यह विचार कर अर्जुन कहता है + हे केशव १ जो २ कर्म से ३ ज्ञान ४ श्रेष्ठ ५ आप को ६ सम्मत ७ सि० है + हे जनार्दन ८ तो ९ मुझको १० हिंसात्म ११ कर्म में १२ क्यों १३ प्रेरते हो १४ अर्थात् जब कि आप ज्ञाननिष्ठाको ही मोक्ष की हेतु समझते हो तो फिर मुझसे यह क्यों कहते हो कि तूतो कर्महीं कर तेरा तो कर्म में ही अधिकारहै +१+

**व्यामिश्रेणेववाक्येन बुद्धिंमोहयसीवमे । तदेकं वदनिश्चित्य येनश्रेयोहमाप्नुयाम् + २ +**

व्यामिश्रेण १ इव २ वाक्येन ३ मे ४ बुद्धिम् ५ मोहयसि ६ इव ७ तत् ८ एकम् ९ निश्चित्य १० वद ११ येन १२ अहम् १३ श्रेयः १४ आप्नुयाम् १५ + २ + अ० उ० किसी जगह तो श्रीमहाराज ज्ञानकी महिमा कहते हैं और किसी जगह कर्म की इस मिले हुये वाक्य में स्पष्ट नहीं प्रतीत होता कि इन दोनों में श्रेष्ठ क्याहै यह विचार कर अब अर्जुन यह कहता है + मिले हुयेवत् वाक्य करके १।२।३। मेरी ४ बुद्धि को ५ मानो भ्रांति करते हो ६।७ अर्थात् मुझको ऐसे प्रतीत होताहै कि मानों जैसे कोई मिले हुये वाक्य करके मोहको प्राप्त करता है वास्तव न आप मुझको मोह करते हो और न आप का वाक्य मिला हुआ न सन्देह जनक है क्योंकि आप परम करुणा दया कृपाकी खानि हैं हे करुणाकर मेरे इस अज्ञान दूर करने के लिये इनदोनों ज्ञाननिष्ठा कर्मनिष्ठा में एक जो श्रेष्ठ हो + तिस एक को ८।९ निश्चय करके १० कहो आप ११ जिस करके १२ अर्थात् ज्ञान करके वा कर्म करके १२ मैं कल्याण को १४ प्राप्तहूं १५ + २ +

**श्रीभगवानुवाच॥ लोकेस्मिन्द्विविधानिष्ठापुरा प्रोक्तामयानघ। ज्ञानयोगेनसांख्यानांकर्मयोगेनयोगिनाम् + ३ +**

अनघ १ अस्मिन् २ लोके ३ द्विविधा ४ निष्ठा ५ मया ६ पुरा ७ प्रोक्ता ८ सांख्यानाम् ९ ज्ञानयोगेन १० योगिनाम् ११ कर्मयोगेन १२ + ३ + अ० उ० इस मंत्रमें तात्पर्य श्रीमहाराजका यहहै कि हे अर्जुन जो मैंने स्वतंत्र पृथक् पृथक् दो निष्ठा स्वतंत्र दो पुरुषों के निमित्तकही हों तो यह तेरा प्रश्न बन सक्ता है कि कर्मनिष्ठा और ज्ञान निष्ठा में से एक श्रेष्ठ मुझसे कहो और जब कि मैंने एक निष्ठा कोही दो प्रकार की एक पुरुष के निमित्त अधिकार भेदसे उत्तरोत्तर कही है और एक पुरुष कोही अधिकार भेदसे दो प्रकार का अधिकारी कहाहै तो इस हेतु से यह प्रश्न तुम्हारा बे योगहै क्योंकि स्वतंत्र एक निष्ठा से कल्याण नहीं होसक्ता और न दोनोंके सम समुच्चय से होसक्ता है क्रमसमुच्चयसे कल्याण होताहै यह मैंने पीछे कहाहै मिला हुआ वाक्य नहीं कहा फिर भी अब भले प्रकार स्पष्ट कहता हूं सावधान होकर सुन + अर्जुन १ इस जनके विषये २।३ अर्थात् मुमुक्षु दोनों निष्ठा का अधिकारी एकही

पुरुष है इस एक पुरुषके निमित्त + दोहैं प्रकार जिसके ४ सि० ऐसी एक + निष्ठा ५ मैंने ६ पहले ७ अर्थात् द्वितीय अध्याय में वा वेदोंमें + कहीहै ८ सि० वे दो प्रकार यह हैं + विरक्त संन्यासी परमहंस शुद्धांतःकरण वालों को ६ ज्ञान योग करके १० अर्थात् विरक्तोंके लिये ज्ञाननिष्ठा कही है और ज्ञानकी प्रथम भूमिका वाले + कर्मयोगियों को ११ कर्म योग करके १२ अर्थात् मलिन अन्तःकरण वालों को कर्म निष्ठा कहीहै। क्योंकि कर्म करने सेही अन्तःकरण शुद्ध होकर ज्ञान होता है तात्पर्य दोनों निष्ठा का केवल एक ब्रह्मनिष्ठाही में है जब तक अंतःकरण शुद्ध होकर उपरति वैराग्य न होवे तब तक कर्म करना योग्य है और जब अंतःकरण शुद्ध होकर वैराग्यादिक का आविर्भाव हो जावे तब कर्मोंका संन्यास करके ज्ञाननिष्ठ होजावे + टी० लोकस्तु भुवने जने इत्यमरः श्रीधर जीने भी यही अर्थ कियाहै + ३ +

**नकर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यंपुरुषोऽश्नुते। नचसंन्यसनादेवसिद्धिंसमधिगच्छति + ४ +**

कर्मणाम् १ अनारंभात् २ पुरुषः ३ नैष्कर्म्यम् ४ न ५ अश्नुते ६ संन्यासात् ७ एव ८ सिद्धिम् ६ च १० न ११ समधिगच्छति १२ + ४ + अ० उ० दो निष्ठा आप कहते हो एकमें तो कर्मों का अनुष्ठान करना पड़ताहै और एकमें कर्म्म नहीं करने पड़ते मेरीजान में पहलेही से वह एकनिष्ठा श्रेष्ठहै किजिसमें कर्मकरना न पड़े यह शंकाकरकेकहतेहैं + सि० बिना अन्तःकरण शुद्ध हुये + कर्मों के १ अनारंभसे २ अर्थात् कर्मों के न करने से २ मनुष्य ३ ज्ञाननिष्ठा को ४ नहीं ५ प्राप्तहोता है ६ सि० बिना ज्ञान हुये + मोक्ष को ६ भी १० नहीं ११ प्राप्त होता है १२ अथवा बिना अन्तःकरण शुद्ध हुये केवल चतुर्थाश्रम संन्यास ग्रहणकरनेसे ज्ञान वा मोक्ष को नहीं प्राप्त होता है कोई भी + तात्पर्यबिना अन्तःकरण शुद्ध हुये जो कर्म्म त्यागदेता है उसको न इसलोक में सुख न परलोक में और उसको न स्वर्ग न मोक्ष न ज्ञान प्राप्त होता है इस वास्ते जब तक अन्तःकरण भले प्रकार शुद्ध न हो तब तक भगवत् आराधनादि कर्म्मोंका अनुष्ठान करता रहे फिर ज्ञाननिष्ठा का अधिकारीहोजायगा + ४ +

**नहिकश्चित्क्षणमपिजातुतिष्ठत्यकर्मकृत्। कार्यतेह्यवशःकर्मसर्वःप्रकृतिजैर्गुणैः + ५ +**

जातु १ कश्चित् २ हि ३ क्षणम् ४ अपि ५ अकर्म्मकृत् ६ न ७ तिष्ठति ८ हि ९ सर्वः १० प्रकृतिजैः ११ गुणैः १२ अवशः १३ कर्म्म १४ कार्यते १५ + ५ + अ० उ० अन्तरङ्ग कर्मोंको अज्ञानी नहीं त्यागसक्ता है ज्ञानीही उनके त्यागने में समर्थ है क्योंकि उनका त्याग स्वरूप से नहीं होसक्ता बिचार दृष्टि करके उनमें आसक्त न होना उनको मिथ्या कल्पित मायिक अनात्म धर्म्म समझना यही उनका त्याग है यहअज्ञानी से नहीं हो सक्ता सोई कहते हैं + कभी १ कोई २ भी ३ अर्थात् ब्रह्मज्ञानरहित कोई अज्ञानी + पल मात्र ४ भी ५ अकर्म्मकृत् ६ नहीं ७ ठहरता है ८ अर्थात् अज्ञानी कर्म्म न करता हुआ अक्रिय हुआ पल भर भी किसी काल में नहीं रहता तात्पर्यसदा कुछ न कुछ करताही रहता है+क्योंकि ९ सब १० अर्थात् अज्ञानी प्राणीमात्र १० प्रकृति से उत्पत्ति हैं जिनकी तिन सत्व रज तम गुण करके ११ । १२ लि० प्रेरा हुआ+ अवश हुआ १३ अर्थात् परतंत्र हुआ गुणों के बश हुआ अज्ञानी जीव + कर्म १४ करता है १५ तात्पर्य अज्ञानी जीव से सत्वादि गुण बल करके कर्म करवाते हैं माया करके प्रेरित परबश हुआ कर्म करता यह माया की प्रबलता ज्ञानसे ही दूर होती है+५+

**कर्मेन्द्रियाणिसंयम्ययआस्तेमनसास्मरन् । इन्द्रियार्थान्विमूढात्मामिथ्याचारःसउच्यते + ६ +**

कर्मेन्द्रियाणि १ संयम्य२ मनसा ३ इन्द्रियार्थान् ४ स्मरन् ५ यः ६ आस्ते ७ सः ८ विमूढात्मा ९ मिथ्याचारः १० उच्यते ११ +६+अ० उ० मलिन अन्तःकरण वाला जो कर्म त्याग देताहै श्री भगवान् उसकी बुराई करते हैं + कर्मेन्द्रियोंको १ रोंक करके २ लि० और+मन से ३ शब्दादि विषयोंको ४ स्मरण करता हुआ ५ जो ६ बैठा है ७ अर्थात् कर्मोंका अनुष्ठान नहीं करता+सो ८ मलिन अन्तःकरण वाला ९ लि० कर्मत्यागी+ मिथ्याचारी १० कहाहै ११ अर्थात् ऐसे त्यागी को दंभी कपटी कहते हैं और झूंठाहै मौन आसनादि आचार जिसका+६+

**यस्त्विन्द्रियाणिमनसानियम्यारभतेर्ऽजुन । कर्मेन्द्रियैःकर्मयोगमसक्तःसविशिष्यते + ७ +**

यः १ तु २ इन्द्रियाणि ३ मनसा ४ नियम्य ५ अर्जुन ६ कर्मेन्द्रियैः ७ कर्मयोगम् ८ असक्तः ९ आरभते १० स ११ विशिष्यते १२+७+अ० उ०

मलिन अन्तःकरण वाले कर्म त्यागी से कर्म करने वाला श्रेष्ठ है यह कहते हैं + सि॰ मलिन मत वाला तो कपटी है + और जो १ । २ ज्ञानेन्द्रियों को ३ मन करके ४ सि॰ विषयों से + रोककर ५ हे अर्जुन ६ कर्म इन्द्रियों करके ७ कर्म योग को ८ असक्त हुआ ९ करता है १० सो ११ विशेष है १२ सि॰ पूर्वोक्त से + तात्पर्य फल की इच्छा से जो रहित है और कर्मों में जो असक्त है सो अन्तःकरण शुद्धि द्वारा ब्रह्मज्ञानको प्राप्त होकर मोक्ष होगा इस हेतु से विशेष है + ७ +

**नियतंकुरुकर्मत्वंकर्मज्यायोह्यकर्मणः । शरीरयात्रापिचतेनप्रसिद्ध्येदकर्मणः + ८ +**

हि १ अकर्मणः २ कर्म ३ ज्यायः ४ नियतम् ५ कर्म ६ त्वम् ७ कुरु८ ते ९ अकर्मणः १० देहयात्रा ११ अपि १२ च १३ न १४ प्रसिद्ध्येत् १५ + ८ + अ॰ जबकि १ न करनेसे २ कर्म ३ श्रेष्ठ ४ सि॰ है इसहेतुसे + वेदोक्त ५ निष्काम कर्म को तू ७ कर ८ सि॰ नहीं तो + तुझ अकर्मी को ९ । १० देहयात्रा ११ भी और १३ सि॰ मोक्षभी + नहीं १४ सिद्ध होगी १५ टी॰ कर्मों का अनुष्ठान न करने से करना श्रेष्ठ है २ । ३ जो तू अपना स्वधर्म कर्म्मयुद्ध न करेगा तो तुझ को भोजनवस्त्रादि भी देहकी रक्षा के लिये नहीं मिलेंगे और बिना अन्तःकरण शुद्ध हुये तुझ को ज्ञान का अभाव होनेसे तूमुक्तभी नहींहोगा इत्यभिप्रायः ९ । १० + ८ +

**यज्ञार्थात्कर्मणोन्यत्रलोकोयंकर्मबन्धनः । तदर्थंकर्म्मकौंतेयमुक्तसंगःसमाचर + ९ +**

यज्ञार्थात् १ कर्मणः २ अन्यच ३ कर्मबन्धनः ४ अयम् ५ लोकः ६ कौंतेय ७ मुक्तसंगः ८ तदर्थम् ९ कर्म १० समाचर ११ + ९ अ॰ उ॰ इसलोक वा परलोकके पदार्थोंकी कामनाकरके जो कर्मकिया जाताहै वह बन्धका हेतुहै यह कहतेहैं + सि॰ यज्ञोवैविष्णुः । यह श्रुतिहै यज्ञनाम विष्णु का है विष्णु सच्चिदानन्द व्यापक को कहते हैं तात्पर्यार्थ यज्ञ शब्दका तत्त्वम् पदोंके लक्ष्यार्थमें है + यज्ञ नारायणार्थ १ कर्मसे २ पृथक् ३ सि॰ जो और सकाम कर्महैं तिन + कर्म करके बन्धन को प्राप्त होताहै ४ यह ५ जीव ६ हे अर्जुन ७ सि॰ तूतो + निष्काम असंग हुआ ८ परमेश्वरार्थ ९ कर्म १०कर ११ अर्थात् पूर्णब्रह्म सचिदानन्दस्वरूप जो आत्माहै उसकी प्राप्ति के लिये तात्पर्य्य अज्ञान की निवृत्ति के लिये

कर्मोंका अनुष्ठानकर अज्ञानकीजो निवृत्तिहै यही आत्माकी प्राप्ति है + ९ +

**सहयज्ञाःप्रजाःसृष्ट्वापुरोवाचप्रजापतिः । अनेन-प्रसविष्यध्वमेषवोऽस्त्विष्टकामधुक् + १० +**

प्रजापतिः १ सहयज्ञाः २ प्रजाः ३ सृष्ट्वा ४ पुरा ५ उवाच ६ अनेन ७ प्रसविष्यध्वम् ८ एष ९ वः १० कामधुक् ११ अस्तु १२ + १० + अ० उ० सर्वथा न करनेसे सकाम कर्मकरना श्रेष्ठहै अब यह कहते हैं चार श्लोकोंमें ब्रह्माजीका वाक्य इसमें प्रमाण है + ब्रह्माजी १ सहित यज्ञों के प्रजा को २।३ रचकर ४ अर्थात् यज्ञ और प्रजाको रचकर + पहले ५ सि० प्रजा से यह + बोले सि० कि हे कर्मनिष्ठा वाली प्रजा + इस करके ७ अर्थात् कर्म यज्ञ करके ७ उत्तरोत्तरबढ़ोगे तुम ८ यह यज्ञ ९तुम को १० कामधुक् ११ हो १२ अर्थात् वांछित फल देने वाली हो यह मेरा आशीर्वाद है + १० +

**देवान्भावयतानेन तेदेवाभावयन्तुवः । परस्परंभा-वयन्तः श्रेयःपरमवाप्स्यथ + ११ +**

अनेन १ देवान् २ भावयत: ३ ते ४ देवाः ५ वः ६ भावयन्तु ७ परस्परम् ८ भावयन्तः ९ परम् १० श्रेयः ११ अवाप्स्यथ १२ + ११ +अ० उ० बढ़ने का प्रकार निरूपण करते हैं + इस यज्ञ करके १ देवताओं को बढ़ाबो२तुम ३ तात्पर्य देवता यज्ञ करने से बढ़ते हैं उनका भोजन यज्ञ ही है और यज्ञ का भाग पाने वाले ४+ वे देवता ५ तुमको ६ बढ़ावेंगे ७ सि० इस प्रकार + परस्पर आपस में ८ बढ़ते हुये ९ सि० तुम और देवता + परमकल्याण को १० । ११ अर्थात् स्वर्गजन्य सुख को ११ प्राप्त होगे १२ टी० यज्ञ करने से देवता तुमको बांछित फल देंगे ७ +११+

**इष्टान्भोगान्हिवोदेवा दास्यन्तेयज्ञभाविताः । तै-र्दत्तानप्रदायैभ्योयोभुंक्तेस्तेनएवसः + १२ +**

यज्ञभाविताः १ देवाः २ वः ३ इष्टान् ४ भोगान् ५ हि ६ दास्यन्ते ७ तैः ८ दत्तान् ९ एभ्यः १० अप्रदाय ११ यः १२ भुंक्ते १३ सः १४ स्तेनः १५ एव १६ + १२ + अ० यज्ञ करके बढ़ेहुये वा प्रसन्न हुये १ देवता २ तुम को ३ सि० स्त्री पुत्र अन्न वस्त्रादि + प्यारे ४ भोगों को ५ हि ६ देंगे ७ तात्पर्य देवता मोक्ष नहीं देसक्ते हैं मोक्ष की प्राप्ति तो सर्वकर्म संन्यास-

पूर्वक ज्ञान निष्ठा से ही होती है + तिनकरके ८ दिये हुओं को ९ अर्थात् देवतों के दिये भोगों को + इनके अर्थ १० तात्पर्य उन्हीं देवतोंकेअर्थ+ न देकर अर्थात् साधु को भोजन करना इत्यादि पांच यज्ञ न करके+ १२ भोजन करता है १३ सो १४ चोर १५ सि० है + निश्चय १५ तात्पर्य्य नित्य विना पंचयज्ञ किये भोगभोगना अनर्थ का हेतुहै +१२+

**यज्ञशिष्टाशिनःसन्तो मुच्यन्तेसर्वकिल्बिषैः। भुंजतेतेत्वघंपापा येपचन्त्यात्मकारणात् + १३ +**

यज्ञशिष्टाशिनः १ सन्तः २ सर्वकिल्बिषैः ३ मुच्यन्ते ४ ये ५ तु ६ आत्मकारणात् ७ पचन्ति ८ ते ६ पापाः १० अघम् ११ भुंजते १२+१३+ अ० उ० गृहस्थों को नित्य नियम करके पांच यज्ञ करनी योग्य है जो करते हैं उनको स्तुति करते हैं श्रीमहाराज और जो नहीं करते उनकी निन्दा करते हैं + यज्ञ में का बचा हुआ अन्न भोजन करते हुये १। २ सब पापों से ३ छूटजाते हैं४ और जो ५। ६ आत्मा के वास्ते ७ अर्थात् केवल अपना ही और अपने कुटुम्ब का पेट भरने के वास्ते ही + पाक करते हैं ८ पचति यह क्रिया उपलक्षणमात्र है तात्पर्य्य जो केवल कुटुम्ब के लिये रसोई मन्दिरादि बनाते हैं वस्त्रादि कों का भोग भोगते हैं साधु परमेश्वर का उन पदार्थों में नाम मात्र भी नहीं वे ६ पापी १० पापको ११ भोजन करते हैं १२ सि० कण्डनी पेषणी चुह्ली उदकुंभोच मार्जनी॥ पंचसूना गृहस्थस्य ताभिः स्वर्गन्न विन्दति + अ० ओखली चक्की चूल्हा जल रखने की जगह बुहारी जिसको सोहरनी सोहनीभी कहते हैं इन पांच में दिनप्रति अनेक हत्या पांच प्रकार से होती रहतीहैं इस हेतु से ही गृहस्थों का अन्तःकरण मलिन रहता है और स्वर्ग नहीं मिलता है+ स्वाध्यायो ब्रह्मयज्ञश्च पितृयज्ञस्तुतर्पणम्। होमोदेवबलिर्यज्ञो नृयज्ञोतिथिपूजनम् + अ० वेद शास्त्रादि का पढ़ना वा पाठ करना इसको ब्रह्मयज्ञ कहते हैं तर्पण को पितृयज्ञ कहते हैं हवन करना और बलिवैश्वकर्म्म करना इनदोनों को देवयज्ञ कहते हैं अतिथि अभ्यागतों का पूजन करके उनको भोजन कराना वस्त्रादिदेने इसको नरयज्ञ कहतेहैं तात्पर्य पठन पाठन पाठ तर्पण होम बलि वैश्वकर्म्म विरक्त साधुओं को भोजन कराना इनपांच यज्ञ करने से नित्य की नित्य पांचों हत्या दूर होती हैं जो नहीं करते उनको बढ़ती रहती हैं +१३ +

**अन्नाद्भवन्तिभूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः। यज्ञाद्भवतिपर्जन्यो यज्ञःकर्मसमुद्भवः + १४ +**

अन्नात् १ भूतानि २ भवंति ३ पर्जन्यात् ४ अन्नसंभवः ५ यज्ञात् ६ पर्जन्यः ७ भवति ८ यज्ञः ९ कर्मसमुद्भवः १० + १४ + अ० कर्म्मकरने से ही वृष्टिद्वारा अन्नादि पदार्थोंकी प्राप्ति होती है इस हेतुसे भी कर्म्म करना योग्य है यह कहते हैं तीन श्लोकों में अन्नसे १ मनुष्य प्राणी २ होते हैं ३ अर्थात् अन्नका परिणाम शुक्र शोणित स्त्री पुरुष का जो वीर्य्य ये दोनों मिलकर मनुष्यादि प्राणी उत्पन्नहोते हैं वर्षासे ४ अन्नहोताहै ५ यज्ञ से ६ वर्षा ७ होती है ८ यज्ञ ९ कर्म्मसे होताहै १० सि० ऋत्विक् और यजमानका जो व्यापारहै वहीकर्म्म है उससे यज्ञसिद्ध होताहै+१४+

**कर्मब्रह्मोद्भवंविद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम्। तस्मात्सर्वगतंब्रह्म नित्यंयज्ञेप्रतिष्ठितम् + १५ +**

कर्म्म १ ब्रह्मोद्भवम् २ विद्धि ३ ब्रह्म ४ अक्षरसमुद्भवम् ५ ब्रह्म ६ सर्वगतम् ७ तस्मात् ८ यज्ञे ९ नित्यम् १० प्रतिष्ठितम् ११ + १५ + अ० कर्म्मको १ वेदसे उत्पन्न हुआ २ जानतू ३ वेदको ४ मायोपहित ब्रह्म उत्पन्न हुआ ५ सि० जान माया मिथ्या है ब्रह्म ६ पूर्ण है ७ तिस कारण से ८ यज्ञ में ९ नित्य १० स्थित है ११ सि० भूतादि पदार्थ जितने पीछे कहे सबका कारण मायोपहित ब्रह्महै सो पूर्ण है तिसकारण से यज्ञमें भी स्थितहै तात्पर्य यद्यपि ब्रह्म पूर्ण है परन्तु उसकी प्राप्ति निष्काम कर्म्म करनेसे अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ब्रह्मज्ञान होकर होती है इस वास्ते यज्ञमें ब्रह्म नित्य स्थित है यह कहा + १५ +

**एवंप्रवर्त्तितंचक्रं नानुवर्त्तयतीहयः। अघायुरिन्द्रियारामो मोघंपार्थसजीवति + १६ +**

एवम् १ चक्रम् २ प्रवर्त्तितम् ३ यः ४ न ५ अनुवर्त्तयति ६ पार्थ ७ स ८ इह ९ मोघम् १० जीवति ११ अघायुः १२ इन्द्रियारामः १३+१६+ अ०उ० ईश्वर से वेद वेदसे कर्म्म कर्म्म से मेघ मेघ से अन्न अन्न से प्राणी और प्राणीजब वेदोक्त कर्म्म करतेहैं तबफिर मेघादि होते हैं फिर करतहैं फिरहोतहैं+ इसप्रकार १ चक्र २ सि० परमेश्वर ने लोगोंके पुरुषार्थ की सिद्धि के लिये + प्रवृत्त किया है ३ जो ४ सि० कर्म्म का

अधिकारी इसमें + नहीं ५ प्रवृत्त होता ६ अर्थात् कर्म्मों का अनुष्ठान नहीं करता है अर्जुन ७ सो ८ इस संसार में ९ वृथा १० जीवताहै ११ सि०कैसा है सो+पाप रूप अवस्था है उसकी १२ सि० और + इन्द्रियों करके बिषयों में बिहार है जिसका १३ सि० सो पृथिवीपर भार है आप डूबा और औरोंको डबोता है + १६ +

**यस्त्वात्मरतिरेवस्यादात्मतृप्तश्चमानवः । आत्मन्येवचसंतुष्टस्तस्यकार्य्यंनविद्यते + १७ +**

यः १ तु २ मानवः ३ आत्मरतिः ४ एव ५ तृप्तः ६ च ७ आत्मनि ८ एव ९ च १० संतुष्टः ११ स्यात् १२ तस्य १३ कार्यम् १४ न १५ विद्यते १६ + १७ + अ० उ० अज्ञानियों को अन्तःकरण की शुद्धिके लिये निष्काम कर्म योग कहकर और सर्वथा न करने से सकाम करनाही अच्छा है यह कह कर अब ज्ञानी को कर्म का अनुपयोग कहते हैं दो श्लोकोंमें अर्थात् ज्ञानी को कर्म करना कुछ आवश्यक नहीं सि० जो आत्मा को यथार्थ पूर्णानन्द ब्रह्म स्वरूप नहीं जानता है उसको तो अज्ञान की निवृत्ति केलिये अवश्यही निष्काम कर्म करना योग्यहै + और जो १ । २ मनुष्य ३ सि० ऐसा है कि + आत्माही में है प्रीति जिसकी ४ । ५ अर्थात् आत्मासे पृथक् पदार्थ में जिसकी प्रीति नहीं + और आत्माही में तृप्ति है ६ । ७ अर्थात् इस लोक और परलोक के पदार्थों की प्राप्ति से तृप्ति नहीं जानता है + और आत्मा में ही ८ । ९ । १० संतुष्ट ११ है १२ अर्थात् आत्मा से पृथक् पदार्थ की न इच्छा रखता है और न उसकी दृष्टि में आत्मा से सिवाय श्रेष्ठ पदार्थ है ऐसा जो बिरक्त ज्ञानी संन्यासी है + तिसको १३ करके योग्य १४ सि० कुछ भी कर्म + नहीं १५ है १६ तात्पर्य जो कोई कदाचित् कर्मकांडी ब्राह्मणादिक यह कहें संन्यासी से कि जैसे भिक्षाटनादि कर्म तुम करतेहो ऐसेही तीर्थयात्रा देव पूजादि कर्म्म करने में तुम्हारी क्या क्षतिहै उत्तर इसका प्रसिद्ध स्पष्ट है कि जिसकी जहां प्रीति होती है वह उस जगह तत्पर रहता है इस हेतु से ज्ञानी आत्मा में परायण रहते हैं उनको देवपूजादि कर्म करने का सावकाश ही नहीं और भिक्षाटनादि विद्वान् का गौण कर्म है बाल्य भोजनवत् और उस के बिना तो शरीर की स्थिति नहीं होसक्ती देवपूजादि कर्मके बिना विद्वान् की क्या क्षति होती है जो सुन्दर स-

चिदानन्द देवको छोड़ जड़ पाषाणादि देवता का आराधन करे तात्पर्य सिवाय आत्मनिष्ठाकेविद्वान्को और कुछ कर्तव्य नहींसोवह निष्ठा ज्ञानी की स्वाभाविक है कर्त्तव्य नहीं ज्ञानी शुद्ध स्वरूप सच्चिदानंद नित्यमुक्त नित्यनिर्विकार पूर्ण ब्रह्महै ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति + १७ +

**नैवतस्यकृतेनार्थो नाकृतेनेहकश्चन। नचास्यसर्व-भूतेषुकश्चिदर्थव्यपाश्रयः + १८ +**

तस्य १ कृतेन २ एव ३ अर्थः ४ न ५ अकृतेन ६ इह ७ कश्चन ८ न ९ सर्वभूतेषु १० अस्य ११ कश्चिद् १२ अर्थव्यपाश्रयः १३ च १४ न १५ + १८ + अ० उ० वेद में लिखा है कि जब ज्ञान मार्ग में देवता विघ्नकरते हैं यह सत्य है परन्तु ज्ञान से पहिले विघ्न करते हैं ज्ञान मार्ग में प्रवृत्त नहीं होने देते मत मतान्तर क पण्डितों की बुद्धिमें बैठ कर और राजादि के मनमें स्थित होकर प्राणीको कर्म्मों में प्रेरतेहैं और अनेक नाना विघ्न करते हैं और ज्ञान हुये पीछे तो वेही देवता ज्ञानी को अपना आत्मा जानतेहैं चाहतेहैं आत्मा की बराबर यहभी तो वेद में ही लिखा है श्री भगवान् भी सतवें अध्याय में कहेंगे ( ज्ञानी त्वात्मैव मेमतम् ) तात्पर्य कोई यह शंका करे कि देवताओंका भय करके वा कुछ देवतों से आशा करके तो ज्ञानी को कर्म्म करना योग्य है इस शंकाके दूर करने के लिये यह मंत्र कहतेहैं श्रीमहाराज, जबकि ज्ञानी देवतोंको भी जीत चुका फिर अब उसको कर्म्मकरने और न करनेसे क्या प्रयोजन है यह कहते हैं इत्यभिप्रायः तिसको १ अर्थात् ज्ञानी को २ सि० कर्म करने करके २ भी ३ सि० किसी से इस लोक वा परलोक में कुछ + प्रयोजन ४ नहीं ५ सि० और + अकरने करके ६ सि० भी + इस लोक में ७ कुछ ८ सि० उस ज्ञानी को पाप प्रायश्चित्त + नहीं ९ सि० होता और ब्रह्मा जी से लेकर चींटी पर्यन्त + सब भूतों में १० इसका ११ अर्थात् ज्ञानी का ११ कोई १२ अर्थ में आसरा १३ भी १४ नहीं १५ तात्पर्य्य देवता मनुष्यादि से ज्ञानी को व्यवहार में वा परमार्थ में कुछ प्रयोजन नहीं क्योंकि ज्ञानी के शरीर का निर्वाह तो प्रारब्धवशात् हुये चला जाता है उसको कोई अधिकन्यून नहीं कर सका और न उसके स्वरूप को कोई अधिक न्यून कर सका फिर कर्म्म करने में क्या तो उसकी क्षति और क्या उस को लाभ + १८ +

**तस्मादसक्तःसततंकार्य्यंकर्म्मसमाचर। असक्तोह्याचरन्कर्म्मपरमाप्नोतिपूरुषः + १९ +**

तस्मात् १ सततम् २ असक्तः ३ कार्यम् ४ कर्म्म ५ समाचर ६ असक्तः ७ पूरुषः ८ हि ९ कर्म्म १० आचरन् ११ परम् १२ आप्नोति १३ + १९ + अ० उ० विरक्त ज्ञानी कोही कर्म्म का अनुपयोगहै अज्ञानी वा गृहस्थ ज्ञानी को मैं नहीं कहताहूं हे अर्जुन तिस कारण से १ निरन्तर २ असंग हुआ ३ करने के योग ४ कर्म्मको ५ करतू ६ असक्त ७ पुरुष ८ ही ९ कर्म्मको १० करता हुआ ११ सि० अन्तःकरण शुद्धि द्वारा ज्ञानी होकर+ मोक्षको १२ प्राप्त होताहै १३ +१९+

**कर्म्मणैवहिसंसिद्धिमास्थिताजनकादयः। लोकसंग्रहमेवापिसम्पश्यन्कर्तुमर्हसि + २० +**

जनकादयः १ कर्म्मणा २ हि ३ एव ४ संसिद्धिम् ५ आस्थिताः ६ लोकसंग्रहम् ७ अपि ८ सम्पश्यन् ९ कर्तुम् १० अर्हसि ११ एव १२ +२०+ अ० उ० सदासे कर्म्म करके ही बड़े बड़े महात्मा मुमुक्षु अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञानीको प्राप्त हुयेहैं यह कहते हैं जनकादि १ कर्म करके २ हो३ निश्चय ४ सि० अन्तःकरण शुद्धि द्वारा ज्ञान को ५ प्राप्त हुये हैं ६ सि० और जो कदाचित् तू यह मानता हो कि मैं तो पहलेही ज्ञानी हूं फिर अब कर्म क्यों करूं उत्तर इसका यहहै कि लोक संग्रहको ७ ही ८ देखता हुआ ९ अर्थात् यह बिचार कर कि अज्ञानी जन भी महात्मा की देखा देखी आचरण करते हैं ज्ञानियों के छोड़ देने से अज्ञानी भी कर्म छोड़कर कुमार्गमें प्रवृत्त होंगे उनसे करानेके लिये कर्म करना योग्य है इस प्रयोजन को स्मरण करता हुआ + कर्म करनेको १० योग्यहैतू ११ निश्चय १२ तात्पर्य श्रीभगवान् का यह है कि हे अर्जुन जो तू अज्ञानीहै तब तो अन्तःकरण की शुद्धि के लिये कर्म कर और जो तू ज्ञानी है तो लोक संग्रह के लिये कर्म कर गृहस्थाश्रम की शोभा कर्मसे ही है इसी वास्ते जनकादि करते रहे सर्वथा कर्म का अनुपयोग मैंने विरक्त संन्यासियों के वास्ते कहा है + २० +

**यद्यदाचरतिश्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः। सयत्प्रमाणंकुरुतेलोकस्तदनुवर्तते + २१ +**

श्रेष्ठः १ यद् २ यद् ३ आचरति ४ तत् ५ तत् ६ एव ७ इतरः ८

जन: ६ स १० यत् ११ प्रमाणम् १२ कुरुते १३ लोक: १४ तद् १५ अनुवर्तते १६ + २१ + अ०उ० अनजान बड़ोंको देखा देखी जो जो कर्म पाप वा पुण्य करते हैं उन कर्मों के भागी होते हैं ये लोग कौन कि धनवाले और हुकुम वाले और पण्डित और जातिमें जो प्रधान इत्यादि बड़े बड़े आदमी जो कहलाते हैं वे भागी होतेहैं क्योंकि इनसेही बुरे भले कर्मों का प्रचार जगत् में होताहै सोई कहते हैं इस मंत्रमें श्रेष्ठ १ सि० पुरुष जो २ जो ३ आचरण करता है ४ सोहीसो ५। ६। ७ अन्य जन ८। ९ सि०कर्म करताहै + और सो १० सि०प्रतिष्ठित जन+जिस को ११ अर्थात् कर्म योग को वा ज्ञान योगको ११ प्रमाण १२ करताहै १३ सि० अनजान +जन १४ तिसकेही अनुसार वर्तता है १५। १६+२१ +

**नमेपार्थास्तिकर्तव्यंत्रिषुलोकेषुकिंचन। नानवाप्तमवाप्तव्यंवर्तएवचकर्मणि + २२ +**

पार्थ १ त्रिषु २ लोकेषु ३ मे ४ किंचन ५ कर्तव्यम् ६ न ७ अस्ति ८ अवाप्तव्यं ९ अनवाप्तम् १० न ११ एव १२ च १३ कर्मणि १४ वर्ते १५ + २२ + अ० उ० लोक संग्रह के लिये ज्ञानी होकर किसी ने कर्मकिया है इस अपेक्षा में श्री महाराज यह कहते हैं कि प्रथम तो मैं ही ऐसा हूं हे अर्जुन १ तीन लोकमें २। ३ मुझको ४ कुछभी ५ कर्तव्य ६ नहीं ७ है ८ सि० और प्राप्त होने के योग्य ९ सि० वस्तु जो चाहिये वह मुझको सब क्या नहीं प्राप्त है तो भी १२। १३ कर्म में १४ वर्तता हूं मैं १५ तात्पर्य मोक्ष पर्यन्त मुझको सब पदार्थ प्राप्त हैं और मुझको न किसीका खटका है न मुझपर किसी की आज्ञा है तो भी मैं कर्म कर्ताहूं लोक संग्रहके लिये कर्म न करना यह केवल विरक्त साधुओं के वास्ते विधि है + २२ +

**यदिह्यहंनवर्तेयंजातुकर्मण्यतन्द्रितः। ममवर्त्मानुवर्तन्तेमनुष्याःपार्थसर्वशः + २३ +**

यदि १ जातु २ अतन्द्रित: ३ अहम् ४ हि ५ कर्मणि ६ न ७ वर्तेयम् ८ पार्थ ९ सर्वश: १० मनुष्या: ११ मम १२ वर्त्म १३ अनुवर्तन्ते १४ + २३ + अ० उ० आप अपनी इच्छा से कर्म करते हो जो न करो तो क्या हो यह शंका करके कहते हैं जो १ कभी २ अनालस्य हुआ ३ अर्थात् आलस्य रहित होकर ३ मैं ४ हि ५ कर्ममें ६ न ७ वर्तूं ८ अर्थात् जो मैं हो

कर्म न करूं तो हे अर्जुन ६ सब प्रकार करके १० मनुष्य ११ मेरे १२ मार्गको १३ पीछे वर्तेंगे १४ अर्थात् सबलोग कर्म छोड़ देंगे जिस रस्ते में चलूंगा उसी रस्ते सब चलेंगे + २३ +

**उत्सीदेयुरिमेलोका न कुर्यांकर्मचेदहम्। संकरस्य चकर्त्तास्यामुपहन्यामिमाःप्रजाः + २४ +**

चेद् १ अहम् २ कर्म ३ न ४ कुर्याम् ५ इमे ६ लोकाः ७ उत्सीदेयुः ८ संकरस्य ९ च १० कर्ता ११ स्याम् १२ इमाः १३ प्रजाः १४ उपहन्याम् १५ + २४ + अ० उ० जो मनुष्य आपके देखा देखी कर्म छोड़ देंगे तो उसमें आपने क्या किया और आपकी क्या क्षतिहै यह शङ्का करके कहते हैं जो १ मैं २ कर्म ३ न ४ करूं ५ सि० तो ये ६ सि० अज्ञानी जीव ७ सि० मेरे देखा देखी कर्म न करने से भ्रष्ट होजावें ८ अर्थात् वर्णसंकर होजावें इसहेतुसे मैंनेही प्रजाकोभ्रष्ट किया और वर्णसंकर का ६ भी १० कर्ता ११ सि० मैंही + हुआ १२ सि० मेरा अवतार वास्ते धर्म की रक्षाके था मैंने धर्मकोरक्षा क्याकरी उलटा मनुष्यों को वर्णसंकरकिया और इसी हेतुसे इस प्रजाको १३। १४ भ्रष्ट करनेवाला मैं हुआ १५ अर्थात् उलटा प्रजाका अन्तःकरण मैला करनेवाला मैं हुआ मैंनेही यह प्रजामैली करी इत्यर्थः + २४ +

**सक्ताःकर्मण्यविद्वांसोयथाकुर्वन्तिभारत। कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् + २५ +**

भारत १ यथा २ अविद्वांसः ३ कर्मणि ४ सक्ताः ५ कुर्वन्ति ६ तथा ७ विद्वान् ८ असक्तः ९ कुर्याद् १० लोकसंग्रहम् ११ चिकीर्षुः १२ अ० उ० अज्ञानी जीवोंपर कृपाकरके लोक संग्रहके लिये गृहस्थ ज्ञानी होकर भी कर्मकरे यह कहते हैं हे अर्जुन १ जैसे २ अज्ञानी ३ कर्म में ४ सक्तहुये ५ सि० कर्म करते हैं तैसे ७ ज्ञानी ८ असक्तहुआ ९ करे १० सि० कैसाहै वह ज्ञानी लोगोंकी रक्षा ११ करनेकी इच्छावाला १२ सि० है वह ज्ञानी यह समझता है कि ये कर्म और लोगों के भले के वास्ते मैं करताहूं +२५+

**नबुद्धिभेदंजनयेदज्ञानांकर्मसंगिनाम्। जोषयेत्सर्वकर्माणिविद्वान्युक्तःसमाचरन् + २६ +**

अज्ञानाम् १ कर्मसंगिनाम् २ बुद्धिभेदम् ३ न ४ जनयेत् ५ विद्वान् ६ युक्तः ७ सर्वकर्माणि ८ समाचरन् ९ जोषयेत् १० + २६ + अ० उ० अज्ञा-

नियोंपर जबकृपाकरनीही ठहरी तो फिर उनको कर्ममें क्यों प्रवृत्त करना चाहिये उनको भी ब्रह्मतत्त्व का उपदेश करना योग्य है यह शंकाकरके श्रीभगवान् कहतेहैं कि कर्मसंगी अज्ञानियों के। कभीभूलकर भी ब्रह्मज्ञान सिखाना न चाहियेब्रह्मज्ञानके अधिकारी औरही मुमुक्षु शुद्धान्तःकरणवालेहैं पुत्र स्त्री धनमें जो आसक्त हैं वे नहीं अज्ञानी कर्मसंगियोंकी १। २ बुद्धिकाभेद ३ न ४ उत्पन्न करे ५ विद्वान् ६ सावधानहुआ ७ सि० अपने स्वरूप में+ सब कर्मों को ८ करता हुआ ९ श्रि०अज्ञानियों को कर्म में+ प्रेरे १० अर्थात् आपभीकरे और उनसे भी करावे तात्पर्य कर्मोंमें पुत्रादि पदार्थों में देहादि में जो आसक्त हैं उनकी बुद्धि को ज्ञानी कर्मों में से न हटावे अर्थात् उनसे यह नकहे कि आत्मा अकर्त्ता अद्वैत अभोक्ता स्वतंत्र शुद्ध सच्चिदानन्द निर्विकार है तुम कर्म क्यों करते हो कर्म तो जड़है इस प्रकार उन की बुद्धि का भेदन करे क्योंकि उनका राग द्वेषादि सहित अन्तःकरण होने से उनको आत्मा का ज्ञान न होगा और कर्म छोड़देने से उनको इसलोक में सुख न होगा न परलोक में न उन के अन्तःकरण में से तम रज काम क्रोधादि दूर होंगे इस हेतु से अज्ञानी जन कर्म न करने से उभय भ्रष्ट होजावेंगे + २६ +

**प्रकृतेःक्रियमाणानि गुणैःकर्माणिसर्वशः। अहंकारविमूढात्माकर्ताहमितिमन्यते + २७ +**

सर्वशः १ कर्माणि २ प्रकृतेः ३ गुणैः ४ क्रियमाणानि ५ अहंकारविमूढात्मा ६ इति ७ मन्यते ८ अहम् ९ कर्त्ता १० + २७ + अ० उ० अज्ञानी कर्मों में मनसे आसक्त होजाता है यह कहते हैं सब प्रकार करके १कर्म २ प्रकृति के ३ गुणों करके ४ किये जातेहैं ५ अर्थात् गुण ही करता है अहंकार करके विमूढ़ है अन्तःकरण जिसका ६ सि० वह यह ७ मानता है ८ सि० कि मैं ९ करता १० सि० हूं इसी हेतु से कर्मों में आसक्त होजाता है टी० अहंकार करके अर्थात् इन्द्रियादिकों में आत्मा का अध्यास करके अर्थात् मैं देखता हूं खाता हूं समझता हूं इस प्रकार इन्द्रियादिकों के साथ आत्मा की एकता करके भ्रान्ति को प्राप्त हुई है बुद्धि जिसकी वह यह मानता है कि मैं करता हूं + २७ +

**तत्त्ववित्तुमहाबाहो गुणकर्मविभागयोः। गुणागुणेषुवर्त्तन्तइतिमत्वानसज्जते + २८ +**

महाबाहो १ गुणकर्मविभागयोः २ तत्ववित् ३ तु ४ इति ५ मत्वा ६ न ७ सज्जते ८ गुणाः ९ गुणेषु १० वर्तन्ते ११ + २८ + उ० उ० ज्ञानी कर्मों में मनसे नहीं आसक्त होता है यह कहते हैं हे अर्जुन १ गुण और कर्मों के विभाग का २ तत्व जानने वाला ३ ते ४ यह ५ मानकर ६ नहीं ७ आसक्त होता है ८ सि० कर्मों में क्या मानताहै वह इस अपेक्षा में कहते हैं कि इन्द्रिय ९ विषयों में + बर्तती हैं ११ सि० आत्मा निर्विकार शुद्ध हैं ज्ञानी यह मानता है १० टी० मैं गुणात्मक नहीं हूं अर्थात् गुण रूप में नहीं इस प्रकार तो गुणों से आत्मा को पृथक् समझता है और ये कर्म मेरे नहीं इस प्रकार कर्मों से आत्मा को पृथक् समझता है २ + २८ +

**प्रकृतेर्गुणसंमूढाः सज्जन्तेगुणकर्मसु। तानकृत्स्नविदोमन्दान्कृत्स्नविन्नविचालयेत् + २९ +**

प्रकृतेः १ गुणसंमूढाः २ गुणकर्मसु ३ सज्जंते ४ तान् ५ अकृत्स्नविदः ६ मन्दान् ७ कृत्स्नवित् ८ न ९ विचालयेत् १० + २९ + अ० उ० कर्मसंगी मन्दमति हैं इस हेतु से भी उनको ब्रह्मज्ञान उपदेश नहीं करना यह कहते हैं प्रकृति के १ सि० सत्वादि + गुणों करके भ्रांत हुये २ गुणों के कर्मों में ३ आसक्त हैं ४ सि० जो + तिन अल्पज्ञ मन्दमति पुरुषों को ५ । ६ । ७ सर्वज्ञ ज्ञानी ८ न ९ विचाले १० सि० कर्म से अर्थात् उनको ब्रह्म तत्व उपदेश नहीं करना वे ब्रह्मज्ञान के अभी अधिकारी नहीं जब व आप जिज्ञासा करें तब उनको उपदेश करना योग्य है + इत्यभिप्रायः + २९ +

**मयिसर्वाणिकर्माणि संन्यस्याध्यात्मचेतसा। निराशीर्निर्ममोभूत्वा युद्ध्यस्वविगतज्वरः + ३० +**

मयि १ अध्यात्मचेतसा २ सर्वाणि ३ कर्माणि ४ संन्यस्य ५ निराशीः ६ निर्ममः ७ विगतज्वरः ८ भूत्वा ९ युद्ध्यस्व १० + ३० अ० उ० मुमुक्षुको जिस प्रकार कर्म करना चाहिये सो कहते हैं + मुझसर्वज्ञादि गुणविशिष्ट सर्वात्मा में १ विवेक बुद्धि करके २ अर्थात् अन्तर्य्यामी के आधीन हुआ यह कर्म करता हूं मैं यह कर्म परमेश्वरार्थ है मुझको फल की इच्छा नहीं इस बुद्धि करके सर्व कर्मों को ३ । ४ अर्थात् सब कर्मोंके फलको + परमेश्वर में अर्पण करके ५ आशारहित ६ ममता

रहित ७ सन्ताप रहित ८ होकर ९ युद्ध कर १० मि० क्षत्रियों का युद्धही स्वधर्म कर्म्म है सो इस प्रकार कर जैसे ऊपर कहा टी० कर्म करने के समय किसी प्रकार फलकी इच्छा आशा नहीं रखनी ६ कर्मोंकेफल में ममतारहित इसवास्ते होना चाहिये कि उनका फल परमेश्वर को अर्पण होचुका अभाव पदार्थ में ममता नहीं बनसक्ती है ७ कर्म करने के समय धीरज उत्साह चाहिये ८+३०+

येमेमतमिदंनित्यमनुतिष्ठन्तिमानवाःश्रद्धावन्तोऽनसूयन्तोमुच्यन्तेतेपिकर्मभिः + ३१ +

ये १ श्रद्धावन्तः २ अनसूयन्तः ३ मानवाः ४ मे ५ इदम् ६ मतम् ७ नित्यम् ८ अनुतिष्ठन्ति ९ ते १० अपि ११ कर्मभिः १२ मुच्यन्ते १३ + ३१+अ० उ० प्रमाणों के सहित मैंने यह उपदेश किया है इसके अनुष्ठान करने में बड़ागुण है यह कहते हैं श्रीमहाराज जो १ श्रद्धावाले २ असूया रहित ३ मनुष्य ४ सि० मैंने जो पीछे उपदेश किया + मेरे ५ इस ६ मत को ७ नित्य ८ अनुष्ठान करेंगे अर्थात् जब तक भले प्रकार अन्तःकरण में से राग द्वेषादि दूर न होवें तबतक जो कर्म मेरी आज्ञा से करेंगे९वे कर्माधिकारी कर्मसंगी १० भी ११कर्मों करके१२ अर्थात् कर्मों से छूटजावेंगे १३ अर्थात् कर्म करने से उनका अन्तःकरण शुद्ध होजायगा फिर वे अपने आप कर्मों को त्यागकर ज्ञाननिष्ठहोजावेंगे टी० जो श्री महाराज कहते हैं सो सत्य है बे संदेह भगवत् आराधनादि कर्मों का अनुष्ठान करने से अन्तःकरण शुद्धहोकर ज्ञानद्वारा मुक्ति होती है इसको श्रद्धा कहते हैं २ गुणों में दोष निकालना उसको असूया कहते हैं भगवत् के उपदेश में यह दोष नहीं निकालते हैं कि परमेश्वर फलका तो त्याग करवाते हैं और कर्म करने को कहते हैं ऐसे दोष रहित पुरुषोंको अनसूयन्तः कहते हैं ३ +३१+

येत्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्तिमेमतम् । सर्वज्ञानविमूढांस्तान्विद्धिनष्टानचेतसः + ३२ +

ये १ तु २ मे ३ एतत् ४ मतम् ५ न ६ अनुतिष्ठन्ति ७ अभ्यसूयन्तः ८ तान् ९ अचेतसः १० नष्टान् ११ सर्वज्ञान् विमूढान् १२ विद्धि १३+३२+ अ० उ० गुण में जो दोष की कल्पना करते हैं वे महानीच हैं सोई कहते हैं जो मेरे मतका अनुष्ठान करते हैं वेतो विद्वान् हैं + और जो

१।२ मेरे ३ इस मतको ४।५ नहीं अनुष्ठान करते हैं ० सि० प्रत्युत+ असूया करते हैं ८ तिन अल्पज्ञ मुरदों को ९। १०। ११ सब ज्ञानके विषय मूढ़ हैं १२ सि० यह+जानतू १३ टी० मोक्ष मार्ग में मुरदे की तुल्य हैं इस वास्ते उनको नष्ट कहा ११ कर्म से अन्तःकरण शुद्ध होता है तमोगुण दूरहोता है उपासना से चित्त एकाग्र होता है रजोगुण दूरहोता है यही कर्म उपासना अष्टाङ्ग योगादिका परंप्रयोजन है फिर ज्ञानसे मोक्ष होता है यह मेरा मत है इससे पृथक् जो किसी का पंथमत संप्रदाय है उन सबको सर्व रूप ब्रह्मज्ञानके विषय मूर्खजान तू १२। १३ गुणों में जो अपगुणोंकी कल्पना करते हैं उनको अभ्यसूयन्तः कहते हैं कल्पना ऐसे करते हैं कि जो शुभ उपदेश करैं उनको वाक्यवादी कहते हैं जो मौनरहैं उसको पाखण्डी मूर्ख अभिमानी कहते हैं जो संतोष से बैठारहे उसको आलसी बतावें जो उद्यम करे उसको लोभी कहैं तात्पर्य मैंने बहुत यह विचार किया है कि कोई ऐसा गुण विद्वानोंका नहीं कि जिसको दुष्टोंने दूषित न कियाहो अक्षरों का अर्थ फेरकर अनर्थ करें तो फिर इसमें क्या आश्चर्य है + ३२ +

**सदृशंचेष्टसेस्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि। प्रकृतिंयान्तिभूतानि निग्रहःकिंकरिष्यति + ३३ +**

भूतानि १ प्रकृतिम् २ यान्ति ३ स्वस्याः ४ प्रकृतेः ५ सदृशम् ६ ज्ञानवान् ७ अपि ८ चेष्टसे ९ निग्रहः १० किम् ११ करिष्यति १२+३३+अ० उ० सबही मनुष्य प्रथम कर्मों का अनुष्ठान करके अन्तःकरण शुद्धकरके ज्ञाननिष्ठ क्योंनहीं होतेहैं कि जिससे पूर्ण परमानन्द नित्य निर्विकार की प्राप्ति होतीहै इससीधे रस्तेपर प्राणी क्यों नहीं चलते हैं नानाप्रकार अर्थोंकी कल्पनाकरके आपकी आज्ञा को क्यों नहीं मानते हैं इस अपेक्षा में श्रीमहाराज यह कहते हैं कि सब प्राणी १ सि० अपनी २ प्रकृतिको ३ प्राप्त होरहे हैं ४ अपनी प्रकृति के ५ सदृश ६ ज्ञानवान् ७ भी ८ चेष्टा करताहै ९ सि० जो अज्ञानीजीव अपने स्वभाव के अनुसार बर्ते तो इसमें क्या कहना है फिर मेरा वा किसी का + निग्रह १० क्या ११ करेंगे १२ तात्पर्य पूर्व कर्मों के संस्कारों से जो स्वभाव जीवों का होरहा है रजोगुणी वा तमोगुणी वा सत्वगुणी उसी स्वभाव को सब प्राप्त होरहे हैं वैसेही वैसे कर्म करते हैं जो पुरुष अपने स्वभाव के अनुसार कुमार्ग में प्राप्तहोरहा है उसको किसीका उपदेश क्या फलदेगा क्योंकि स्वभाव

बलवान् है इस हेतु से मेरा उपदेश भी नहीं मानते हैं + ३३ +

**इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौव्यवस्थितौ। तयो-र्नवशमागच्छेत्तौह्यस्यपरिपन्थिनौ + ३४ +**

इन्द्रियस्य १ इन्द्रियस्य २ अर्थे ३ रागद्वेषौ ४ व्यवस्थितौ ५ तयोः ६ वशम् ७ न ८ आगच्छेत् ९ तौ १० हि ११ अस्य १२ परिपंथिनौ १३ + ३४ + अ० उ० जब कि आप स्वभावको ही बलवान् कहतेहो तो वेदादिकों की बिधि निषेध वृथाही है यह शंका करके कहते हैं इन्द्रिय इन्द्रिय का १।२ सि० अर्थात् सब इन्द्रियों का अपने अपने + अर्थ में ३ अर्थात् शब्दादि पदार्थों में ३ रागद्वेष ४ स्थित हैं ५ अर्थात् सब इन्द्रियों के विषय में राग भी है द्वेष भी है तिनके ६ अर्थात् रागद्वेष के बश को ७ नहीं ८ प्राप्तहो ९ अर्थात् रागद्वेष के बश में न होजावे क्योंकि व १० हि ११ अर्थात् रागद्वेषही ११ इसके १२ अर्थात् मुमुक्षु के मोक्ष मार्गमें चोर हैं १३ सि० लूटने वाले हैं तात्पर्य सब इन्द्रियों के अनुकूल पदार्थ में तो राग है और प्रतिकूल में द्वेष है यह बात ज्ञानी के भी होती है और अज्ञानी के भी यहांतक तो स्वभाव बलवान् है और रागद्वेष के बश होजाना यह अज्ञानी का काम है बशमें न होना यह ज्ञानी का काम है जैसे निर्मल गम्भीर जलमें एक मणि पड़ी है उसको देखकर ज्ञानी का भी मन चला और अज्ञानी का भी यहांतक तो स्वभाव की प्रबलता है क्योंकि रजोगुण के प्रभाव से मणि में दोनों का राग होगया तृष्णा इच्छा उत्पन्न होगई परन्तु ज्ञानी ने तो यह समझा कि जल बहुत है जो मैं इसमें कूदा तो डूब जाऊंगा अज्ञानी को यह समझ न थी कि बहुत जलमें डूबजाते हैं वह रजोगुण के बशसे तृष्णा रागादि का दबाया हुआ कूदकर डूब गया इस जगह ज्ञानी अज्ञानी शब्दों का तात्पर्य समझवाले बे समझवाले में हैं ब्रह्मज्ञानी का प्रसंग नहीं इसीप्रकार स्त्रियादि पदार्थोंमें सबका रागद्वेष है परन्तु जिन्हों ने शास्त्र गुरु द्वारा यह निश्चय कर रक्खा है कि कांचन कान्तादि पदार्थ मोक्ष मार्ग के वैरी हैं वे तो रागादि हुये सन्ते भी प्रवृत्तनहीं होते और जिन्होंने शास्त्र नहीं श्रवणकिया वे धोखा धक्का खाते हैं इस हेतु से शास्त्र की बिधि निषेध स्वभाव से बलवान् है शास्त्रका श्रवण करना तात्पर्य अनुष्ठान करने से है नहीं तो दिन में हज़ारों श्रवण करते हैं रात्रि को भूलकर फिर वोही खोटा काम करते हैं तात्पर्य यह है कि पदार्थ में रागद्वेष होना यह

तो स्वभावकी प्रबलता है शास्त्र दृष्टि करके उसमें प्रवृत्त होना वा न होना यह शास्त्र करता है शीतादि के सहने में प्रवृत्ति स्त्रियादि पदार्थों से निवृत्ति शास्त्र करता है + ३४ +

**श्रेयान्स्वधर्मोविगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् । स्वधर्मेनिधनंश्रेयः परधर्मोभयावहः + ३५ +**

स्वनुष्ठितात् १ परधर्मात् २ स्वधर्मः ३ विगुणः ४ श्रेयान् ५ स्वधर्मे ६ निधनम् ७ श्रेयः ८ परधर्मः ९ भयावहः १० + ३५ + अ० उ० जब कि स्वभाव के बशहोकर मनुष्य डूबता है इस वास्ते स्वभावको जीतना योग्य है वेदोक्त कर्मोंका अनुष्ठान करने से स्वभाव जीता जाता है सोई कहते हैं सद्गुणों करके युक्त पराये धर्म से १ । २ अपना धर्म ३ किसी गुणकरके रहित ४ लि० भी + श्रेष्ठ ५ लि० है + अपने धर्म में ६ मरना ७ श्रेष्ठ ८ लि० है + परायाधर्म ९ भयको प्राप्त करने वालाहै १० तात्पर्य जो अपना निवृत्ति धर्म है वा प्रवृत्ति वही श्रेष्ठ है निवृत्ति धर्म वाले को तो प्रवृत्ति धर्म का अनुष्ठान करना न चाहिये और प्रवृत्ति धर्म वाले को निवृत्ति धर्म का अनुष्ठान करना चाहिये जो जो अपने वर्ण आश्रम का धर्म है वही वर्तना योग्य है अपने धर्म का अनुष्ठान करने से स्वभाव जीता जाता है अथवा अपना धर्म जो सच्चिदानन्द रूप निर्विकार विगुण भी है अर्थात् सत्व रज तम गुण उसमें नहीं वह निर्गुण भी है तो भी गुणोंवाले परधर्म से अर्थात् सत्वादि गुणों के धर्म इन्द्रिय शब्दादि विषयों से श्रेष्ठ है इन्द्रियादिकों का जो धर्म है वह आत्माका धर्म नहीं पर धर्म कहलाता है उस पर धर्म में करना अर्थात् कर्ताहो कर इन्द्रियादिकों के साथ मिलकर जो देहका त्यागकरना है वह संसार को प्राप्त करनेवाला है भयनाम संसारका ही है और अपने धर्म में मरना अर्थात् ज्ञाननिष्ठा ब्रह्माकार वृत्ति स्वरूप में जो देहका त्याग है वह श्रेष्ठ है क्योंकिमुक्तिका हेतु है यहां श्रुति प्रमाण है काश्याम्मरणान्मुक्तिः । काशःब्रह्मतत्त्वप्रकाशः यस्यांअवस्थायांसाकाशी ॥ काशी उस अवस्था का नाम है कि जिसमें ब्रह्मतत्त्व का प्रकाश होता है उस काशी में मरने से मुक्ति होती है + ३५ +

**अर्जुनउवाच ॥ अथकेनप्रयुक्तोयंपापंचरतिपूरुषः । अनिच्छन्नपिवार्ष्णेयबलादिवनियोजितः + ३६ +**

अथ १ वार्ष्णेय २ अनिच्छन् ३ अपि ४ अयम् ५ पूरुषः ६ केन ७ प्रयुक्तः ८ पापम् ९ चरति १० बलात् ११ इव १२ नियोजितः १३ + ३६ + अ० उ० श्री भगवान् कहते हैं कि रागद्वेष के वशनहीं होना पापनहीं करना अर्थात् परधर्म का अनुष्ठान नहीं करना अपनेही धर्मका करना वेदोक्त मार्गपर चलना यह सब सत्यकहते हैं परन्तु जीव तो परतंत्र प्रतीत होता है जो स्वतंत्रहो तो सब कुछ कर सक्ता है कोई ऐसा प्रबल प्रतीत होताहै कि जीवसे बलकरके जबरदस्ती पापकरावे है यह विचार करके अर्जुन श्रीमहाराज से प्रश्नकरता है कि हे महाराज वह कौन है जिसके वशहोकर जीव पापकरता है अथ यह शब्द प्रश्नमें आता है १ हे कृष्णचन्द्र २ नहीं इच्छा करता हुआ ३ भी ४ यह ५ जीव ६ किस करके ७ प्रेरा हुआ ८ पाप को ९ करता है १० सि० ऐसे प्रतीत होता है कि किसी ने + बलसे ११ जैसे १२ सि० पाप में + जोड़ दिया है १३ सि० जैसे बैल को जबरदस्ती गाड़ी में जोड़ देतेहैं प्रतीतहोत है कि ऐसेही जीवसे कोई जबरदस्ती पाप करावे है तात्पर्य पाप करने में क्या हेतु है यह अर्जुन का प्रश्न है + ३६ +

**श्रीभगवानुवाच। कामएषःक्रोधएषरजोगुणसमुद्भवः। महाशनोमहापाप्माविद्ध्येनमिहवैरिणम् ३७+**

एषः १ कामः २ एषः ३ क्रोधः ४ रजोगुणसमुद्भवः ५ महाशनः ६ महापाप्मा ७ एनम् ८ इह ९ वैरिणम् १० विद्धि ११ + ३७ + अ० उ० श्री भगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन तुम ने जो बूझा कि पाप करने में क्या हेतु है सो सुन यह १ काम २ सि० और यह ३ क्रोध ४ सि० दोनों यही पाप करने में हेतु हैं यही जबरदस्ती जीवसे पाप कराते हैं इस लोक परलोक के पदार्थों की जो कामना है + यही पापकी जड़ है यही कामक्रोधाकार होजाता है कैसा है यह काम रजोगुण से उत्पत्ति है जिसकी ५ अर्थात् कामकी भी जड़ रजोगुण है इस बिशेषणका यह तात्पर्य है कि रजोगुणके जीतने से कामभी जीता जाता है और कामके जीतने से क्रोध जीता जाता है सतोगुण बढ़ाने से रजोगुण कमहोता है फिर कैसा है वह काम बड़ा भोजन है जिसका ६ अर्थात् कितनाही भोग भोगो कभी इच्छा पूर्ण न होवे प्रत्युत दूनी आग लगे इसहेतुसे वह काम महापापी ७ सि० है काम करकेही यह जीव पाप करता है और सदा यह पापी पाप करता है + इसको ८ अर्थात् कामको ८ मोक्ष मार्ग

में ६ बैरी १० जान तू ११ तात्पर्य कामना को बैरी बिषसे भी सिवाय समझ कर इस लोक परलोककी कामना त्याग करना यही मोक्ष का हेतु है + ३७ +

**धूमेनाव्रियतेवह्निर्यथादर्शोमलेनच । यथोल्वेनावृतोगर्भस्तथातेनेदमावृतम् + ३८ +**

यथा १ धूमेन २ वह्निः ३ आव्रियते ४ यथा ५ च ६ आदर्शः ७ मलेन ८ उल्वेन ६ गर्भः १० आवृतः ११ तथा १२ तेन १३ इदम् १४ आवृतम् १५ + ३८ + अ० उ० काम का बैरी पना यह है जैसे १ धूमकरके २ अग्नि ३ ढकी है ४ और जैसे ५ । ६ शीशा ७ मल करके ८ सि० मैला होरहा है और जैसे + जेर करके ६ गर्भ १० ढका रहता है ११ तैसेही १२ तिस करके १३ अर्थात् काम करके १३ यह १४ अर्थात् विवेक ज्ञानआत्मा १४ ढकाहुआहै १५ तात्पर्य जैसे धूमादिने अग्नि आदिको ढक कररक्खा है तैसेही कामने बिचार विवेक ज्ञानको ढकरक्खा है ये तीन दृष्टान्त उत्तम मध्यम कनिष्ठ अधिकारियों के वास्ते हैं जेरके भीतर जो बच्चा होता है उसका नाम गर्भ है बच्चे के ऊपर से जेर दूर करने में थोड़ा ही यत्न चाहता है यह दृष्टान्त उत्तम के वास्ते है बाचका मध्यम के वास्ते शेष कनिष्ठ के वास्ते है + ३८ +

**आवृतंज्ञानमेतेनज्ञानिनोनित्यवैरिणा।कामरूपेणकौन्तेयदुष्पूरेणानलेनच + ३९ +**

कौन्तेय १ एतेन २ कामरूपेण ३ ज्ञानम् ४ आवृतम् ५ ज्ञानिनः ६ नित्यवैरिणा ७ दुःपूरेण ८ अनलेन ६ च १० + ३६ + अ० हे अर्जुन १ इसकामरूपने २।३ ज्ञान ४ ढक रक्खा है ५ सि० अर्थात् इसलोकपरलोक के पदार्थों की कामना ज्ञान नहीं होने देता है कैसा है यह काम कि अज्ञानियों को तो भोगों के प्रयत्न करने में और भोगों के नाश करने में यह काम बैरीसा प्रतीत होता है और ज्ञानी कोतो भोग समय भी बैरी प्रतीत होता है इस हेतु से + ज्ञानी का ६ नित्य बैरी है ७ ति० ज्ञानी यह समझता है कि इन भोगों नेही परमानन्द स्वरूप परमात्मा से बिमुख कर रक्खा है इस वास्ते सब काम में ज्ञानी को भोग बैरी प्रतीत होते हैं फिर कैसा है यह काम + भोगों करके कभी पूर्ण नहीं होता है ८ और अग्नि के सदृश स्वभाव है जिसका ६ । १० सि० जैसे

अग्नि में जितना घी और इन्धन डालाजावे उतनाही सिवाय प्रचंड होती है यह काम की गति है जितनी प्राप्ति भोगों की होवे उतनीही तृष्णा और कामना बढ़ती जावे + सातवां आठवां नवां ये तीनों पद कामरूपेण इस पदके विशेषण हैं + ३९ +

**इन्द्रियाणिमनोबुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते। एतैर्विमोहयत्येषज्ञानमावृत्यदेहिनम् + ४० +**

अस्य १ अधिष्ठानम् २ इन्द्रियाणि ३ मनः ४ बुद्धिः ५ उच्यते ६ एषः ७ ज्ञानम् ८ आवृत्य ९ एतैः १० देहिनम् ११ विमोहयति १२ + ४० + अ० उ० काम के जीतने के वास्ते कामका अधिष्ठान बताते हैं अर्थात् काम जहां रहता है उनस्थानों को बताते हैं क्योंकि जब तक बैरी का घर न जानाजावे तब तक कैसे जीता जावे इसका १ अर्थात् काम का अधिष्ठान रहने की जगह २ इन्द्रिय ३ मन ४ बुद्धि ५ कहते हैं ६ अर्थात् महात्मा यह कहते हैं कि इन्द्रिय मन बुद्धि काम के रहने की जगह हैं कुतः कि प्रथम बिषयों को देखा सुना फिर यह संकल्प विकल्प किया कि इस पदार्थ को भोगना योग्य है वा नहीं फिर यह निश्चय करलिया कि अवश्य इस पदार्थ को प्राप्त करके भोगेंगे सो यह ७ सि० कान + ज्ञान को ८ ढक कर ९ इन करके १० अर्थात् इन्द्रियादि करके १० जीव को ११ भ्रांतकर देता है १२ अर्थात् काम करके जीव अन्धासा होजाता है कामना के बश होकर बुरेभले की सुधि नहीं रहती है + ४० +

**तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौनियम्यभरतर्षभ। पाप्मानंप्रजहिह्येनंज्ञानविज्ञाननाशनम् + ४१ +**

तस्मात् १ भरतर्षभ २ आदौ ३ इन्द्रियाणि ४ नियम्य ५ एनम् ६ पाप्मानम् ७ त्वम् ८ प्रजहि ९ हि १० ज्ञानविज्ञाननाशनम् ११ + ४१ + अ० उ० जब कि यह काम इन्द्रियादिकों में रहता है जिस कारण से १ हे अर्जुन २ सि० मोह होने से + प्रथम आदिमें ३ सि० हि इन्द्रियों को ४ रोक कर ५ इसपापी को ६ । ७ अर्थात् काम को ७ तू ८ मार त्याग दूरकर ९ क्योंकि १० सि० यही + ज्ञान विज्ञानका नाश करनेवाला है ११ टी० शास्त्र आचार्यों से जो सुन समझरक्खा है उसको इस जगह ज्ञान कहते हैं और विशेष युक्तियों करके जो उसी ज्ञानको निश्चय किया है उसको इस जगह विज्ञान कहते हैं ब्रह्मज्ञान

और अनुभव विज्ञान का नाम यहां ज्ञानविज्ञान नहीं क्योंकि उनको कोई नाश नहीं करसक्ता है तात्पर्य ज्ञानविज्ञान के पीछे कामादि का उदय विद्वान् के अन्तःकरण में होताही नहीं और जो अज्ञानीको प्रतीत होता होतो उसका कामाभास समझना योग्य है रागोलिंगमवोधस्य संतु रागादयो बुधे। तात्पर्य रागाभास विद्वान् में रहो ज्ञान विज्ञानकी उससे कुछ क्षति नहीं रागादिक अज्ञान के चिह्न हैं रागादि ज्ञान विज्ञान को उदय और परिपाक नहीं होने देते हैं यह अभिप्राय है आनन्दामृत-वर्षिणी के तीसरे अध्याय में ज्ञान विज्ञान का लक्षण भलेप्रकार निरूपण किया है ११ जब तक इन्द्रिय और विषय का सम्बन्ध नहीं हुआ है उससे पहिले विचार करके इन्द्रियों का निरोध चाहिये जब विषय का सम्बन्ध होजाता है तब फिर इन्द्रिय नहीं रुक सक्ती हैं और इन्द्रियों के रोकनेसेही मन बुद्धिमें से भी काम जाता रहता है + ४१ +

**इन्द्रियाणिपराण्याहुरिन्द्रियेभ्यःपरम्मनः। मन-सस्तुपराबुद्धिर्योबुद्धेःपरतस्तुसः + ४२ +**

इन्द्रियाणि १ पराणि २ आहुः ३ इन्द्रियेभ्यः ४ मनः ५ परम् ६ बुद्धिः ७ मनसः ८ तु ९ परा १० यः ११ बुद्धेः १२ तु १३ परतः १४ सः १५ +४२+ अ० उ० कुछ आज्ञाभी चाहिये कि जिस करके इन्द्रियों को विषयों से रोका जावे काम को जीताजावे इस अपेक्षा में श्री महाराज आज्ञा बताते हैं स्थूल देह से इन्द्रियों को १ श्रेष्ठ २ कहते हैं ३ सि० विद्वान् क्योंकि सूक्ष्महैं और प्रकाशकहैं + इन्द्रियोंसे ४ मनको ५ श्रेष्ठ ६ सि० कहते हैं क्योंकि इन्द्रियोंका प्रेरक है और+ बुद्धि ७ मन से ८ भी ९ श्रेष्ठ १०सि० है क्योंकि मन की मालिक है बुद्धि को मनीषा कहते हैं + जो ११ बुद्धि से १२ भी १३ श्रेष्ठ १४ सि० है अर्थात् सब का जो परम-प्रकाशक है + सो १५ सि० आज्ञा रक्षक आत्मा है इसी को परम पुरुष उत्तम पुरुष पूर्णब्रह्म परमगति परमधाम राम कहते हैं इससे परे पृथक् श्रेष्ठ पदार्थ कुछ नहीं पुरुषान्न परं किंचित्सा काष्ठा सा परागतिः। यह श्रुति है। सबकर परम प्रकाशक जोई। राम अनादि अवधपति सोई +४२+

**एवम्बुद्धेःपरम्बुध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना। जहि शत्रुंमहाबाहो कामरूपंदुरासदम् + ४३ +**

महाबाहो १ एवम् २ बुद्धेः ३ परम् ४ बुध्वा ५ आत्मना ६ आत्मा-

नम् ७ संस्तभ्य ८ कामरूपम् ९ शत्रुम् १० जहि ११ दुरासदम् १२ +४२+ अ० सि० आत्मा बुद्धि आदिकों का साक्षी प्रेरक और वास्तव अक्रिय निर्विकार बुद्धि आदि पदार्थों से विलक्षण है + हे अर्जुन १ इस प्रकार २ बुद्धि से ३ परमश्रेष्ठ ४ सि० परमानन्दस्वरूप परमात्मा को+ जानकर ५ सि० और फिर उसी+ बुद्धिसे ६ मनको ७ सि० आत्मा में + निश्चल करके ८ कामरूप बैरीको ९। १० मार त्यागकर दूर कर ११ सि० कैसा है यह काम + दुःख करके प्राप्ति है जिसकी १२ अर्थात् बड़े २ दुःखों करके काम भोग प्राप्त होते हैं + ४३ +

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मयोगो नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ॥



## चौथे अध्याय का प्रारम्भ हुआ ॥

**श्रीभगवानुवाच। इमंविवस्वतेयोगं प्रोक्तवानहमव्ययम्। विवस्वान्मनवेप्राहमनुरिक्ष्वाकवेब्रवीत् +१+**

इमम् १ अव्ययम् २ योगम् ३ विवस्वते ४ अहम् ५ प्रोक्तवान् ६ विवस्वान् ७ मन वे ८ आह ९ मनुः १० इक्ष्वाकवे ११ अब्रवीत् १२ + १ + अ० उ० पीछे दो अध्यायों में जो निरूपण किया कर्म्म संन्यास योग अर्थात् ज्ञान योग ज्ञाननिष्ठा और उसका साधन उपाय कर्म योग इसी में सब वेदों का अर्थ होगया प्रवृत्ति लक्षण और निवृत्ति यही दो प्रकार का धर्म समस्त वेदार्थ है सोई श्रीभगवान् ने गीता में कहा है ये दोनों धर्म अनादि हैं सोई श्रीभगवान् कहते हैं सि० और + इस फूलके बीच में पद से सिवाय अर्थ लिखते हैं हम अब यहां से सि० यह संकेत नहीं लिखेंगे अकेले फूल के बनाने सेही सिवाय अर्थ की पहिचान होसक्ती है + इस अव्ययोग को १ । २ । ३ प्रथम सृष्टि के आदि में आदित्य के अर्थ ४ में ५ कहता भया ६ अर्थात् यह ज्ञानयोग साधन सहित पहले मैंने आदित्य से कहा आदित्य ७

मनु के अर्थ ८ कहते भये ९ अर्थात् आदित्य ने मनु से कहा + मनु १० इक्ष्वाकु के अर्थ ११ कहते भये १२ अर्थात् मनु ने इक्ष्वाकु से कहा कर्म योग और ज्ञान योग को पृथक् पृथक् स्वतंत्र मोक्ष के साधन दो योग नहीं समझना किन्तु केवल एक ज्ञान योग ही मोक्ष का साधन है कर्म योग साधन उसका अंग है इसी वास्ते श्रीभगवान् ने योग शब्द के विषय एक बचन कहा द्विवचन वाला प्रयोग नहीं क्योंकि मोक्ष मार्ग दो नहीं + इस ज्ञान योग का अव्यय अविनाशी फल है इस वास्ते योग को भी अव्यय कहा नवें बारहवें पद में एक बचन का प्रयोग है अर्थ में बहुवचन आदरार्थ है + १ +

**एवम्परम्पराप्राप्तमिमंराजर्षयोविदुः । सकालेनेह महतायोगोनष्टःपरन्तप + २ +**

एवम् १ परम्पराप्राप्तम् २ इमम् ३ राजर्षयः ४ विदुः ५ परंतप ६ महता ७ कालेन ८ इह ९ स १० योगः ११ नष्टः १२ + २ + अ० उ० पिछले मंत्र में जैसे कहा इस प्रकार १ परम्परा से प्राप्त है २ यह ज्ञान-योग + इस को ३ पहले से ही बड़े बड़े + राजऋषि ४ जानते हैं ५ तात्पर्य तूभी क्षत्री है तुझ को भी यह ज्ञान योग उपाय समेत जान कर अनुष्ठान करना योग्य है इस ज्ञान योग का + हे अर्जुन ६ बहुत ७ काल करके ८ बहुत कालसे ७।८ इस लोक में ९ से १० योग ११ अर्थात् ज्ञान योग ११ छिप गया है १२ तात्पर्य भेद बादियों का राज बल हो-जाने से और भेदवादी पंडितों के अनर्थ करने से यह ज्ञान योग साक्षात् वेदोक्त मोक्ष का साधन लोप होगया है कुछ जाता नहीं रहा नष्ट नहीं हुआ क्योंकि उसका उपदेश करनेवाला अबिनाशी अच्युत मैं बिद्यमान हूं इसी हेतु से वह ज्ञान योग भी अव्यय नित्य है + २ +

**सएवायंमयातेऽद्ययोगःप्रोक्तःपुरातनः । भक्तोऽसिमे सखाचेतिरहस्यंह्येतदुत्तमम् + ३ +**

स १ एव २ पुरातनः ३ अयम् ४ योगः ५ मया ६ ते ७ अद्य ८ प्रोक्तः ९ मे १० भक्तः ११ सखा १२ च १३ असि १४ इति १५ हि १६ एतद् १७ उत्तमम् १८ रहस्यम् १९ + ३ + अ० उ० जो ज्ञान मैंने आदित्य से कहा सोई १।२ पहिला अनादि ३ यह ४ योग ५ मैंने ६ तेरे अर्थ ७ तुझ से ७ अब ८ कहा है ९ मेरा १० भक्त ११ और सखा १२।१३ है तू १४ यह

१५ निश्चय १६ रख इसी वास्ते + यह १७ उत्तम १८ अर्थात् ज्ञान योग मैंने तुझ से कहा अथवा यह ज्ञान योगही श्रेष्ठ निश्चित श्रेय है इसीवास्ते मैंने तुझसे कहा तूने द्वितीय अध्याय में मुझसे कहा था कि जो निश्चित श्रेय हो सो मुझसे कहो + ३ +

**अर्जुनउवाच। अपरंभवतोजन्मपरंजन्मविवस्वतः। कथमेतद्विजानीयांत्वमादौप्रोक्तवानिति + ४ +**

भवतः १ जन्म २ अपरम् ३ विवस्वतः ४ जन्म ५ परम् ६ एतद् ७ कथम् ८ विजानीयाम् ९ त्वम् १० आदौ ११ प्रोक्तवान् १२ इति १३ + ४ + अ० उ० श्री भगवान् के कहने को असंभव मानता हुआ अर्जुन कहता है कि हे महाराज + आप का १ जन्म २ पीछे ३ द्वापर के अन्त में अब हुआ + आदित्य का ४ जन्म ५ पहले ६ सत युगमें हुआ + यह ७ कैसे ८ जानूं मैं ९ आप १० + सृष्टि के आदि में ११ आदित्य से + कहते भये १२ अर्थात् पहले आपने आदित्य से किस प्रकार कहा + यह १३ मेरा प्रश्न है अर्जुन को इस प्रश्नसे स्पष्ट प्रतीत होताहै कि अर्जुन को ब्रह्मकाज्ञान नहीं क्योंकि पूर्णब्रह्म अनादि अज अमरको अब तक बसुदेवजीका पुत्रही समझता है + ४ +

**श्रीभगवानुवाच। बहूनिमेव्यतीतानि जन्मानितवचार्जुन। तान्यहंवेदसर्वाणि नत्वंवेत्थपरन्तप + ५ +**

अर्जुन १ मे २ बहूनि ३ जन्मानि ४ व्यतीतानि ५ तव ६ च ७ तानि ८ सर्वाणि ९ अहम् १० वेद ११ परंतप १२ त्वम् १३ न १४ वेत्थ १५ + ५ + अ० उ० अर्जुन के प्रश्नका अभिप्राय समझ कर श्री भगवान् कहते हैं + हे अर्जुन १ मेरे २ बहुत ३ जन्म ४ व्यतीत हुये हैं ५और + तेरे ६ भी ७ तिन सब को ८।९ मैं १० जानता हूं ११ शुद्ध सत्वप्रधान मायोपहित होने से हे अर्जुन १२तू १३ नहीं १४ जानता है १५मलिन सत्व प्रधान अविद्योपहित होने से तात्पर्य अनित्य को मैंने और रूप करके उपदेश किया है पहले जन्म में यह समझ तू + ५ +

**अजोपिसन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोपिसन्। प्रकृतिंस्वामधिष्ठाय संभवाम्यात्ममायया + ६ +**

अव्ययात्मा १ अजः २ अपि ३ सन् ४ भूतानाम् ५ ईश्वरः ६ अपि ७ सन् ८ स्वाम् ९ प्रकृतिम् १० अधिष्ठाय ११ आत्ममायया १२ संभवामि

१३ + ६ + अ० उ० जबकि ईश्वर निर्विकार जन्मादि रहित है उसका बारम्बार जन्मकैसे होसक्ता है यह शंका करके कहते हैं + निर्विकार है आत्मा जिसका अर्थात् मेरा १ सो मैं निर्विकार + जन्मरहित २ भी ३ हुआ ४भूतोंका ५ ईश्वर ६ भी ७ हुआ ८ अपनी ९ माया का १० आश्रयकरके ११ अपनी शक्ति सामर्थ्य करके १२ प्रकट होता हूं १३ टी० त्रिगुणात्मक त्रिगुणवाली शुद्धसत्वप्रधान मायाको अपने आधीन करके माया के सम्बन्ध से मायोपहित होकर अवतार लेताहूं ९ । १० । ११ ज्ञानबल वीर्य आदि अलौकिक अचिंत्य शक्ति करके अपनी इच्छा पूर्ब्बक अवतार लेताहूं वास्तव जीववत् मैं देहधारी नहीं यद्यपि जन्मरहित निर्विकार ईश्वर भी मैं हूं तो भी माया मात्र मेरे जन्म हैं वास्तव में अज हूं + ६ +

## यदायदाहिधर्मस्य ग्लानिर्भवतिभारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानंसृजाम्यहम् + ७ +

भारत १ यदा २ यदा ३ धर्मस्य ४ ग्लानिः ५भवति ६ अधर्मस्य ७ अभ्युत्थानम् ८ तदा ९ हि १० आत्मानम् ११ सृजामि १२ अहम् १३+ ७ + अ० उ० किसकाल में आप का जन्महोता है इस अपेक्षा में कहते हैं + हे अर्जुन १ जिस जिस काल में २ । ३ धर्मकी ४ हानि ५ होती है ६ और + अधर्म की ७ अधिकता ८ होतीहै + तिसकाल में ९ हि १० आत्मा को ११ प्रकट करता हूं १२ मैं १३ अवतार लेताहूं मैं १२ । १३ टी० ज्ञान योग की साधनके सहित जब कभी होतीहै तबहीं मैं अवतार लेताहूं मेरे अवतार दो प्रकार के हैं एक नित्य अवतार और दूसरा निमित्त अवतार ज्ञानी बिरक्त महात्मा साधु मेरे नित्य अवतार हैं और रामकृष्णादि निमित्त अवतार हैं ४ मनुष्यों के कल्पित पाखंड पंथ संप्रदायों की जब वृद्धि होती है तबहीं नित्य वा निमित्त अवतार लेता हूं + ७ +

## परित्राणायसाधूनां विनाशायचदुष्कृताम्। धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामियुगेयुगे + ८ +

साधूनाम् १ परित्राणाय २ दुष्कृताम् ३ च ४ विनाशाय ५ धर्मसंस्थापनार्थाय ६ युगे युगे ७ । ८ संभवामि ९ + ८ + अ० उ० आप अवतार क्यों लेते हो इस अपेक्षा में कहते हैं + साधु महात्माओं की

१ रक्षा सहाय के लिये २ और दुष्टों के ३। ४ नाश करने के वास्ते ५ इस प्रकार + धर्म के स्थिर करने के वास्ते ६ अथवा ज्ञानयोग को साधनों के सहित स्थिर करने के वास्ते युग युग में ७। ८ अर्थात् सत्ययुगादि हर एक युगमें जब जब दुष्ट लोग साधु लोगों से बैर बिरोध करते हैं तब मैं उसीकाल में + अवतार लेताहूं ६ तात्पर्य साधुजनों की रक्षा करने से धर्म की रक्षा होतीहै धर्मके स्थिर रहने से अर्थ काम मोक्ष की प्राप्ति होती है दुष्टों को जो दण्डदेना है यहभी नारायण की उनपर कृपा है क्योंकि जैसे माता पिता जबतक बालक को ताड़ना नहीं करते तब तक वह नहीं सुधरता जैसे माता पिताकी ताड़ना निर्दयता करके नहीं ऐसेही महेश्वर की ताड़ना दया करकेही होती है जोलोग बासनादि को त्यागकर केवल ब्रह्मपरायण हैं सिवाय परमेश्वर के और किसी राजा मित्र पुत्र धनादि का आश्रा नहीं रखते ऐसे साधुमहात्माओं के वास्ते अवतार होता है + ८ +

**जन्मकर्म्मचमेदिव्यमेवंयोवेत्तितत्त्वतः। त्यक्त्वादेहंपुनर्जन्म नैतिमामेतिसोऽर्जुन + ९ +**

दिव्यम् १ मे २ जन्म ३ कर्म ४ च ५ एवं ६ यः ७ तत्वतः ८ वेत्ति ६ अर्जुन १० सः ११ देहम् १२ त्यक्त्वा १३ पुनः १४ जन्म १५ न १६ एति १७ माम् १८ एति १६ + ६ + अ० टी० परमेश्वर के जन्म कर्मों को जो यथार्थ जानता है वह परमपद मोक्षको प्राप्त होता है सोई कहते हैं + मायामात्र अलौकिक १ मेरे २ जन्म ३ और कर्म को ४। ५ इस प्रकार अर्थात् जब धर्म का नाश होने लगता है तब धर्म और धर्म प्रचारक साधु लोगों की रक्षा करने के लिये और दुष्टों के नाश करने के लिये अवतार लेताहूं इस प्रकार ६ जो ७ यथार्थ परमार्थ दृष्टि से ८ जानता है ६ हे अर्जुन १० सो ११ देह को १२ त्याग कर १३ फिर १४ जन्म को १५ नहीं १६ प्राप्त होता है १७ वह + मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा को १८ प्राप्त होता है १६ तात्पर्य वास्तव न परमेश्वर का जन्म होना बन सक्ता है और न उनमें कर्म का करना बन सक्ता है क्योंकि परमेश्वर निर्विकार हैं अध्यारोप में व्यवहार मात्र दृष्टि करके तत्त्व ज्ञान की प्राप्ति के लिये भगवत् के जन्म कर्म विद्वानों ने निरूपण किये हैं और जो सिद्धान्त में भी यह कहते हैं कि भगवत् के जन्म कर्म वास्तव सत्य हैं ईश्वर अपनी अचिंत्य शक्तियों करके अपने

आधीन हुआ अपनी इच्छा से ही जन्म लेता है और कर्म करताहै औरों के भले के लिये वह आप्तकाम है प्रथम तो इस अर्थ में यह शंका है कि ईश्वर नित्य निर्विकार न रहा ऐसा प्रतीत होता है कि किसी काल में प्रलयादि काल में ईश्वर निर्विकार कहा जाता होगा सो ईश्वर अब तो विकारवान् स्पष्ट प्रतीतहोता है रक्षादि कर्म करने से और प्रलय समय में तो जीव भी निर्विकार होता है इसप्रकार जीवको भी निर्विकार कहना चाहिये + दूसरी शंका यह है कि यह कौन नहीं जानता है कि ईश्वर के जन्म कर्म अपने वास्ते नहीं पराये के वास्ते हैं ईश्वर आप्तकाम अचिंत्य शक्तिमान् स्वतंत्र स्वाधीन है यह बात सब जानते हैं परंतु केवल इतने जानने से कोई परमेश्वरको प्राप्त नहीं होता क्योंकि यह ज्ञान ऐसा है कि बालकों को भी है सब काहीं मोक्ष होजाना चाहिये श्री महाराज के कहने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि भगवत् की प्राप्तिकेवल ईश्वर के ज्ञान से ही होती है तात्पर्य जिस ज्ञान से परमेश्वर की प्राप्ति होती है वह ईश्वर का ज्ञान यह है कि परमेश्वर को नित्य निर्विकार शुद्ध सच्चिदानन्द आत्मासे अभिन्न जानना योग्यहै और जन्म कर्म परमेश्वर के वास्तव नहीं माया मात्र तत्त्व ज्ञान की प्राप्ति के लिये अध्यारोप में कहे जाते हैं यही तात्पर्य वेदोंका और विद्वानों का अनुभव है+९ +

**वीतरागभयक्रोधा मन्मयामामुपाश्रिताः। बहवो ज्ञानतपसा पूतामद्भावमागताः + १० +**

ज्ञानतपसा १ पूताः २ माम् ३ उपाश्रिताः ४ मन्मयाः ५ वीत रागभय क्रोधाः ६ बहवः ७ मद्भावम् ८ आगताः ९ + १० + अ० ठु० ब्रह्मज्ञान से पृथक् किसी साधन की भी अपेक्षा न रख कर केवल ब्रह्मज्ञान सेही असंख्यात जीव मुक्त हो गये ब्रह्म ज्ञान ही सनातन से मोक्ष मार्ग है सोई कहते हैं + ज्ञान रूप तप करके १ अर्थात् ब्रह्म ज्ञान करके १ पवित्र हुये २ मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा को ३ आश्रा किये हुये ४ अर्थात् केवल ज्ञाननिष्ठ हुये + ब्रह्मस्वरूप हुये ५ दूर होगये हैं राग भय क्रोध जिन से ६ ऐसे ब्रह्म ज्ञानी + बहुत ७ मोक्षको ८ प्राप्त हुये ९ + टी० तप नाम विचार का है, तपविमर्षणे, इति धातुपाठे द्रष्टव्यम् ब्रह्म ज्ञान और ब्रह्म विचार ये दोनों एकही बात है ज्ञान शब्द और तप शब्द का अर्थ एक करने से अभिप्राय यह है कि ज्ञान स्वतंत्र मोक्ष का हेतु है किसी और साधन की इच्छा नहीं रखता शास्त्र में जो

यह सुनाजाता है कि तप करके ज्ञानहोता है तात्पर्यार्थ इसका यहीहै कि ब्रह्मविचार करके ज्ञानहोता है बिचार का स्वरूप यह है ऐसे विचार करके कि वह ब्रह्मनिर्गुण है वा सगुण है विकारवान् है वा निर्विकार है मुझ से भिन्न है वा अभिन्न है साकार है वा निराकार है इस प्रकार मनन करनेका नाम विचार है इस बिचार से निराकार निर्गुण ब्रह्मस्वरूप आत्मा से अभिन्न जानकर पवित्र होकर ब्रह्मको प्राप्त हुये ज्ञानकी बराबर कोई साधन पवित्र नहीं पवित्रसेही पवित्र होसक्ता है इस हेतुसे ज्ञानही मोक्षका हेतु है पढ़ना सुनना साधनहै कर्म उपासना अन्य प्रकार है+१०+

**येयथामांप्रपद्यन्ते तांस्तथैवभजाम्यहम्। ममवर्त्मा-नुवर्त्तन्ते मनुष्याःपार्थसर्वशः + ११ +**

ये १ माम् २ यथा ३ प्रपद्यन्ते ४ तान् ५ तथा ६ एव ७ भजामि ८ अहम् ९ पार्थ १० सर्वशः ११ मनुष्याः १२ मम १३ वर्त्म १४ अनुवर्त्तन्ते१५ + ११ + अ० उ० अष्टांगयोगसंख्या कर्मभेदभक्तिः अभेदभक्तिः ब्रह्मज्ञान पर्यन्त ये सब क्रमसे मोक्षमार्ग हैं परंतु साक्षात् स्वतंत्र मुक्ति ब्रह्मज्ञा-नियों को ही प्राप्त होती है औरलोक पीछे क्रमसे ज्ञानद्वारा मुक्त होतेहैं सोई कहते हैं + जो १ मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द को २ जैसे ३ भजते हैं ४ तिनको ५ तैसे ही ६।७ भजता हूं ८ मैं ९ अर्थात् जैसे फलकी मनमें भावना करके मेरी उपासना करते हैं उनको मैं वैसाही फल देताहूं अर्थात् जो मुक्ति चाहते हैं उनको मैं मुक्तकरताहूं और जो वृन्दावन के वृक्ष गीदड़ बना चाहते हैं मुक्ति नहीं चाहते उनको मैं वही फलदेताहूं परंतु + हेअर्जुन १० सब प्रकार के ११ मनुष्य १२ मेरे १३ ही मार्ग में १४ अर्थात् ज्ञानमार्ग में १४ पीछे वर्तते हैं १५ तब मुक्त होते हैं अर्थात् योग कर्म भक्तिपादि सब साधनों का अनुष्ठान करके पीछे सब ज्ञाननिष्ठा का अनुष्ठान करते हैं तब मुक्त होते हैं + ११ +

**कांक्षन्तःकर्म्मणांसिद्धिं यजन्तइहदेवताः। क्षिप्रं हिमानुषेलोके सिद्धिर्भवतिकर्मजा + १२ +**

कर्म्मणाम् १ सिद्धिम् २ कांक्षन्तः ३ इह ४ देवताः ५ यजन्ते ६ मा-नुषे ७ लोके ८ क्षिप्रम् ९ हि १० सिद्धिः ११ भवति १२ कर्मजा१३+१२+ अ० उ० मोक्ष के वास्ते जो सब भजन नहीं करते उसमें यह कारण है अर्थात् ज्ञानमें निष्ठा और श्रद्धा लोगों को जिसवास्ते नहीं होती और

जिस हेतु से ज्ञानको थोथा और तुषों का कूटना कहते हैं वह हेतुयह है कर्म्मों की सिद्धिको २ चाहनेवाले ३ अर्थात् शब्दादि भोग और स्त्री पुत्रादि के चाहनेवाले ३ इस लोकमें ४ साकार देवतों का ५ पूजनकरते हैं ६ साक्षात् परब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द आत्माको उपासनानहीं करते जिससे साक्षात् परमपद की प्राप्ति होती है मनुष्य लोक में ७। ८ शीघ्र ९ ही १० सिद्धि ११ होती हैं १२ कर्म्मजा अर्थात् कर्म्मोंसे उत्पत्ति है जिस सिद्धिको १३ कर्म्मोंका फल मनुष्यलोक में ही शीघ्र प्राप्त होजाता है स्त्रीपुत्र धनादि + तात्पर्य कर्म्मोंके करनेमें धन पुत्रादिफल की प्राप्ति शीघ्र होजाती है ज्ञान का फल परमपद तितिक्षा वैराग्य त्याग चाहता है अर्थात् परमपदकी प्राप्ति शब्दादि भोगोंके त्यागने से होती है इसहेतु से उनको ज्ञानमें निष्ठानहीं होती और को थोथा भूसेका कूटना बतातेहैं सिवाय इसके ब्रह्मज्ञान बिना विद्याके मूर्खोंकी समझ में भी नहीं आता उसका अनुष्ठान करना तो दूर रहा तात्पर्य मूर्ख आलसी विषयी ज्ञानमें श्रद्धा नहीं रखते अनित्य पदार्थों में निष्ठा करके अनित्य फल कोही प्राप्त होते हैं और ज्ञाननिष्ठा वाले परमपद मोक्ष को प्राप्त होते हैं + १२ +

**चातुर्वर्ण्यंमयासृष्टंगुणकर्मविभागशः। तस्यकर्तारमपिमांविद्ध्यकर्त्तारमव्ययम् + १३ +**

गुणकर्मविभागशः १ चातुर्वर्ण्यम् २ मया ३ सृष्टम् ४ तस्य ५ कर्तारम् ६ अपि ७ माम् ८ विद्धि ९ अकर्तारम् १० अव्ययम् ११ + १३ + अ० उ० जो निष्काम वेदोक्त अनुष्ठान करते हैं और जो सकाम भजन करते हैं ये चारों वर्ण आप के ही रचेहुये हैं इन चारों वर्ण में जो विषमता आपने करदी है इसीहेतु से कोई सकाम है कोई निष्काम है और इस दोष के कारण आपही हैं मनुष्यों का कुछ दोष नहीं यह शंका करके कहते हैं + सत्वादि गुणों के विभाग से कर्मों का विभाग करके १ + टी० + गुण विभागेन कर्म विभागः तेन इति समासः अर्थात् जिसमें जैसा गुण देखा उसीके अनुसार उसके कर्मों का विभाग कर दिया जैसे एक जीव को सतोगुण प्रधान देखा तो उसी सतोगुण के अनुसार शमदमादि उसके कर्मों का विभाग करदिया और एक नाम ब्राह्मण उसका प्रसिद्धकरदिया इसीप्रकार + चारों वर्ण मैंने ३ रचे हैं ४ अध्यारोपमेंमायामात्र तिनका ५ कर्ता ६ भी ७ मुझको ८ जानतू ९ और वास्तव परमार्थ में + अकर्ता १० निर्विकार ११ मुझको जानतू पीछे भी

इसी अध्याय में परमेश्वर को निर्विकार सिद्धि कर चुके और आगे पंचमादि अध्यायों में भलेप्रकार सिद्ध किया है और चारों वर्णों का भेद अठारहवें अध्याय में स्पष्ट लिखा है + १३ +

**नमांकर्माणिलिम्पन्तिनमेकर्मफलेस्पृहा । इति मांयोभिजानातिकर्मभिर्नसबध्यते + १४ +**

कर्माणि १ माम् २ न ३ लिम्पन्ति ४ न ५ मे ६ कर्मफले ७ स्पृहा ८ यः ९ माम् १० इति ११ अभिजानाति १२ सः १३ कर्मभिः १४ न १५ बध्यते १६ + १४ + अ० वास्तव अकर्ता होने से ही + कर्म १ मुझ को २ नहीं ३ स्पर्श करते ४ और + न ५ मुझको ६ कर्मों के फल में ७ चाह ८ है + जो ९ मुझ सच्चिदानन्दस्वरूप आत्माको १० ऐसे ११ जानता है १२ सो १३ कर्मों करके १४ नहीं १५ बन्धनको प्राप्त होता है १६+टी०+ जैसे ईश्वर वास्तव अकर्ता है ऐसेही जीवात्मा को समझनाचाहिये नहीं तो ईश्वरको तो कोई भी विकारवान् नहीं जानता ईश्वर को अकर्ता निर्विकार जानने से जीव मोक्ष को नहीं प्राप्त होता आत्मा को वास्तव अकर्ता निर्विकारजानने से मोक्ष होता है + १४ +

**एवंज्ञात्वाकृतंकर्मपूर्वैरपिमुमुक्षुभिः। कुरुकर्मैवतस्मात्त्वंपूर्वैःपूर्वतरंकृतम् + १५ +**

एवम् १ ज्ञात्वा २ पूर्वैः ३ मुमुक्षुभिः ४ अपि ५ कर्म ६ कृतम् ७ पूर्वैः ८ पूर्वतरम् ९ कृतम् १० तस्मात् ११ त्वम् १२ एवं १३ कर्म १४ कुरु + १५ + अ० उ० अहंकारादि रहित होकर किया हुआ कर्मबन्ध का हेतु नहीं आत्मा वास्तव अकर्ता है+इस प्रकार १ जानकर २ पहले जनकादि मुक्तिको इच्छावालों ने ३ । ४ भी ५ कर्म्म ६ किया है ७ अन्तःकरण की शुद्धिके लिये कुछ अभी नया यह कर्म्मयोग तुझको मैं उपदेश नहीं करताहूं जब कि + जनकादिने ८ पहले त्रेतादियुगों में ९ किया है १० तिस कारण से ११ तू १२ भी १३ कर्म को १४ कर १५ टी० पहलों ने अर्थात् प्रथम सत्यादि युगों में जो मुक्ति की इच्छावाले हुयेहैं उन्होंने भी किया है जो तुझको ब्रह्मज्ञान है तो लोक संग्रह के लिये कर्मकर और जो ज्ञान नहीं है तो अन्तःकरण की शुद्धि के लिये कर्मकर यह तात्पर्य श्री महाराज का है + १५ +

**किंकर्मकिमकर्मेतिकवयोऽप्यत्रमोहिताः।तत्तेकर्मप्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामोक्ष्यसेऽशुभात्॥ १६ ॥**

कर्म १ किम् २ अकर्म ३ किम् ४ इति ५ अत्र ६ कवयः ७ अपि ८ मोहिताः ९ तत् १० कर्म ११ ते १२ प्रवक्ष्यामि १३ यत् १४ ज्ञात्वा १५ अशुभात् १६ मोक्ष्यसे १७ ॥ १६ ॥ अ० टी० स्नान संध्या पाठ पूजा जप साधु सेवाआदि कर्म कहलाते हैं जिसविधि से इनको पूर्व मीमांसावाले करते हैं उसीविधि से मैंभी करताहूं कर्म करने में और क्या विचित्रता विशेषता है कि जो बारम्बार आप मुझसे कहतेहो कि जैसे पहले लोग कर्म करते आये हैं उस प्रकार तू कर्म कर यह शङ्का करके श्री महाराज कहते हैं कि लोक प्रसिद्ध परम्परा मात्र करके कर्म मुक्ति के हेतु नहीं विद्वान् ज्ञानी जैसे उपदेशकरें उस प्रकार कर्म करने मुक्ति के हेतु हैं कर्म का स्वरूप समझना कठिन है मैं तुझको समझाऊंगा ॥ कर्म १ क्या २ है और ॥ अकर्म ३ क्या ४ है यह ५ जो बात है ॥ इसमें ६ कविपण्डित ७ भी ८ भ्रान्त होगये हैं ९ तिसकर्म को १० । ११ तुझसे १२ कहूंगा मैं १३ जिसको १४ जान करके १५ संसार से १६ मोक्ष होजायगा तू १७ तात्पर्य क्या कर्म करना चाहिये और किस प्रकार करना चाहिये कौनसा कर्म न करना चाहिये इस बातके समझने में पण्डित भी संदेह और विपर्यय को प्राप्त होजाते हैं दृष्टान्त से इस बात को स्पष्टकरते हैं जैसे एक औषध गरमी को दूर करती है तब भी उसकेखाने की रीति तोल समय बुद्धिमान् वैद्य से बूझनी योग्य है क्योंकि बुद्धिमान् वैद्य देशकाल वस्तुका विचारकर कहेगा ॥ प्रसिद्ध है कि एकही दवा किसी देश में फलकरती है किसी में नहीं वा दूसरे देशमें उलटाफल करदेती है ॥ इसीप्रकार कालवस्तु में समझलेना दवाकेसाथ जलादि मिलजानेसे और का फल और होजाता है इसीप्रकार कर्मों की व्यवस्था है शास्त्र में जो यह बारम्बार उपदेश है कि गुरु किये बिना सर्व धर्म कर्म निष्फल हैं यह सत्य है क्योंकि देशकाल वस्तु का विचार करना ऐसीर बहुत बात केवल शास्त्र के पढ़ने सुनने से नहीं मिलती हैं सद्गुरु महापुरुषों से एकान्त में मिलती हैं और सत् पुरुषों का यह नियम है कि अपने अनन्य भक्त को बताते हैं नहीं तो संसार में यह कहानी सच्ची है कि जैसे जिसका गाना वैसाही दूसरे का बजाना अर्थात् जैसे दुनियां के लोग चतुर हैं उन्हीं से सिवाय विद्वान् हैं ॥ १६ ॥

कर्मणोह्यपिबोद्धव्यं बोद्धव्यंचविकर्मणः। अकर्मणश्चबोद्धव्यंगहनाकर्मणोगतिः + १७ +

कर्मणः १ अपि २ बोद्धव्यम् ३ विकर्मणः ४ च ५ बोद्धव्यम् ६ अकर्मणः ७ च ८ बोद्धव्यम् ९ हि १० कर्मणः ११ गतिः १२ गहना १३ + १७ + अ० उ० कर्म का स्वरूप यथार्थ जान कर कर्म करना चाहिये भेड़ कैसी चाल अच्छी नहीं यहसमझाते हैं श्रीमहाराज + कर्म का १ तत्त्व + भी २ जानना योग्यहै ३ और बिकर्म का ४। ५ तत्त्व भी + जानना योग्य है ६ और अकर्मका ७। ८ तत्वभी + जानना योग्य है ९ क्योंकि १० कर्म की ११ गति १२ गहना १३ अर्थात् कर्म अकर्म बिकर्म तीनों की व्यवस्था गंभीर कठिन बिषम है + टी० + वेदोक्त बिधिको कर्म कहते हैं १ वेदोक्त निषेध को बिकर्म कहते हैं ४ कुछ न करने को अकर्म कहते हैं ७ तात्पर्य भले प्रकार समझ कर कर्मों को करना योग्य है + १७ +

कर्मण्यकर्मयःपश्येदकर्मणिचकर्मयः। सबुद्धिमान्मनुष्येषु सयुक्तःकृत्स्नकर्मकृत् + १८ +

यः १ कर्मणि २ अकर्म ३ पश्येत् ४ यः ५ च ६ अकर्मणि ७ कर्म ८ सः ९ मनुष्येषु १० बुद्धिमान् ११ सन् १२ कृत्स्नकर्मकृत् १३ युक्तः १४ + १८ + अ० उ० जिस कर्म को जान कर संसार से मुक्त होजायगा तू वह कर्म तुझसे कहूंगा मैं श्रीभगवान् ने पीछे यह प्रतिज्ञा कीथी सो अब कहते हैं + जो १ कर्म में २ अकर्म ३ देखता है ४ और जो ५। ६ अकर्म में ७ कर्म देखता है + सो ९ मनुष्यों में १० ज्ञानी ११ है क्योंकि + सो १२ समस्त कर्म करता हुआ १३ भी + युक्त १४ रहताहै अर्थात् समाहित सावधान रहता है आत्माको अकर्ता जानता हुआ समाधिनिष्ठ रहताहै + टी० + शरीर प्राण इन्द्रिय अन्तःकरणके व्यापार कर्म में २ आत्मा को कर्म रहित अकर्ता अकर्म ३ जो जानता है और अकर्मरूप ब्रह्ममें संसार कर्मको कल्पित जो जानताहै सोईज्ञानी है सोई समस्त कर्मों का करता है सोई सावधान है स्वरूप में + अथवा निष्काम कर्म में जो अकर्म देखता है अन्तःकरण शुद्धि द्वारा और ज्ञान द्वारा मुक्तिका हेतु होने से और अकर्म में अर्थात् बिना ज्ञान कर्म न करनेमें जो कर्म को अर्थात् संसार को देखता है अन्तःकरण शुद्ध न होनेसे और ब्रह्मज्ञान

न होने से कर्मों का न करना संसार बन्धन का हेतु है ऐसे जो समझ-ता है सो मनुष्यों में चतुर है सो समस्त कर्म करता हुआ भी युक्तयोगी है + तात्पर्य ज्ञान अवस्था में आत्माको अकर्ता समझना इसमें तोकुछ संदेह है नहीं परंतु अज्ञान अवस्था में भी आत्माको अकर्ता समझना योग्य है अर्थात् कर्मों का अनुष्ठान करने के समयभी आत्मा अकर्ता नि-र्विकार है यह समझना चाहिये और जबतक ज्ञान न हो तबतक नि-ष्काम असंग होकर आसक्ति रहित कर्मों का अनुष्ठान करना योग्य है और ज्ञान काल में ज्ञानीकी दृष्टि में कर्म अकर्म बिकर्म सब सम हैं यह अभिप्राय है इसमंत्र का + और इसी अर्थ को अगले पांच श्लोकों में और दूसरे प्रकार करके स्पष्ट निरूपण करेंगे + १८ +

**यस्यसर्वेसमारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः। ज्ञानाऽ-ग्निदग्धकर्माणं तमाहुःपण्डितंबुधाः + १९ +**

यस्य १ सर्वे २ समारंभाः ३ कामसंकल्पवर्जिताः ४ तम् ५ बुधाः ६ पण्डितम् ७ आहुः८ ज्ञानाग्निदग्धकर्माणम् ६ + १६ + अ० जिसके १ समस्त २ कर्म ३ काम संकल्प करके बर्जित अर्थात् बिनाकामना और संकल्प के ४ आभासमात्र होते हैं अर्थात् ज्ञानी जो कर्म करता है वह कर्म न कुछ दृढ़ इच्छा करके करता है और न कुछ संकल्पकरके किसी फलभोग की कामना कल्पना करके करता है स्वाभाविक जिसके सबकर्म होते हैं + तिसको५ विद्वान् ६ अविद्वान् ७ कहते हैं ८ कैसा है सो विद्वान् + ज्ञानरूप अग्निकरके भस्मकरदिये हैं कर्म जिसने ६ अर्थात् ज्ञानी के कर्म भी अकर्म हैं + टी० + जिनका प्रारंभ किया जावे ति-नकोही कर्म कहते हैं ३ इच्छा और उस इच्छा का कारण संकल्प इन दोनों करके रहित विद्वान् के कर्म हैं इसी हेतुसे अकर्म हैं ४ + १६ +

**त्यक्त्वाकर्मफलासंगंनित्यतृप्तोनिराश्रयः। कर्म-ण्यभिप्रवृत्तोऽपिनैवकिंचित्करोतिसः + २० +**

कर्मफलासङ्गम् १ त्यक्त्वा २ नित्यतृप्तः ३ निराश्रयः ४ सः ५ कर्मणि ६ अभिप्रवृत्तः ७ अपि ८ किंचित् ६ एव १० न ११ करोति १२+२० + अ० समस्त कर्मोंका त्याग स्वरूपसेहोना असंभवहै उसमें आसक्तिऔर फलका त्यागकर देना यही अकर्म त्याग कहलाता है और इस प्रकार कर्मकरने वाले त्यागी संन्यासी कहलाते हैं सोई कहते हैं + कर्मोंसे और कर्मों के

फलमें आसक्ति को १ त्यागकरके २ नित्य स्वरूप करके तृप्त अर्थात् नित्य जो आत्मा है उस नित्य निजानन्द करके तृप्त ३ आश्रय रहित अर्थात् सिवाय आत्मानन्द के और किसी विषय का नहीं है आलंबवत् आश्रा जिसके ४ सो ५ कर्म में ६ सब तरफ़से भलेप्रकार प्रवृत्त ७ भी ८ है अर्थात् दिन रात कर्मोंका कर्ता भीहै ७ परंतु + कुछ ९ भी १० नहीं ११ करता १२ + टी० + लोक वासनादि करके रहित ४ शरीर प्राण इन्द्रिय अन्तःकरणसे यथा योग्य कर्मोंको करता भी ७ आत्मा के साथ उनकर्मों का लेशमात्र भी सम्बन्ध नहीं विद्वान् यह समझता है इसहेतु से ऐसे कर्म करता महात्मा को ज्ञानी कहते हैं २० +

**निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः । शारीरं केवलंकर्म कुर्वन्नाप्नोतिकिल्बिषम् + २१ +**

निराशीः १ यतचित्तात्मा २ त्यक्तसर्वपरिग्रहः ३ केवलम् ४ शारीरम् ५ कर्म ६ कुर्वन् ७ किल्बिषम् ८ न ९ आप्नोति १० + २१ + अ० आशा रहित १ जीता है अन्तःकरण और शरीर जिसने २ त्यागदियाहै सब परिग्रह जिसने ३ सो + केवल ४ शरीरके निर्वाह मात्र ५ कर्म को ६ करता हुआ ७ पाप को ८ नहीं ९ प्राप्तहोताहै १०+ टी० +इसलोक परलोक के पदार्थों की कोई आशा नहीं है जिसके क्योंकि उसने इन्द्रियादि को बश करलिया देह यात्रासे सिवाय सब बखेड़ा है फटापुराना वस्त्र रूखासूखा अन्न इसके विना तो निर्वाह निर्विक्षेप होना कठिन है अन्न वस्त्रका ग्रहण भी विक्षेप दूर करनेके लिये है क्योंकि जो शीतकाल में शीतनिवारण वस्त्र न हो वा अन्न न खावे तो अति विक्षेप होता है विचार नहीं होसक्ता देह यात्रा मात्र अन्न वस्त्र विक्षेप के हेतु नहीं इससे सिवाय सब परिग्रह कहलाता है वह त्याग दिया है जिसने सो पदार्थों में इष्ट अनिष्ट बुद्धिरहित होकर केवल शरीर का निर्वाह करता हुआ कर्म अकर्म विकर्म करके बन्धनको नहीं प्राप्त होता वेदकी विधिका भी तात्पर्य निवृत्ति में है सो निवृत्ति विद्वान् का बाना है वेदकी विधि निषेध काभी प्रवृत्तों के वास्ते है निष्काम निवृत्त पुरुषों पर किसी की विधि निषेध नहीं + २१ +

**यदृच्छालाभसन्तुष्टो द्वंद्वातीतोविमत्सरः । समः सिद्धावसिद्धौच कृत्वापिननिबध्यते + २२**

यदृच्छालाभसन्तुष्टः १ द्वंद्वातीतः २ विमत्सरः ३ सिद्धौ ४ असिद्धौ ५ च ६ समः ७ कृत्वा ८ अपि ९ न १० निबध्यते ११ + २२ + अ० विना इच्छा किये विना संकल्प विना मांगे जो पदार्थ प्राप्तहो उसको यदृच्छा-लाभ कहते हैं यदृच्छा लाभ करके तृप्त १ द्वंद्वरहित २ निर्वैर ३ कर्मों की + सिद्धि और असिद्धि में ४। ५। ६ सम ७ जो है ऐसा महापुरुष कर्म विकर्म अकर्म + करके ८ भी ९ नहीं १० बन्धन को प्राप्तहोता है ११ + टी० + हर्ष विषाद शीतोष्ण मानापमान सुख दुःखादि के जोड़ों को द्वंद्व कहते हैं २ + २२ +

**गतसंगस्यमुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः । यज्ञाया-चरतःकर्मसमग्रंप्रविलीयते + २३ +**

गतसंगस्य १ मुक्तस्य २ ज्ञानावस्थितचेतसः ३ यज्ञाय ४ आचरतः ५ कर्म ६ समग्रम् ७ प्रविलीयते ८ + २३ + अ० दूरहो गईहै सब पदार्थों में आसक्ति जिसकी १ अर्थात् न इस लोक के पदार्थों में जिसका मन आसक्त है और न परलोक के पदार्थों में १ धर्म अधर्म से + छूटाहुआ २ ब्रह्मज्ञान मेंही स्थित है चित्त जिसका ३ परमेश्वरार्थ वा लोक संग्रह धर्मकी रक्षाके लिये ४ जो + कर्म ५ करता है उसका ६ समस्त ७ कर्म अकर्म विकर्म ब्रह्ममें + लयहोजाता है ८ अर्थात् जिस महात्माके ऊपर चार विशेषण हैं उस विद्वान् के कर्म विकर्म सब नाश होजाते हैं तात्पर्य्य ऐसे महात्मा जीवन्मुक्त हैं + २३ +

**ब्रह्मार्पणंब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौब्रह्मणाहुतम् । ब्रह्मै-वतेनगंतव्यंब्रह्मकर्मसमाधिना + २४ +**

अर्पणं १ ब्रह्म २ हविः ३ ब्रह्म ४ अग्नौ ५ ब्रह्मणा ६ हुतम् ७ ब्रह्म ८ तेन ९ ब्रह्म १० एव ११ गन्तव्यम् १२ ब्रह्मकर्मसमाधिना १३ + २४ + अ० उ० अठारहवें श्लोक में तो ज्ञानी का लक्षण संक्षेप करके कहा और उन्नीस से लेकर तेईसवें श्लोक तक उसी अर्थको स्पष्ट करने के लिये विस्तार पूर्वक निरूपण किया अब यह कहतेहैं कि जिसकारणसे ज्ञानी कर्म करता हुआ भी ब्रह्महीको प्राप्तहोता है सो समझ यह है + अर्पण किया जावे जिसकरके १ सो स्रुवादि पदार्थ करण + ब्रह्म २ ही है + घृतादि भी + ब्रह्म ४ ही है + अग्नि में ५ ब्रह्मने ६ अर्थात् कर्ताने ६ होम ७ जो किया है सोभी + ब्रह्म ८ ही है + तात्पर्य क्रिया कर्ता

कर्म करण अधिकरण यह सब ब्रह्म है ऐसे जो समझता है + तिसको ६ ब्रह्म १० ही ११ प्राप्त होने को योग्य है १२ अर्थात् उसको ब्रह्म प्राप्त होगा क्योंकि + ब्रह्मरूप कर्म में समाधान है चित्त जिसका १३ अर्थात् क्रिया कारकादि सब पदार्थों को ब्रह्मरूप जानता है इस कारण से वह ब्रह्मही को प्राप्तहोगा नरक स्वर्गादि फल कर्म अकर्म विकर्मों के उसको स्पर्श नहीं करेंगे + टी० + करण १ कर्म ३ कर्ता ६ अधिकरण ५ क्रिया ७ अर्पणादि शब्दों में तात्पर्य है पाठ क्रम से अर्थ क्रम बलवान् होता है कर्ता कर्म करण अधिकरणादि को कारक कहते हैं हवनादि को क्रिया कहते हैं क्रिया करणादि पदार्थ सब ब्रह्म है इस ज्ञान से जीव ब्रह्म को प्राप्त होता है इत्यभिप्रायः + २४ +

**दैवमेवापरेयज्ञंयोगिनःपर्युपासते। ब्रह्माग्नावपरेयज्ञंयज्ञेनैवोपजुह्वति + २५ +**

अपरे १ ब्रह्माग्नौ २ यज्ञम् ३ यज्ञेन ४ उपजुह्वति ५ अपरे ६ योगिनः ७ दैवम् ८ यज्ञम् ६ एव १० पर्युपासते ११ + २५ + भा० उ० सर्वत्र ब्रह्म दर्शनको यज्ञका रूपक बाँधकर यज्ञरूप वर्णनकिया अब इस ज्ञान यज्ञकी स्तुति करनेके लिये और ज्ञानयज्ञकी महिमा प्रसिद्ध करनेकेलिये ज्ञान यज्ञके सहितबारह यज्ञ वर्णनकरते हैं अर्थात् ग्यारह यज्ञ सिवाय ज्ञानयज्ञ के जो वर्णनकरेंगे वे ज्ञान यज्ञकी प्राप्ति के उपाय हैं ज्ञानयज्ञ उपेय हैं साक्षात् मोक्षके देनेमें ज्ञानयज्ञही समर्थ है सोई प्रथम कहते हैं इसमंत्र में दो यज्ञोंका निरूपण है पाठ क्रमसे अर्थ क्रम बलवान्होता है इसहेतु से प्रथम ज्ञान यज्ञका अर्थ लिखते हैं + ब्रह्मज्ञानी महात्मा १ ब्रह्मरूप अग्नि में २ आत्माको ३ ब्रह्मयज्ञ करके ४ अर्थात् ब्रह्मज्ञान करके ४ हवनकरते हैं ५ तात्पर्य आत्माको शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्ण निर्विकार ब्रह्म जो समझते हैं वे ज्ञानीहैं उनके ज्ञानको ज्ञानयज्ञ वर्णन करते हैं एक ज्ञान यज्ञतो निरूपण होचुका अब दूसरा निरूपणकरतेहैं+ और एक ६ योगी ७ अर्थात् एक कर्म्मयोगी ७ दैव ८ यज्ञ को ६ ही १० उपासना करते हैं ११ तात्पर्य साकार रामादि देवतोंका आराधन किया है जिस यज्ञमें उसको दैव यज्ञ कहते हैं साकार देवतों की उपासना का नाम देवयज्ञ है + एव शब्दका यह तात्पर्य है कि भेदवादी रामादि देवतों को वास्तव मूर्तिमान् देवता समझते हैं नित्य निराकार निर्विकार नहीं समझते हैं नहीं तो ज्ञानी और उपासकों में भेद क्या

हुआ और ज्ञानयज्ञ से देव यज्ञको पृथक् क्यों निरूपण करते श्री महाराज + रामादि देवतों को ज्ञानी नित्य निराकार जानते हैं उपासक उन को वास्तव मूर्तिमान् समझते हैं मूर्तियों को कल्पित मायिक नहीं समझते यही भेद है उपासक और ज्ञानियों में + २५ +

**श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्येसंयमाग्निषुजुह्वति। शब्दादीन्विषयानन्यइन्द्रियाग्निषुजुह्वति + २६ +**

अन्ये १ श्रोत्रादीनि २ इन्द्रियाणि ३ संयमाग्निषु ४ जुह्वति ५ अन्ये ६ शब्दादीन् ७ विषयान् ८ इन्द्रियाग्निषु ९ जुह्वति १० + २६ + अ० उ० इस मंत्र में दो यज्ञ निरूपण करेंगे + तीसरा यज्ञ कहते हैं + और एक १ श्रोत्रादि इन्द्रियों को २ । ३ संयम रूप अग्नि में ४ हवन करते हैं ५ तात्पर्य इन्द्रियोंका संयम करना यही यज्ञहै कोई यहीयज्ञ करते हैं अर्थात् इन्द्रियों को विषयों से निरोध करते हैं + चौथा यज्ञ यह है जो अब कहते हैं कोई एक ६ शब्दादि ७ विषयों को ८ इन्द्रिय रूप अग्नि में ९ हवन करते हैं १० तात्पर्य वेदोक्त विषयों को भोगना भी यज्ञ है जैसे शास्त्र में भोजनआदि निरूपण किया है नियम करके जो उसी प्रकार वर्तते हैं वह यज्ञ है तात्पर्य इसका भी इन्द्रियों के दमन मेंहीहै + २६ +

**सर्वाणीन्द्रियकर्माणिप्राणकर्माणिचापरे। आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वतिज्ञानदीपिते + २७ +**

अपरे १ सर्वाणि २ इन्द्रियकर्माणि ३ प्राणकर्माणि ४ च ५ आत्मसंयम योगाग्नौ ६ जुह्वति ७ ज्ञानदीपिते ८ + २७ + अ० उ० पांचवां एक यज्ञ इस श्लोक में निरूपण करेंगे + और कोई १ सब इन्द्रियोंके कर्मों को २ । ३ और प्राण अपानादि के कर्मों को ४ । ५ आत्मसंयम योगाग्नि में ६ हवन करते हैं ७ अर्थात् इन्द्रिय और प्राणादिकी गति का जो आत्मा में संयम निरोध उपराम करना यही हुई योगरूप अग्नि उपराम शान्त करते हैं तात्पर्य आत्म ध्यानमें स्थिरहोकर प्राणादि की गति को निरोध करते हैं कैसीहै वह आत्म संयम योगाग्नि + ज्ञान करके प्रज्वलित है ८ तात्पर्य इन्द्रियों की वृत्तियों को रोक कर और कर्मेन्द्रियों के और प्राण अपानादि के कर्मों को रोककर आत्मा स्वरूप सच्चिदानन्द में जो तत्पर होना यह एक यज्ञ है इन्द्रिय प्राणादि के

कर्म आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में लिखे हैं + २७ +

**द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञायोगयज्ञास्तथाऽपरे। स्वाध्या-यज्ञानयज्ञाश्च यतयःसंशितव्रताः + २८ +**

द्रव्ययज्ञाः १ तपोयज्ञाः २ योगयज्ञाः ३ तथा ४ अपरे ५ स्वाध्याय-ज्ञानयज्ञाः ६ च ७ यतयः ८ संशितव्रताः ९ + २८ + अ० उ० पांचयज्ञ इस मंत्र में कहेंगे + तीर्थ यात्रा साधुसेवादि शुभ कर्मोंमें द्रव्यव्यय ख़र्च करना यही + द्रव्य यज्ञ है जिनके १ यह एक छठां यज्ञ हुआ व्रत नियम मौनादि को तप कहते हैं + तप यज्ञहै जिनके २ यह एकसा-तवां यज्ञहुआ + अष्टांग योग यज्ञ है जिनके ३ यह १ एक आठवांयज्ञ हुआ और तैसेही ४। ५ कोई ऐसे हैं कि स्वाध्याय यज्ञ और ज्ञानयज्ञ है जिनके ६ अर्थात् स्वाध्याय यज्ञ है जिनके कोई ऐसेहैं और ज्ञान यज्ञ है जिन के कोई ऐसे हैं वेदशास्त्रों का पढ़ना पाठ करना इसको स्वाध्याय कहते हैं यह एक नवां यज्ञहै और वेद शास्त्रके अर्थ समझने को भी ज्ञान यज्ञ कहते हैं यह एक दशवां यज्ञहुआ प्रथम यज्ञ का नाम भी ज्ञान यज्ञ है उसका तात्पर्य ब्रह्मज्ञान में है कैसे हैं इस यज्ञके करने वाले + यत्न शीलवाले ८ हैं अर्थात् यज्ञ करने में प्रयत्न करनेवाले हैं और + तीक्ष्ण व्रतहैं जिनके ९ अर्थात् जैसे तलवारकी धार पर चलना है वह बड़ा तीक्ष्ण कामहै ऐसेही इनयज्ञोंका अनुष्ठान करना है +२८+

**अपानेजुह्वतिप्राणंप्राणेऽपानंतथापरे। प्राणापान-गतीरुध्वाप्राणायामपरायणाः + २९ +**

तथा १ अपरे २ अपाने ३ प्राणम् ४ प्राणे ५ अपानम् ६ जुह्वति ७ प्रा-णापानगतीः ८ रुध्वा ९ प्राणायामपरायणाः १० + २९ + अ० उ० एक ग्यारहवां यज्ञ इसमंत्र में निरूपण करते हैं और कोई १। २ अपान में ३ प्राण को ४ और + प्राणमें ५ अपानको ६ हवन ७ करतेहैं वा लय क-रते हैं मिलाते हैं तात्पर्य प्राण और अपानकीगतिको एक करते हैं ७ प्राण और अपानकी गतिको ८ निरोध करके ९ प्राणायाम में परायण १० हैं यहभी एक यज्ञ है अर्थात् प्राणों का जो निरोध यही परम आश्रा है जिन के ऐसे हैं कोई तात्पर्य प्राणकी गति रोकने से मन उसके साथही रुकता है इस वास्ते प्राणायाम में तत्पर रहते हैं + २९ +

**अपरेनियताहाराः प्राणान्प्राणेषुजुह्वति। सर्वेप्येतेयज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः + ३० +**

अपरे १ नियताहाराः २ प्राणान् ३ प्राणेषु ४ जुह्वति ५ एते ६ सर्वे ७ अपि ८ यज्ञविद् ९ यज्ञक्षपितकल्मषाः १० + ३० + अ० उ० आधे मंत्र में बारहवां एक यज्ञनिरूपण करते हैं फिर आधे मंत्र में सब यज्ञ करने वालों का माहात्म्य कहते हैं+और कोई १ नियतआहारी २ थोड़ाभोजन करनेवाले २ प्राणों को ३ प्राणमें ४ ही लय करते हैं ५ तात्पर्य भोजन का संकोच करनेसे प्राणकी गति भी संकुचित होजाती है और प्राण की गति कम होने से मनकी गति का निरोध होताहै यह समझकर कोई एक आहार करने में संकोच करते हैं यह एक बारहवां यज्ञ है+ये ६ सब ७ ही ८ बारह + यज्ञों के जाननेवाले ९ अर्थात् यज्ञोंके करनेवाले+यज्ञों करके नाश करदियेहैं पाप जिन्होंने १० वे सब सनातन ब्रह्मको प्राप्तहोंगे अगले मंत्र के साथ इस आधेमंत्रका अन्वयहै ब्रह्मज्ञानी साक्षात् प्राप्तहोंगे और कर्मकाण्डी उपासक योगी ब्रह्मज्ञान द्वारा ब्रह्मको प्राप्त होंगे +३० +

**यज्ञशिष्टामृतभुजोयान्तिब्रह्मसनातनम्। नायंलोकोऽस्त्ययज्ञस्यकुतोऽन्यःकुरुसत्तम + ३१ +**

यज्ञशिष्टामृतभुजः १ सनातनम् २ ब्रह्म ३ यान्ति ४ कुरुसत्तम ५ अयज्ञस्य ६ अयम् ७ लोकः ८ न ९ अस्ति १० अन्यः ११ कुतः १२ + ३१ + अ० उ० आधेमंत्र में यज्ञ करने वालोंका माहात्म्य कहते हैं और आधेमंत्र में जो बारह यज्ञों में से एक भी यज्ञ नहीं करतेहैं उनकी निन्दा करते हैं श्रीमहाराज अर्थात् जो अयज्ञोंका फलहोगा सो कहते हैं + यज्ञशिष्टा मृत के भोजन करने वाले १ सनातन २ ब्रह्म को ३ प्राप्तहोते हैं ४ हे अर्जुन ५ नहीं यज्ञकरनेवाले को ६ जो यज्ञ नहीं करते हैं उस को ६ यह ७ लोक ८ भी+ नहीं ९ हैं १० फिर+परलोक ११ तो + कहां से १२ होगा तात्पर्य जो एक भी यज्ञनहीं करताहै उसको जब कि इस लोक मेंही सुखनहीं तो परलोकमें कैसे होसक्ता है न उसको इसलोकका सुख है न परलोक में मिलेगा वह पशुवत् संसार में उत्पन्नहुआ+ ३१ +

**एवंबहुविधायज्ञावितताब्रह्मणोमुखे। कर्मजान्विद्धितान्सर्वानेवंज्ञात्वाविमोक्ष्यसे + ३२ +**

एवम् १ ब्रह्मणः २ मुखे ३ बहुविधाः ४ यज्ञाः ५ वितताः ६ तान् ७ सर्वान् ८ कर्मजान् ९ विद्धि १० एवम् ११ ज्ञात्वा १२ विमोक्ष्यसे १३ +३२+ अ० उ० जिसप्रकार बारह यज्ञ पीछे कहे इसी प्रकार १ वेद के २ मुखमें ३ अर्थात् वेदोंमें बहुत प्रकारके यज्ञ ४।५ विस्तार ६ अर्थात् बहुत प्रकार के यज्ञों का वेदोंमें विस्तार है + तिन सबका ७।८ अर्थात् उक्त अनुक्तों को शरीर मन बाणी के + कर्म्मों से उत्पन्न हुआ ९ जान तू १० तात्पर्य आत्मस्वरूपसे स्पर्श रहित जान + इस प्रकार ११ आत्मा को + जान कर १२ ज्ञाननिष्ठहुआ संसार से + छूट जायगा तू १३ अर्थात् परमानन्द स्वरूप मुक्ति को प्राप्त होगा + टी० + ये सब यज्ञ कायिक बाचिक मानसहैं आत्मा इनका विषय भी नहीं इत्यभिप्रायः+३२+

**श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञःपरंतप। सर्वंकर्म्माखिलंपार्थज्ञानेपरिसमाप्यते + ३३ +**

परंतप १ द्रव्यमयात् २ यज्ञात् ३ ज्ञानयज्ञः ४ श्रेयान् ५ पार्थ ६ सर्वम् ७ कर्माखिलम् ८ ज्ञाने ९ परिसमाप्यते १० +३३+ अ० उ० सब यज्ञों से ज्ञानयज्ञश्रेष्ठहै अर्थात् कर्मभक्ति उपासना योगादि ब्रह्मज्ञान श्रेष्ठ है क्योंकि साक्षात् मुक्ति का हेतु है सोई कहतेहैं + हे अर्जुन १ दैवादि यज्ञों से २।३ ज्ञानयज्ञ ४ श्रेष्ठ ५ है जो सब यज्ञों से प्रथम निरूपणकरी है + क्योंकि + हे अर्जुन ६ सब कर्मफलसहित ७।८ ब्रह्मज्ञान में ९ समाप्त होतेहैं १० अर्थात् ब्रह्मज्ञान से ही दुःख रूप कर्म नाश होते हैं और कोई उपाय कर्मों की जड़का नाश करने वाला नहीं + ३३ +

**तद्विद्धिप्रणिपातेनपरिप्रश्नेनसेवया। उपदेक्ष्यन्तितेज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः + ३४ +**

तद् १ विद्धि २ प्रणिपातेन ३ परिप्रश्नेन ४ सेवया ५ ज्ञानिनः ६ तत्त्वदर्शिनः ७ ते ८ ज्ञानम् ९ उपदेक्ष्यन्ति १० + ३४ + अ० उ० ज्ञान प्राप्त होने के मुख्य साधन कहते हैं ब्रह्मज्ञान प्राप्तको सम्प्रदाय पन्थ मार्ग यहीहै जो श्रीभगवान् इसश्लोक में कहते हैं जो ब्रह्मज्ञान साक्षात् मुक्ति का हेतुहै और सब कर्म उपासना योगादि से श्रेष्ठहै+तिसको १ जानतू २ अर्थात् तिस ब्रह्मको प्राप्तहो जो परमानन्द की इच्छा रखता है तू+ प्राप्तिका उपाय यह है कि यहज्ञान श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ पुरुषों से प्राप्त होसक्ता है जो त्रिकाण्ड वेदों के तात्पर्य को जानते हैं और जिनको

ब्रह्म साक्षात् अनुभव अपरोक्ष प्रत्यक्ष है उनको श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ कहते हैं तात्पर्य ऐसे पण्डित बिरक्त संन्यासी परमहंस हैं वे ब्रह्मज्ञान उपदेशकर सक्ते हैं और जो केवल श्रोत्रिय शास्त्रार्थ के जानने वाले हैं ब्रह्मनिष्ठन-हीं ब्रह्मज्ञान रहित हैं वे ब्रह्मज्ञान अनुभवसहित उपदेश नहीं करसक्ते साक्षात् ब्रह्मको अपरोक्ष नहीं बतासक्ते और जो केवल ब्रह्मनिष्ठहीहैं शा-स्त्र नहीं पढ़े वेदृष्टान्त युक्ति अनुमान शंका समाधान पूर्वक नहीं उपदेश कर सक्ते इस हेतुसे ब्रह्म तत्त्व उपदेश करने के योग्य अर्थात् ब्रह्मतत्त्व उपदेश करनेमें समर्थ श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठही है अर्थात श्रोत्रिय और ब्रह्म निष्ठभी हों श्रीभगवान् कहते हैं कि ऐसे ब्रह्मनिष्ठों के पास जाकर प्रथम उनको + दण्डवत् नमस्कार करके ३ और फिर + प्रश्न करके ४ और बहुत काल संवत् से सिवाय + सेवा कर के ५ ज्ञान सीख अर्थात् प्रथम साधु महात्मा के पास जाकर उनको आदर के सहित प्रणाम कर फिर उन्हीं से यह प्रश्न कर कि हे भगवन् मुझको कृपा करके ब्रह्मज्ञान उ-पदेश कीजिये और बहुतदिनों उनकी सेवा कर तन धन मन बाणी करके तब + ज्ञानी ६ तत्वदर्शी ७ अर्थात् श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ ७ तुझको ८ ज्ञान ६ उपदेश करेंगे १० तात्पर्य यह तीनों साधन अवश्य चाहते हैं जो इनमें एक भी न होगा तोभी ज्ञान प्राप्त होना कठिन है प्रथम तो साधन रहित पुरुष को महात्मा उपदेशही न करेंगे और जो वे दया क-रकेसाधन रहितको उपदेशभी करदेंगे तो उसको कभी बोध न होगा क्योंकि यह बात स्पष्ट प्रसिद्ध है कि बहुत लोग बरसों वेदान्त शास्त्र पढ़ते सु-नते हैं और ब्रह्म बार्ता में बहुत चतुर होजाते हैं परंतु छोकरे लोगाई कुपात्र धनवानों के दासही बने रहते हैं उनमेंही ममता रखते हैं + केवल नमस्कार मात्र करकेही बिनाप्रश्न और सेवाके महात्मा उपदेशनहीं करेंगे क्योंकि दण्डवत् सब करसक्ते हैं प्रश्न करनेसे जिज्ञासूका तात्पर्य प्रतीत होताहै न जानिये कैसा अधिकारी है सिवाय इसके धर्मशास्त्र में निषेधहै और बहुतलोग ब्रह्मवार्तामें जो कुशल होतेहैं वे प्रश्नभी भलेभले किया करते हैं परंतु महात्मा बिना चिरकाल सेवाके उपदेशनहीं करते हैं क्योंकि मंत्र का उपदेश करना बिना एकवर्षकी परीक्षा किये निषेधहै और यहतो साक्षात् ब्रह्मबिद्या है इस वास्ते बहुत चिरकाल सेवा करके और प्रश्नकरके और दंडवत् नमस्कार करकेही ब्रह्मज्ञान प्राप्तहोता है इत्यभिप्रायः + ३४ +

**यज्ज्ञात्वानपुनर्मोहमेवंयास्यसिपाण्डव । येनभूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथोमयि + ३५ +**

पांडव १ यत् २ ज्ञात्वा ३ एवम् ४ पुनः ५ मोहम् ६ न ७ यास्यसि ८ येन ९ अशेषेण १० भूतानि ११ आत्मनि १२ द्रक्ष्यसि १३ अथो १४ मयि १५ + ३५ + अ० उ० ज्ञान का फल और महिमा कहते हैं चार श्लोकों में + हे अर्जुन १ जिसको २ जानकर अर्थात् ३ ज्ञानको प्राप्तहोकर + इस प्रकार ४ फिर ५ मोह को ६ नहीं ७ प्राप्तहोगा जैसा अब मोह तुझको प्राप्त हो रहाहै और जिस करके ८ अर्थात् उसी ज्ञान करके ९ समस्त १० भूतों को ११ ब्रह्माजी से लेकर चींटी पर्यन्त + आत्मा में देखेगा तू १२ अर्थात् यह समझेगा कि यह समस्त संसार मुझ सच्चिदानन्द मेंही नाम रूप करके कल्पित है + पीछे उसके १४ मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप में १५ आत्मा की एकता जानेगा तू अर्थात् आत्माको नित्य निर्विकार शुद्ध सच्चिदानन्द जानेगा केवल आत्माही करके + बुद्ध्यादि करके नहीं क्योंकि शुद्धबुद्धिमें जड़ बुद्धिको गम नहीं +३५+

**अपिचेदसिपापेभ्यः सर्वेभ्यःपापकृत्तमः।सर्वंज्ञानप्लवेनैव वृजिनंसंतरिष्यसि + ३६ +**

चेत् १ सर्वेभ्यः २ पापिभ्यः ३ अपि ४ पापकृत्तमः ५ असि ६ ज्ञानप्लवेन ७ एव ८ सर्वं ९ वृजिनम् १० सन्तरिष्यसि ११ + ३६ + अ० उ० जो १ सब पापियों से २ । ३ भी ४ बड़ा पाप करने वाला ५ है तू ६ तो भी + ज्ञानरूप जहाज करके ७ निश्चय ८ सब पापको ९।१० तर जायगा तू ११ तात्पर्य यह संसार समुद्रवत् अथाह पापरूप है इसको पार हो जायगा अर्थात् ज्ञानकरके तेरे पाप सब नाश हो जावेंगे + ३६ +

**यथैधांसिसमिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन। ज्ञानाग्निःसर्वकर्माणिभस्मसात्कुरुतेतथा + ३७ +**

यथा १ एधांसि २ समिद्धः ३ अग्निः ४ भस्मसात् ५ कुरुते ६ अर्जुन ७ तथा ८ ज्ञानाग्निः ९ सर्व कर्माणि १० भस्मसात् ११ कुरुते १२ + ३७ + अ० जैसे १ सूखी + लकड़ियों को २ प्रज्वलित ३ अग्नि ४ राख ५ कर देती है ६ हे अर्जुन ७ तैसेही ८ ज्ञानरूप अग्नि ९ सब कर्मोंको १० नाश + ११ कर देयहै १२ + ३७ +

**नहिज्ञानेनसदृशंपवित्रमिहविद्यते। तत्स्वयंयोग-संसिद्धःकालेनात्मनिविन्दति + ३८ +**

इह १ ज्ञानेन २ सदृशम् ३ पवित्रम् ४ न ५ विद्यते ६ तत् ७ योग-संसिद्धः ८ कालेन ६ आत्मनि १० स्वयम् ११ विन्दति १२ + ३८ + अ० कर्म भेद भक्ति योगादि साधनों के बीचमें अर्थात् मोक्ष मार्ग में १ ब्रह्म ज्ञानको सदृश २।३ पवित्र ४ हि ५ नहीं ६ हैं ७ दूसरा मोक्ष का साधन + तिस ब्रह्म ज्ञान को ८ समाधि योगकरके सिद्ध हुआ ६ काल करके १० आत्माके विषय ११ अपने आप १२ प्राप्त हो जाता है १३तात्पर्य आत्माका ध्यान करते करते साक्षात् अपरोक्ष ज्ञान अपने आप प्राप्त हो जाता है कुछ थोड़ेही कालमें इस वास्ते सदा आत्मा का ध्यान करना योग्य है + ३८ +

**श्रद्धावाँल्लभतेज्ञानंतत्परःसंयतेन्द्रियः। ज्ञानंलब्ध्वा परांशान्तिमचिरेणाऽधिगच्छति + ३९ +**

श्रद्धावान् १ तत्परः २ संयतेन्द्रियः ३ ज्ञानम् ४ लभते ५ ज्ञानम् ६ लब्ध्वा ७ पराम् ८ शान्तिम् ६ अचिरेण १० अधिगच्छति ११ + ३६+ अ० उ० ज्ञान की प्राप्ति के साधन वहिरंग तो चौंतीसवें मंत्र में नमस्कार प्रश्न सेवा ये तीन कहे इन तीनों को तो मायावी भी कर सक्ता है यह शंका करके इस मंत्र में तीन अन्तरंग ज्ञान के साधन कहते हैं ये साधन जिसमें होंगे वह अवश्यही बे सन्देह ज्ञानको प्राप्त होकर मोक्ष होगा यह कहते हैं + श्रद्धावाला १ ब्रह्मज्ञान में + तत्पर परायण २ भले प्रकार जीती है इन्द्रिय जिसने ३ सो इन तीन साधनों करके सम्पन्न + ज्ञानको ४ अवश्यही + प्राप्तहोता है ५ ज्ञानको ६ प्राप्त होकर ७ परमशान्ति को ८। ६ जल्दी १० प्राप्त होता है ११ तात्पर्य ये तीनों साधन परस्पर सापेक्ष हैं तीनोंही से ज्ञान होताहै एक वा दो से कचाई रहजाती है + ३६ +

**अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्माविनश्यति। नायं-लोकोऽस्तिनपरो नसुखंसंशयात्मनः + ४० +**

अज्ञः १ च अश्रद्दधानः ३ च ४ संशयात्मा ५ विनश्यति ६ संशयात्मनः ७ न ८ अयम् ६ लोकः १० न ११ परः १२ न १३ सुखम् १४ अस्ति १५ + ४० + अ० उ० वेदों के महावाक्य सुनकर और ब्रह्म

विद्या वेदान्त शास्त्र सुनकर भी जिसको यह संशयहै कि मैं पूर्ण ब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द घन हूं वा नहीं उसको न इसलोक में सुख होगा न परलोक में क्योंकि जिसको स्वयंप्रकाश आत्मा में संशयरहा उसको परोक्ष वाक्यों में कैसे विश्वास होगा इस हेतुसे वह संशयात्मा सदा दुःखीरहेगा यद्यपि मन्द बुद्धि और श्रद्धा रहित पुरुषों को भी ज्ञान नहींहोता परन्तु वहां यह आशा रहतीहै कि कभी न कभी मन्दबुद्धि तोबुद्धिमान् होजायगा और श्रद्धारहित श्रद्धावान् होजायगा संशयात्माही भ्रष्टहोगा तात्पर्य मन्द बुद्धि और श्रद्धा रहित और संशयात्मा ये तीनों ज्ञानके अनधिकारीहैं और इनतीनों में भी संशयात्मा सब से निकम्माहै सोई इसमंत्र में कहते हैं श्रीभगवान् + मन्दबुद्धि १ और २ श्रद्धारहित ३ और ४ संशयात्मा ५ नाशहोजाता है ६ अर्थात् आनन्दसे भ्रष्ट होजाताहै ये तीनों ब्रह्मानन्द के लेखे मुरदे की बराबरहैं और इन तीनों मेंसे भी संशयात्मा तो अवश्यही भ्रष्टहै+संशयात्माको ७ न ८ यह ९ लोक १० न ११ परलोक१२ न१३ सुख १४ है १५ तात्पर्य जो पुरुष अज्ञहोताहै तो उसका गुरु शास्त्र में तो विश्वासहोताहै कालपाकर सुधरसक्ता है और अज्ञ भी हो और श्रद्धा रहित भी हो वह भी किसीकालमें श्रद्धावान् बुद्धिमान् होकरसुधर जाताहै और जो जान बूझकर तर्क करता है और अपने विपर्ययपक्ष में दुराग्रह करताहै उस कुतर्की दुराग्रही को कभी सुख न होगा जब कि संशयात्मा कुतर्की दुराग्रही को इसी लोकमें सुख नहीं तो परलोक का सुख कहां होगा सदाउसके विषय तर्क दुराग्रह संशय बनेही रहेंगे महात्माओंको ऐसे दुष्टों को कभी एक बात भी ज्ञान की सुनानी न चाहिये क्योंकि वहकुछ न कुछ उसमें झूंठी कुतर्ककरेगा + संशयात्मा उसको भी कहतेहैं कि जिसको यह संशयहै कि मैं कर्मोंका अनुष्ठान करूं वा न करूं अकर्म ज्ञानमें निष्ठाकरूं वा न करूं संशयात्मा इसपदका अक्षरार्थ यह है कि संशय है अन्तःकरण में जिसके सो संशयात्मा सो संशय दो प्रकारका है प्रमाणगत और प्रमेयगत सो ऊपर लिखागया तात्पर्य श्रीमहाराज के उपदेश में जो संशय करेगा उसका नाश होयगा यह शाप है भगवान् का बे सन्देह आत्माको शुद्धसच्चिदानन्द स्वरूप जानना योग्य है + ४० +

**योगसंन्यस्तकर्माणंज्ञानसंछिन्नसंशयम्। आत्मवन्तंनकर्माणिनिबध्नन्तिधनंजय + ४१ +**

धनंजय १ योग संन्यस्तकर्माणम् २ ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ३ आत्मवन्तम् ४ कर्माणि ५ न ६ निबध्नन्ति ७ + ४१ + अ० उ० इस अध्यायमें जो अर्थ पीछे विस्तार पूर्व्वक निरूपण किया उसीको इस मंत्रमें संक्षेप करके कहतेहैं समस्त अध्यायका तात्पर्यार्थ समझने के लिये + हे अर्जुन १ ज्ञानयोग करके संन्यासकिये हैं कर्मजिसने २ और + ब्रह्मज्ञान करके छेदन कियेहैं संशय जिसने ३ ऐसे + अप्रमत्त आत्मनिष्ठको ४ कर्म ५ नहीं ६ बन्धन करते हैं ७ + ४१ +

**तस्मादज्ञानसम्भूतंहृत्स्थंज्ञानासिनात्मनः । छित्वै-नंसंशयंयोगमातिष्ठोत्तिष्ठभारत + ४२ +**

भारत १ तस्मात् २ अज्ञानसंभूतम् ३ हृत्स्थम् ४ आत्मनः ५ एनम् ६ संशयम् ७ ज्ञानासिना ८ छित्वा ९ योगम् १० आतिष्ठ ११ उत्तिष्ठ १२ + ४२ + अ० उ० जब कि संशयात्मा को न इसलोक में सुखहोताहै न पर-लोक में + हे अर्जुन १ तिसकारणसे अज्ञान करके उत्पन्नहुआ ३ अन्तः-करण में स्थित ४ जो यहसंशय कि मैं युद्धकरूं वा न करूं और मैं सदा निर्विकार हूं वा नहीं + अपने ५ इस ६ संशयको ७ ब्रह्मज्ञानरूप तलवारसे ८ छेदन करके ९ कर्म योगका १० अनुष्ठान कर ११ खड़ाहो १२ युद्ध करने के लिये तात्पर्य आत्मा को शुद्ध सच्चिदानन्द नित्य निर्विकार पूर्ण ब्रह्म समझकर युद्धकर इत्यभिप्रायः + ४२ +

इति श्री भगवद्गीता सूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्री-कृष्णार्जुनसंवादे कर्मसंन्यासयोगोनाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

—※—

## पांचवें अध्याय का प्रारम्भ हुआ ॥

**अर्जुनउवाच । संन्यासंकर्म्मणांकृष्ण पुनर्योगंचशंस-सि । यच्छ्रेयएतयोरेकंतन्मेब्रूहिसुनिश्चितम् + १ +**

कृष्ण १ कर्मणाम् २ संन्यासम् ३ पुनः ४ योगम् ५ च ६ शंससि ७ एतयोः ८ एकम् ९ यत् १० सुनिश्चितम् ११ श्रेयः १२ तत् १३ मे १४ ब्रूहि १५ + १ + अ० उ० चतुर्थ अध्याय में अर्जुन को समुच्चय प्रतीत

हुआ इसवास्ते प्रश्नकरता है + हे कृष्णचन्द्र १ कर्मोंका २ त्याग ३ भी आप कहते हो इन दोनों का स्वरूप दिनरात्रि वत् विरुद्ध है एकपुरुष से एकसमय इन दोनोंका अनुष्ठान कैसे होसक्ता है + इन दोनोंमें ८ एक ९ जो १० भले प्रकार निश्चय किया हुआ ११ श्रेष्ठ है १२ सो १३ मुझको १४ कहो १५ तात्पर्य कर्मयोग और कर्मसंन्यास इन दोनोंमें मेरे वास्ते श्रेष्ठ क्या है यह मेरा तात्पर्य है यह तो मैं तृतीय अध्याय में समझगया हूं कि अधिकारी प्रतिदोनों श्रेष्ठहैं मैं किस निष्ठा का अधिकारी हूं इत्यभिप्रायः + १ +

**श्री भगवानुवाच । संन्यासःकर्मयोगश्चनिःश्रेयसकरावुभौ । तयोस्तुकर्मसंन्यासात्कर्मयोगोविशिष्यते + २ +**

संन्यासः १ कर्मयोगः २ च ३ उभौ ४ निःश्रेयसकरौ ५ तयोः ६ तु ७ कर्म संन्यासात् ८ कर्मयोगः ९ विशिष्यते १० + २ + अ० उ० श्री भगवान् कहते हैं कि पीछे जो हमने कर्मों का अनुष्ठान करना और त्याग करना कहा है सो कुछ बिरोध नहीं कहा क्योंकि सम समुच्चय मैंनेनहीं कहा अधिकारी प्रति क्रम समुच्चय कहा है शोक मोह रहित ज्ञाननिष्ठा वाले पुरुषों को तो ज्ञाननिष्ठा परिपाक होनेके वास्ते कर्मोंको त्याग करना श्रेष्ठ है और तमोगुणीरजोगुणीपुरुषों को ज्ञान निष्ठाकी प्राप्ति के लिये कर्मों का अनुष्ठान करना श्रेष्ठहै इसप्रकार कर्मोंका+त्याग १ और योग २। ३ ये क्रम से+दोनों ४मोक्षको प्राप्त करने वालेहैं ५ यथायोग्य अधिकारियों को और तू जोयह बूझता है कि इन दोनों में से मेरे वास्ते क्या श्रेष्ठहै सो सुन तुझको + तिनके ६ बीचमें तो ७ अर्थात् कर्मयोग और कर्म संन्यास इन दोनों के बीचमें + कर्म संन्यास से ८ कर्मयोग ९ विशेष है १० अर्थात् क्षत्रियोंका धर्म जो युद्ध करनाहै अभी उसका अनुष्ठान करनाही तुझ को श्रेष्ठ है कदाचित् इस मंत्रका कोई यह अर्थकरे कि कर्म संन्यास से कर्मयोग सबके वास्ते विशेष है तो इस अर्थमें वदतो व्याघात दोष आता है क्योंकि पुनः पुनः बारंबार पीछे श्रीभगवान् ने कर्म संन्यास पूर्वक ज्ञाननिष्ठा की प्रशंसा करी और आगे करेंगे जिसकी प्रथम आप स्तुति करें फिर उसीको आप निकृष्ट बतावें इसीको वदतो व्याघात दोष कहते हैं अर्थात् अपने कहेको आपही खण्डन करना यह बड़ा दोषहै ॥ श्रेयान् द्रव्यमयाद् यज्ञाद् ज्ञानयज्ञः परंतप । नहिज्ञानेन सदृशं पवित्र मिह विद्यते ॥

इत्यादि वाक्य और भी बहुतहैं इस जगह तात्पर्य श्रीभगवान् का यही है कि रजोगुणी तमोगुणी पुरुषों के वास्ते कर्मोंका अनुष्ठान करनाही श्रेष्ठ है क्योंकि तमोगुणी रजोगुणी पुरुषों को कर्मों का अनुष्ठान करना अन्तः-करण की शुद्धि का हेतु है और सतोगुणी पुरुषोंके लिये कर्मों का त्याग करनाही श्रेष्ठहै क्योंकि उनको अब कर्मों का अनुष्ठान करना विक्षेप का हेतु है और ज्ञाननिष्ठाके परिपाक होने में प्रतिबन्ध है और दोनों का अनुष्ठान एक काल में एक पुरुष से नहीं हो सक्ता कर्मनिष्ठा और कर्मनिष्ठा का स्वरूप दिनरात्रिवत् विरुद्धहै प्रथम अन्तःकरण की शुद्धिके लिये तुझको कर्मयोग विशेषहै इत्यभिप्रायः + २ +

**ज्ञेयःसनित्यसंन्यासी योनद्वेष्टिनकांक्षति। निर्द्व-न्द्वोहिमहाबाहो सुखंबंधात्प्रमुच्यते + ३ +**

यः १ न २ द्वेष्टि ३ न ४ कांक्षति ५ स ६ नित्यसंन्यासी ७ ज्ञेयः ८ महाबाहो ९ निर्द्वन्द्वः १० हि ११ सुखम् १२ बन्धात् १३ प्रमुच्यते १४ + ३+अ०टी० रागद्वेष रहित निष्काम जो कर्मों का अनुष्ठान करता है उस को संन्यासीवत् समझना चाहिये इसप्रकार श्रीभगवान् अब कर्मयोग की स्तुति करते हैं कर्मयोग के वास्ते + प्रतिकूल पदार्थों में + जो १ नहीं २ द्वेष करता है ३ अनुकूल पदार्थों की + नहीं ४ इच्छा करता है ५ सो ६ कर्मयोगी + नित्यसंन्यासीवत् निष्काम कर्मयोगी को जानतू + हे अ-र्जुन ९ द्वंद्वरहित १० हो ११ सुखपूर्वक १२ बन्ध से १३ छूटता है १४ तात्पर्य रागद्वेषादि द्वंद्वरहित होकर कर्मोंका अनुष्ठान कर तू + ३ +

**सांख्ययोगौपृथक्बालाःप्रवदन्तिनपण्डिताः।एक-मप्यास्थितःसम्यगुभयोर्विन्दतेफलम् + ४ +**

सांख्ययोगौ १ पृथक् २ बालाः ३ प्रवदन्ति ४ पण्डिताः ५ न ६ सम्य-क् ७ एकम् ८ अपि ९ आस्थितः १० उभयोः ११ फलम् १२ विन्दते १३ + ४ + अ० टी० अवस्था भेद करके कर्मयोग और ज्ञान योग इनदोनोंका क्रम समुच्चय है अर्थात् प्रथम निष्काम कर्मों का अनुष्ठान करना अन्तः-करण शुद्ध हुये पीछे कर्मों को त्यागदेना यही सिद्धान्त है सब शास्त्र और महात्मा पुरुषों का और जो यह प्रश्न करता है कि इन दोनोंमें से एक स्वतंत्र मुक्ति का देनेवाला बताओ यह प्रश्न कम समझ का है कर्म्म योग और ज्ञान योग इन दोनों का तात्पर्य एक परमानन्द में

ही है इस हेतु से इन दोनों को फल में पृथक् समझना चाहिये सोई कहते हैं + ज्ञानयोग और कर्म्मयोग को १ पृथक् २ एक स्वतंत्र निरपेक्ष मोक्षका देनेवाला + कमसमझ ३ कहते हैं ४ पूर्वापर शास्त्रका तात्पर्य समझेहुये + बिद्वान् ५ नहीं ६ पृथक् स्वतंत्र कहते हैं क्योंकि+ भले प्रकार ७ एकको ८ भी ९ आश्रय कियाहुआ १० अर्थात् साङ्गोपांग एक का भी अनुष्ठान किया हुआ + दोनों के ११ फलको १२ प्राप्त करता है १३ अर्थात् दोनों का फल परमानन्द है सोई दोनों को प्राप्त हो जाता है तात्पर्य जो कर्मों का अनुष्ठान निष्काम करेगा उसका अवश्यही अन्तःकरण शुद्ध होकर ज्ञान प्राप्त होगा पीछे उसके मोक्षपरमानन्दकी प्राप्ति यही दोनों का फल है और ज्ञान का अनुष्ठान भलेप्रकार करेगा वे संदेह पहले उसने इस जन्म में वा जन्मान्तर में कर्म्मयोग करके अन्तःकरण शुद्ध करलिया है उसको भी मोक्ष परमानन्द की प्राप्ति होगी यही दोनों का फल है एक ज्ञानयोग साक्षात् सच्चिदानन्द को प्राप्त करता है और एक कर्म्मयोग अन्तःकरण शुद्धकर ज्ञान द्वारा सच्चिदानन्द को प्राप्त करता है इसप्रकार ये दोनों फल में एक हैं स्वरूप इन का एक नहीं + ४ +

**यत्सांख्यैःप्राप्यतेस्थानं तद्योगैरपिगम्यते। एकं सांख्यंचयोगंच यःपश्यतिसपश्यति + ५ +**

सांख्यैः १ यत् २ स्थानम् ३ प्राप्यते ४ तद् ५ अपि ६ योगैः ७ गम्यते ८ सांख्यम् ९ च १० योगं ११ च १२ एकम् १३ यः १४ पश्यति १५ स १६ पश्यति १७ + ५ + अ० उ० पिछले मंत्रमें जो कहा उसीको फिर भलेप्रकार स्पष्ट करते हैं + ज्ञानी १ जिस स्थान को २ । ३ साक्षात् व्यवधान रहित + प्राप्त होते हैं ४ तिसको ५ हि ६ कर्म्मयोगी ७ ज्ञान द्वारा + प्राप्त होते हैं ८ ज्ञानयोगको ९ भी १० और कर्मयोग कोभी ११।१२ फल में + एक १३ जो १४ देखता है १५ सो १६ देखता है १७ शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा को तात्पर्य जो यह समझता है कि दोनका फल एक अद्वैत शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म आत्मा है सो महात्मा यथार्थ आत्मा परमात्मा को जानता है जैसे दो पुरुष जगन्नाथ जी को जाते हैं एक काशीजी में है और एक प्रयागराज में है कहनेवाले दोनों को यही कहते हैं कि ये दोनों जगन्नाथ जी को जाते हैं पहुंचेंगे और जानेवाला भी सब ठिकाने दिन प्रतिदिन यही कहता है कि मैं जगन्नाथ

जी को जाता हूं एक मंजिलवाला भी यही कहता है और बीस मंजिल वाला भी यही कहता है और बात यथार्थ है कि दोनों एक जगह पहुंचेंगे परन्तु भेदभी है जो सब मंजिल कर चुका है एकही मंजिल जिसको रही है वह उसी मंजिल में उसी दिन साक्षात् व्यवधान रहित जगन्नाथ जी में पहुंचेगा इस प्रकार तो ज्ञानी गति है और जिसको दोमंजिल रही है वह प्रथम बीचकी मंजिल पर पहुंचकर फिर जगन्नाथ जी में पहुंचेगा इस प्रकार कर्म्मयोगी की गति है शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म आत्माको दोनों प्राप्तहोंगे यहीदोनोंका स्थान परमपदहै बिना ब्रह्मज्ञान के कर्मयोगी स्वतंत्र मोक्षनहीं होसक्ता और जो कहदेते हैं या तो उसको पूर्वापर अर्थकी समझनहीं वा हठकरके वा रुचि बढ़नेकेलिये कहते हैं अर्थ सच्चा वही है जिसमें पूर्वापर से विरोध न आवे नहीं तो एक श्लोक का अर्थ तो बालक भी कहसक्ता है + ५ +

**संन्यासस्तुमहाबाहोदुःखमाप्तुमयोगतः । योगयुक्तोमुनिर्ब्रह्मनचिरेणाऽधिगच्छति + ६ +**

महाबाहो १ संन्यासः २ तु ३ अयोगतः ४ दुःखम् ५ आप्तुम् ६ योगयुक्तः ७ मुनिः ८ ब्रह्म ९ न १० चिरेण ११ अधिगच्छति १२ + ६ + अ० उ० कर्म योगतो ज्ञानद्वारा परमानन्द मुक्तपद को प्राप्त करता है और कर्मों का संन्यास ज्ञान साक्षात् मुक्तपद देता है तो कर्म योग क्यों करना चाहिये संन्यास होकर अर्थात् ज्ञानकाही अनुष्ठान करना यह शङ्का करके श्रीमहाराज कहते हैं + हे अर्जुन १ विना रागद्वेषादि दूर हुये प्रथम ही कर्मोंका + संन्यास २ तो ३ अर्थात् प्रथम बिना कर्मयोग का अनुष्ठान किये ४ दुःखपूर्वक ५ प्राप्तहोने को ६ शक्य है अर्थात् बिना कर्म योग किये ज्ञान प्राप्तहोना कठिन है + कर्मों के अनुष्ठान करने में बहुत देर लगती है ब्रह्मकी प्राप्ति बहुत काल में होगी यह शंकाकरके कहते हैं + योगयुक्त ७ मुमुक्षु ८ ब्रह्मको ९ नहीं १० देर करके ११ प्राप्तहोगा १२ तात्पर्य कर्मयोगी मुमुक्षु संन्यासी ज्ञाननिष्ठ होकर ब्रह्म को शीघ्रही प्राप्तहोगा अथवा इस जगह ब्रह्म संन्यासका नाम है योगयुक्त मुनि संन्यासको शीघ्र सुखपूर्वक प्राप्तहोगा + ६ +

**योगयुक्तोविशुद्धात्मा विजितात्माजितेन्द्रियः । सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपिनलिप्यते + ७ +**

योगयुक्तः १ विशुद्धात्मा २ विजितात्मा ३ जितेन्द्रियः ४ सर्वभूतात्मभूतात्मा ५ कुर्वन् ६ अपि ७ न ८ लिप्यते ६ + ७ + अ० उ० कर्मयोगी बंधन को प्राप्तहोता है यह शंकाकरके कहते हैं कि योगी अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञानीहोजाता है इसहेतु से बन्धनको नहीं प्राप्तहोता + योगयुक्त १ विशेष करके शुद्ध है शरीर जिसका २ बिशेष करके जीता है शरीर जिसने ३ जीती हैं इन्द्रिय जिसने ४ सब भूतों का आत्मभूत है आत्मा जिसका ५ अर्थात् ब्रह्माजी से लेकर चींटीपर्यन्त सब भूतों का आत्मा उसी का आत्मा है सो लोक रक्षाके लिये अथवा स्वभाव सेही कर्म + कर्ताहुआ६ भी ७नहीं ८ बन्धन को प्राप्तहोता ६ + ७ +

**नैवकिंचित्करोमीति युक्तोमन्येततत्त्ववित्। पश्यन्शृण्वन्स्पृशन् जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपन्श्वसन् + ८ + प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि । इन्द्रियाणींद्रियार्थेषुवर्त्तन्तइतिधारयन् + ९ +**

किंचित् १ एव २ न ३ करोमि ४ इति ५ युक्तः ६ तत्त्ववित् ७ मन्येत ८ इन्द्रियाणि६ इन्द्रियार्थेषु १० वर्तन्ते ११ इति १२धारयन्१३ पश्यन् १४ शृण्वन् १५ स्पृशन् १६ जिघ्रन् १७ अश्नन् १८ गच्छन् १६ स्वपन् २० श्वसन् २१ प्रलपन् २२ विसृजन् २३ गृह्णन् २४ उन्मिषन् २५ निमिषन् २६ अपि २७ + ८ + ६ + अ० उ० जिस समझसे कर्मोंके साथ बन्धन नहीं होता सो कहतेहैं दो श्लोकों का अन्वय एकहै + कुछ १ भी २ नहीं ३ करताहूं मैं ४ यह ५ समाहित सावधान ६ ज्ञानी ७ मानता है ८ इन्द्रिय ६ इन्द्रियों के अर्थों में १० वर्तती हैं ११ अर्थात् शब्दादि विषयों का भोगना इन्द्रियोंका धर्म है आत्मा असंग निर्विकार शुद्ध है + यह १२ धारण करता हुआ १३ अर्थात् पूर्वोक्त निश्चयकरके + कौनसे वे कर्म हैं किजिनको करता हुआ यह मानता है कि मैं असंगहूं सो कहते हैं + देखताहुआ १४ सुनता हुआ १५ स्पर्श करता हुआ १६ सूंघता हुआ १७ खाता हुआ १८ चलता हुआ १६ सोता हुआ २० श्वास लेता हुआ २१ बोलता हुआ २२ त्यागता हुआ २३ ग्रहण करता हुआ २४ नेत्रों को खोलता हुआ २५ मीचता हुआ २६ अपि शब्द करके अनुक्तों को भी जान लेना २७ तात्पर्य जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति अवस्था में जितनी क्रिया होती हैं इस संघात के विषय सब अनात्म धर्म है किस प्रकार इस अपेक्षा में कहते हैं सुनो

दर्शनादि चक्षु आदि इन्द्रियों का धर्म है आत्मा का नहीं चलना पैरों का धर्म है सोना बुद्धि का श्वास लेना प्राण का बोलना बाणी का त्यागना गुदा उपस्थ वा ग्रहण करना हाथों का खोलना मीचना नेत्रों का कूर्म प्राण का धर्म है आत्मा सदा अकर्ता है ज्ञानी यही समझते हैं इसी समझ से निर्बंध हो जाते हैं + ८ + ९ +

**ब्रह्मण्याधायकर्माणिसंगंत्यक्त्वाकरोतियः। लिप्यतेनसपापेनपद्मपत्रमिवाम्भसा + १० +**

यः १ कर्माणि २ ब्रह्मणि ३ आधाय ४ संगम् ५ त्यक्त्वा ६ करोति ७ स ८ पापेन ९ न १० लिप्यते ११ पद्मपत्रम् १२ इव १३ अम्भसा १४ + १० + अ० उ० जिस के यह अभिमान है कि मैं कर्ता हूं अर्थात् जो आत्मा को अकर्ता नहीं जानता ब्रह्मज्ञान रहित है उस को तो कर्मबन्धन करेगा और मैला अन्तःकरण होने से उस का कर्मों के संन्यास में ज्ञाननिष्ठा में अधिकार नहीं वह तो बड़े संकट में फँसा यह शंका करके श्री भगवान् उस के वास्ते यह कहते हैं + जो १ कर्मों को २ परमेश्वर में ३ अर्पण करके ४ और कर्मों के फल में + संग आसक्ति को ५ त्याग करके ६ करता है ७ सो ८ पाप के साथ ९ नहीं १० स्पर्श करता है ११ अर्थात् पाप पुण्य दोनों उस को छूते भी नहीं + कमल का पत्र १२ जैसे १३ जलके साथ १४ नहीं स्पर्श करता + १० +

**कायेनमनसाबुद्ध्याकेवलैरिन्द्रियैरपि। योगिनःकर्म्मकुर्वन्तिसंगंत्यक्त्वात्मशुद्धये + ११ +**

कायेन १ मनसा २ बुद्ध्या ३ इन्द्रियैः ४ केवलैः ५ अपि ६ योगिनः ७ कर्म्म ८ कुर्वन्ति ९ संगम् १० त्यक्त्वा ११ आत्मशुद्धये १२ + ११ + अ० उ० अन्तःकरण की शुद्धि के लिये जो कर्म्म करते हैं वे बंधन को नहीं प्राप्त होते यह बिचार कर + शरीर कर के १ मन करके २ बुद्धि करके ३ इन्द्रियों करके ४ ममताबर्जित करके ५ अर्थात् केवल ब्रह्मार्पण करता हूं मैं यह समझ करके ६ कर्म्मयोगी ६ कर्म्म को ७ करते हैं ८ कर्मों के फलमें + आसक्ति को ९ त्याग करके १० अन्तःकरण शुद्धि के लिये ११ + टी० + स्नानादि १ ध्यानादि २ तत्त्व का निश्चय करना इत्यादि ३ श्रवणादि ४ ये कर्म केवल अन्तःकरण की शुद्धि और चित्त की एकाग्रता के लिये करते हैं सिवाय इस के और कुछ फल चाहना बन्ध

का हेतु है तात्पर्य इन कर्मों में अभिनिवेश रहित होकर कर्म करतेहैं इस पांचवें पद का यह तात्पर्यार्थ है + ११ +

**युक्तःकर्म्मफलंत्यक्त्वा शांतिमाप्नोतिनैष्ठिकीम् । अयुक्तःकामकारेण फलेसक्तोनिबध्यते + १२ +**

युक्तः १ कर्मफलम् २ त्यक्त्वा ३ नैष्ठिकीम् ४ शान्तिम् ५ आप्नोति ६ अयुक्तः ७ कामकारेण ८ फले ९ सक्तः १० निबध्यते ११ + १२ + अ० उ० कर्म एक है कोई तो उस को करके मुक्त होता है कोई उसको करके बंध होता है यह कैसी व्यवस्था है ऐसी शंका करके श्री भगवान् यह कहते हैं + समाहित समाधान भगवत् भक्त १ कर्मोंके फलको २ त्याग करके ३ मोक्षरूप शान्ति को ४। ५ ज्ञान द्वारा + प्राप्त होता है ६ बहिर्मुख विषयी कामी ७ कामकी प्रेरणा करके ८ फलमें ९ आसक्त १० सदा बंधन को प्राप्त रहता है ११ तात्पर्य निष्काम कर्म ज्ञान द्वारा मोक्षकर देता है उसी कर्म में जो इस लोक वा परलोक के पदार्थों की चाहना हो जाती है सो कर्म बंधन को प्राप्त कर देता है + १२ +

**सर्वकर्माणिमनसासंन्यस्यास्तेसुखंवशी । नवद्वारे पुरेदेहीनैवकुर्वन्नकारयन् + १३ +**

वशी १ देही २ सर्वकर्माणि ३ मनसा ४ संन्यस्य ५ सुखम् ६ नवद्वारे ७ पुरे ८ आस्ते ९ न १० एव ११ कुर्वन् १२ न १३ कारयन् १४+१३+ अ० उ० जिसका अन्तःकरण शुद्ध नहीं उसको कर्म संन्यास से कर्मयोग विशेष है यह विस्तार पूर्वक निरूपण किया अब यह कहते हैं कि जिसका अन्तःकरण शुद्धहै उसको कर्म संन्यास श्रेष्ठहै + शुद्धान्तःकरणवाला १ देहका स्वामी जीव शुद्धसच्चिदानन्द स्वरूप अर्थात् ज्ञानी २ सबकर्मों को ३ मनसे ४ त्यागकर ५ सुखपूर्बक ६ नवद्वार पुरमें ७। ८ अर्थात नव दरवाज़े हैं जिस में ऐसे पुरदेह में + बैठा है ९ किस प्रकार बैठा है क्या करे है सो कहतेहैं + न १० तो ११ कुछ + करताहुआ १२ न १३ कराताहुआ १४ बैठाहै अर्थात् ज्ञानी इसदेह में न कुछ करता है न कुछ कराता है तात्पर्य न कर्ता है न प्रेरक है अपने स्वरूपमें जीवतेहुयेही मग्न है न आपको कर्ता मानता और न शरीरादि के साथ ममता करता है यही उसका न करना न करानाहै + टी० + दो कानमें दो नाकमें दो

नेत्रोंमें और एक मुखमें ये सातद्वार तो शिरमें हैं और दो नीचे हैं इस प्रकार नवद्वार हैं ॥ १३ ॥

**नकर्तृत्वंनकर्माणिलोकस्यसृजतिप्रभुः । नकर्मफलसंयोगंस्वभावस्तुप्रवर्त्तते ॥ १४ ॥**

प्रभुः १ लोकस्य २ कर्तृत्वम् ३ न ४ सृजति ५ न ६ कर्माणि ७ न ८ कर्मफल संयोगम् ९ स्वभावः १० तु ११ प्रवर्त्तते १२ ॥ १४ ॥ अ० उ० त्वम् पदार्थ जीवको तो निर्विकार निरूपण किया अब तत्पदार्थ ईश्वर को भी निर्विकार निरूपण करते हैं अर्थात् परमार्थ में ये दोनों निर्विकार हैं क्योंकि नाम मात्रही हैं वास्तव दोनों एक हैं दोश्लोकों में कहतेहैं ॥ ईश्वर शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप निर्विकार १ जीवके २ कर्तृत्वको ३ वास्तव ॥ नहीं ४ रचता है ५ और न ६ कर्मों को ७ और ॥ न ८ कर्मों के फल संयोग को ९ रचता है यह जो कुछ देखा सुना जाता है सब ॥ अविद्या १० ही ११ प्रवृत्त हो रही है १२ अर्थात् क्रिया कारक फलादि सब अविद्या करके कल्पित हैं न किसी ने ये रचे हैं और न वास्तव हैं यह सब जीवका अज्ञान अध्यारोप में विस्तार होरहा है वास्तवजीव भी शुद्ध है जगत् का कर्ता जो ईश्वर को कहते हैं सो अध्यारोप में करते हैं बास्तव ईश्वर निर्विकार है जगत् है नहीं इत्यभिप्रायः ॥ १४ ॥

**नादत्तेकस्यचित्पापंनचैवसुकृतंविभुः । अज्ञानेनावृतंज्ञानंतेनमुह्यन्तिजन्तवः ॥ १५ ॥**

विभुः १ कस्यचित् २ पापम् ३ एव ४ न ५ आदत्ते ६ न ७ च ८ सुकृतम् ९ अज्ञानेन १० ज्ञानम् ११ आवृतम् १२ तेन १३ जंतवः १४ मुह्यन्ति ॥ १५ ॥ अ० ईश्वर १ किसी के २ पाप को ३ भी ४ नहीं ५ ग्रहण करते ६ और न ७ । ८ पुण्य को ९ अनादि अनिर्वाच्य मूलाज्ञान करके १० जीवका ॥ ज्ञान ११ ढकगया है १२ तिस करके १३ अर्थात् तिसज्ञान करके १३ जीव १४ भ्रान्तिको प्राप्तहोरहे हैं अर्थात् ईश्वर को भी कर्ता विकार वान् मानते हैं और अपनेको भी ॥ १५ ॥

**ज्ञानेनतुतदज्ञानंयेषांनाशितमात्मनः । तेषामादित्यवज्ज्ञानंप्रकाशयतितत्परम् ॥ १६ ॥**

ज्ञानेन १ तु २ तत् ३ अज्ञानम् ४ येषाम् ५ नाशितम् ६ तेषाम् ७ आ-

त्वनः ८ तत्परम् ९ ज्ञानम् १० आदित्यवत् ११प्रकाशयति १२ + १६ + अ० ज्ञानी को भ्रांति नहीं होती यह कहतेहैं + और ब्रह्मज्ञान करके १।२ सो ३ अज्ञान ४ पूर्व मंचोक्त + जिनका ५ नाश होगया है ६ तिनको ७ आत्मा का ८ + परमार्थ तत्त्व ९ ज्ञान १० सूर्यवत् ११ प्रकाश करके परमार्थ तत्त्वरूप आत्माको प्रकाश करदेताहै जैसे सूर्य अन्धकारको नाश करके पदार्थों को प्रकाश कर देता है + १६ +

**तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः। गच्छंत्यपुनरावृत्तिंज्ञाननिर्द्धूतकल्मषाः + १७ +**

तद्बुद्धयः १ तदात्मानः २ तन्निष्ठाः ३ तत्परायणाः ४ ज्ञाननिर्द्धूतकल्मषाः ५ अपुनरावृत्तिम् ६ गच्छन्ति ७ + १७ + अ० उ० जिन पुरुषों को आत्मतत्त्व का ज्ञान होताहै उन का लक्षण कहतेहैं और ज्ञानका फल निरूपण करते हैं तिसमेंही है बुद्धि जिनकी १ अर्थात् सिवाय आत्माके और किसी पदार्थ में नहीं जाती है बुद्धि जिनकी आत्मासे सिवाय और किसी पदार्थ को सत्य त्रिकालाबाध्य निश्चय नहीं करते और + तिस मेंही है मन जिनका २ अर्थात् सिवाय आत्मा के और किसी पदार्थ में उन का मन नहीं जाता और है तिसमेंही निष्ठा जिनकी ३ अर्थात् सिवाय आत्माके दूसरी जगह निष्ठा नहीं करतेहैं सदा आत्माहीमें तत्पर रहते हैं और + सोई आत्मा परम आश्रय है जिनका ४ ऐसे महात्मा + ज्ञान करके नाशकरदिये हैं पापजिन्होंने ५ वे + मुक्तिको ६ प्राप्त होते हैं ७ + १७ +

**विद्याविनयसंपन्नेब्राह्मणेगविहस्तिनि। शुनिचैवश्वपाकेचपंडिताःसमदर्शिनः + १८ +**

विद्याविनयसंपन्ने १ ब्राह्मणे २ श्वपाके ३ च ४ गवि ५ हस्तिनि ६ शुनि ७ च ८ एव ९ समदर्शिनः १० पण्डिताः ११ + १८ + अ० उ० पण्डित नामभी ज्ञानियों काही है अर्थात् पण्डित ज्ञानी को कहते हैं इस मंत्रमें पण्डित शब्दके अर्थका लक्षण कहतेहैं + विद्या नम्रता करके युक्त ब्राह्मण में १। २ और चाण्डाल में ३। ४ गो में ५ हाथी में ६ और कूकर में ७। ८ भी ९ आत्मा को सम देखने का स्वभाव है जिनका १० वे + पण्डित ११ हैं मूर्खों के कहने से और पण्डित नाम रखवालेने से पण्डित नहीं होसक्ता + टी० + ब्राह्मण और चांडाल में तो कर्म की विषमता है

और गो हाथी कूकर में जातिकी बिषमता है तात्पर्य सब में आत्मा को सम देखते हैं इस वास्ते उनको भी समदर्शी कहाजाता है व्यवहार में ब्राह्मण और चाण्डालादि को एक देखना समझना भ्रष्ट मूर्खों का काम है + १८ +

**इहैवतैर्जितःसर्गोयेषांसाम्येस्थितंमनः निर्दोषंहिसमंब्रह्मतस्माद्ब्रह्मणितेस्थिताः + १९ +**

येषाम् १ मनः २ साम्ये ३ स्थितम् ४ तैः ५ इह ६ एव ७ सर्गः ८ जितः ९ ब्रह्म १० निर्दोषं ११ समम् १२ तस्मात् १३ हि १४ ब्रह्मणि १५ ते १६ स्थिताः १७ + १९ + अ० उ० समदर्शियों का माहात्म्य कहते हैं जिनका १ मन २ समता के बिषे ३ स्थितहै ४ अर्थात् सब भूतोंमें जिनका ब्रह्म भावना है + तिन्होंने ५ जीवतेहुये ६ हि ७ संसार ८ जाताहै ९ क्योंकि + ब्रह्म १० निर्दोष ११ और + सम १२ है + तिस कारणसे १३ हि १४ ब्रह्म में १५ वे १६ पण्डित पूर्वसंचोक्त + स्थित हैं १७ अर्थात् ब्रह्मभाव को प्राप्तहैं तात्पर्य संसार दोषोंके सहित विषम रूपहै और ब्रह्मसमरूप निर्दोष है ब्रह्मभावको प्राप्तहोकरही संसार जय होसक्ताहै जीता जाताहै नाशहोसक्ता है अथवा इसप्रकार अन्वय करदेना कि जिसकारणसे ब्रह्म सम निर्दोष है तिसकारणसेही वे ब्रह्ममें स्थितहैं और जब कि ब्रह्ममें उनकी स्थिति हुई तिस कारणसेही उन्होंने संसारको जीता सिवाय शुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप पूर्णब्रह्म आत्माके सबपदार्थ सदोषहैं यहसमझकर निर्दोष ब्रह्ममें स्थितहोकर संसार जीताजाता है + १९ +

**नप्रहृष्येत्प्रियंप्राप्यनोद्विजेत्प्राप्यचाप्रियम्। स्थिरबुद्धिरसंमूढोब्रह्मविद्ब्रह्मणिस्थितः + २० + बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्माविन्दत्यात्मनियत्सुखम्। सब्रह्मयोगयुक्तात्मासुखमक्षयमश्नुते + २१ +**

बाह्यस्पर्शेषु १ असक्तात्मा २ ब्रह्मयोगयुक्तात्मा ३ सः ४ आत्मनि ५ यत् ६ सुखम् ७ विन्दति ८ अक्षयम् ९ सुखम् १० अश्नुते ११ + २१ + अ० उ० जिस हेतुसे शब्दादि पदार्थोंमें रागद्वेष नहींहै ज्ञानीका वह हेतुकहतेहैं + शब्दादि इन्द्रियोंके अर्थोंमें १ नहीं आसक्त अन्तःकरण जिसका २ और + ब्रह्ममें समाधिकरके युक्तहै अन्तःकरण जिसका ३ सो ४ अन्तःकरण में ५

जो ६ सतोगुणी उपशमात्मक + सुख तिसको ७ प्रथम प्राप्तहोताहै फिर + अक्षय सुखको ९।१० प्राप्तहोताहै ११ + टी० बाहरजिनका स्पर्श होताहै इन्द्रियों की वृत्तिकरके वे शब्दादि पंच इन्द्रियोंके अर्थहैं तिनमें जिनका मन आसक्त नहीं उसमें यह हेतुहै कि उन्होंने आत्मामें अन्तःकरण को समाधानकरके जीवको ब्रह्मरूप समझलिया है और आत्मा पूर्णानन्द नित्य एक रसहै इसवास्ते उनको अक्षय सुख प्राप्तहोताहै अर्थात् वे सच्चिदानन्द स्वरूप एक रसहैं पूर्णानन्द के सामने विषयानन्द तुच्छहै प्रथम तो सतोगुणी सुखके सामने विषयानन्द तुच्छहै फिर परमानन्दके सामने तुच्छ होतो इसमें क्या कहना है अथवा इस श्लोकका अन्वय ऐसे करना कि शब्दादि विषयोंमें नहींहै आसक्त अन्तःकरण जिसका सो महात्मा सात्त्विक सुखको प्राप्तहोताहै फिर समाधिकरके ब्रह्मात्मा में अन्तःकरण लगाया है जिसने सो महात्मा पुरुष अक्षय सुखको प्राप्तहोजाताहै + २१ +

**येहिसंस्पर्शजाभोगादुःखयोनयएवते । आद्यन्तवन्तःकौंतेयनतेषुरमतेबुधः + २२ +**

संस्पर्शजाः १ ये २ भोगाः ३ ते ४ एव ५ हि ६ दुःखयोनयः ७ कौंतेय ८ आद्यन्तवन्तः ९ तेषु १० बुधः ११ न १२ रमते १३ + २२ + भ० उ० शब्दादि विषयोंमें इन्द्रादिदेवता आनन्द मानतेहैं और बड़ीबड़ी समझ वाले चतुरलोग वैकुंठलोकादि परलोक पदार्थों की प्राप्तिके लिये नानाप्रकार के प्रयत्नकरतेहैं वहां जाकर नानाप्रकारके शब्दादि विषयोंको भोगते हैं पुराणादि में भी उनका माहात्म्य सुनाजाताहै ऐसे प्रत्यक्ष सुन्दर शब्दादि विषयोंको छोड़ जो ब्रह्मात्मामें परमानन्दमानते हैं वे तो कुछ कमसमझ प्रतीतहोते हैं यह शङ्काकरके श्रीमहाराज कहतेहैं + शब्दादि विषयों से उत्पन्नहोतेहैं १ जो २ भोग ३ अर्थात् विषय जन्य जो सुखआनन्द + वे ४ निश्चय ५ हि ६ दुःखके कारणहैं ७ अर्थात् बे सन्देह समझना कि शब्दादि पदार्थोंमें जो सुखहै वह दुःखोंका मूल है जो कोई मूर्ख यह समझे कि आपकी समझमें विषयानन्ददुःखोंको मूलहै हमारीसमझमें श्रेष्ठहै यहशङ्का करके प्रत्यक्ष और भी दोषदिखातेहैं + हे अर्जुन ८ फिर कैसेहैं ये भोग + आदि अन्तवाले हैं अर्थात् आगमापायी आने जानेवालेहैं सदा नहीं बने रहते ९ तिनके विषय १० विद्वान् ११ नहीं १२ रहताहै १३ अर्थात् जो स्त्रियादि पदार्थोंमें रमेहैं शब्दादि विषयोंको प्रियसमझकर भोगते हैं और उनकी प्राप्तिके लिये लौकिक वैदिक कर्मकरते हैं वे बड़ी समझवालेचतुर

नहीं उनको महामूर्ख समझना + उक्तंच + रमन्तिमूर्खा विरमन्ति पण्डितः +हीयह शब्द कहने से तात्पर्य श्री महाराज का है विषय इस लोक परलोक के सब सम हैं उनके प्रयत्न करने में और नाश होने में जो २ दुःख हैं वे तो प्रसिद्ध हैं परंतु भोगकाल में भी वे दुःखही के हेतु हैं चोर राजादिका सदाभयबना रहता है तात्पर्य जो विषयों में कुछ एक सुख भी प्रतीत होता है तो सहस्रों प्रकार का उसमें दुःख है और वह सुख भी अनित्य है श्रेष्ठ आत्मानन्दही है आत्मानन्द के भोगनेवाले आत्मानन्द के प्रयत्न करनेवालेही चतुर बुद्धिमान् सब से श्रेष्ठ हैं इत्यभिप्रायः + २२ +

**शक्नोतीहैवयःसोढुंप्राक्शरीरविमोक्षणात्। कामक्रोधोद्भवंवेगं सयुक्तःससुखीनरः + २३ +**

यः १ कामक्रोधोद्भवम् २ वेगम् ३ प्राक्शरीरविमोक्षणात् ४ इह ५ एव ६ सोढुम् ७ शक्नोति ८ सः ९ युक्तः १० सः ११ सुखी १२ नरः १३ + २३ + अ० उ०+ परम पुरुषार्थ मोक्षहैं उसके काम क्रोध दो बैरी हैं जो इनको सहेगा त्यागेगा वह मोक्ष का भागी होगा यह कहते हैं जो १ महापुरुष काम और क्रोध से प्रकट होताहै जो वेग उसको २।३ पहले शरीर के छूटने से ४ जीवते ५ ही ६ सहनेको ७ समर्थ है ८ सोई ९ सुखी १० सोई ११ योगी १२ महापुरुष १३ है तात्पर्य कामना सब पदार्थों की शुभ वा अशुभ इसलोक परलोक के पदार्थों की अनर्थकाहेतु है और स्त्री की कामना तो मोक्ष में बड़ाही प्रतिबंधन है जिससमय देखने सुनने स्मरण करने से मन में विकार प्रतीत हो मनमें आवे उसके आने से मनमें विकार प्रतीत हो उसीसमय दोषोंका स्मरणकरे जिस गुणका स्मरण करने से कामनाहोती है उसका कभी चिन्तवन न करे जितने उस पदार्थ में अवगुण हैं उन सबको स्मरणकरे मनोराज्य का अंकुर जमने न दे दूसरे अध्यायके मंत्रों का विचारकरे नारायण को यादकरे जैसे बने वह समय टलावे और उत्तम उपाय यह है कि उस समय विरक्त साधु के पास जा बैठे बे सन्देह उसीसमय चित्तशान्त होजायगा और यह प्रयत्न सुषुप्ति मरण पर्यन्त चाहिये कामनाही से क्रोध होता है ऐसेही क्रोध लोभादि का जब उद्वेगहो उसीसमय समझकर निरोध करे इसी प्रकार सहजसहज सहते सहते फिर आपही स्वभाव ऐसा पड़जायगा प्रथम तो

कामादि का उदयही न होगा जो कुसङ्ग से उदय भी होवेंगे तो तनक विचार करने से दूर होजावेंगे + २३ +

**योन्तःसुखोन्तरारामस्तथान्तर्ज्योतिरेवयः । सयोगीब्रह्मनिर्वाणम्ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति + २४ +**

अन्तःसुखः १ यः २ अन्तरारामः ३ तथा ४ एव ५ अन्तर्ज्योतिः ६ यः ७ सः ८ योगी ९ ब्रह्म निर्वाणम् १० ब्रह्मभूतः ११ अधिगच्छति १२ + २४ + अ० उ० कामनादि के त्यागने से अन्तस्सुख की प्राप्ति होती है कैसा है वह सुख को स्वतंत्र नित्य पूर्ण अखण्ड है उसमें विहार करता हुआ पूर्णब्रह्म परमानन्दस्वरूप आत्मा को सदाके वास्ते प्राप्त हो जाताहै सोई कहते हैं + अन्तर है सेख जिसको १ अर्थात् आत्माही में जिसको सुख है इसीहेतुसे विषयोंमें सुख नहीं मानता जो २ महात्मा और आत्माही में है विहार जिसका ३ इसीहेतु से बाहरके पदार्थों में नहीं विहार करता और जैसे अन्तरसुख मानता है अंतरही विहार करता है+तैसे ४ ही ५ भीतर दृष्टि जिसकी ६ इसी हेतुसे गीत नृत्यादि में दृष्टि नहीं करता + जो ७ महापुरुष योगी + सो ८ योगी ९ ब्रह्मस्वरूप हुआ १० ब्रह्मको अर्थात् निर्वाण ब्रह्म मोक्ष को ११ प्राप्तहोता है १२ फिर उसका जन्म मरण नहीं होता पूर्ण परमानन्दस्वरूप आत्मा को प्राप्त होता है + २४ +

**लभंतेब्रह्मनिर्वाणमृषयःक्षीणकल्मषाः । छिन्नद्वैधायतात्मानः सर्वभूतहितेरताः + २५ +**

ऋषयः १ क्षीणकल्मषाः २ छिन्नद्वैधाः ३ यतात्मानः ४ सर्वभूतहितेरताः ५ ब्रह्मनिर्वाणम् ६ लभंते ७ + २५+अ० उ०+जो ब्रह्म को प्राप्त होते हैं उनका लक्षण कहते हैं + ज्ञाननिष्ठावाला साधु महात्मा १ नाश होगये हैं पाप जिनके २ और + छिन्न छिन्न दो दो टूक होगये हैं संशय जिनके ३ अर्थात् किसी प्रकार का संशय जिनको नहीं + जीता हुआ है अन्तःकरण जिनका ४ सब भूतों के हित में प्रीति है जिनको ५ ऐसे कृपालु महात्मा + ब्रह्मनिर्वाणको ६ प्राप्तहोंगे ७ पहले बहुत होगये वर्तमान कालमें बहुत जीवन्मुक्त विद्यमान हैं + टी० साधन चतुष्टय संपन्न श्रवणादि साधनों करकेयुक्त १ तिरोभाव होगये हैं रजोगुण तमोगुण जिनके ज्ञानके प्रताप से पाप सब नाश हो गये

हैं जिनके २ प्राणगत वा प्रमेय गत किसी जगह उनको संशय नहीं ३ सदा समाधिनिष्ठ रहते हैं ४ नगर ग्राम में जो उनका आना गृहस्थों के घर जाना गृहस्थों से बात करनी यह उनकी केवल कृपा ही सम-झनी क्योंकि वे पूर्ण काम हैं ऐसे दयालु महापुरुषों का दर्शन भी भाग से होता है ५ उक्तं+महद्विचलनं नृणां गृहिणान्दीनचेतसाम् । निःश्रेय-सायभगवन्कल्पतेनान्यथाक्वचित् + तात्पर्यार्थ इस श्लोक का यह है कि गृहस्थों के घरमें महात्मा पुरुषों का जो जाना है वह केवल उनकेभले के लिये है सिवाय उसके उनका और कुछ प्रयोजन नहीं कभी कुछ और प्रकार की कल्पनानहीं करनी क्योंकि गृहस्थ आपही दीन होते हैं उन के पास है क्योंकि जो किसी कामना की कल्पना की जावे + २५ +

**कामक्रोधवियुक्तानांयतीनांयतचेतसाम् । अभितो ब्रह्मनिर्वाणंवर्ततेविदितात्मनाम् + २६ +**

यतीनाम् १ अभितः २ ब्रह्मनिर्वाणम् ३ वर्तते ४ कामक्रोधवियु-क्तानाम् ५ यतचेतसाम् ६ विदितात्मनाम् ७ + २६ + अ० ड० कामादि-रहित सज्जन जीवतेही मुक्त हैं फिर उनकी विदेहमुक्तियों में तो क्या कहना है + संन्यासी के १ सब अवस्था में २ मोक्षपरमानन्द ३ वर्तता है ४ अर्थात् जीवते हुये भी जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति ३ परमानन्द को भोगते हैं तात्पर्य अज्ञानियों की दृष्टि में ज्ञानियों के विषे ये तीन अवस्थाप्रतीत होती हैं वास्तव ज्ञानियों के एक तुर्यातीत अवस्था रहती है और पीछे देह के भी परमानन्द को भोगते हैं कैसे हैं वे संन्यासी ज्ञानी + काम क्रोध करके रहित हैं ५ जीतरक्खा है अन्तःकरण जिन्होंने ६ जाना है आत्म तत्त्व जिन्होंने ७ अर्थात् पूर्ण ब्रह्मसच्चिदानन्द नित्यमुक्त आत्माको जानते हैं कामादि रहित हैं + २६ +

**स्पर्शान्कृत्वाबहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरेभ्रुवोः प्राणापानौसमौकृत्वानासाभ्यंतरचारिणौ + २७ +**

बाह्यान् १ स्पर्शान् २ बहिः ३ एव ४ कृत्वा ५ चक्षुः ६ च ७ अन्तरे ८ भ्रुवोः ९ प्राणापानौ १० नासाभ्यन्तरचारिणौ ११ समौ १२ कृत्वा १३ + २७ + अ० ड० + जिस योग करके संन्यासी महात्मा जीवते हुये और देह के पीछे भी सदा परमानन्द भोगते हैं उस योग का लक्षण दो मंत्रों

में तो अब कहते हैं संक्षेप से और अगले छठें अध्याय में बिस्तारपूर्वक कहेंगे + वहि: पदार्थोंको १ रूप रसादिको २ बाहर ३ हि ४ करके ५ अर्थात् रूप रसादि जो पदार्थ हैं ये सब बाहर हैं चिंतवन करने से भीतर प्रवेश होते हैं इस वास्ते बिषयों का चिंतवन दर्शनादि त्याग करके + औरचक्षु: को ६।० दोनों भ्रू के ८ बीच में ६ करके तात्पर्य नेत्रों को बहुत न खोलना न मीचना बहुत खोलने से रूप के साथ सम्बंध होजाताहै बहुत मीचने से निद्रा आती है इस वास्ते दोनों भ्रू के मध्यमें दृष्टि रखनी + प्राण अपान १० नासाभ्यंतरचारी ११ समान १२ करके १३ मुक्त होजाता है अर्थात् ऐसे महात्मा सदामुक्त हैं अगले मंत्र के साथ इसका अन्वय है +टी०+नासिकाके भीतर ही प्राण चले शीघ्रगति न होनेपावे ११ नीचेऊपरकी गति को सम करनीयोग्य है जिसको कुम्भक कहते हैं यह अर्थ साक्षात् गुरु के बतलाने से समझ में आताहै केवल शास्त्र के श्रवण विचार से नहीं आता + २७ +

**यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः। विगतेच्छाभयक्रोधोयःसदामुक्तएवसः + २८ +**

यतेन्द्रिय मनोबुद्धि: १ मोक्षपरायण: २ विगतेच्छाभयक्रोध: ३य: ४ मुनि: ५ स: ६ सदा ७ मुक्त: ८ एव ९ + २८+ अ० उ० जीते हैं इन्द्रिय मन बुद्धि जिस ने १ मोक्षही है परमगति जिसके २ दूर होगई है इच्छा भय क्रोध जिससे ३ ऐसे जो ४ मुनि संन्यासी ५ वे ६ सदा ७ जीते हुये भी और देहके पीछे भी + मुक्त ८ ही हैं इससे पृथक् कोई और मुक्ति पदार्थ नहीं सालोकादि अनित्य होने से नाममात्र मुक्तिकहलाती है + सब दु:खों की निवृत्ति और परमानन्द स्वरूप आत्माकी प्राप्ति यह मुक्तिका लक्षण है+टी०+जिसका मन आत्मामेंही रहता है उसको मुनि कहते हैं + २८ +

**भोक्तारंयज्ञतपसांसर्वलोकमहेश्वरम्। सुहृदंसर्वभूतानांज्ञात्वामांशान्तिमृच्छति + २९ +**

यज्ञतपसां १ भोक्तारम् २ सर्वभूतानाम् ३ सुहृदम् ४ सर्वलोकमहेश्वरम् ५ माम् ६ ज्ञात्वा ७ शान्तिम् ८ ऋच्छति ९ +२९+अ० उ०+ जैसा पीछे निरूपणकिया इस प्रकार इन्द्रिय और अन्त:करणादिकानिरोध करके ब्रह्मज्ञानद्वारा मुक्तिहोती है इस वास्ते अब ज्ञानका स्वरूप

कहकर शान्ति फल सबका निरूपण करते हैं + यज्ञ तपका १ भोक्ता २ अविद्योपहित त्वम्पदका वाच्यार्थ है और + सब भूतों का ३ बे प्रयोजन हित करने वाला ४ अन्तर्यामी ईश्वर सब कर्मोंके फलका देनेवाला तत्पदका वाच्यार्थ सच्चिदानन्द है और + सब लोकोंका महेश्वर ५ परमात्मा शुद्ध सच्चिदानन्द निर्विकार नित्यमुक्त तत्त्वम्पदों का लक्ष्यार्थ अद्वैत है इसप्रकार+मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म आत्मा को ६ जानकर ७ शान्तिको ८ अर्थात् मुक्तिको ८ प्राप्त होता है ९ नस पुनरावर्तते इत्यभिप्रायः + २९ +

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे संन्यास योगो नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

श्री स्वामी आनन्द गिरि कृत परमानन्द प्रकाशिका में पांचवां अध्याय समाप्त हुआ ॥ ५ ॥

## छठें अध्याय का प्रारम्भ हुआ ॥

उ० इस छठें अध्याय में श्री भगवान् यह कहेंगे कि जो अग्निहोत्रादि कर्म्म करता है और कर्म्मोंके फलमें आसक्त नहीं उसको संन्यासी समझो यह कर्म्मयोगी की स्तुति है इसको शास्त्र में अर्थवाद कहते हैं इस कहने से यह नहीं समझना कि गृहस्थाश्रम में ही सदाबने रहना चतुर्थ आश्रम संन्यास से क्या प्रयोजन है जैसे संन्यासी वैसेही गृहस्थी कर्म्मयोगी हैं यह अधिकार प्रति श्रीमहाराज का कहना है नहीं तो पुनः २ पांचवें बारहवें दूसरे अठारहवें इत्यादि अध्यायों में चतुर्थ आश्रम संन्यास के जो लक्षण और माहात्म्य गृहस्थाश्रम से विशेष अपने मुख से श्रीमहाराजने कहा है वह कहना भगवान् का निरर्थहोजायगा तात्पर्य सर्वयज्ञों की वाणी का यह नियम है कि जिस समय जिस साधन का प्रसंग होताहै उससमय उसीको सबसे अच्छा कहा करतेहैं उनका आशय यथार्थ जब प्रतीत होता है कि अगले पिछले कहेहुये उनके सब अर्थको विचारे फिर अधिकार गौण मुख्य देशवस्तुकालादिका विचारकरे युक्तियोंकरके सब श्रुति स्मृतियोंके साथ उस अर्थका एकजगह समन्वय करे

अगलेपिछले वाक्योंमें विरोध न आवे सबका सम्मत एक अर्थ में होजाय तब समझना कि इस श्लोक वा ग्रंथका यह यथार्थ ज्योंका त्यों अर्थ है और लक्षणा व्यंजना शक्ति काभी देखना योग्य है पूर्वपक्ष सिद्धान्त को पृथक् २ समझना साधन फलका भेददेखना साधनों में भी तारतम्यता अधिकार प्रतिहै इसप्रकार शास्त्रका तात्पर्य जानाजाताहै और भी शास्त्र के तात्पर्य जाननेमें मुख्य छः बात यह हैं प्रथम तो उपक्रम उपसंहार १ अर्थात् ग्रंथका आदिअन्त देखना कि दोनोंकी संगति मिलेहै वा नहीं सर्वज्ञोंका कहाहुआ जो ग्रंथहोता है उसके प्रारंभमें जो अर्थहोगा वही अन्तमें होगा जैसे श्रीभगवद्गीता का आदिपद अशोच्य है और माशुच पिछलापद है इनदोनोंपदों से प्रथम पीछे जो कथा है वह संगति के लिये उपोद्घात है इस प्रकार गीताका उपक्रम उपसंहार एक मिले है शोचका न होना और अर्थात् परमानन्द की प्राप्ति यही गीता शास्त्र का तात्पर्य है १ इसीबातके सिद्धकरनेके लिये बीचमें पांचबात येहैं अपूर्वता २ अर्थात् आत्माकोही सच्चिदानन्द नित्य जानना जिसके जानने से ही बेशोच होजाता है यहबात अपूर्व अलौकिक है २ अनुवाद ३ उसी एक बातको नानाप्रकार की रीति शैली करके पुनः २ कथन करना ३ अर्थवाद ४ अर्थात् उसी पदार्थ की सिद्धि के जो साधन हैं उनकोही रुचि बढ़ानेके लिये परात्पर श्रेष्ठ कहना जैसे कर्म भक्ति योगादि तीर्थादि का माहात्म्य कहाहै ४ उपपत्ति ५ अर्थात् फिर युक्तियों करके साधन कहकर सिद्धान्त पक्ष को सिद्धकरना ५ फल ६ अर्थात् सिद्धांत को कथन करना लक्षण करना कि वह परमानन्द स्वरूप ऐसा है ६ इस प्रकार ग्रंथ का तात्पर्य प्रतीतहोता है ग्रंथके एक एक देश से अर्थात् एक श्लोक वा एक अध्याय से ग्रंथका तात्पर्य नहीं जानाजाता ये भी छः बात उपक्रम उपसंहारादि गीता शास्त्र में हैं लक्षण व्यंजनादि भी हैं इन छः बातों का एक पदार्थ में जब सम्मत होगा तब जानना कि इस ग्रंथका यह तात्पर्य है अर्थवाद साधनों को सिद्धान्त समझ लेना मूर्खोंका काम है॥

**श्रीभगवानुवाच ॥ अनाश्रितःकर्मफलंकार्यंकर्मकरोतियः । ससंन्यासीचयोगीचननिरग्निर्नचाक्रियः ॥ १ ॥**

कर्मफलं १ अनाश्रितः २ कार्यम् ३ कर्म ४ यः ५ करोति ६ सः ७ संन्यासी ८ च ९ योगी १० च ११ न १२ निरग्निः१३ न १४ च १५ अक्रियः १६ + १ + अ० उ० अन्तःकरण शुद्धहोने के लिये कर्मयोगी की स्तुति करते हैं श्रीभगवान् कर्मों के फलका नहीं आश्रयकिया है जिसने १। २ अर्थात् कर्मफलकी तृष्णा और कामना नहीं है जिसको + करनेके योग कर्म को ३। ४ जो ५ करता है ६ अर्थात् नित्य नैमित्त प्रायश्चित्त कर्म और भगवत् भक्ति संबन्धि ज्ञान संबन्धि जो कर्म और तीर्थयात्रा साधुसेवादि साधारण जो कर्म और दानलेना इत्यादि जो असाधारण कर्महैं इनसब कर्मों को यथाधिकार यथाशक्ति जो करता है + सो ७ संन्यासी ८ और ९ योगी १० भी ११ समझनाचाहिये अर्थात् कर्म फलका संन्यास करने से एक देश में तो उसको संन्यासी समझना और कर्मयोग करने से एक देश में उसको योगी समझना इस अर्थ में सम समुच्चय की गन्धमात्र भी नहीं कल्पना करनी + कर्मयोग और कर्म संन्यास का दिन रात्रिवत् विरोध है कर्मयोगी कोही संन्यासी कहना यह उपमाहै जैसे स्त्रीकेमुख को चंद्रमा कहना यह उपमा का तात्पर्य एक देश में होताहै नहीं तो अगले पिछले वाक्यों में विरोध आता है पीछे श्रीभगवान् ने बहुतजगह कर्म संन्यास फल के सहित निरूपण किया और आगे बहुत करेंगे इस जगह कर्मयोग काही प्रसंग है इसीवास्ते श्रीमहाराज कर्मयोगी की स्तुति करते हैं कैसा है वह कर्मयोगी + न १२ निरग्निः १३ और न १४। १५ अक्रिय १६ है जैसे चतुर्थाश्रमी संन्यासी अग्निहोत्रादि कर्म नहीं करते निरग्नि होते हैं ऐसा कर्मयोगी नहीं और चतुर्थाश्रमी संन्यासी ज्ञानीवत् अक्रिय भी नहीं क्योंकि ज्ञानी आत्माको अक्रिय क्रिया रहित मानते हैं आत्मा का जब देह के साथ संबन्ध माना तब आत्मा अक्रिय कहां रहा यह बात सत्य श्रीमहाराज कहते हैं कि कर्मयोगी अक्रिय नहीं + अथवा केवल अग्नि के न छूनेसे कर्मों के न करने से बिना ज्ञाननिष्ठा परमार्थ में संन्यासी नहीं होसक्ता व्यवहार में उसको नाममात्र संन्यासी कहेंगे तात्पर्य जबतक अन्तःकरण शुद्ध न हो तबतक ज्ञाननिष्ठा और संन्यास का माहात्म्य सुनकर कर्मों का त्याग न करे और जिनका अन्तःकरण शुद्धहो उनके वास्ते कर्मों का संन्यास करना चतुर्थाश्रम धारण करना निषेध नहीं अवश्य चतुर्थाश्रम धारण करना उसके बिनाज्ञाननिष्ठा कभी परिपाक न होगी यह नियम विधि है + १ +

**यंसंन्यासमितिप्राहुर्योगंतंविद्धिपाण्डव। नह्यसं-**
**न्यस्तसंकल्पोयोगीभवतिकश्चन + २ +**

पांडव १ यम् २ संन्यासम् ३ प्राहुः ४ तम् ५ हि ६ योगम् ७ इति ८ विद्धि ९ असंन्यस्तसंकल्पः १० कश्चन ११ योगी १२ न १३ भवति १४ + २ + अ० उ० कहे कर्मयोगी का संन्यास में अधिकार नहीं यह कहते हैं हे अर्जुन १ जिसको २ संन्यास ३ कहते हैं ४ तिसको ५ ही ६ योग ७ कहते हैं यह ८ जान तू ९ क्योंकि संन्यास योगका ही फल है + नहीं संन्यास कियेहैं जिसने अर्थात् शुभाशुभ संकल्पों को जिसने नहीं त्यागा है सो १० कोई ११ योगी १२ नहीं १३ होता है १४ तात्पर्य जब तक शुभ वा अशुभ संकल्प मन में बनेरहैं तबतक अपनेको सिद्ध-योगी समझना न चाहिये अर्थात् यह १ समझे कि मेरा भक्तियोग अभी सिद्ध नहीं हुआ जब अन्तःकरण का निरोध होजाय संकल्प वि-कल्प सूक्ष्म कम होजावैं तब संन्यासका अधिकारी होता है + २ +

**आरुरुक्षोर्मुनेर्योगंकर्मकारणमुच्यते। योगारूढस्य**
**तस्यैवशमःकारणमुच्यते + ३ +**

योगम् १ आरुरुक्षोः २ मुनेः ३ कर्म ४ कारणम् ५ उच्यते ६ योगा-रूढस्य ७ तस्य ८ एव ९ शमः १० कारणम् ११ उच्यते १२ + ३ + अ० उ० + हे अर्जुन पीछे जो मैंने कर्मयोगी की स्तुतिकरी उस कहनेसे यह नहीं समझना कि सदा कर्मही कर्ता रहे अधिकार प्रति मैंने वहां कहा है तात्पर्य सिद्धान्त मेरा यह है कि जो मैं अब कहता हूं + ऊपर के पद ज्ञानपर १ चढ़ने की इच्छा है जिसके और ध्यान योग में समर्थनहीं अर्थात् सच्चिदानन्द निराकार का ध्यान नहीं करसका ऐसे ज्ञानयोग के जिज्ञासु २ मननशील को ३ अर्थात् मन में तो यह मनन करता है कि सच्चिदानन्द निराकार का ध्यान करना चाहिये परंतु अन्तःकरण मैला होने से ध्यान नहीं होसका ऐसे जिज्ञासु मुनि को ३ कर्म बहिरंग भग-वत् आराधनादि ४ परमानन्द स्वरूप आत्माकी प्राप्ति में + हेतु ५ कहा है ६ और + योगारूढ़ को ७ अर्थात् शुद्ध अन्तःकरण वाले को तात्पर्य जो ज्ञान योग पर चढ़ गया है वही कर्मयोगीसाधन चतुष्टय संपन्नहोकर ज्ञाननिष्ठ हुआ है ७ तिसको ८ ही ९ उपशम १० हेतु ११ कहा है १२ परमानन्द स्वरूप आत्मा की प्राप्ति में उपशम हेतु है अर्थात् लौकिक वै-

दिक कर्मोंसे उपराम होकर सच्चिदानन्द निराकारका ध्यानकरना कहा है फिर उसको बहिरंग कर्म्मों में प्रवृत्त होना न चाहिये क्योंकि वे विक्षेप के हेतु हैं और ऊपर चढ़ कर नीचे उतरना है + टी०+तिस को हो अर्थात् उसी को कि जो पहले कर्म योगी था साकार मूर्तियों का ध्यान करता था और बहिरंग कर्मों में प्रवृत्त था उसी बहिर्मुख को अन्तरमुख होना कहते हैं श्री भगवान् + यह नहीं समझना कि कर्मयोगी को सदा बहिर्मुख रहना ही कहते हैं ज्ञान मार्ग दूसरा है उसके अधिकारी दूसरे हैं जैसे कोई २ कमसमझ यह कहाकरते हैं कि मकान एक है उसके रस्ते अनेक हैं यह बात नहीं मोक्ष मार्ग एकही है मंजिल अनेक हैं रस्ते अनेक हैं यह बात नहीं मोक्ष मार्ग एकही है मंजिल अनेक हैं रस्ते अनेक नहीं रस्ता एकही है अर्थात् मोक्ष के मार्ग अनेक नहीं अधिकार प्रति भूमिका दरजे सीढ़ी अनेक हैं + ३ +

**यदाहिनेन्द्रियार्थेषुनकर्मस्वनुषज्जते । सर्वसंकल्प-संन्यासीयोगारूढस्तदोच्यते + ४ +**

यदा १ हि २ न ३ इन्द्रियार्थेषु ४ न ५ कर्म्मसु ६ अनुषज्जते ७ सर्व-संकल्पसंन्यासी ८ तदा ९ योगारूढ़: १० उच्यते ११ + ४ + अ० उ० + यह कैसे प्रतीतहो कि योगारूढ़ मैं अब हुआ इस अपेक्षामें योगारूढ़का लक्षण कहते हैं + जिस काम में १ ही २ जो महा पुरुष + न ३ विषयों में ४ न ५ कर्मों में ६ आसक्ति करता है ७ अर्थात् इस लोकमें जो देखेसुने हैं रूप शब्दादि और परलोकके जो अर्थ वाद सुने हैं किसी में तृष्णा नहीं करता क्योंकि अन्तर परमानन्द स्वतंत्र के सामने बहि: सुख परिछिन्न परतंत्र विषय जन्य सुख को तुच्छ समझता है और बहिर्मुख के जो साधन कर्म उनको करभी सक्ता है परंतु अपना उन से कुछ प्रयोजन नहीं यह समझ कर उन कर्मों मेंभी प्रीति नहीं करता और सब संकल्पों के त्यागने का स्वभाव है जिस का ८ अर्थात् इस लोक परलोक के निमित्त जो जो संकल्प उत्पन्न होतेहैं सब को त्याग देता है तात्पर्य सिवाय सच्चिदानन्द आत्मा के और किसी पदार्थ की प्राप्ति का संकल्पमात्रभी नहीं कर्ता जिस काल में + तिसकालमें ९ योगारूढ़ १० कहा है ११ सो महात्मा साधु भगवत् भक्त जो विषयादि में प्रीति नहीं करता + ४ +

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् । आत्मै-
वह्यात्मनोबंधुरात्मैवरिपुरात्मनः + ५ +

आत्मना १ आत्मानम् २ उद्धरेत् ३ आत्मानम् ४ न ५ अवसादयेत् ६ आत्मनः ७ आत्मा ८ हि ९ एव १० बंधुः ११ आत्मनः १२ आत्मनः १३ एव १४ रिपुः १५ + ५ + अ० उ० अब यह कहते हैं कि ज्ञानपर आरूढ़ होना चाहिये चढ़ना योग्यहै नीचे कर्मोंमें ही गिरना न चाहिये विवेक युक्त मनकरके १ जीवको २ ज्ञानयोगपर + चढ़ावे ३ यहांजीव का संसारसे उद्धार करनाहै अर्थात् ज्ञाननिष्ठा होना योग्य है + जीव को ४ नीचे न गिरावे ५।६ अर्थात् सदा कर्मोंमेंही लगारहे + जीवका ७ विवेकयुक्तमन ८ ही ९ तो १० बंधु ११ है अर्थात् संसारसे मुक्त करने वालाहै और + जीवका १२ रागद्वेषादि युक्तमन १३ ही १४ बैरी १५ है अर्थात् नरकादि को प्राप्त करनेवाला है + टी० +विवेक युक्त रागद्वेषादि रहित मनको शुद्धमन कहतेहैं ८ विवेक रहित रागद्वेषादि सहित मनको मलिन मनकहते हैं १३ दो एव कार शब्दों से यह तात्पर्य है कि जो मैं कहता हूं इसको धारण करना योग्यहै कहानी वत् सुनने से प्रयोजन सिद्ध न होगा १०।१४ तात्पर्य बन्ध मोक्षके कारण मनुष्योंका मनहीहै विषयोंमेंआसक्त हुआ बंधका हेतु स्वरूपनिष्ठ हुआ मोक्षका हेतुहै उक्तंच+ मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः +मुक्ति मिच्छसि चेत्तात विष- यान् विषवत् त्यज ॥ क्षमार्जवदयातोषसत्यं पीयूषवद्भज + अष्टावक्र जीने कहाहै कि हेतात जो मुक्तिकी इच्छाकरताहै तो विषयोंको विषवत् त्याग और क्षमा आर्जव दया संतोष सत्य इनका अनुष्ठान कर यहीतात्पर्य इस मंत्र का है + ५ +

बन्धुरात्माऽऽत्मनस्तस्ययेनात्मैवाऽऽत्मनाजितः । अ-
नात्मनस्तुशत्रुत्वेवर्तेताऽऽत्मैवशत्रुवत् + ६ +

तस्य १ एव २ आत्मनः ३ आत्मा ४ बंधुः ५ येन ६ आत्मना ७ आत्मा ८ जितः ९ अनात्मनः १० तु ११ आत्मा १२ एव १३ शत्रुवत्१४ शत्रुत्वे १५ वर्तेत १६ + ६ + अ० उ० पिछले अर्थको इसमंत्रमें स्पष्ट करते हैं + तिसही जीवको १।२।३ मन ४ बंधु ५ है कि + जिस जीवने ६।७ शरीर इन्द्रिय प्राणअन्तःकरण ८ वशमें कियाहै ९ और जिसने अन्तःकरणादि नहीं वश किये तिसका १०।११ मन १२ ही १३ बैरीवत्

१४ वैरभावमें १५ वर्तताहै १६ तात्पर्य विषयासक्त मन मोक्षवर्त में प्रति-
बंधहै इसहेतुसे उसको बैरी कहा और राग द्वेषादि रहित मन मोक्ष में
सहायक है इस हेतुसे उसको बंध कहा + ६ +

**जितात्मनःप्रशांतस्यपरमात्मासमाहितः। शीतो-
ष्णसुखदुःखेषुतथामानाऽपमानयोः + ७ +**

जितात्मनः १ प्रशान्तस्य २ परमात्मा ३ समाहितः ४ शीतोष्णसुख-
दुःखेषु ५ तथा ६ मानापमानयोः ७ + ८ + अ० उ० + अन्तःकरणादि
के बश करने का फल कहतेहैं + जीतेहैं अन्तःकरणादि जिसने १ इसी
हेतु से जो भले प्रकार शान्त है अर्थात् विक्षेप रहित है जो तिसको २
परमात्मा ३ शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्णब्रह्म + साक्षात् अपरोक्ष आत्म भाव
करके वर्तता है अर्थात् आत्मा सच्चिदानन्द अखंड नित्यमुक्त साक्षात्
अपरोक्ष जीतेहुये ही अनुभव करता है ४ और कोई प्रति बंध भी उस
को बाधा विक्षेप नहीं करसक्ते आधे श्लोक में अबयह कहतेहैं + शीत
गरमी दुःख सुख में ५ और तैसे ही ६ मान और अपमान में ७ आत्मा
अखण्ड अपरोक्ष रहता है + तात्पर्य पांचवीं छठीं जो ज्ञान की भूमि-
का हैं उनमें वर्तता है अर्थात् सदा जीवनमुक्ति का आनन्द भोगता है
इसी हेतु से उस आनन्दके सामने मानापमानादि भी नहीं प्रतीतहोति
और कभी रजोगुण के आविर्भाव होने से बहिर्मुख वृत्ति होने में अपमा-
नादि भी प्रतीत हों तो भी उनको गुणोंका कार्यसमझकर और अपने को
असंग जानकर विक्षेप को नहीं प्राप्तहोताहै + ७ +

**ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थोविजितेन्द्रियः। युक्त-
इत्युच्यतेयोगी समलोष्टाश्मकांचनः + ८ +**

युक्तः १ योगी २ इति ३ उच्यते ४ ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा ५ कूटस्थः ६
विजितेन्द्रियः ७ समलोष्टाश्मकांचनः ८ + ८ + अ० उ० + जिसयोगारूढ़
को अखण्डात्मा अपरोक्ष है उसका लक्षण यहहै + योगारूढ़ १ योगी
२ ऐसा ३ कहा है ४ अर्थात् उसका लक्षण यह है + ज्ञान विज्ञानकरके
तृप्त है अन्तःकरण जिसका ५ निर्विकार ६ भले प्रकार जीते हैं इन्द्रिय
जिसने ७ समान हैं लोहा पाषाण सोना जिसके ८ उसको योगारूढ़
योगी कहते हैं + टी० + महा वाक्य श्रवण करके यह जानना कि मैं
ब्रह्म हूं क्योंकि वेदवाक्य में विश्वास श्रद्धा करना अवश्य योग्य है वेदोंके

कहने से यह जानना कि मैं सच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्म हूं इसको ज्ञान कहते हैं अर्थात् यह तो अपरोक्ष ज्ञान है और युक्ति समन्वयादि करके साक्षात् करामलकवत् अनुभव करना इस को विज्ञान कहते हैं अर्थात् यह अपरोक्ष ज्ञानहै इन दोनों ज्ञान विज्ञान करके संतुष्ट है अन्तः-करण जिसका उसको ज्ञान विज्ञान तृप्तात्मा कहते हैं ५ रागद्वेषादि वि-कारों करके जो रहित है उसको कूटस्थ कहते हैं + ८+

## सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबंधुषु । साधुष्व-पिचपापेषुसमबुद्धिर्विशिष्यते + ९ +

सुहृद् १ मित्र २ अरि ३ उदासीन ४ मध्यस्थ ५ द्वेष्य ६ बन्धुषु ७॥१॥ यहां तक एक पद है + साधुषु २ च ३ पापेषु ४ सम बुद्धिः ५ विशिष्यते ६+९ + श्व० उ०+ सातवें अंकतक एक पदहै पापी साधु आदि जनोंमें समान बुद्धि है जिसकी सो पूर्वोक्त से भी विशेष है यह कहते हैं + बे प्रयोजन जो दूसरे का भला चाहे और करे ममता और स्नेहकरके वर्जित हो उसको सुहृदकहते हैं १ ममता स्नेह के वशहोकर जो भलाकरे २ शत्रु ३ किसी का बुरा चाहना न भला चाहना ४ दो के झगड़े में यथार्थ ज्यों का त्यों कहने वाला ५ आत्मा का अप्रिय अर्थात् आप से जो प्यार न करे ६ इस में और शत्रु में कुछ भेद नहीं प्रतीत होता परन्तु भेद है एक शत्रु तो ऐसा होता है कि प्रसिद्ध तो मिला रहे पीछे बुराई करे और एक शत्रु ऐसा होता है कि प्रसिद्ध में भी बुराई करे तीसरे और छठे अंक में अर्थात् अरि और द्वेष में यही भेद है + संबन्धि ७ इन सबमें ७॥१ और साधु जनों में २।३ और + पापी पुरुषों में ४ सम बुद्धि वाला ५ विशेष है ६ तात्पर्य शत्रु मित्रादि में जो न राग करता है न द्वेष करता है सो पूर्वोक्त योगी से भी विशेष है + ९ +

## योगीयुंजीतसततमात्मानंरहसिस्थितः। एकाकीय-तचित्तात्मानिराशीरपरिग्रहः + १० +

योगी १ सततम् २ आत्मानम् ३ युंजीत ४ रहसि ५ स्थितः ६ एका-की ७ यतचित्तात्मा ८ निराशीः ९ अपरिग्रहः १० + १० + श्व० उ० + योगी रूढ़ का लक्षण कहा अब योग को अंगों के सहित कहते हैं + योगा रूढ़ १ निरंतर २ अंतःकरण को ३ समाधान करे ४ एकान्त में ५ बैठ कर ६ अकेला ७ जीता है अन्तःकरण शरीर जिसने ८ आशा रहित

६ परिग्रह रहित १० + टी० + योगी दृढ़ बहिरङ्ग साधनों में अर्थात् तीर्थ यात्रादि में मुख्यता करके प्रवृत्त न हो निरन्तर दिन रात्रि अन्तः- करण निरोध करे क्षणमात्र बहिर्मुख वृत्ति न होने पावे २ जिस जगह सिंह सर्प चोरादि का अतिभय न हो स्त्री बालक प्राकृत जनों की समु- दाय न हो शुद्ध चित्त के प्रसन्न करने वाले स्थल में अर्थात् उत्तरा खण्ड भागीरथी नर्म्मदा जी के तीर इत्यादि स्थलों में चिरकाल निवास करे ५ एकान्त में भी दो चार इकट्ठे होकर न रहैं ७ एकान्त जगह भी हो और अकेला भी हो तो वहां रहकर शिष्य सेवकों को उपदेश करना इत्यादि क्रिया अथवा मंदिर कुटी के पास फूल फुलवारी लगाना इत्यादि क्रिया न करे कि जिस से वृत्ति बहिर्मुख हो ८ एकान्त में अकेला जब निवास करे तब किसी से यह आशा न रक्खे कि हम को कोई इसी जगह बैठे हुये भिक्षा दे जाया करे और बंधान्न भी न बांधे बन्धान्न की आशा भी न रक्खे तात्पर्य भिक्षान्न भोजन करना योग्य है ९ एकान्त में अकेला जो मनके समाधान करने को बैठे तो भोजन वस्त्रादि सिवाय शरीर यात्रा के संचय न करे तब अभ्यास होसक्ता है १० निरन्तर एकान्त अकेला जितेन्द्रिय आशारहित परिग्रह रहित ये सब अंग अन्तःकरण समाधान करनेके हैं विनागृहस्थाश्रम के छोड़े विना विरक्त हुये इनसब अंगोंका अनुष्ठानभलेप्रकार नहीं होसक्ता जो सब न होसके तो जितना होसके अवश्य करना योग्य है विना अभ्यास के वहिरंग साधननिष्फल है ईश्वराराधनादि कर्मोंका फलयहीहै कि अन्तःकरण शान्तहो +१०+

**शुचौदेशेप्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः । नात्यु- च्छ्रितंनातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् + ११ +**

शुचौ १ देशे २ आत्मनः आसनं ४ स्थिरम् ५ प्रतिष्ठाप्य ६ न ७ अति ८ उच्छ्रितम् ९ न १० अति ११ नीचम् १२ चैलाजिनकुशोत्तरम् १३ + ११ + भा० उ० + आसन की विधि दो श्लोकों में कहते हैं आसन योगका वहिरंग साधन है अंतरंग अभ्यासका सहायक है + पवित्र भूमि में १।२ अपना ३ आसन ४ अचल ५ विछाकर अभ्यास करे कैसाहै वह आसन कि + न ७ बहुत ८ ऊंचा ९ न १० बहुत ११ नीचा १२ हो फिरकैसाइस अपेक्षा में कहते हैं कि + कुशा और मृग चर्म और वस्त्र ये ऊपर हों भूमि के अर्थात् पृथिवी के ऊपर प्रथम कुशाका आसन उसके ऊपरमृग- चर्मादि उस के ऊपर सूतीवस्त्र बिछावे १३ टी० + कोई भूमि तो स्वभाव

सेही पवित्र होती है जैसे श्री गंगाजी की रेती ॥ वसुधा सर्वत्र शुद्धा न लेपोयत्रविद्यते ॥ पृथिवी सब जगह पवित्र है परन्तु जहां लिपगई हो तो फिर उसको लीपलेना योग्य है अथवा उत्तराखण्डादि को पवित्रदेश समझना योग्य है १। २ दूसरे के आसन पर बैठना शास्त्र में निषेधहै इस वास्ते अपना आसन कहा ३। ४ स्थिर शब्द से तात्पर्य यह है कि यह काम दो चार घड़ी वा दो चार महीने का नहीं बरसोंका यहकाम है अर्थात् जबतक जीवे यही अभ्यास करता रहे यह अभ्यास अज्ञानी को तो ज्ञान का प्राप्तकरनेवाला और ज्ञानी को जीवन मुक्तिदेने वाला है सिवाय इसके और क्या काम श्रेष्ठतर है कि इसको छोड़कर जो करना चाहिये ५ रुई भरे बिछौने वस्त्रबिछाकर न बैठना चौकोर छतकी मुड़ेरी परभी बैठ कर योग अभ्यास नहीं करना ७। ८। ९ बिना आसन पृथिवी पर बैठ वा गढ़े में बैठ कर यह योगाभ्यास नहीं होसक्ता इत्यभिप्राय: १०। ११। १२+ ११ +

**तत्रैकाग्रंमनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः। उपविश्यासनेयुंज्याद्योगमात्मविशुद्धये +१२+**

यतचित्तेन्द्रियक्रिय: १ तत्र २ आसने ३ उपविश्य ४ मन: ५ एकाग्रम् ६ कृत्वा ७ आत्मशुद्धये ८ योगम् ९ युंज्याद् १० + १२+अ०+जीती हैं चित्त की और इन्द्रियों की क्रिया जिसने १ सो योगी + तिसआसन पर २। ३ बैठ कर ४ मनको ५ एकाग्र करके ६। ७ अंत:करण की शुद्धि के लिये ८ इस+ योग का अभ्यासकरे ९। १०+टी०+अगली पिछलीबातों को याद करना यह चित्त की क्रिया है देखना श्रवणादि इन्द्रियों की क्रियाहैं १ मनको सब विषयों से हटाकर आत्माके सन्मुख करके पिछले मंत्र में जिस प्रकार का आसन कहा उसपर बैठकर अभ्यासकरे ५। ६। ७। २। ३ + १२ +

**समंकायशिरोग्रीवंधारयन्नचलंस्थिरः। संप्रेक्ष्यनासिकाग्रंस्वं दिशश्चानवलोकयन् + १३ +**

कायशिरोग्रीवम् १ समम् २ अचलं ३ धारयन् ४ स्थिरम् ५ स्वम् ६ नासिकाग्रम् ७ संप्रेक्ष्य ८ दिश: ९ च १० अनवलोकयन् ११ + १३ + अ० उ०+ चित्त के एकाग्र करने में देह की धारणा भी बहिरंग साधनउपयोगी है उसको भी दो मंत्रों में कहते हैं + देहका मध्यभाग और शिर

ग्रीवा को १ सम २ अचल ३ धारण करताहुआ ४ दृढ़प्रयत्नवान् होकर ५ अपनी ६ नासिका के अग्रको ७ देखकरके ८ पूर्वादि + दिशाको ९ भी १० नहीं देखताहुआ ११ आत्मपरायण होकर बैठे + टी० + मूलाधार से लेकर मूर्द्धा तक सीधा निश्चल बैठे १ । २ । ३ । ४ दुःख समझ कर प्रयत्न में कचाई न होनेपावे सावधान होकर धीरज के सहित दृढ़ होकर बैठे जो शरीर पात होजाय तो होजाय परंतु बिना मनके शांतहुये वहांसे हटना नहीं ५ नासाग्र दृष्टिमें तात्पर्य यह नहीं कि नासिका के अग्रभाग कोही देखते रहना किन्तु यह तात्पर्य है कि ऐसे बैठे जैसे नासाग्र दृष्टि होकर बैठते हैं दृष्टि और वृत्ति आत्मा में लगानी योग्य है नेत्रों को न बहुत खोलना न मीचना इत्यभिप्रायः ६ । ७ । ८ + १३ +

**प्रशांतात्माविगतभीर्ब्रह्मचारिव्रतेस्थितः । मनःसंयम्यमच्चित्तोयुक्तआसीतमत्परः + १४ +**

प्रशांतात्मा १ विगतभीः २ ब्रह्मचारिव्रतेस्थितः ३ मनः ४ संयम्य ५ मच्चित्तः ६ युक्तः ७ मत्परः ८ आसीत ९ + १४ + अ० + भले प्रकार शान्त हुआ है अन्तःकरण जिसका १ दूर होगया है भय जिसका २ ब्रह्मचर्य व्रतमें स्थित ३ मनको ४ रोककर ५ मुझ सच्चिदानन्द स्वरूप में चित्त है जिसका ६ सो + समाहित हुआ ७ मैं सच्चिदानन्द स्वरूपहीहूं परम पुरुषार्थ जिसके ८ ऐसा समझकर + बैठे ९ + टी० + अष्टांग मैथुन करके वर्जित ज्ञानके उपदेश करनेवाले गुरूकी टहलमें तत्पर भिक्षान्न सदा भोजन करनेवाला ३ अन्तःकरण की वृत्तियों को उपसंहार करके ४।५ समाधान अप्रमत्त अनालस्य हुआ ७ परब्रह्मकी प्राप्तिकोही परमपुरुषार्थ समझ ब्रह्मपर होकर ८ पूर्वोक्त आसनपर बैठकर अभ्यास करे + १४ +

**युंजन्नेवंसदात्मानं योगीनियतमानसः । शांतिंनिर्वाणपरमांमत्संस्थामधिगच्छति + १५ +**

योगी १ सदा २ एवम् ३ आत्मानम् ४ युंजन् ५ नियतमानसः ६ शांतिम् ७ अधिगच्छति ८ परमाम् ९ मत्संस्थाम् १० + १५ + अ० उ० + इस प्रकार अभ्यास करने से जो होताहै सो सुन अर्जुन योगी विरक्त १ सदा २ इसप्रकार ३ शरीर इन्द्रिय प्राण अंतःकरण को ४ समाधान करता हुआ ५ निरोध हुआहै मन जिसका ६ सो + शांतिको ७ प्राप्तहोताहै ८ कैसी है वह शांति + मोक्षमें निष्ठाहै जिसकी अर्थात् मोक्षमें तात्पर्यहै

जिसका ६ और वह शांति + सच्चिदानन्द रूप है १० उसको प्राप्तहोताहै तात्पर्य परमगतिमोक्ष को प्राप्तहोताहै + १५ +

नात्यश्नतस्तुयोगोऽस्तिनचैकान्तमनश्नतः। नचाऽतिस्वप्नशीलस्यजाग्रतोनैवचार्जुन + १६ +

अर्जुन १ अति २ अश्नतः ३ तु ४ योगः ५ न ६ अस्ति ७ एकांतम् ८ अनश्नतः ९ च १० न ११ अति १२ स्वप्नशीलस्य १३ च १४ न १५ जाग्रतः १६ च १७ न १८ एव १९ + १६ + अ० उ० + ध्याननिष्ठ योगीको अब आहारादि का नियम कहतेहैं दो मंत्रोंमें यह भी वहिरंग साधन उपयोगीहै + हे अर्जुन १ बहुत २ भोजन करनेवालेको ३ भी ४ योगकाफल परमानन्द ५ नहीं ६ होता ७ अर्थात् योगसिद्ध नहीं होता अत्यन्त ८ नहीं खानेवाले को ९ भी १० नहीं ११ बहुत १२ सोनेवाले को १३ भी १४ नहीं १५ + जागनेवाले को १६ भी १७ नहीं १८ योग सिद्ध होता + निश्चय १९ यहीबातहै + १६ +

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्यकर्मसु। युक्तस्वप्नावबोधस्ययोगोभवतिदुःखहा + १७ +

कर्मसु १ युक्तचेष्टस्य २ युक्ताहारविहारस्य ३ युक्तस्वप्नावबोधस्य ४ दुःखहा ५ योगः ६ भवति ७ + १७ + अ० उ० ऐसे पुरुष को योग सिद्ध होताहै + युक्त का खाना और चलनाहै जिसका १ शौचस्नानादि+ कर्मोंमें २ प्रमितमयी हुई क्रियाहै जिसको ३ युक्त का सोना जागना है जिसका ४ उसकोदुःखों का नाश करने वाला ५ योग ६ सिद्ध + होताहै ७ टी० + चार भागमें से दो भाग तो अन्न से एकजल से पूर्णकरै एक भाग पवन आने जाने के लिये खालीरक्खे तात्पर्य यह कि एक बेर कुछक्षुधा रखकर भोजन करना + द्वौभागौ पूरयेदन्नै स्तोयेनैकं प्रपूरयेत्। मारुतस्य प्रचारार्थं चतुर्थमवशेषयेत् + सिवाय शौचस्नान भिक्षाके वृथा डोलना फिरना बे योग है क्रिया का प्रमाण बांधना योग्यहै अर्थात् इतनी दूर जंगलजाना इतनी देरमें स्नान करना अमुक समय इतनी देरमें भोजन करना ये सब विधि मनुआदि धर्म शास्त्रमें से श्रवण करनी योग्यहैं ३ रात्रिके बीच में डेढ़ पहर सोना सिवाय उसके सदाजागनायोग्यहै + १७ +

**यदाविनियतंचित्तमात्मन्येवाऽवतिष्ठते । निस्पृहः सर्वकामेभ्योयुक्तइत्युच्यतेतदा + १८ +**

यदा १ विनियतम् २ चित्तम् ३ आत्मनि ४ एव ५ अवतिष्ठते ६ सर्वकामेभ्यः ७ निस्पृहः ८ तदा ६ युक्त १० उच्यते ११ इति १२ + १८ + भा० उ०+किसकाल में योग सिद्ध होता है इस अपेक्षामें कहतेहैं जिस काममें १ भलेप्रकार निरोध हुआ जीताहुआ २ चित्त ३ आत्मामें ४ हो ५ ठहरता है ६ सब कामों से ७ दूर होगई है तृष्णा जिसकी ८ सो तिसकाल में ६ सिद्धयोगी १० कहाहै ११ यह १२ जानना योग्यहै अर्थात् जिस काल में इसलोक परपरलोक की सब कामना दूर होजावें और चित्त भले प्रकार एकाग्र होकर आत्मामें स्थित हो जिसका सो महात्मा तिस काल में सिद्ध योगी कहाजाता है तात्पर्य जब ऐसा होजाय कि जैसा इस मंत्र में कहाहै तब समझना कि मुझको अब योग सिद्ध हुआ+१८+

**यथादीपोनिवातस्थो नेंगतेसोपमास्मृता । योगिनो यतचित्तस्ययुंजतोयोगमात्मनः + १९ +**

यथा १ दीपः २ निवातस्थः ३ न ४ इङ्गते ५ स ६ उपमा ७ स्मृता ८ योगिनः ६ यतचितस्य १० आत्मनः ११ योगम् १२ युंजतः १३+१६+ भा० उ०+एकाग्र चित्तकी उपमा यह है + जैसे १ दीपक २ पवनरहित जगह जलता हुआ ३ नहीं ४ हलता ५ सो ६ उपमा ७ कही है ८ योगी के ६ जीते हुये चित्त की १० अर्थात् जिस योगीका भले प्रकार अंतःकरण निरोध है उस अंतःकरण की यह उपमा है कि जैसे पवन रहित जगह जलता हुआ दीवानहीं हलता ऐसेही उसयोगीका चित्तस्थिर रहता है फिर कैसा है वह योगी कि जिसका चित्तस्थिर रहता है सो कहते हैं + आत्मा की ११ प्राप्ति के लिये + आत्म ध्यान योगके १२ अनुष्ठान करने वाले का १३ चित्त स्थिर रहता है + १६ +

**यत्रोपरमतेचित्तं निरुद्धंयोगसेवया । यत्रचैवाऽत्मनाऽत्मानं पश्यन्नाऽत्मनितुष्यति + २० +**

यत्र १ योगसेवया २ निरुद्धम् ३ चित्तम् ४ उपरमते ५ यत्र ६ च ७ आत्मना ८ आत्मानम् ६ एव १० पश्यन्११आत्मनि १२ तुष्यति १३+२०+ भा० उ०+जिस काल में १ समाधि योग का अनुष्ठान करके २ निरोध

हुआ ३ चित्त ४ संसार से + उपराम होता है ५ और जिस काल में ६।७ समाधि करके शुद्ध किया हुआ जो अन्तःकरण तिस + अन्तःकरण करके ८ परम चैतन्य ज्योति स्वरूप आत्मा को ९ ही १० देखता हुआ ११ अर्थात् आत्माको प्राप्त हुआ ११ सच्चिदानन्दस्वरूप आत्मा में १२ सन्तुष्ट होताहै १३ तिसकाल में योगकी सिद्धिहोती है + २० +

**सुखमात्यन्तिकंयत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम्। वेत्ति यत्रनचैवायं स्थितश्चलतितत्त्वतः + २१ +**

यत् १ आत्यंतिकम् २ सुखम् ३ अतीन्द्रियम् ४ बुद्धिग्राह्यम् ५ यत्र ६ च ७ अयम् ८ स्थितः ९ तत् १० वेत्ति ११ तत्वतः १२ एव १३ न १४ चलति १५ + २१ + भ० उ० + जो १ अत्यन्त २ सुख ३ इन्द्रियों का विषय नहीं ४ अपने अनुभव करके ग्रहण होता है ५ और जिस काल में ६।७ यह ८ विद्वान् ९ आत्मस्वरूप में + स्थितहुआ ९ तिसको अर्थात् तिस सुखको १० अनुभव करता है ११ आत्म + तत्व से १२ भी १३ नहीं १४ चलता १५ तिसकाल में योग की सिद्धि होतीहै + २१ +

**यंलब्ध्वाचापरंलाभंमन्यतेनाधिकंततः। यस्मिंस्थि-तोनदुःखेन गुरुणापिविचाल्यते + २२ +**

यम् १ लब्ध्वा २ अपरम् ३ अधिकम्४ लाभम् ५ न ६ मन्यते७ ततः ८ यस्मिन् ९ च १० स्थितः ११ गुरुणा १२ दुःखेन १३ अपि १४ न १५ विचाल्यते १६ + २२ + भ० + जिसको अर्थात् आत्माको १ प्राप्त होकर२ अपर ३ अधिक ४ लाभ ५ नहीं ६ मानता है ७ तिससे अर्थात् आत्माके लाभ से ८ और जिसमें अर्थात् आत्मा में ९। १० स्थितहुआ ११ बड़े १२ दुःख करके १३ भी १४ नहीं १५ विचलता है १६ + २२ +

**तंविद्याद्दुःखसंयोग वियोगंयोगसंज्ञितम्। सनिश्च-येनयोक्तव्योयोगोऽनिर्विण्णचेतसा + २३ +**

तम् १ योगसंज्ञितम् २ विद्याद् ३ दुःख संयोगवियोगम् ४ सः ५ योगः ६ अनिर्विण्णचेतसा ७ निश्चयेन ८ योक्तव्यः ९ + २३ + भ० उ० + पिछले तीन मंत्रों में जो आत्मा की अवस्था विशेष कही + तिस को १ योगसंज्ञित २ जान तू ३ अर्थात् योग है संज्ञा जिसकी तात्पर्य जिस अवस्था विशेष का योग नाम है उसी को तू योग जान पिछले तीन मंत्रों

में जो आत्मा की अवस्था विशेष कही उसी का नाम योग है कैसा है वह योग + दुःख के संयोग का बियोग है जिसमें अर्थात् दुःख और विषय सम्बन्धी सुख जहां कोई नहीं केवल निरतिशय आनन्द है बिषय संबंध सुख भी विद्वान् की दृष्टि में दुःखों का मूल है क्योंकि अतिशय वाला सुख दुःख रूप है इस जगह योग शब्द को विपरीत लक्षण समझना क्योंकि इस जगह वियोग का नाम जो योगसंज्ञित है यह विपरीत अलंकार कहलाता है जैसे सुन्दर को बे सुन्दर कहना + सो ५ योग ६ अनिर्विण्ण चित्त करके ७ शास्त्र आचार्योंसे + निश्चय करके ८ अनुष्ठान करना योग्य है ३ अर्थात् आत्मा में तत्पर होना योग्य है + टी० + दुःख बुद्धि करके प्रयत्न की जो शिथिलता उसको छोड़कर अर्थात् चित्त में यही नहीं चिंतवन करना कि इसमें तो दुःख प्रतीत होता है पीछे का आनन्द फल किसने देखा है ऐसा समझकर चित्तको कच्चा न करै बारम्बार उत्साह धीरजकरै + २३ +

**संकल्पप्रभवान्कामांस्त्यक्त्वासर्वानशेषतः । मनसैवेन्द्रियग्रामंविनियम्यसमन्ततः + २४ + शनैःशनैरुपरमेद्बुद्ध्याधृतिगृहीतया । आत्मसंस्थंमनःकृत्वानकिंचिदपिचिन्तयेत् + २५ +**

संकल्प प्रभवान् १ कामान् २ सर्वान् ३ अशेषतः ४ त्यक्त्वा ५ मनसः ६ एव ७ समन्ततः ८ इन्द्रियग्रामं ९ नियम्य १० +२४+ शनैः १ शनैः २ उपरमेद् ३ धृतिगृहीतया ४ बुद्ध्या ५ मनः ६ आत्मसंस्थम् ७ कृत्वा ८ किंचित् ९ अपि १० न ११ चिन्तयेत् १२ + २५ + अ०+संकल्प से उत्पन्नहोती हैं १ योग की वैरी जो + कामना २ तिन + सबको ३ समूल ४ त्यागकरके ५ विवेक युक्त + मन करके ६ निश्चय ७ सब तरफ़ से ८ इन्द्रियों के समूह को ९ रोककर १० + २४ + सहज १ सहज २ अर्थात् अभ्यास क्रम करके संसार से + उपराम हो ३ अर्थात् देखने सुनने बोलने खाने सोने आदि क्रियाओं से मनको शनैः शनैः हटाकर आत्मामें दिन दिन प्रति विशेष लगाना योग्य है + धीरज के सहित ४ बुद्धि करके ५ अर्थात् धीरज करके वश में करीहुई जो बुद्धि तिस करके ५ मनको ६ आत्मामें भले प्रकार स्थित ७ करके ८ अर्थात् यह सब आत्माही हैं आत्मामें पृथक् कुछ भी नहीं इसप्रकार मनको

आत्माकार करके ८ कुछ ६ भी १० न ११ चिंतवन करे १२ यही योग की परम अवधि है + टी०+ चौबीसवें मंत्र को + चित्तसे किंचित्मात्र भी चिंतवन किया और कामना उत्पन्न हुई इसवास्ते विषयोंका चिंतवन करनाही अनर्थ का हेतु है १ सर्वान् अशेषतः इन दोनों पदों के अर्थ में कुछ भेद नहीं प्रतीत होता दो पद के कहनेसे तात्पर्य श्रीमहाराज का यह है कि इसलोक परलोक की कामना की गन्धमात्र भी न रहने पावे कामसे अन्तःकरण को निर्लेप करदेना योग्य है ३। ४ शब्दादि विषयों से ८ सब इन्द्रियों को ६ निरोधकरके १० पूर्वोक्त योगका अनुष्ठान करना योग्य है + २५ +

## यतोयतोनिश्चरतिमनश्चंचलमस्थिरम्। ततस्ततोनियम्यैतदात्मन्येववशंनयेत् +२६+

अस्थिरम् १ चंचलम् २ मनः ३ यतः ४ यतः ५ निश्चरति ६ ततः ७ ततः ८ नियम्य ६ एतद् १० आत्मनि ११ एव १२ वशम् १३ नयेत् १४ + २६ + अ० उ० + विचारने से भी जो कदाचित् रजोगुण के वश से मन न ठहरे आत्मामें तो फिर प्रत्याहार करके ठहराना योग्य है सोई कहते हैं + अस्थिर १ चंचल २ मन ३ जिस ४ जिस ५ विषय में + जावे ६ तहां ७ तहां से ८ रोककर ६ इसको १० अर्थात् मनको १० आत्मा में ११ ही १२ वश १३ करे १४ अर्थात् आत्मा में ही स्थिर करे + टी० + मन का स्वभाव ही यह है कि एक जगह नहीं ठहरता सदा का चंचल है १। २ इसप्रकार अभ्यास करने से यह मन अस्थिर स्थिर हो जाता है आत्मा में इस वास्ते मन पर सदा दृष्टि रखनी योग्य है + २६ +

## प्रशान्तमनसंह्येनंयोगिनंसुखमुत्तमम्। उपैतिशान्तरजसंब्रह्मभूतमकल्मषम् + २७ +

एनम् १ योगिनम् २ हि ३ उत्तमम् ४ सुखम् ५ उपैति ६ शान्तरजसम् ७ प्रशान्तमनसम् ८ ब्रह्मभूतम् ६ अकल्मषम् १० + २७ + अ० उ० + इस प्रकार अभ्यास करने से रजोगुण का नाश होता है रजोगुण का नाश होने से योग का फल आत्म सुख प्राप्त होता है यह कहते हैं + इस योगी को १। २ ही ३ उत्तम ४ सुख ५ प्राप्त होता है ६ कैसा है यह योगी + शान्त होगया है रजो गुण जिसका ७

भले प्रकार शान्त होगया है मन जिसका ८ जीवन्मुक्त ९ निष्पाप अर्थात् धर्म अधर्म करके वर्जित १० ऐसे योगी को निरतिशय सुख प्राप्त होता है + २७ +

**युंजन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः। सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते + २८ +**

एवम् १ योगी २ सदा ३ आत्मानम् ४ युंजन् ५ अत्यन्तम् ६ सुखम् ७ अश्नुते ८ विगत कल्मषः ९ सुखेन १० ब्रह्म संस्पर्शम् ११ + २८+ अ०+ इसप्रकार १ योगी २ सदा ३ मनको ४ वशकरताहुआ ५ अत्यन्त ६ सुखको ७ अर्थात् निरतिशय सुखको ७ प्राप्तहोता है ८ कैसा है वह योगी + दूर गये हैं पाप जिसके ९ सो वहाँफिर कैसे सुखको प्राप्तहोताहै अर्थात् कैसा है वह सुख + अनायास करके १० ब्रह्मजीव का स्पर्श है जिसमें ११ अर्थात् जीवब्रह्मकी एकता को प्राप्तहोताहै जिसको अखण्डानन्द साक्षात्कार कहते हैं तात्पर्य जीवन्मुक्त होजाता है जीवते हुयेही उस नित्य अखण्डानन्द का अनुभव करता है + २८ +

**सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि। ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः + २९ +**

योगयुक्तात्मा १ सर्वत्र २ समदर्शनः ३ आत्मानम् ४ सर्वभूतस्थम् ५ सर्वभूतानि ६ च ७ आत्मनि ८ ईक्षते ९ + २९ + अ० उ० + अब इस योग का फल जीवब्रह्म की एकता को दिखाते हैं + योग करके युक्त है अन्तःकरण जिसका अर्थात् समाहित अन्तःकरण वाला १ सब जगह २ सम देखने वाला ३ अपनी + आत्मा को ४ सबभूतों में स्थित ५ और सब भूतों को ६ । ७ अपनी + आत्मामें देखताहै ९ टी० + ब्रह्माजी से लेकर चींटी पर्यन्त आत्माकी एकता देखता है ६ सब विषयभूतों में ब्रह्माजी से लेकर स्थावर पर्यन्त निर्विशेष ब्रह्म और आत्माकी एकता का ज्ञान है जिस के सो सर्वत्र सम देखने वाला है + २९ +

**यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति। तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति + ३० +**

यः १ माम् २ सर्वत्र ३ पश्यति ४ सर्वम् ५ च ६ मयि ७ पश्यति ८ तस्य ९ अहम् १० न ११ प्रणश्यामि १२ स १३ च १४ मे १५ न १६ प्र-

पश्यति १७ + ३० + भा० उ०+जीवब्रह्म की एकता देखने का फल कहते हैं यही मुख्य उपासना परमेश्वर की है + जो १ मुझ सच्चिदानन्द परमेश्वर को २ सर्वत्र ३ देखता है ४ और सबको ५ । ६ मुझमें ७ देखता है ८ अर्थात् मुझ सबके आत्मा को सब भूतों में और सब भूतों को मुझ सब भूतोंके आत्मामें जो देखता है + तिस को ६ मैं १० नहीं ११ परोक्षहूं १२ अर्थात् जो ऐसे समझता है उसीको मैं साक्षात्कार हूं वहीमेरा दर्शन करता है आत्मासे पृथक् मैं नहीं + और सो १३ । १४ विद्वान् १४ मुझको १५ नहीं १६ परोक्ष है१७ अर्थात् वहमेरी आत्मा है वही मुझ को सदापरोक्ष है इसीहेतुसे ब्रह्मका जानने वाला ब्रह्म कहलाता है मुझ में और ज्ञानी में किंचित् भेद नहीं + ३० +

**सर्वभूतस्थितंयोमां भजत्येकत्वमास्थितः । सर्वथा वर्त्तमानोऽपि सयोगीमयिवर्त्तते + ३१ +**

एकत्वम् १ आस्थितः २ यः ३ माम् ४ सर्वभूतस्थितम्५भजति ६ सः ७ योगी ८ सर्वथा ६ वर्तमानः १० अपि ११ मयि १२ वर्त्तते १३ + ३१ + भा० उ० + पूर्वमंत्रोक्त ज्ञानीविधि निषेध का दास नहीं अर्थात् परतंत्र नहीं स्वतंत्र है यह कहते हैं + ब्रह्मके साथ + एकता को १ प्राप्तहुआ २ अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप अपने प्रत्येक आत्मा को पूर्ण ब्रह्म जानता हुआ ७ जो ३ मुझ सच्चिदानन्द सब भूतों में स्थित को ४ । ५ भजता है अर्थात् यह सबवासुदेव है ऐसे जो समझता है + सो ७ योगी ज्ञानी ८ सर्वथा ६ वर्तमान १० भी ११ मुझ सच्चिदानन्द स्वरूप में वर्तता है १२ । १३ टी० + विधि निषेध को उलंघ कर भी जो विद्वान् का व्यवहार किसी को प्रतीत होता हो तो भी विद्वान् वेदों की साक्षी से ब्रह्ममेंही विहार करता है विधि निषेध अज्ञानियोंके वास्ते है विद्वानों का व्यवहार प्रातीतिक विदेह मुक्तिमें क्षति करनेवाला नहीं यह बात आनन्दामृतवर्षिणी के तृतीय अध्याय में भले प्रकार स्पष्ट की गई है द्रष्टव्यम् + ३१ +

**आत्मौपम्येनसर्वत्र समंपश्यतियोऽर्जुन। सुखंवायदिवादुःखं सयोगीपरमोमतः + ३२ +**

अर्जुन १ यः २ आत्मौपम्येन ३ सर्वत्र ४ समम् ५ पश्यति ६ सुखम् ७ वा ८ यदि ६ वा १० दुःखं ११ सः १२ योगी १३ परमः १४ मतः १५+

३२ + अ० ठ० + ज्ञानियों में ऐसाज्ञानी श्रेष्ठ है + हे अर्जुन १ जो २ विद्वान् २ आत्माकी उपमा करके ३ सर्वत्र ४ सम ५ देखताहै ६ सुखको ७ भी ८ और ६ दुःखको भी १०।११ सो १२ विद्वान् १३ श्रेष्ठ १४ मानाहै १५ महात्मा पुरुषोंने अर्थात् महात्मा ऐसेविद्वान् को उत्तममानते हैं + टी० + जैसे इष्ट अनिष्ट की प्राप्ति में मुझको दुःख सुख होताहै ऐसेही सब को होता है इसवास्ते जहाँ तक होसके किसी को शरीर मन बाणी से दुःखनहीं देना सुखदेना योग्यहै आपको सुखतो शूकर कूकर भी चाहते प्रयत्न करते हैं दूसरे को सुख देना परोपकार करना सज्जनों का कामहै नहीं तो पशुपक्षी मनुष्योंमें क्या विशेषता हुई अथवा ऐसेही सब जीव हैं आत्मा से दूसरे को नीच समझना नीचोंका कामहै आत्म दृष्टिकरके और देह दृष्टिकरके भी सम देखना योग्यहै क्योंकि देह सबके अनित्य है और आत्मा सब का नित्यहै यहविचार परमार्थकाहै व्यवहारमें परमार्थ नहीं मिलसक्ता + ३२ +

**अर्जुनउवाच। योऽयंयोगस्त्वयाप्रोक्तःसाम्येनमधुसूदन।एतस्याहंनपश्यामिचंचलत्वात्स्थितिंस्थिराम्३३**

मधुसूदन १ अयम् २ यः३ योगः ४ साम्येन ५ त्वया ६ प्रोक्तः ७ एतस्य ८ स्थिराम् ६ स्थितिम् १० अहम् ११ न १२ पश्यामि १३ चंचलत्वात् १४ + ३३ + अ० ठ० + श्रीभगवान् का यह उपदेश सुनकर अर्जुनने विचार किया कि श्रीमहाराज जो कहते हैं वह तो सब सत्य है परन्तु मन लय विक्षेप रहित होकर आत्मा कार समदीर्घ काल स्थित रहे यहमेरी कम समझ से मुझको असम्भाव प्रतीत होताहै इसी हेतु से कहेहुये लक्षण श्रीमहाराज के में असम्भाव दोष मानता हुआ अर्जुन प्रश्न करताहै जिज्ञासा करके दो श्लोकों में + हे कृष्णचन्द्र १ यह२ जो ३ योग ४ समता करके ५ आपने ६ कहा ७ इसकी ८ दीर्घकाल ६ स्थिति १० में ११ नहीं १२ देखता हूं १३ अर्थात् क्षण दो क्षण घड़ी दो घड़ी मन लय विक्षेप रहित होकर समताको प्राप्त होजाय यह तो सम्भाव होसक्ता है परंतु सदा अथवा दिन रात्रि में पांच चार पहर मन समआत्माकाररहै यह मेरी कम समझ से असम्भाव है क्योंकि मनको + चंचल होने से १४ अर्थात् मन तो चंचलहै वह कैसे ठहर सक्ता है + ३३ +

**चंचलंहिमनःकृष्णप्रमाथिबलवद्दृढं। तस्याहंनिग्रहंमन्येवायोरिवसुदुष्करम् + ३४ +**

अ० उ० + सिवाय चंचलहोनेके जो मनमें और भी दोषहैं उनको भी प्रकटकरता है अर्जुन + हे भगवन् १ मन २ चंचल ३ है यह तो प्रसिद्ध हीहै ४ सिवाय इसके जो इसमें और भी दोष हैं उनको सुनिये प्रथम तो चंचल दूसरे + प्रथम न स्वभाव वाला अर्थात् शरीर इन्द्रियों को विक्षेप करने वाला और परवश करनेवाला है ५ तीसरे यह कि ५ बलवाला ६ ऐसाहै विवेकी जनों के बशमें भीनहीं रहता अर्थात् जो भले प्रकार शोचते समझते भी हैं कि इसकाम करने में यह यह दोष और यह यह दुःख हैं तो भी मन के बशहोकर उसीकाम में प्रवृत्त होतेहैं चौथे यह कि अनादि काल काल का शब्दादि विषयों की बासना में ऐसा+दृढ़ ७ बँधा हुआ है कि अनेक कर्म उपासनादि करते भी हैं तो भी विषयों से पृथक् नहीं होताहै परमेश्वर आपकी कृपासे जो होजाय वह तो सब सत्य है परंतु मैं तो मनका निरोध पवनवत् अति कठिन समझताहूं यह अभिप्राय है इसीको अक्षर में योजना करते हैं + तिस्का ८ अर्थात् मनका नियह ९ वायु १० वत् ११ अति कठिन १२ मैं १३ मानता हूं १४ जैसे पवन का रोकना विषयों से कठिन प्रतीत होता है + ३४ +

**श्रीभगवानुवाच। असंशयंमहाबाहोमनोदुर्निग्रहंचलम्। अभ्यासेनतुकौन्तेयवैराग्येणचगृह्यते+३५+**

महाबाहो १ असंशयम् २ मनः ३ दुर्निग्रहम् ४ चलम् ५ कौन्तय ६ अभ्यासेन ७ तु ८ वैराग्येण ९ च १० गृह्यते ११ + ३५+ अ० उ०+ अर्जुन ने जो मनकी गति कही उसको अंगीकार करके श्रीभगवान् मनके निरोध का उपाय बताते हैं + हे अर्जुन १ पीछे दो मंत्रों में जो तुमने मनकी गति कही सो सत्य है + नहीं है संशय उसमें २ मन ३ दुर्निग्रह ४ है अर्थात् मनका रोकना कठिन है और कैसा है यह मन कि + चलता ही रहता है कभीस्थिर नहीं होता ५ परंतु + हे अर्जुन ६ अभ्यास करके ७ तो ८ और वैराग्य करके ९ । १० बश में होसक्ता है ११ टी०+ मन की दो गति हैं लय और विक्षेप लय अभ्यास करके विक्षेप वैराग्य करके दूरहोता है + विजातीय का तिरस्कार करके सजातीय का प्रवाह करना अर्थात् वृत्ति को आत्माकार करना इसको अभ्यास कहते हैं और विषयों में दोष दृष्टिकरनी इसको वैराग्य कहते हैं और भी वैराग्य के लक्षण जहाँ तहाँ मोक्षशास्त्र में प्रसिद्ध हैं वश करने के मुख्य ये दोही उपाय हैं इनको छोड़ जो पृथक् यत्न करतेहैं वे वृथा मृगतृष्णावत्

भ्रमते हैं यह अभ्यास वैराग्य तो हो नहीं सक्ता वृथा साधु महात्मा महापुरुषों में वाक्यवादी माथा मारते हैं अर्थात् बारम्बार यही बूझते हैं कि महाराज मनका निरोध जैसेहो ऐसी कोईरीति कहो हज़ारोंबेर मनके निरोधका उपाय वैराग्य को सुनते हैं तोभी माथा मारतेही रहते हैं कभी क्षणमात्र अनुष्ठान करने को तो प्रसंग है अनुष्ठान करनेवालेको यह यादरहे कि वैराग्य और अभ्यास में वैराग्य प्रथम पीछे अभ्यास हो सक्ता है पाठ क्रम से अर्थ क्रम बलवान् होता है + ३५ +

**असंयतात्मनायोगोदुष्प्रापइतिमेमतिः। वश्यात्मनातुयततासक्योऽवाप्तुमुपायतः + ३६ +**

असंयतात्मना १ योगम् २ दुःप्राप ३ इति ४ मे ५ मतिः ६ वश्यात्मना ७ यतता ८ तु ९ उपायतः १० अवाप्तुम् ११ शक्यः १२ + ३६ + अ० + नहीं भलेप्रकार जीता है मन जिसने १ उसको + योग २ प्राप्त होना कठिन है ३ यह ४ मेरी ५ समझ ६ है अर्थात् यह मेरा निश्चय किया हुआ है और + वश वर्त्ति है मन जिसका अर्थात् मन जिसके वश में है उस ७ यत्न करनेवाले को ८ तो ९ वैराग्य और अभ्यास इनहीं दोनों + उपाय से १० योग + प्राप्त होनेको ११ शक्य है अर्थात् प्राप्त होसक्ता है १२ टी० + जीव ब्रह्मकी एकता का नाम योगहै २ तात्पर्य वैराग्य अभ्यास करके जिसने मन वश किया है उसको नित्य अखण्डानन्द की प्राप्ति होती है विना वैराग्य अभ्यास के कोई आशा आनन्दछाया की भी न रक्खे + ३६ +

**अर्जुनउवाच। अयतिःश्रद्धयोपेतोयोगाच्चलितमानसः। अप्राप्ययोगसंसिद्धिंकांगतिंकृष्णगच्छति + ३७ +**

श्रद्धया १ उपेतः २ योगात् ३ चलितमानसः ४ अयतिः ५ योगसंसिद्धिम् ६ अप्राप्य ७ काम् ८ गतिम् ९ गच्छति १० कृष्ण ११ + ३७ + अ० उ० + शास्त्रकी विधिकोसुन समझकर वहिरङ्ग नित्यादिकर्म्मों को त्यागकरके श्रद्धा पूर्व्वक जो कोई मुमुक्षु ज्ञानमार्गमें प्रवृत्तहो अर्थात् वेदान्त शास्त्र के श्रवणादिमें तत्पर हो और प्रारब्धवशात् वा किसी प्रतिबंधसे ज्ञान प्राप्त नहो और वैराग्य अभ्यासमें भी शिथिल होजाय और मनविषयों की तरफ़ लगजाय ऐसे पुरुष की क्या गतिहोगी क्योंकि कर्मों के त्याग देने से तो उसको स्वर्गादिकी प्राप्ति न होगी और ज्ञान न होने

से वह मुक्त न होगा और श्रद्धापूर्व्वक ज्ञानयोग में प्रवृत्त होनेसे उसको गति होनी न चाहिये क्योंकि ब्रह्मविद्या के ९ क्षण मात्र श्रवण करने का अत्यन्त माहात्म्यहै यह संशय करके अर्जुन प्रश्न करता है + ज्ञानयोग में + श्रद्धा करके १ युक्त २ अर्थात् ज्ञानयोग में श्रद्धावान् और किसी प्रतिबन्ध करके अर्थात किसी हेतु करके+ज्ञानयोग से ३ चलित होगया है मन जिसका ४ अर्थात् श्रवणादि से हटकर विषयों में लगगया है मन जिसका + नहीं यत्न किया है ५ भले प्रकार वैराग्य अभ्यास में जिसने अर्थात् मन्द वैराग्य शिथिल अभ्यास रहा है जो सो मुमुक्षु + योग की सिद्धि को अर्थात् जीव ब्रह्मकी एकता के ज्ञान को ६ नहीं प्राप्त होकर ७ किस ८ गतिको ९ प्राप्त होता है १० हे कृष्णचन्द्र महाराज ११ + ३७ +

**कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिवनश्यति। अप्रति-ष्ठोमहाबाहोविमूढोब्रह्मणःपथि + ३८ +**

उभय विभ्रष्टः १ छिन्नाभ्रम् २ इव ३ कच्चित् ४ नश्यति ५ न ६ महा-बाहो ७ ब्रह्मणः ८ पथि ९ विमूढः १० अप्रतिष्ठः ११ + ३८ + अ०+ कर्म मार्ग और ज्ञान मार्ग में + उभयभ्रष्ट हुआ १ छिन्नाभ्र २ वत् ३ अर्थात् बादल के टूट की तरह+क्या ४ नाश होजाता है ५ क्यानहीं + ६ नाशहोता + हे कृष्णचन्द्र ७ कैसा है वह अयति + ब्रह्म के ८ मार्ग में ९ बिमूढ़ हुआ १० निराश्रय ११ है अर्थात् उसको न कर्म योग का आश्रा रहा न ज्ञान योग का +टी०+जैसे बादलका टूक एक बादल में से पृथक् होकर पवन के बादल दूसरे बादल की ओर जाता हुआ बीच में ही नाश होजाता है २ ब्रह्म की प्राप्ति के उपाय वैराग्य अभ्यास में ८। ९ शिथिल हुआ अर्थात् मन्द बुद्धि हुआ १० + ३८ +

**एतन्मेसंशयंकृष्णछेत्तुमर्हस्यशेषतः। त्वदन्यःसंश-यस्यास्यछेत्तानह्युपपद्यते + ३९ +**

कृष्ण १ अशेषतः २ एतद् ३ मे ४ संशयम् ५ छेत्तुम् ६ हि ७ अर्हसि ८ त्वदन्यः ९ अस्य १० संशयस्य ११ छेत्ता १२ न १३ उपपद्यते १४+३९+ अ० + हे कृष्णचन्द्र १ समस्त २ इस ३ मेरे ४ संशय ५ छेदनकरने को ६ आप + ही ७ योग्यहो ८ आपसे पृथक् ९ इस १० संशय का ११ दूर करने वाला १२ नाश करनेवाला १२ छेदनकरने वाला १२ नहीं १३ प्र-

तीत होता है १४ कोई मुझको आप सर्वज्ञ हैं यह संशय आपही नाश कर सक्ते हैं + ३६ +

श्रीभगवानुवाच। पार्थनैवेहनामुत्रविनाशस्तस्यविद्यते। नहिकल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिंतातगच्छति+४०+

पार्थ १ तस्य २ विनाशः ३ न ४ एव ५ इह ६ न ७ अमुत्र ८ विद्यते ९ कल्याणकृत् १० कश्चित् ११ हि १२ दुर्गतिम् १३ न १४ गच्छति १५ तात १६ + ४० + भा० उ०+हे अर्जुन १ तिसका २ अर्थात् ज्ञाननिष्ठ मुमुक्षु का २ नाश ३ न ४ तो ५ इसलोक में ६ न ७ परलोक में ८ होता है ९ अर्थात् पूर्व जन्म से नीच जन्मकी प्राप्ति नहीं होती तात्पर्य उसकी हानि क्षति न इसलोक में न परलोकमें क्योंकि + शुभ कर्म्म करनेवाला १० कोई ११ भी १२ दुर्गति को १३ नहीं १४ प्राप्त होता १५ हे तात १६ और यह तो बहुत उत्तम शुभ करने वाला है क्योंकि श्रद्धा पूर्बक जो ज्ञान योग में प्रवृत्तहुआ है तात्पर्य श्रद्धा पूर्व्बक जो ज्ञान योग में प्रवृत्त होता है और किसी प्रतिबन्ध से जो उसको ज्ञान प्राप्त न हो अथवा मुमुक्षुही मन्द प्रयत्न रहे अर्थात् आत्मा की प्राप्ति के लिये भले प्रकार प्रयत्न न करे और विना ज्ञानके उसका देह पात होजाय तो उसको विद्वान् लोग बुरा नहीं कहते न परलोक में उसको नरक की प्राप्ति होती है न पूर्ब जन्म से हीन जन्म को प्राप्ति होती है जो उस को गतिहोती है सो अगले मंत्रों में कहते हैं इसहेतु से इस मंत्र में यह कहा कि उसका इस लोक परलोक में नाश नहीं होता + ४० +

प्राप्यपुण्यकृतांल्लोकानुषित्वाशाश्वतीःसमाः।शुचीनांश्रीमतांगेहेयोगभ्रष्टोऽभिजायते + ४१ +

पुण्यकृतान् १ लोकान् २ प्राप्य ३ शाश्वतीः ४ समाः ५ उषित्वा ६ शुचीनाम् ७ श्रीमताम् ८ गेहे ९ योगभ्रष्टः १० अभिजायते ११ + ४१+ भा० उ० + जो योग भ्रष्ट दुर्गतिको नहीं प्राप्त होता तो फिर किस-गतिको प्राप्त होताहै इस अपेक्षा में कहते हैं+ पुण्यकारी पुरुषों के १ लोकों को २ प्राप्तहोकर ३ अर्थात् अश्वमेधादि यज्ञोंके करनेवाले जिन लोकोंमें जाते हैं लाखों वर्ष वहां ४।५ बसकर + पवित्र ७ धन वालों के ८ घरमें ९ योग भ्रष्ट १० जन्म लेताहै ११ तात्पर्य वेदोक्त मार्ग में चलनेवाले श्रीमानों के कुलमें योग भ्रष्ट उत्पन्न होता है कुमार्गियों के कुपात्र उत्पन्न होते हैं + ४१ +

**अथवायोगिनामेवकुलेभवतिधीमताम्। एतद्धिदुर्लभतरंलोकेजन्मयदीदृशम् + ४२ +**

अथवा १ धीमताम् २ योगिनाम् ३ एव ४ कुले ५ भवति ६ लोके ७ यत् ८ ईदृशम् ६ जन्म १० एतद् ११ हि १२ दुर्लभतरम् १३ + ४२ + अ० उ० + ब्रह्म को परोक्ष समझ कर जिसने थोड़ाही कभी कभी ब्रह्म विचार किया था उसकी गतितो पिछले मंत्रमें कही + अब पक्षान्तर उसकी गति कहते हैं अथवा यह शब्द पक्षान्तर में भी आताहै १ तात्पर्य अब इस मंत्र में उसकी गति कहते हैं कि जिसने बहुत ब्रह्म विचार किया था और अपरोक्ष ज्ञानहोने में कुछ थोड़ाही काल रहा था सो योग भ्रष्ट + ज्ञानवान् २ योगियों के ३ ही ४ कुलमें ५ उत्पन्न + होता है ६ इस + लोकमें ७ जो ८ ऐसा ६ जन्म १० यह ११ ही १२ बहुत दुर्लभ है १३ क्योंकि ज्ञानियों के कुलमें जन्महोना मोक्षका हेतु है कर्मकांडी धनवालों के कुलमें नानाप्रकार का विक्षेप होने से उसी जन्म में मोक्ष हो जाना कठिन प्रतीतहोता है + नास्य कुले ब्रह्मविद्भवति इति श्रुतिः + यहां वेद प्रमाण है कि ज्ञानी के कुल में अज्ञानी नहीं उत्पन्न होता अर्थात् ज्ञानी होजाता है उत्पन्न होकर + तात्पर्य इस लोक में विचार करना आत्मतत्त्वका यही दुर्लभ है भोगतो सब लोकों में बराबर हैं अर्थात् पशुपक्षी आदमी देवतादि के भी भोगदुःख के देने में सब सम हैं केवल आकृतिका भेद है जो राजाको रानीमें आनन्द वही कङ्गाल को अपनी स्त्रीमें और कूकरको कूकरीमें वही आनन्द है खाना सोना मैथुन भय आदि सब जीवन में समहैं मनुष्य देहमें एक ब्रह्म ज्ञानही विशेष है जिसको ब्रह्म ज्ञाननहीं सो पशु पक्षियों से भी नीच है क्योंकि पशु पक्षियों का तो अज्ञान एक धर्म है उनको बुरा कहना नहीं बनता इस मनुष्य निर्भागने मनुष्य देहपाकर जो ब्रह्म ज्ञान न सम्पादनकिया तो फिर क्या अलौकिक पदार्थ सम्पादन किया + आहार निद्रा भय मैथुनंच सामान्यमेतत्पशुमानवानाम् + ज्ञानंनराणामधिको विशेषः ज्ञानेनहीनः पशुभिः समानः + ४२ +

**तत्रतंबुद्धिसंयोगंलभतेपौर्वदैहिकम् । यततेचततोभूयःसंसिद्धौकुरुनन्दन + ४३ +**

तम् १ बुद्धियोगम् २ पौर्वदैहिकम् ३ तत्र ४ लभते ५ कुरुनन्दन ६

ततः ७ भूयः ८ संसिद्धौ ९ च १० यतते ११ + ४३ + अ०+तिस १ ज्ञान योगको २ पूर्वदेहमें जिसके जानने की इच्छाकरके अभ्यास करता था उसीको ३ श्रीमानों के कुलमें अर्थात् कर्म्मकाण्डियों के कुलमें अथवा ज्ञानियों के कुलमें ४ प्राप्त होता है ५ हे अर्जुन ६ फिर ७ अधिक ८ मोक्षमें ९ ही १० अर्थात् मुक्तिके वास्ते ही यत्न करता है + ४३ +

पूर्वाभ्यासेनतेनैव ह्रियतेह्यवशोपिसः। जिज्ञासुरपियोगस्य शब्दब्रह्मातिवर्त्तते +४४+

सः १ अवशः २ अपि ३ हि ४ तेन ५ एव ६ पूर्वाभ्यासेन ७ ह्रियते ८ योगस्य ९ जिज्ञासुः १० अपि ११ शब्दब्रह्म १२ अतिवर्तते १३ + ४४ + अ० उ० + फिर अधिक यत्न करने में कारण यह है+सो १ योग भ्रष्ट कर्मकाण्डियों के कुलमें अथवा ज्ञानियों के कुलमें जन्म लेकर दैवयोग से + परवश २ भी ३ होजावे अर्थात् माता पिता पुत्र मित्र धनादि में आसक्त होजावे अथवा भेदवादियों के पंजे में आजावे + तो भी ४ सोई ५। ६ पूर्वाभ्यास ७ कि जो अभ्यास करता करता योग भ्रष्ट हुआ था वही + विषयों से विमुख करके ब्रह्मविचार के सन्मुख करदेता है ८ योग भ्रष्ट को + हे अर्जुन ब्रह्मविचार का ऐसाही माहात्म्य है सो सुन + ज्ञानयोग का ९ जिज्ञासु १० भी ११ शब्द ब्रह्म को १२ उलंघ कर बर्तता है १३ अर्थात् कर्म्मकाण्डको छोड़ ब्रह्मनिष्ठ होजाता है ब्रह्म बिचार करने वाला ब्रह्मनिष्ठ होजाय तो इसमें क्या कहना है जो अन्त-ज्ञान अवस्था में क्षणमात्रभी यह चिंतवन करता है कि मैं ब्रह्महूं सो बिचार महापातकों को दूर करदेता है जैसे सूर्यतम को और जो समझ कर बरसों चिंतवन करते हैं उनका तो क्या कहना है अर्थात् उनकी सद्गति मोक्ष में किंचित् भी सन्देह नहीं + क्षणं ब्रह्माहमस्मीति यःकुर्य्यादात्मचिन्तनम्। तन्महापातकं हन्ति तमःसूर्य्योदये यथा+ ४४ +

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगीसंशुद्धकिल्बिषः। अनेकजन्मसंसिद्धस्ततोयातिपरांगतिम् + ४५ +

यतमानः १ योगी २ तु ३ प्रयत्नाद् ४ अनेकजन्मसंसिद्धः ५ ततः ६ पराम् ७ गतिम् ८ याति ९ + ४५ + अ० उ० + योग भ्रष्ट तीसरेजन्म में तो अवश्यही मुक्तहोगा इसमें सन्देह नहीं यह कहते हैं अर्थात् पिलेकहे हुये अर्थको फिर कैमुतिक न्याय करके दृढ़ करते हैं + जब कि

जिज्ञासु परमपदको प्राप्त होता है फिर + प्रयत्न करने वाला १ योगी २ जो ३ प्रयत्नमें ४ निष्पाप होकर ४ अनेक जन्मों में अनेकप्रकार सिद्धहोकर अर्थात् ब्रह्मवित् होकर ५ फिर ६ परम ७ गति को ८ प्राप्त होता है ९ इसमें क्या कहना है तात्पर्य्य ब्रह्मका जिज्ञासुभी योग भ्रष्ट मन्द बैराग्य दूसरेही जन्म में सद्गति को प्राप्त होता है और प्रयत्न करने वाला विद्वान् ज्ञानवान् होकर दूसरे जन्म में अथवा उसी जन्म में मोक्ष को प्राप्त हो तो फिर इसमें क्या कहना है प्रथम तो योग भ्रष्ट दूसरेही जन्म में मोक्ष होगा और अनेक जन्ममें अर्थात् तीसरे जन्म में मुक्त हो तो इसमें क्या कहना है न एक अनेक इस प्रकार अनेक शब्दकाअर्थ दो या तीन होसक्ता है और अनेक जन्म का यह भी अर्थहै कि असंख्यात जन्मों से पुण्य करता जो चला आता है वह उन पुण्यों के प्रताप से निष्पाप ज्ञानवान् होकर पिछले जन्म में ब्रह्मनिष्ठ होकर वही योग भ्रष्ट सद्गति को प्राप्त हो तो इसमें क्या कहना है + ४५ +

**तपस्विभ्योऽधिकोयोगी ज्ञानिभ्योऽपिमतोऽधिकः।**
**कर्मिभ्यश्चाधिकोयोगीतस्माद्योगीभवाऽर्जुन + ४६ +**

योगी १ तपस्विभ्यः २ अधिकः ३ ज्ञानिभ्यः ४ अपि ५ अधिकः ६ मतः ७ कर्मिभ्यः ८ च ९ अधिकः १० + ४६ + अ० उ० + ब्रह्मज्ञान का साधन अष्टाङ्ग योग तप पंडिताई कर्मसे श्रेष्ठ है यह कहते हैं + योगी १ तपस्वी पुरुषों से २ श्रेष्ठ ३ है क्योंकि चांद्रायणादि व्रतोंका करना पंचाग्नि तपना शीतकाल में प्रातः काल स्नान करना आदि तप कहलाताहै यह वहिरंग साधन हैं + पंडितों से ४ भी ५ योगी + श्रेष्ठ ६ माना है ७ इस जगह ज्ञानी का अर्थ जो पंडित किया उसका तात्पर्य यह है कि बिना अनुष्ठान करने वाले जो केवल विद्यावान ही हैं अर्थात् केवल श्रोत्रिय हैं ब्रह्मनिष्ठ नहीं समझना क्योंकि अष्टांग योग ज्ञानका अंतरंग साधन है जैसे विद्या तप विचारादि साधन हैं + अग्नि होत्रादि कर्म करने वालों से ८ भी ९ योगी १० श्रेष्ठ ११ है क्योंकि यह भी साधनज्ञान का वहिरंग है + हे अर्जुन १२ तिस कारण से १३ योगी १४ हो अर्थात् धारणा ध्यानादिमें तत्पर हो क्योंकि यह ज्ञानका अंतरंग साधनहै + ४६ +

**योगिनामपिसर्वेषांमद्गतेनान्तरात्मना। श्रद्धावान्भजतेयोमांसमेयुक्ततमोमतः + ४७ +**

सर्वेषाम् १ योगिनाम् २ अपि ३ मद्गतेन ४ अन्तरात्मना ५ यः ६ श्रद्धावान् ७ माम् ८ भजते ९ सः १० मे ११ युक्ततमः १२ मतः १३+४७+ अ० उ०+ ज्ञानका उत्तम साधन अंतरंग भगवद्भक्ति है सबकर्म योगियों में भगवद्भक्त श्रेष्ठहै सोई कहते हैं + सब १ योगियोंके २ मध्य में + भी ३ मद्गत अन्तःकरण करके ४। ५ अर्थात् मुझवासुदेव में अन्तःकरण समाहित करके + जो ६ श्रद्धावान् ७ ब्रह्म का जिज्ञासु + मुझको ८ भजता है ९ अर्थात् अभेद उपासना करता है + सो १० मुझको ११ युक्ततम १२ सम्मत है १३अर्थात् वह सब योगियों से श्रेष्ठ है +४७+

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन-
सम्वादे आत्मसंयमयोगो नाम षष्ठोऽध्यायः +६+
स्वामी आनन्द गिरि कृत परमानन्द प्रकाशिका टीका
में छठां अध्याय समाप्त हुआ ॥ ६ ॥



---

## सातवें अध्याय का प्रारम्भ हुआ ॥

उ०+बीचके छः अध्यायों में सात से बारह तक उपासना करने के योग्य भगवत् का स्वरूप विशेष निरूपण किया गया है उपासना करनेकेलिये जिस परमेश्वर की भक्ति करनी उस का स्वरूप भी तो पहले समझलेना उचित है जो अपना स्वरूप श्री कृष्ण चन्द्र महाराज ने समस्त गीता शास्त्र में और विशेष बीच के छः अध्यायों में निरूपण किया है वह स्वरूप परमेश्वर का समझना तात्पर्य यह कि पहले परमेश्वर का स्व-रूप समझ कर फिर उनकी भक्ति करनी योग्य है बारम्बार परमेश्वर यह कहते हैं कि मुझ में मन लगा मेरा भजन कर माम् मम अहम् इत्यादि प्रयोग अस्मत् शब्द के हैं जिस जगह यह प्रयोग हैं वहां ता-त्पर्य अस्मत् शब्द से है अस्मत् आत्मा को कहते हैं त्वम्, त्वाम्, ते इत्यादि युष्मत् के प्रयोग हैं अस्मत् शब्द के प्रयोग भगवत् विषय जो गीता शास्त्रमें हैं उनका तात्पर्य किसी जगह तो मायोपहित चैतन्य में है किसी जगह अविद्योपहित चैतन्य में किसी जगह शुद्ध चैतन्य में किसी जगह लीला बिग्रह मूर्त्ति में और किसी जगह सगुण ब्रह्म में ता-त्पर्य है सब जगह लीला बिग्रह मूर्त्ति का अर्थ नहीं समझना बहुत

जगह तो सोपाधिक निरुपाधिक का भेद हमने दिखा दिया है किसी किसी जगह स्पष्ट समझकर छोड़दिया वहां बिचार करलेना कि इस जगह तात्पर्य निरुपाधिक ब्रह्म में है अथवा सोपाधिक ब्रह्म में और यह भी बिचार लेना कि इस जगह जो अस्मत् शब्दका प्रयोग है इसका तात्पर्य तत्पदार्थमें है अथवा त्वम् पदार्थ में है अथवा दोनों की एकता में है तब भगवत् का स्वरूप समझ में आवेगा नहीं तो यह अनर्थ नहीं समझ लेना कि श्री कृष्णचन्द्र महाराज श्यामसुन्दर स्वरूप से सिवाय श्री सदा शिव शक्ति आदि देवता जीव हैं श्री कृष्णचन्द्र महाराज ने मूर्तिकोही पर ब्रह्म कहा है किन्तु यह समझना कि श्री कृष्णचन्द्र महाराज शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार अखंड पूर्ण ब्रह्म हैं बिष्णु शिवसूर्य शक्ति गणेशादि वासुदेव दाशरथि आदि उनकी लीला विग्रह मूर्ति हैं जो राम कृष्णादि की एकता में प्रमाण है वही विष्णु शिवादि की एकता में प्रमाण है + १२ +

**श्रीभगवानुवाच॥मय्यासक्तमनाःपार्थ योगंयुंजन्मदाश्रयः। असंशयंसमग्रम्मांयथाज्ञास्यसितच्छृणु+१+**

पार्थ १ मयि २ आसक्तमनाः ३ मदाश्रयः ४ योगम् ५ युंजन् ६ यथा ७ समग्रम् ८ असंशयम् ९ माम् १० ज्ञास्यसि ११ तत् १२ शृणु १३+ १+ उ० + पिछले अध्याय में श्री भगवान् ने कहा कि जो मुझमें मन लगाकर मुझ को भजता है वह कर्म योगियों में श्रेष्ठ है इस वास्ते अब अपना वही स्वरूप कहते हैं कि जिसकी भक्ति करनी योग्य है +अ०+हे अर्जुन १ मुझ में २ आसक्त है मन जिसका ३ और मेरा ही आश्रा ले रक्खा है जिसने ७ बिभूति बल ऐश्वर्यादि सहित ८ है सन्देह ९ टी०+ जैसा स्वरूप हमें आगे कहना है उसमें मन लगाकर २।३ सिवाय परमेश्वर के और कोई नहीं है आश्रय जिसका ४ हे अर्जुन इस प्रकार तू ६ योग का ५ अभ्यास कर्ता हुआ कि जो योग मैंने छठें अध्याय में निरूपण किया उस प्रकार मन को समाधान करके ६ जैसे मैं सोपाधिक और निरुपाधिक हूं वैसाही ७।८ सन्देह रहित मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार निर्विकार को और लीला बिग्रह श्याम सुन्दरादि स्वरूपको जानेगा तू ९।१०।११ सोई आगे कहूंगा १२ सावधानहोकर सुन१३+१+

ज्ञानंतेऽहंसविज्ञानमिदंवक्ष्याम्यशेषतः। यज्ज्ञात्वा नेहभूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते + २ +

इदम् १ ज्ञानं २ ते ३ अहं ४ वक्ष्यामि ५ सविज्ञानं ६ अशेषतः ७ यत् ८ ज्ञात्वा ९ इह १० भूयः ११ अन्यत् १२ ज्ञातव्यं १३ न १४ अवशिष्यते १५ + २ + अ० उ० + आगे जो ज्ञान कहना है प्रथम उसको इस श्लोक में स्तुति करते हैं + यह १ जो आगे + ज्ञान २ तेरे अर्थ ३ मैं ४ कहूंगा ५ सो + विज्ञान के सहित ६ समस्त कहूंगा + जिसको ८ जानकर ९ अर्थात् जिस ज्ञान से मुझ को जानकर ९ मोक्ष मार्ग में १० फिर अधिक ११ अन्यपदार्थ १२ जाननेकेयोग्य १३ नहीं १४ शेषरहेगा १५ तात्पर्य उसीसे कृतार्थ हो जायगा परोक्ष शास्त्र द्वारा जो परमेश्वर का ज्ञानहै उसको ज्ञान कहते हैं और अनुभव युक्ति पूर्वक साक्षात् अपरोक्ष जो परमेश्वरका सन्देह रहित ज्ञानहै उसकोविज्ञान कहतेहैं+२+

मनुष्याणांसहस्रेषुकश्चिद्यततिसिद्धये। यततामपिसिद्धानांकश्चिन्मांवेत्तितत्त्वतः + ३ +

मनुष्याणां १ सहस्रेषु २ कश्चित् ३ सिद्धये ४ यतति ५ यततां ६ अपि ७ सिद्धानां ८ मां ९ तत्वतः १० कश्चित् ११ वेत्ति १२ + ३ + अ० उ० + बिशेष करके कम समझ लोग यह कहा करते हैं कि ईश्वर का ज्ञान सबको है जो इस प्रजा का कर्ता पालक है वह परमेश्वर है उसको समस्त गुणोंकी खानि समझना रूपरंग उसमें नहीं इस हेतुसेकोई उसको देख नहीं सक्ता अब बिचारो कि यह तो समझ और निश्चय और स्नेह ऐसे ऐसे तुच्छपदार्थों में किनके स्मरण करने से समझ वालोंको ग्लानि आजाय जैसे स्त्री छोकरे धनान्ध नीच यह बड़े आश्चर्य की बातहै कि सद्गुण करखो छोड़ तुच्छ पदार्थ धनान्धादि नीच पुरुषोंमें मन जावे तात्पर्य यह है कि पूर्वोक्त बोली मन्दमति आलसी विषयी बहिर्मुखों की हैं परमेश्वर के ज्ञानकी गन्ध भी उनके पास होकर नहीं निकली यह सब उनका वाचक ज्ञानहै क्योंकि उनके मुख में परमेश्वरही धूल डाल कर भगवत् के स्वरूप का ज्ञान अति दुर्लभ निरूपण करते हैं परमेश्वर का ज्ञान किसी अन्तर्मुख बिरले महात्मा कोही है बहिर्मुख बिषयी परमेश्वर को कभी नहीं जान सक्ते सोई इस श्लोक में कहते हैं + हज़ारों मनुष्यों में १।२ कोई ३ सच्चिदानन्द की प्राप्तिके लिये ४ प्रयत्न करताहै ५

उन यत्न करने वालों में ६ भी ७ कोई देहसे पृथक् सूक्ष्म रूप सच्चिदानन्द को जानजाता है ऐसे + सिद्धोंमें से ८ मुझको ९ यथार्थ १० कोई ११ जानताहै १२ तात्पर्य अब बिचार करना चाहिये कि मनुष्योंसे व्यतिरिक्त जीवनको तो मोक्ष मार्गमें प्रवृत्ति लेशमात्र नहीं और मनुष्योंमें भी भरतखण्ड से अन्य द्वीपों में रहते हैं व श्रुति स्मृतिके जो द्वेषीहैं वे आत्म विद्याको भी नहीं जानते आत्मज्ञान तो बहुत कठिनहै और भरतखण्ड निवासी वर्णाश्रम वालोंमें भी प्रायश: द्वैतवादीहैं प्रत्युत द्वैतवादी भी कमहैं विशेष करके तो अनजान हैं किंचित् परलोक का उनको बिचार नहीं और जो कोई परलोक के बिचार में प्रवृत्त भी होता है तो नये नवीन पंथ संप्रदायोंने उनको ऐसा भुला रक्खा है कि उस व्यवस्था लिखने के लिये पृथक् ग्रंथ चाहिये तात्पर्य इन पूर्वोक्त सब उपाधियोंसे बचकर कोई महात्मा आत्माकी प्राप्तिके लिये प्रयत्न करताहै और उनमें से कोई ईश्वरसे अभिन्न यथार्थ सच्चिदानन्द आत्माको परमात्मा जानता है जिनको ब्रह्मविद्या प्राप्त हुई और ब्रह्मवत् पुरुष जिस से मिले उसके भाग्यकी बड़ाई जितनी की जावे वह कमसे कम है और जिन्होंनेआत्मतत्त्वको जाना वे तो मन और वाणीसेपरे पहुंचे उनका क्या कहना है+३+

**भूमिरापोऽनलोवायुःखंमनोबुद्धिरेवच। अहंकारइतीयंमेभिन्नाप्रकृतिरष्टधा + ४ +**

भूमि: १ आप: २ अनल: ३ वायु: ४ खं ५ मन: ६ बुद्धि: ७ एव ८ च ९ अहंकार: १० इति ११ इयं १२ मे १३ प्रकृति: १४ अष्टधा १५ भिन्ना १६ + ४ + उ० + जिस प्रकार यथार्थ परमेश्वर का स्वरूप जाना जाताहै सोई कहते हैं प्रथम इस श्लोकमें अपरा प्रकृति का स्वरूप निरूपण करते हैं क्योंकि प्रकृति द्वारा भगवत्का ज्ञान होताहै + पृथ्वी जल तेज बायु आकाश १।२।३।४।५ इनका अर्थ गन्धादि पंच तन्मात्रा समझना इस जगह पंचीकृत पंचस्थूल भूत नहीं समझना और अहंकार ६ महत्तत्व ७।८।९ अविद्या १०।११ इस प्रकार मन और बुद्धि और अहंकार का अर्थ क्रमसे अहंकार और महत्तत्व औरअविद्या समझना + यह १२ मेरी१३ प्रकृति १४ आठप्रकार के १५ भेदको प्राप्तहुईहै १६ अर्थात एक प्रकृति अपरा यही अष्ट प्रकारकी है और आगेतेरहवें अध्याय में इसीको चौबीस भेदमें निरूपण करूंगा टी० + गन्ध १ रस २ रूप ३ स्पर्श ४ शब्द ५ अहंकार ६ महत्तत्व७ अविद्या ८ सबका कारण अविद्याहै अविद्यासे महत्तत्व महत्तत्व

से अहंकार अहंकार से शब्दादि उत्पन्न हुयेहैं जैसे विष मिले हुये अन्न को विष कहतेहैं इसी प्रकार अविद्योपहित चैतन्यको अविद्या कहागया तात्पर्य जगत्का कारण मायोपहित अव्यक्त है बिना चैतन्य रचनादिक्रिया असंभव है अविद्याका अर्थ इस जगह मूलाज्ञान प्रकृति समझना आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में इन सब का अर्थ बिस्तार पूर्वक और क्रमसे लिखाहै + ४ +

**अपरेयमितस्त्वन्यांप्रकृतिंविद्धिमेपरां। जीवभूतांमहाबाहोययेदंधार्य्यतेजगत् + ५ +**

इयं १ अपरा २ इतः ३ तु ३ अन्यां ४ जीवभूतां ५ मे ६ परां ७ प्रकृतिं ८ विद्धि ९ महाबाहो १० यया ११ इदम् १२ जगत् १३ धार्य्यते १४ + ५+उ०+ इस श्लोकमें परा प्रकृति निरूपण करतेहैं + पीछे जिसकेआठ भेद कहे + अ०+यह १ प्रकृति + अपरा २ अर्थात् निकृष्ट अशुद्ध जड़ अनर्थ करने वाली संसार बन्धको प्राप्त करने वालीहै + इससे ३।३जुदी ४ जीवरूपको ५ मेरी ६ परा ७ प्रकृति ८ जानतू ९ हे अर्जुन १० जिसने ११ यह १२ जगत् १३ धारण कर रक्खाहै १४ टी०+शुद्ध प्रकृष्ट श्रेष्ठ मेरी आत्मरूप जान ७ इस जगत् को रचकर इसकेभीतर जीवरूप होकरमैंहीं प्रवेश हुआहूं ११। १२। १३।१४ तत्सृष्ट्वातदेवानुप्राविशतइतिश्रुतिः+५+

**एतद्योनीनिभूतानिसर्वाणीत्युपधारय। अहंकृत्स्नस्यजगतः प्रभवःप्रलयस्तथा + ६ +**

सर्वाणि १ भूतानि २ एतद्योनीनि ३ इति ४ उपधारय ५ अहम् ६ कृत्स्नस्य ७ जगतः ८ प्रभवः ९ प्रलयः १० तथा ११ + ६ + अ०+सब १ भूतोंकी २ यह योनीहैं ३ यह ४ जानतू ५ अर्थात् अपरा और परा यही दोनों प्रकृति सब जगत् का कारण हैं और+मैं ६ समस्त ७ जगत् का ८ उत्पत्ति करनेवाला ९ और नाश करनेवाला १०।११। हूं तात्पर्य्य उपादान कारण प्रकृति है और निमित्त कारण चैतन्य ईश्वर है इसवास्ते अभिन्न निमित्तोपादान कारण ईश्वरहै जगत् का + यह अर्थ आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में स्पष्ट दृष्टान्त सहितलिखा है + ६ +

**मत्तःपरतरंनान्यत्किंचिदस्तिधनंजय। मयिसर्वमिदंप्रोतंसूत्रेमणिगणाइव + ७ +**

धनंजय १ मत्तः २ परतरं ३ अन्यत् ४ किंचित् ५ न ६ अस्ति ७ इदं ८ सर्वं ९ मयि १० प्रोतं ११ सूत्रे १२ मणिगणाः १३ इव १४ + ७ + अ० ट० + जैसे पीछे कहा इसी हेतुसे मुझसे जुदा कोई पदार्थ नहीं यह कहते हैं + हे अर्जुन १ मुझसे २ श्रेष्ठ ३ जुदा ४ सृष्टि संहारका स्वतंत्रकारण ४ कुछ ५ नहीं ६ है ७ यह ८ सब ९ जगत् + मुझ सच्चिदानन्द परमेश्वर में १० गुन्दा हुआहै ११ सूत में १२ सूतकेही बनेहुये + मणिकेदाने १३ जैसे १४ + ७ +

**रसोऽहमप्सुकौन्तेयप्रभास्मिशशिसूर्ययोः । प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दःखेपौरुषंनृषु + ८ +**

कौन्तेय १ अप्सु २ रसः ३ अहम् ४ शशिसूर्ययोः ५ प्रभा ६ अस्मि ७ सर्ववेदेषु ८ प्रणवः ९ खे १० शब्दः ११ नृषु १२ पौरुषं १३ + ८ + अ० ट० + श्रीभगवान् जी अपनी पूर्णता को विस्तार पूर्वक कहतेहैं पांच मंत्रों में + हे अर्जुन १ जलमें २ रस ३ मैंहूं ४ चन्द्र सूर्यमें ५ प्रभार्दाप्ति चमक रोशनी ६ मैंहूं ७ सब वेदोंमें ८ ओंकार ९ मैंहूं + आकाशमें १० शब्द ११ मैंहूं पुरुषों में १२ उद्यम १३ मैं हूं + तात्पर्य जलादि पदार्थ रसादि पदार्थों के बिना कुछ नहीं + ८ +

**पुण्योगन्धःपृथिव्यांचतेजश्चास्मिविभावसौ। जीवनंसर्वभूतेषुतपश्चास्मितपस्विषु + ९ +**

पृथिव्यां १ च २ पुण्यः ३ गंधः ४ विभावसौ ५ तेजः ६ च ७ अस्मि ८ सर्वभूतेषु ९ जीवनम् १० तपस्विषु ११ तपः १२ च १३ अस्मि १४ + ९ + अ० + पृथिवी में १।२ पवित्र ३ गंध ४ मैंहूं अर्थात् सुगंध + अग्निमें ५ तेज मैंहूं ६।७।८ सब भूतों में ९ जीव १० मैंहूं + तपस्वि पुरुषों में ११ तप मैंहूं १२।१३।१४ टी० + तप दो प्रकार का है बिचारको भी तपकहते हैं और द्वन्द्वके सहन को भी तप कहते हैं + ९ +

**बीजंमांसर्वभूतानांविद्धिपार्थसनातनम् । बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् + १० +**

पार्थ १ सर्वभूतानां २ सनातनं ३ बीजं ४ मां ५ विद्धि ६ बुद्धिमतां ७ बुद्धिः ८ अस्मि ९ तेजस्विनां १० तेजः ११ अहं १२ + १० + अ० + हे अर्जुन १ सब भूतों का २ सनातन ३ बीज ४ मुझको ५ जान तू ६

बुद्धिमानोंमें ७ बुद्धि ८ मैंहूं ९ तेजस्वीपुरुषोंमें १० तेज ११ मैंहूं १२+१०+

**बलंबलवतांचाहंकामरागविवर्जितम् । धर्माविरुद्धो भूतेषुकामोऽस्मिभरतर्षभ + ११ +**

कामरागविवर्जितं १ बलवतां २ च ३ बलं ४ भरतर्षभ ५ धर्माविरुद्धः ६ भूतेषु ७ कामः ८ अस्मि ९+ ११+ अ०+कामराग करके बर्जित १ बलवानों में २। ३ बल ४ मैंहूं और + हे अर्जुन ५ धर्मसे अबिरुद्ध ६ भूतोंमें ७ काम ८ मैंहूं ९ + ११ +

**येचैवसात्विकाभावाराजसास्तामसाश्चये । मत्त एवेतितान्विद्धि नत्वहंतेषुतेमयि + १२ +**

ये १ च २ एव ३ सात्विकाः ४ भावाः ५ राजसाः ६ ये ७ च ८ तामसाः ९ तान् १० मत्तः ११ एव १२ इति १३ विद्धि १४ तेषु १५ अहं १६ न १७ तु १८ ते १९ मयि २० + १२ + अ०+जो १। २) ३ सतोगुणी ४ भाव ५ शमदमादि + रजोगुणी ६ हर्षदर्पादि + और ७। ८ तमोगुणी ९ भावशोकमोहादि + तिनको १० मुझसे ११ ही १२। १३ जानतू १४ क्योंकि मेरी प्रकृति के गुणों का कार्यहै शम हर्ष शोकादि + तिन में १५ मैं १६ नहीं १७। १८ बर्तताहूं अर्थात् जीववत् तिन के आधीन मैं नहीं परंतु + वे १९ मुझमें २० मेरेआधीन हुये वर्त्तते हैं + १२ +

**त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिःसर्वमिदंजगत् । मोहितं नाभिजानातिमामेभ्यःपरमव्ययम् + १३ +**

एभिः १ त्रिभिः २ गुणमयैः ३ भावैः ४ इदं ५ सर्वं ६ जगत् ७ मोहितं ८ एभ्यः ९ परं १० मां ११ अव्ययं १२ न १३ अभिजानाति १४ + अ०+ इन १ तीन २ गुणमय ३ पदार्थों करके ४ यह ५ सब ६ जगत् ७ मोहित होरहाहै ८ इसके ९ परे १० मुझ ११ अव्यय को १२ नहीं १३ जानताहै १४ तात्पर्य कोई सतोगुण में कोई रजोगुण में कोई तमोगुण में मोहित हैं इनसे परे बिलक्षण निर्गुण शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार निर्विकार परमेश्वर को नहीं जानते परमेश्वरकोभी सगुणही समझतेहैं+१३+

**दैवीह्येषागुणमयीममसायादुरत्यया । मामेवयेप्रपद्यन्तेमायामेतान्तरन्तिते + १४ +**

एषा १ मम २ माया ३ गुणमयी ४ दैवी ५ हि ६ दुरत्यया ७ ये ८ मां

एव १० प्रपद्यन्ते ११ एतां १२ मायां १३ ते १४ तरन्ति १५+१४+उ०+ अनादि अविद्या बिना शुद्ध सच्चिदानन्दभगवत् भजनके दूर न होगी यह कहते हैं + अ०+यह १ मेरी २ माया३ त्रिगुणवाली ४ अलौकिक अद्भुत ५ है + हि इस शब्दका तात्पर्य यहहै कि यह माया ऐसीहै जो बात समझ के योग्यहै उसको भी दिखासक्तीहै और जो न समझमें आवै उस को भी दिखासक्ती है सो यह बात संसार में प्रसिद्ध है इसीहेतु से जगत् भ्रांत हो रहा है बिना परमेश्वर की कृपा यह माया +दुस्तर है ७ विद्वानों ने ऐसा निश्चय कियाहै + कि जो ब्रह्मतत्त्व के जिज्ञासु ८ मुझ को ९ ही १० भजतेहैं ११ इस १२ माया को १३ वे १४ तरेंगे १५ अर्थात् माया को माया समझ कर मुझ त्रिगुण रहित शुद्ध सच्चिदानन्द को प्राप्तहोंगे+ टी०+दैवी देव सम्बन्धी अर्थात् ब्रह्मा विष्णु रामकृष्णादि और वैकुंठादि जिसका परिणाम है उसको दैवीमाया कहते हैं यह बिनाज्ञाननिष्ठा दूरनहीं होती + मुझनिर्गुण शुद्ध सच्चिदानन्द कोही जो चिंतवन करेंगे सगुण पदार्थ में प्रीति नहीं करेंगे वेही निर्गुणको प्राप्तहोंगे और जो सगुण पदार्थों में प्रीतिकरेंगे उन को त्रिगुणवाली माया दूर न होगी क्योंकि जिस पदार्थ को त्यागनाथा उसमें प्रीति करी फिर कैसे यह तीनगुण दूर होसक्ते हैं + एक शब्द से स्पष्ट प्रतीत होताहै कि मां शब्द का अर्थ इस जगह शुद्ध ब्रह्म है मायोपहित वा लीला विग्रह सगुण नहीं मायोपहित ईश्वर सगुण ब्रह्म का जो आराधन करते हैं तो अवश्यही माया का भी आराधन उसके साथ होता है जिसका विशेष चिंतवन रहेगा वह पदार्थ कैसे दूरहोगा और जो सगुण ब्रह्मकाही आराधन करनाहै तो निष्काम होकर शुद्ध ब्रह्मकी जिज्ञासा करके आराधन करे तो भी वह मार्ग क्रममुक्ति का है और जिनको शुद्ध ब्रह्म की जिज्ञासा तक नहीं उनको अविद्या कभी दूर न होगी + १४ +

**नमांदुष्कृतिनोमूढाःप्रपद्यन्तेनराधमाः। माययाऽपहृतज्ञानाआसुरंभावमाश्रिताः +१५+**

नराधमाः १ मां २ न ३ प्रपद्यन्ते४ मूढाः ५ दुःकृतिनः ६ मायया ७ अपहृतज्ञानाः ८ आसुरं ९ भावं १० आश्रिताः ११+१५+अ० उ०+ जो निर्भाग न निर्गुण ब्रह्म का आराधन करते हैं न सगुण ब्रह्मका उसमें यह कारण है + नरों में अधम १ मुझको २ नहीं३ भजतेहैं ४ हेतुइस

में यह है कि + विवेक रहित हैं ५ इसमें क्या हेतुहै कि + दुष्खोटे कर्म करने वाले हैं ६ अर्थात् शास्त्रोक्त मार्ग में नहीं चलते श्रुति स्मृति परमेश्वर की आज्ञा को छोड़ नाना प्रकारके कल्पित पंथों में शिर मारते हैं इस में जो हेतु है सो सुन + माया करके ७ दूर होगयाहै ज्ञानजिनका ८ अर्थात् तमोगुण रजोगुण में सत्वगुण उनका तिरोभाव रहता है इसमें यह हेतु है कि + असुर भावको ६। १० आश्रय कर रक्खा है उन्होंने ११ अर्थात् सोलहवें अध्याय में काम क्रोध दंभ दर्पादि असुरोंका स्वभाव कहेंगे भगवत् से विमुख सदा कामादि अनर्थों में फँसे रहते हैं जो पूर्व संस्कार से उन में किसी समय सत्वगुण आविर्भाव होताहै फिर भी कुसंग के दोषसे भगवत्के सन्मुख नहीं होते हैं और न शुभकर्मकरते हैं इसी हेतु से उनको विवेक नहीं होता और इसी हेतु से वे लोग सब से अधम हैं + १५ +

**चतुर्विधाभजंतेमांजनाःसुकृतिनोऽर्जुन। आर्त्तोजिज्ञासुरर्थार्थीज्ञानीचभरतर्षभ + १६ +**

अर्जुन १ चतुर्विधाः २ सुकृतिनः ३ जनाः ४ मां ५ भजन्ते ६ भरतर्षभ ७ आर्तः ८ अर्थार्थी ६ जिज्ञासुः १० ज्ञानी ११ च १२। +१६+ उ०+जो निष्काम सगुण ब्रह्म का भी आराधन हो सके तो सकामही परमेश्वर का आराधन करना योग्य है जो न निष्काम भजन करें न सकाम उन्हीं से सकाम पुरुषही भगवत्का आराधन करनेवाले श्रेष्ठहैं इसीवास्ते चारोंप्रकार के मेरे भक्त सुकृती कहे जाते हैं वे चार प्रकार के भक्त तार तम्यता के साथ उत्तरोत्तरयेहैं+अ०+ हेअर्जुन१चार प्रकारके२सुकृती जन३।४ मुझको ५ भजतेहैं ६ हे अर्जुन ७ वे यह हैं आर्त ८ अर्थार्थी ६ जिज्ञासु १० ज्ञानी ११ १२ टी०+विपत्ति समय में परमेश्वर को स्मरण करना उसको आर्त भक्त कहते हैं जैसे द्रौपदी गजेन्द्रादि ८ स्त्री पुत्र राज्यादि की कामना क के जो परमेश्वरका आराधन करते हैं वे अर्थार्थी जैसे ध्रुवादि ६ ब्रह्मतत्वकी जिज्ञासा करके निष्कामजो नारायण का पूजन भजन करते हैं वे जिज्ञासु जैसे उद्धव सुदामादि १० शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार निर्विकार नित्य मुक्त परमात्मा को आप से अभिन्न अपरोक्ष जो जानते हैं वेज्ञानी जैसे शुकदेव वामदेव जनक याज्ञवल्क्य वशिष्ठसनकादि ११ चारों प्रकार के भक्तों को उत्तरोत्तर श्रेष्ठ समझना + १६ +

तेषांज्ञानीनित्ययुक्तएकभक्तिर्विशिष्यते। प्रियोहिज्ञानिनोत्यर्थमहंसचममप्रियः + १७ +

तेषां १ ज्ञानी २ विशिष्यते ३ नित्ययुक्तः ४ एकभक्तिः ५ अहं ६ ज्ञानिनः ७ अत्यर्थं ८ प्रियः ६ हि १० स ११ च १२ मम १३ प्रियः १४ + +१७ अ० ठ०+पूर्वोक्त भक्तों में ब्रह्म ज्ञानी चार हेतु करके सबसे श्रेष्ठ है यह कहते हैं + तिनके १ मध्यमें + ज्ञानी २ विशेष हैं ३ प्रथम तो तीनों अवस्था में सच्चिदानन्द स्वरूप से च्युत नहीं होता इस वास्ते ज्ञानी को + नित्य युक्त ४ कहते हैं अर्थात् सदा आनन्द स्वरूप ब्रह्मका उसको स्मरण रहता है दूसरे यह कि एक अद्वैत में ही है भक्ति जिस की अर्थात् सिवाय सच्चिदानन्द पदार्थ के और कोई पदार्थ दृश्य जड़ उस की दृष्टिमें नहीं जिसकी दृष्टि में दूसरा पदार्थ है बुरा व भला बे सन्देह उस में कभी न कभी मन जायगा इसी वास्ते ज्ञानी को + एक भक्ति ५ कहते हैं अर्थात् ज्ञानी परमानन्द का ही उपासक है परमानन्द स्वरूप भगवत्‌ही उसके साधन हैं और परमानन्द ही फलहै औरों के फल साधनों में भेद है तीसरे यह कि + मैं ६ ज्ञानी को ७ अत्यन्त बहुत ८ ही प्यारा ६। १० हूं क्योंकि परमानन्द बहुत प्यारा होता है यह लोक में भी प्रसिद्ध है ज्ञानी मुझको परमानन्द रूप जानता है आनन्द जनक जड़ दृश्य रूप वाला मुझ को नहीं जानता चौथे यह कि + सो ज्ञानी ११+१२ मुझको १३ भी अत्यन्त + प्यारा १४ है क्योंकि परात्पर पूर्ण ब्रह्मअखण्ड अद्वैत मुझको समझता है सिवाय सच्चिदानन्द के और पदार्थका अत्यन्त अभाव जानताहै इसी हेतुसे वह मुझको प्रिय है एक पदार्थ तो आनन्द जनक और एक पदार्थ निजानन्द रूपहै बिचारो दोनों में कौनसा श्रेष्ठ है + १७ +

उदाराःसर्वएवैतेज्ञानीत्वात्मैवमेमतम्। आस्थितःसहियुक्तात्मामामेवानुत्तमांगतिम् +१८+

एते १ सर्व २ एव ३ उदाराः ४ ज्ञानी ५ तु ६ मे ७ आत्मा ८ एव ६ मतं १० हि ११ सः १२ युक्तात्मा १३ मां १४ एव १५ आस्थितः १६ अनुत्तमा १७ गतिं १८ + १८+ अ० ठ०+भगवत् बिमुखों से सब भक्त सकाम और निष्काम श्रेष्ठहैं और ज्ञानी तो साक्षात् नारायण स्वरूपहैं यह कहते हैं आगे बारहवेंअध्यायमें भी श्री महाराज कहैंगे कि निर्गुण ब्रह्म व उपा-

सक्त तो मुझको प्राप्तही हैं जो मेरा स्वरूप है सोई उनकाहै+वे १ पूर्वोक्त आर्तादि तीनों भक्त + सब २ ही ३ श्रेष्ठ४ हैं परंतु + ज्ञानी ५ तो ६ मेरा ७ आत्मा ८ हो ९ अर्थात् ज्ञानी मुझसे दासवत् जुदा नहीं स्वामी सेवकवत् पृथक् नहीं वह बन वृक्षवत् मेरा ही स्वरूप है यह मेरा + निश्चय १० है + क्योंकि ११ वह यह समझता है कि मैं पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द नित्य मुक्तहूं इस वास्ते + सो ज्ञानी १२ युक्तात्मा समाहित है १३ और मुझको १४ ही १५ आश्रय कर रक्खा है १६ कैसा हूं मैं कि नहीं है सिवाय मुझसे उत्तम गति कोई सावयव पदार्थ सो मैं ही अनुपम गति हुई यह समझकर मुझ + अनुत्तम गति को १७।१८ आश्रयकर रक्खाहै अर्थात् मुझसे पृथक् कुछ और फल नहीं मानता परात्पर फल मैंहूं सच्चिदानन्द हूं + १८ +

**बहूनांजन्मनामंतेज्ञानवान्मांप्रपद्यते । वासुदेवःसर्वमितिसमहात्मासुदुर्लभः + १९ +**

बहूनां १ जन्मनां २ अन्ते ३ इति ४ सर्वं ५ वासुदेवः ६ ज्ञानवान् ७ मां ८ प्रपद्यते ९ सः १० महात्मा ११ सुदुर्लभः १२ +१६+ उ०+फिर भी ज्ञानी की स्तुति करते हुये यह कहते हैं कि ऐसा ज्ञानी भक्त दुर्लभ है +अ०+ बहुत १ जन्मों के २ अन्त में ३ अर्थात् सकाम निष्काम उपासना करते करते पिछले जन्म में कि जिस शरीर में मोक्ष होना है उस जन्ममें मुझ को जो मेरा भक्त ऐसा समझता है कि+ यह ४ सब५ जगत् चराचर अस्तिभाति प्रिय रूप+ वासुदेव ६ है इस प्रकार+ ज्ञानवान्हुआ हुआ + मुझको ८ भजता है ९ जो भक्त + सो १० महात्मा परिच्छिन्न दृष्टि है प्रायशः सब आत्मा को और परमात्मा को परिच्छिन्न समझते हैं प्रत्युत कोई कोई निर्भाग ज्ञानियों की प्रत्यक्ष वा किसीबहाने मिस करके असूया बुराई करते हैं इस श्री महाराज के वाक्यका आदर नहीं करते अपने आप अपनी जिह्वासे बारम्बार यह कहें कि मैं पापी पापात्मा पाप करताहूं जो दूसरा कहे कि तुम पापी गुलामहो तो उसी समय लड़ने को उद्यत हो जावें ऐसे लोगों को जो गति होगी सो दृष्टान्त से स्पष्ट किये देते हैं + **अथ इतिहास लिखते हैं**+एक राजा भेदवादी भगवत् का उपासक सब से यह प्रश्न किया करता था कि महाराज जो पापी भगवत् से बिमुख हैं उनका तो उद्धार श्री नारायण अपने आप करेंगे क्योंकि उनका नाम पतित पावन अधम उद्धारण कह-

णाकर है और जो भगवत् भक्त कर्मकाण्डी ज्ञानी योगी हैं वे भक्ति ज्ञान कर्म योगादि के आश्रयसे कृतार्थ होंगे नरकमें कौन जावैंगे चौरासीलाख योनियों में कौन भ्रमेंगे इस प्रश्न का उत्तर बहुत पण्डितों को न आया एक ज्ञानी महात्मा राजाके पास पहुंचे राजाने उनका बहुत सन्मान करके यही प्रश्न उनसे भी किया प्रथम महात्माने यह यह कहा कि हे राजन् तुम बड़े सुकृती धर्मात्मा समझवाले भगवत्भक्त हो राजा ने कहा कि महाराज ऐसे तो आप होहैं मैं तो अधम पापात्माहूं महात्मा उसी समय वहां से खड़े हो गये और राजा की तरफ़ से मुखफेर कहने लगे कि आज कैसे अधम पापात्मा से सम्भाषण हुआ राजाकोसुनतेही इन शब्दों के क्रोध आगया और कहने लगा कि तू कैसा ज्ञानी है जो लोगों को गालियां देता है महात्मा ने कहा कि बच्चा गालियां नहीं देता तेरे प्रश्नका उत्तर देता हूं तात्पर्य मेरे कहने का समझ कि तुझसे तुझ सरीखे तुझ सदृश लोग नरकमें जावैंगे आप तो अपने मुखसे सहस्र बार अपने को पापी कहता है + पापोहं पाप कर्माहं पापात्मा पापसम्भवः + जो हम ने एक बार कहा तो उसका इतना बुरा मानता है कि अभी तो हम को सुकृती धर्मात्मा भगवत्भक्त कहता था और अभी तू तड़ाक करने लगा अब तू यह अपने आपे को बिचार कि मैं पतित हूं वा धर्मात्मा हूं जो तू पतित है तो औरों के कहने का क्यों बुरा माना है और जो धर्मात्मा है तो शुद्धात्मा को पापत्मा क्यों कहता है अपने को शुद्धात्मा समझ राजा का अज्ञान इतने ही स्वल्प उपदेश से जाता रहा और जाना कि दास और पतित जो अपने को कहते हैं यह ऊपर ही की बोल चाल है दास पतित बनना तो कठिन है मुख से तो यह कहैं कि + सियाराममय सब जग जानी + करों प्रणाम सप्रेम सुबानी + और ज्ञानियों को बुराई करें धन्य है ऐसी समझ को भूला अर्थ समझा पूर्णता का यह इतिहास भले प्रकार विचारने के योग्य है + १९ +

**कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः। तंतंनियममास्थाय प्रकृत्यानियताःस्वया + २० +**

अन्यदेवताः १ प्रपद्यन्ते २ तैः ३ तैः ४ कामैः ५ हृतज्ञानाः ६ स्वया ७ प्रकृत्या ८ नियताः ९ तं १० तं ११ नियमं १२ आस्थाय १३ + २० + अ० उ० + सब भक्त निर्गुण ब्रह्म की निष्काम उपासना क्यों नहीं करते अपने से अन्य देवता का क्यों आराधन करते हैं इस अपेक्षा में यह क-

हते हैं चार मंत्रों में + परमेश्वर का भजन करके बैकुंठादि में जावेंगे वहां के दिव्य शब्दादि विषयों का और स्त्री आदि पदार्थों को भलेप्रकार भोग करेंगे अथवा इसी लोक में स्त्री पुत्र धनादि की प्राप्ति होगी और प्रायशः वर्तमान काल में भी देवतों की उपासना में शब्दादि विषयों को त्यागना नहीं पड़ता प्रत्युत फूल बंगला हिंडोरा रासलीला नृत्यगानादि के। उत्तम कर्म समझते हैं इन इन कामना करके जो आत्मा से भिन्न+ अन्यमूर्त्तिमान् देवता का १ भजन करते हैं २ इस में हेतु यह है कि तिन ३ तिन ४ कामना करके ५ हरागया है आत्म ज्ञान जिन का ६ वे + अपनी ७ प्रकृति करके ८ प्रेरे हुये ९ तिस १० तिस ११ नियमको १२ आश्रय करके १३ अन्य देवता का भजन करते हैं अर्थात् रजोगुण तमोगुण के वश होकर जो जो नियम भेद उपासना मेंहैं सब को अंगो-कार करके आत्मा से अन्य देवता ही को पूजते हैं जैसे कहते हैं कि घर का योगी योगना आन गांव का सिद्ध ऐसेही वे उपासक हैं शास्त्र का भी प्रमाण सुने + वासुदेवं परित्यज्य योन्यदेवमुपासते + तृषतो जाह्नवी तीरे कूपं खनति दुर्मतिः + जो देव सबमें बस रहा है और साक्षात् चैतन्यानन्द अनुभव होता है उस को छोड़ अन्य देव की जो उपासना करते हैं वे ऐसे हैं कि जैसे प्यासा मूर्ख श्री गंगा जी का जल छोड़ गंगा तीरे कूप खोदता है ऐसेही परमानन्द स्वरूप चैतन्य देव आ-त्माको छोड़ तुच्छ विषयानन्द के लिये प्रयत्न करते हैं + २० +

**योयोयांयांतनुंभक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति। तस्य तस्याचलांश्रद्धांतामेवविदधाम्यहम् + २१ +**

यः १ यः २ भक्तः ३ श्रद्धया ४ यां ५ यां ६ तनुं ७ अर्चितुं ८ इच्छति ९ तस्य १० तस्य ११ अचलां १२ श्रद्धां १३ तां १४ अहं १५ एव १६ वि-दधामि १७ + २१ + उ०+सकाम आत्मा से अन्य देवतों के भक्तों को पिछले मंत्र में परतंत्र प्रकृति के और बासना के वश कहा अब अपने आधीन कहते हैं जो कोई यह शंका करे कि जब परमेश्वर अन्तर्यामी सब के प्रेरक हैं तो फिर अन्य देवतों के भक्तों को भी बासुदेव भगवान् पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द आत्मा के संमुख क्यों नहीं कर देते इस अपेक्षा में श्री महाराज यह कहेंगे कि जैसे जिसकी इच्छा होती है उसके अनु-सार उसकी श्रद्धा दृढ़ कर देताहूं निष्काम जो मेरा आराधन करते हैं

उनको सन्मार्गमें लगा देता हूं मुझको चिन्तामणिवत् समझना प्रसिद्ध वाक्यहै + जैसे को हरि तैसे सोई कहते हैं इस मंत्रमें + अ० + जो १ जो २ विष्णु शिव राम कृष्ण इन्द्रादि का + भक्त ३ श्रद्धा करके ४ जिस ५ जिस ६ मूर्तिका ७ पूजा करनेकी ८ इच्छा करताहै ९ तिस १० तिसके विषय ११ दृढ़ १२ श्रद्धा १३ जोहै + तिस को १४ मैं १५ ही १६ स्थिर करताहूं १७ अन्तर्यामीरूप होकर वेदशास्त्राचार्य द्वारा + तात्पर्य जो जिस मूर्त्तिमान् देवतामें प्रीति करता है परमेश्वर भी आचार्य रूप होकर उसीको दृढ़ करदेते हैं निष्काम भक्तोंको परमेश्वर सुधारते हैं सुख मान कर बहिर्मुख हुये बाहिः सुख की इच्छा करते हैं वे कभी विषयी कहे जाते हैं + २१ +

**सतयाश्रद्धयायुक्तस्तस्याराधनमीहते । लभतेचततःकामान्मयैवविहितान्हितान् + २२ +**

स १ तया २ श्रद्धया ३ युक्तः ४ तस्य ५ आराधनं ६ ईहते ७ ततः ८ कामान् ९ लभते १० च ११ तान् १२ मया १३ एव १४ विहितान् १५ हि १६ + २२ + अ० उ० + पूर्व पक्षकी श्रुति स्मृतिको ही सिद्धान्त समझकर उन में श्रद्धा करके सकाम परमेश्वर का आराधन करने से जो कभी कभी किसी किसी को फल भी प्रत्यक्ष होजाताहै अर्थात् मूर्तिमान् परमेश्वरका दर्शन होजाना अथवा स्त्री पुत्र राज्य स्वर्ग बैकुंठादि की प्राप्ति हो जानी यह सब फल उसको कामना के अनुसार मैंहीं देताहूं क्योंकि कामियोंको रूप रसादि विषयही प्रिय होतेहैं जो यह फल प्रत्यक्ष किसी को भी न होय तो फिर वेद शास्त्रादि में उनका विश्वास न रहेगा जो उनका विश्वास वेद शास्त्रादि में बना रहेगा तो कभी न कभी सिद्धान्तकी श्रुति स्मृतियों में भी उनको विश्वास हो जायगा फिर मेरा निष्काम आराधन करके कृतार्थ हो जावेंगे उनको प्रत्यक्ष फल दिखानेमें यह तात्पर्य मेरा है इस वास्ते उसके वही श्रद्धा स्थिर करता हूं + सो १ तिस २ श्रद्धा करके ३ युक्त ४ तिसका ५ ही + आराधन करता है ७ तिससे ८ ही कामना को ९ प्राप्त होताहै १० । ११ कैसीहैं वे कामना कि + तिनको १२ मैंने १३ ही १४ रची हैं १५ निश्चय १६ तात्पर्य सकाम भक्त पूर्व पक्ष की श्रुति स्मृतियों में श्रद्धा करके जिस भक्तकी जिस देवता में प्रीति है उसका ही आराधन करता है उससे ही मन वांछित फल को प्राप्त होताहै वास्तव वे कामना रची हुई परमेश्वर की हैं परमेश्वरनेही वह

फल उनको दिया है परंतु वे उस मूर्तिका दिया हुआ समझते हैं उसी को परात्पर समझलेते हैं इसी वास्ते वे जन्म मरण से नहीं छूटते इस बातको अगले श्लोक में भले प्रकार स्पष्ट करेंगे + २२ +

**अन्तवत्तुफलंतेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम्। देवान्देवय जोयान्ति मद्भक्तायान्तिमामपि + २३ +**

अल्पमेधसां १ तेषां २ तत् ३ फलं ४ अन्तवत् ५ तु ६ भवति ७ देव-यजः ८ देवान् ६ यान्ति १० मद्भक्ताः ११ मां १२ अपि १३ यान्ति १४ + २३ + उ०+सच्चिदानन्द आत्मा से अन्य मूर्तिमान् परमेश्वर को पर-मेश्वर मान कर जो उनका आराधन करता है क्या उससे निर्गुण निरा-कार सच्चिदानन्द की उपासना करने वाले कुछ अधिक फलको प्राप्त होते हैं इस अपेक्षा में श्री महाराज यह कहते हैं कि हां वे सन्देह फलमें बड़ा अन्तरहै वह अन्तर यहहै + अ०+परिच्छिन्न दृष्टिहैं जिनकी १ अर्थात् कम समझ जो परमेश्वर को एक देशी समझते हैं + तिनको २ जो फल होताहै मूर्तिमान् परमेश्वर दर्शनादि बैकुंठादिकी प्राप्ति स्त्री पुत्रराज्यादि की प्राप्ति + सो ३ यह सब + फल ४ अन्तवाला है ५। ६ है ७ अर्थात् अनित्य है + क्योंकि + देवतों के पूजने वाले ८ देवतोंको ६ प्राप्तहोतेहैं १० और मुझ सच्चिदानन्द निराकार आत्माके भक्त ११ मुझ सच्चिदानन्द निराकार को १२ ही १३ प्राप्त होतेहैं १४ बिचार करो फलमें कितनाबड़ा अन्तर है जो यह शंका करे कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज नित्य हैं उन्हों से अन्य देवता अनित्यहैं तो फिर यह बिचारना चाहिये कि देवतों की मूर्त्ति अनित्य हैं व उनका स्वरूप सच्चिदानन्द अनित्य है और श्रीकृष्ण-चन्द्र महाराज की मूर्त्ति श्याम सुन्दर स्वरूप नित्य है व उनका स्वरूप सच्चिदानन्द नित्य है दोनों की मूर्त्तियों कोजो नित्यकहे तो भी नहीं बन सक्ता और सच्चिदानन्द स्वरूप को दोनों के जो अनित्य कहें तो भी नहीं बन सक्ता क्योंकि वेद शास्त्रों का यह सिद्धान्त है यद्दृश्यं तत् अनित्यं जो दृश्य है सो सब अनित्य है + तदुक्तं + गो गोचर जहँलग मन जाई + सो सब माया जानो भाई। और मां शब्दकी देव शब्द से बिलक्षणता है तात्पर्य्य यह बात स्पष्ट है कि श्रीकृष्णचन्द्र महाराज पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द निराकार हैं सो नित्यहै मूर्त्ति परमेश्वर की मायिक होती हैं + गीतामाहात्म्य पद्मपुराण में लक्ष्मीजी से श्रीनारायण कहते

हैं मायामयमिदंदेवि वपुर्मेन तुतात्विकम ॥अ०+हे देवि मेराशरीरमाया मय है बास्तव नहीं देवशब्द का तात्पर्य्य मूर्त्तियों में है मां शब्दका तात्पर्य्य सच्चिदानन्द निराकार में है + २३ +

**अव्यक्तंव्यक्तिमापन्नं मन्यंतेमामबुद्धयः। परंभावम-जानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम + २४ +**

अबुद्धय: १ मां २ अव्यक्तं ३ व्यक्तिं ४ आपन्नम् ५ मन्यन्ते ६ मम ७ परं ८ भावं ९ अजानन्तः १० अव्ययं ११ अनुत्तमम् १२+२४+ उ०+निर्गुण ब्रह्मको उपासना में और सगुण ब्रह्मलीला विग्रह मूर्ति आदि की उपासना में यत्न सम होता है और फलनिर्गुण उपासना का आप बिशेष और नित्य कहते हो फिर लीला विग्रह मूर्त्तियों के उपासक भी आप के निरुपाधिक शुद्ध स्वरूप सच्चिदानन्द निराकार ब्रह्मात्माकी क्यों नहीं उपासना करते हैं यह शंका करके इस मंच में श्रीमहाराज यह कहेंगे कि कम समझ होनेसे मुझ परात्पर निर्विकार शुद्ध सच्चिदानन्द को नहीं जानते मूर्त्तिमान् ही मुझको समझते हैं हे अर्जुन यह बड़े कष्टकी बातहै इस प्रकार बिचार करते हुये श्रीभगवान् यह कहतहैं + अ०+अविवेकी बिचार रहित १ मुझ २ निराकार को ३ मूर्त्तिमान् ४ । ५ मानते हैं ६ मेरे ७ परं ८ प्रभाव को ९ नहीं जानते १० कैसा है मेरा परं प्रभाव कि प्रथम तो + निर्विकार ११ और फिर + अनुत्तम १२ अर्थात् उससेसिवाय और कोई पदार्थ उत्तमनहीं+टी०+मूर्त्तिको४ प्राप्त हुआ ५ + २४ +

**नाहंप्रकाशःसर्वस्ययोगमायासमावृतः । मूढोयं नाभिजानातिलोकोमामजमव्ययम + २५ +**

सर्वस्य १ अहं २ प्रकाशः ३ न ४ योगमायासमावृतः ५ अयम् ६ मूढ़ः ७ लोकः ८ मां ९ अजं १० अव्ययं ११ न १२ अभिजानाति १३ + २५ + अ०+सबको १ मैं २ प्रकट ३ नहीं ४ अर्थात् सबमुझकोनहीं जान सक्ते मेरे भक्त ही मुझको जान सक्ते हैं क्योंकि + योगमाया करके ढका हुआ हूं ५ अर्थात् मेरी योग माया अचिन्त्य है उस माया के सम्बन्ध से अभक्त अश्रद्धावान् मुझको नहीं पहचान सक्ते इसी हेतु से + यह ६ मूढ़ ७ जन ८ मुझ ९ अज १० अव्यय को ११ नह १२ जानता है १३ + २५ +

**वेदाहंसमतीतानि वर्त्तमानानिचार्जुन। भविष्याणिचभूतानि मांतुवेदनकश्चन ॥ २६ ॥**

अर्जुन १ समतीतानि २ वर्तमानानि ३ च ४ भविष्याणि ५ च ६ भूतानि ७ अहं ८ वेद ९ मां १० तु ११ कश्चन १२ न १३ वेद १४ ॥ २६ ॥ भ० उ० ॥ पीछे यह कहा कि मैं योग माया करके ढका हुआ हूं सो वह योग माया मुझको ज्ञानमें प्रति बन्ध नहीं जीवकोही मोहने वाली है जैसे बाजीगर की माया बाजीगर को नहीं मोहतीहै औरों को ही मोहती है यह कहते हैं ॥ हे अर्जुन १ पिछले २ और वर्त्तमान ३। ४ और अगले ५। ६ भूतोंको ७ मैं ८ जानताहूं ९ और मुझको १० ११ कोई १२ नहीं १३ जानता १४ अर्थात् सच्चिदानन्दसे पृथक् प्रथम तो कोई पदार्थ नहीं है और जो भ्रान्तिजन्य हैं भी तो जड़ हैं वे कैसे चैतन्यको जान सके हैं तात्पर्य आत्मा से पृथक् जो ईश्वर को कोई जाना चाहे वह मूर्खतम है क्योंकि स्पष्ट श्री महाराज कहतेहैं कि मुझको कोई नहीं जानता इस वाक्य का यही अभिप्रायहै कि आत्मासे भिन्न मुझको कोई नहीं जानता ॥ २६ ॥

**इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वंद्वमोहेनभारत। सर्वभूतानिसंमोहं सर्गेयांतिपरंतप ॥ २७ ॥**

परंतप १ सर्गे २ इच्छाद्वेषसमुत्थेन ३ द्वंद्वमोहेन ४ भारत ५ सर्वभूतानि ६ सम्मोहम् ७ यान्ति ८ ॥ २७ ॥ उ० ॥ जीवों को जो अज्ञान दृढ़ हो रहा है और विवेक नहीं होता उसमें कारण यहहै कि स्थूल शरीर के उत्पन्न होतेही अनुकूल पदार्थों में तो इच्छा और प्रतिकूल पदार्थों में द्वेष उत्पन्न हो जाता है इच्छा द्वेष क्यों उत्पन्न होते हैं इसमें हेतु यहहै कि शीतोष्णादि द्वन्द्व के निमित्त जो भ्रान्ति है अर्थात् विवेक नहीं इस वास्ते इच्छा द्वेष उत्पन्न होतेहैं तात्पर्य शीतोष्णादि के दूर करने के लिये जो प्रयत्न करनाहै सोई भ्रान्ति है क्योंकि शीतोष्णादि की प्राप्ति और उनका दूर होना प्रारब्धवशात् अवश्य भाविहै जैसे दुःख के लिये कोई यत्न नहीं करता सुखकी रक्षामें सुखकी प्राप्ति के लिये दिन रात तत्पर रहते हैं परंतु दिन रातकी तरह दुःख सुख बनाही रहता है जिनके यह बिचार नहीं वे अविवेकी अपने अविवेक से अज्ञानी बन रहेहैं यही बात इस मंत्र में कहते हैं ॥ अ० ॥ हे अर्जुन १ स्थूलशरीर

की उत्पत्ति हुये सन्ते २ अर्थात् स्थूल शरीर की उत्पत्ति के पीछे ३ इच्छा द्वेष करके उत्पन्न हुआ द्वन्द्वके निमित्त जो मोह अर्थात् विवेक न होना इस करके ३ । ४ अर्थात् इस हेतु से ३ । ४ हे अर्जुन ५ सब जीव ६ अज्ञान को ७प्राप्तहैं ८ तात्पर्य द्वन्द्व के निमित्त जो प्रयत्न करना यह अविवेक है बिना इसके त्याग किये परमेश्वर का ज्ञान और अपना ज्ञान न होगा इच्छा द्वेष यही दोनों संसार की जड़ हैं इनका त्याग अवश्य करना चाहिये + २७ +

**येषांत्वन्तगतंपापंजनानांपुण्यकर्मणाम् । तेद्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताभजंतेमांदृढव्रताः + २८ +**

येषां १ तु २ पुण्यकर्मणां ३ जनानां ४ पाप ५ अन्तगतं ६ ते ७ द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ताः ८ दृढव्रताः ९ मां १० भजन्ते ११ + २८ + उ० +शुभ कर्म करने से रजोगुण तमोगुण कम हो गयाहै जिनका उनको द्वन्द्व के निमित्त भी मोह कम होताहै वे मेरा भजन कर सक्त हैं और उनकोमेरे स्वरूप का यथार्थ ज्ञान होताहै यह कहते हैं + जिन १ । २ पुण्यकारी ३ जनों का ४ पाप ५ नष्ट हो गयाहै ६ वे ७ द्वन्द्व के निमित्त जो मोह उससे छूटे हुये ८ और दृढ़हैं व्रत नियम जिनके वे ९ मुझको १० भजते हैं ११ टी० + निष्काम शास्त्रोक्त सद्गुरु ने उपदेश किया उसमें दृढ़ विश्वास रखना कि ऐसेही है उसी के अनुसार अनुष्ठान करना यह दृढ़व्रत है जिनके + २८ +

**जरामरणमोक्षायमामाश्रित्ययतन्तिये । तेब्रह्मतद्विदुःकृत्स्नमध्यात्मंकर्मचाखिलम् + २९ +**

ये १ मां २ आश्रित्य ३ जरामरणमोक्षाय ४ यतंति ५ ते ६ तद् ७ ब्रह्म ८ विदुः ९ कृत्स्नं १० अध्यात्म ११ अखिलं १२ कर्म १३ च १४ + २९ + अ० उ० + जिसवास्ते भजन करते हैं सो कहते हैं और भगवत् का भजन करनेवाले जानने के योग्य जो पदार्थ सब को जानकर कृतार्थ हो जाते हैं यह भी कहते हैं दो श्लोकों में + जो १ परमानन्द के जिज्ञासु + मुझ परमेश्वर को २ आश्रय करके ३ जरा मरण छूटने के वास्ते ४ अर्थात् जन्म मृत्यु जरा व्याधि नाश होने के लिये ४ प्रयत्न करते हैं ५ वे ६ तिस ७ ब्रह्मको ८ जानते हैं ९ अथवा जान जावंगे कि जिस ब्रह्म के जानने से मुक्ति होती है और समस्त १० अध्यात्म ब्रह्मको ११

समस्त १२ कर्म्मों को १३ १४ जानते हैं अर्थात् भले प्रकार कर्म अध्यात्म ब्रह्म को जानते हैं इन शब्दों का अर्थ श्री महाराज आठवें अध्याय में निरूपण करेंगे + २९ +

**साधिभूताधिदैवंमांसाधियज्ञंचयेविदुः। प्रयाणका-लेऽपिचमांतेविदुर्युक्तचेतसः + ३० +**

युक्तचेतसः १ ये २ मां ३ साधिभूताधि दैवं ४ साधियज्ञं ५ च ६ विदुः ७ ते ८ प्रयाणकाले ९ अपि १० च ११ मां १२ विदुः १३ +३०+ उ०+भगवत् भक्त अन्तकाल में भी बे सन्देह भगवत् का चिंतवन करके परमेश्वर को प्राप्त होंगे भगवत् भक्तों में योग भ्रष्ट की भी शंका न करनो क्योंकि उनके अन्तःकरण का प्रेरक अन्तर्यामी उनका स्वामी अपने में मन आप लगा लेगा सिवाय इसके वे आप परमेश्वर की कृपा से समाहित चित्त होते हैं सोई कहते हैं +अ०+समाहित है चित्त जिनका १ ऐसे जो २ मुझ को ३ सहित अधिभूत और अधिदैव के और ४ सहित अधि-यज्ञके ५ । ६ जानते हैं ७ । ८ वे अन्तकाल में भी ९ । १० । ११ मुझको १२ जानेंगे १३ अर्थात् मेरेस्मरण कृपाज्ञान अन्तकालमें उनको बनारहेगा क्योंकि उनका चित्त सावधान है अधिभूतादि शब्दों का अर्थ श्री महा-राज आपही आठवें अध्यायमें निरूपण करेंगे + ३० +

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन-संवादे ज्ञानविज्ञानयोगो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

श्री स्वामी आनन्दगिरिकृत परमानन्दप्रकाशिका टीका में सात॰ वांअध्याय समाप्त हुआ ॥ ७ ॥

---



## आठवें अध्याय का प्रारम्भ हुआ ॥

**अर्जुनउवाच + किंतद्ब्रह्मकिमध्यात्मंकिंकर्मपुरु-षोत्तम। अधिभूतंचकिंप्रोक्तमधिदैवंकिमुच्यते + १ +**

पुरुषोत्तम १ तद् २ ब्रह्म ३ किम् ४ अध्यात्मम् ५ किम् ६ कर्म ७ किम् ८ अधिभूतम् ९ च १० किम् ११ प्रोक्तं १२ अधिदैवं १३ किं १४ उच्यते १५ + १ + अ० उ० + पिछले अध्याय में श्री भगवान् ने कहा

कि जो मुझ परमेश्वर का आश्रा लेकर मुक्ति के लिये यत्न करते हैं वे ब्रह्मादि सप्तपदार्थों को मुझ सहित अन्तकाल में भी जानेंगे क्योंकि मुक्ति बिना ब्रह्मज्ञान के नहींहोती यह वेदों में कहा है + ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः इति श्रुतिः + इसवास्ते अर्जुन ब्रह्मादि सप्त पदार्थों के जाननेकी इच्छाकरके प्रश्न करता है + अ० + हे पुरुषोत्तम १ सो २ ब्रह्म ३ क्याहै ४ अर्थात् जिसके जानने से मुक्ति होती है वह सोपाधिक ब्रह्म है वा निरुपाधिक शुद्धसच्चिदानन्द निराकार है जो शुद्ध सच्चिदानन्द के जानने से ही मुक्ति होतीहै तो उसका अर्थ कृपा करके मुझको समझाना चाहिये मैं तो अब तक इसी श्यामसुन्दर मूर्तिको परात्पर परब्रह्म समझता था और आपही हैं पूर्णब्रह्म परंतुसोपाधिक और निरुपाधिक का भेद मैं जाना चाहता हूं कि किस प्रकार तो आप सोपाधिक है और किस प्रकार निरुपाधिक हैं यह मेरा तात्पर्य है अर्थात् शुद्ध स्वरूप आपका क्या है और इस प्रकार + अध्यात्म ५ क्याहै ६ कर्म ७ क्याहै ८ और अधिभूतं ६। १० किसको ११ कहते हैं १२ अधिदैव १३ किसको १४ कहते हैं १५ तात्पर्य अर्जुन का यह है कि इन शब्दों के अर्थ शास्त्र में के के प्रकार के बहुत हैं और जैसे ब्रह्म शुद्धको भी कहते हैं और मायोपहित को और सगुण निर्गुण को भी ब्रह्म कहते हैं अब मैं यह जाना चाहता हूं कि वह ब्रह्मपदार्थ क्याहै जिसके जानने से मुक्त होता है इस प्रकार कर्म और जीवादि पदार्थों का अर्थ है अर्जुनका तात्पर्य यह है कि मुक्ति का हेतु ब्रह्मादि पदार्थों का ज्ञान मैं जाना चाहताहूं +१+

**अधियज्ञःकथंकोऽत्र देहेऽस्मिन्मधुसूदन। प्रयाणकालेचकथंज्ञेयोऽसिनियतात्मभिः + २ +**

मधुसूदन १ अत्र २ देहे ३ अधियज्ञः ४ कः ५ कथं ६ अस्मिन् ७ नियतात्मभिः ८ प्रयाणकाले ९ च १० कथं ११ ज्ञेयः १२ असि १३+२+ अ०+हे भगवन् १ इस २ देह में ३ अधियज्ञ ४ कौन है ५ अर्थात् जोजो कर्म शरीर मन वाणीसे होता है उसका फलदाता इस शरीरमें कौनहै+ स्वरूप बूझकर उसके रहने का प्रकार बूझताहै कि+किसप्रकार६ इसमें ७ अर्थात् इसदेहमें वह स्थित है और+समाधानहै अन्तःकरण जिनका ऐसे पुरुषों करके ८ किस प्रकार ११ जानने के योग्य १२ हो आप १३ अर्थात् समाधान अन्तःकरण वाले अन्तकाल में आपको किस प्रकार जानते हैं अर्थात् अन्तकाल में क्या उपाय सब से श्रेष्ठ करना योग्य है जिस उपाय

करने से मुक्त होजावे तात्पर्य जिनका चित समाधान है उनकी उपासना में तो संदेह है नहीं क्योंकि चित्तका निरोध होना ही उपासना का फल है अर्जुन का प्रश्न है कि उसको अन्तकाल में क्या करना चाहिये इस हेतु से स्पष्ट प्रतीत होता है कि उपासना से बढ़का उपाय बूझता है इन। श्लों का अर्थ इनहों प्रश्नों के उत्तर में सब स्पष्ट हो जावेगा + २ +

**श्रीभगवानुवाच। अक्षरंब्रह्मपरमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते। भूतभावोद्भवकरो विसर्गःकर्मसंज्ञितः + ३ +**

परमं १ ब्रह्म २ अक्षरं ३ उच्यते ४ स्वभावः ५ अध्यात्मं ६ भूतभावोद्भवकरः ७ विसर्गः ८ कर्मसंज्ञितः ९ + ३ + उ० + तीन प्रश्नका उत्तर इस श्लोकमें है ब्रह्म अध्यात्म कर्म + परम् १ ब्रह्म को २ शुद्ध सच्चिदानन्द अक्षर अखण्ड नित्य मुक्त निराकार परात्पर १ कहतेहैं ४ और जीव को ५ अध्यात्म ६ कहते हैं + भूतों को उत्पति और उद्भव करने वाला ७ जो देवतों का उद्देश करके द्रव्यका + त्याग ८ सो + कर्म संज्ञित है ९ टी० + कर्म है सज्ञा जिसको उसको कर्म संज्ञित कहते हैं तात्पर्य यज्ञ मेंहै ९ चैतन्यं यदधिष्ठानं लिंगदेह वयः पुनः + चिच्छाय लिंगदेहस्यातत्संवोजीवउच्यते + अधिष्ठान जो चैतन्य और सूक्ष्म शरीर और सूक्ष्मशरीरमें उसी चैतन्य का प्रतिबिम्ब इन सबके संघातको जीव कहते हैं ५ + ३ +

**अधिभूतंक्षरोभावःपुरुषश्चाधिदैवतम्। अधियज्ञोऽहमेवात्र देहेदेवभृतांवर + ४ +**

उ० तीन प्रश्न का उतर इस मंत्रमें है + नाशवान् १ पदार्थको २ अधिभूत ३ कहते हैं + पुरुषों को ४। ५ अधिदेव ६ कहते हैं + हे देह धारियों में श्रेष्ठ अर्जुन ७ इस ८ देह में ९ अधियज्ञ १० मैं अन्तर्यामी ११। १२ हूं + टी० + देहादि पदार्थ नाशवान हैं १२ जिस करके यह सब जगत् पूर्ण हो रहाहै अथवा सब शरीरों में जो बिराजमान है उसको बराज पुरुष हिरण्यगर्भ भी कहते हैं सूर्य मण्डल के मध्यवर्ति और व्यष्टि सब देवतोंका अधिपति समष्टि देवता है ४ पीछे अर्जुनने यह भी प्रश्न किया था कि किस प्रकार वह अधियज्ञ इस देहमें स्थित है और अधियज्ञ किसको कहते हैं श्रीभगवान् ने कहाकि अन्तर्यामी अधि-

यज्ञ में हूं इसो कहने से यह जानलेना कि ईश्वर अन्तर्यामी देहमें आकाशवत् स्थितहै जो सबका साची बुरे भले कर्मोंके फलका देनेवाला है और वह असंगहै यह समझना चाहिये तात्पर्य यहहैकि ऐसाईश्वर को समझने से मोक्षकी प्राप्ति होती है + ४ +

**अन्तकालेचमामेव स्मरन्मुक्त्वाकलेवरम् । यःप्रयातिसमद्भावं यातिनास्त्यत्रसंशयः + ५ +**

अन्तकाले १ च २ मां ३ एव ४ स्मरन् ५ यः ६ कलेवरं ७ मुक्त्वा ८ प्रयाति ९ स १० मद्भावं ११ याति १२ अत्र १३ संशयं १४ न १५ अस्ति १६ + ५ + उ० + सातवें प्रश्न का उत्तर इस मंत्र में है अर्थात् मुक्ति का मुख्य उपाययहहै + अ० + अन्तकालमें १। २ मुझ अन्तर्यामी को ३ ही ४ स्मरण करता हुआ ५ जो ६ ब्रह्म का जिज्ञासु ६ शरीरको ७ त्यागकर ८ अर्चिरादि मार्गकरके+जाताहै ९ सो १० कारण ब्रह्मको ११ प्राप्त होता है १२ इसमें १३ संशय १४ नहीं १५ है १६ + ५ +

**यंयंवापिस्मरन्भावं त्यजत्यन्तेकलेवरं । तंतमेवेति कौंतेय सदातद्भावभावितः + ६ +**

यं १ यं २ भावं ३ स्मरन् ४ वा ५ अपि ६ अंते ७ कलेवरं ८ त्यजति ९ कौंतेय १० तं ११ तं १२ एव १३ एति १४ सदा १५ तद्भावभावितः १६ + ६ + उ० + अन्तकाल में जिस पदार्थ का चिन्तवन करेगा उसीको प्राप्त होगा यह कहतेहैं ॥ अ० + जिस १ जिस २ पदार्थको ३ स्मरणकरता हुआ ४ । ५ । ६ अन्तकाल में ७ शरीर को ८ त्यागता ९ हे अर्जुन १० तिस ११ तिसको १२ ही १३ प्राप्त होताहै १४ क्योंकि + सदा १५ तिस का चिंतवन करके बस गयाहै चित्त जिसका अर्थात् सदा चिंतवन रहेगा वह पदार्थ उसके मनमें बस जायगा इस हेतु से अन्तकालमें भी उसको वही स्मरण होगा + बद्धोबद्धाभिमानीस्यात् मुक्तोमुक्ताभिमानिनः । किंवदन्तीहसत्येयं यामतिःसागतिर्भवेत् + यह कहानी सच्ची है कि जिसको यह अभिमान है अर्थात् यह मानताहै कि मैं बंधहूं परतंत्र परमेश्वर का दासहूं वह ऐसाहोहोगा और जो आत्माको स्वतंत्र असंगमुक्त मानता है वह स्वतंत्र मुक्त होगा जैसी जिसकी समझहै उसको वही गति होगी इस हेतुसे परमानन्द के उपासक परमानन्द कोही प्राप्त होंगे मूर्तियों के उपासक मूर्तियों को स्त्रीछोकरों के उपासक स्त्रीछोकरोंको प्राप्तहोंगे + ६ +

**तस्मात्सर्वेषुकालेषु मामनुस्मरयुध्यच। मय्यर्पित-मनोबुद्धि र्मामेवैष्यस्यसंशयः + ७ +**

तस्मात् १ सर्वेषु २ कालेषु ३ मां ४ अनुस्मर ५ युध्य ६ च ७ मयि ८ अर्पित मनोबुद्धिः ९ मां १० एव ११ एष्यसि १२ असंशयः १३ + ७ + उ० जब कि यह नियम है कि सदा जिस पदार्थ का चिंतवन रहैगा अन्त-काल में वह अवश्य याद आवैगा इस वास्ते सदा परमेश्वर का ही चिंत-वन करना चाहिये और बिना अन्तःकरण शुद्ध हुये परमेश्वर का स्मरण नहीं होसक्ता इस वास्ते अन्तःकरण की शुद्धि के लिये स्वधर्म का अनु-ष्ठान करना चाहिये यह कहते हैं + अ० तिस कारण से १ सब काल में २।३ मुझ अन्तर्यामी को ४ स्मरण कर ५ जो न होसके तो + युद्धकर ६ क्योंकि युद्ध करनाही क्षत्रियों का धर्म है युद्ध करने से अंतःकरण शुद्ध होता है क्षत्रियों का + मुझ में अर्पित करी हैं मन बुद्धि जिस ने ९ ऐसा होकर तू + मुझको १० ही ११ प्राप्तहोगा १२ नहीं है संशय इसमें १३ तात्पर्य प्रथम अन्तःकरण शुद्ध करके और फिर मुझमें मन लगाकर तू मुझकोही प्राप्त होगा इसमें संशय मतकर कि युद्ध करने से अन्तःक-रण शुद्ध होगा वा नहीं बे संदेह अन्तःकरण शुद्ध होगा और फिर मेरा सदा स्मरण करके मुझको प्राप्त होगा परमेश्वर में जो मन नहीं लगता है इस में यही हेतु है कि अन्तःकरण शुद्ध नहीं प्रथम उपाय मुक्तिका यही है कि निष्काम होकर भलेप्रकार कर्म्मोंका अनुष्ठान करे + ७ +

**अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसानान्यगामिना। परमंपुरु-षंदिव्यं यातिपार्थानुचिंतयन् + ८ +**

पार्थ १ अनुचिंतयन् २ परमं ३ पुरुषं ४ दिव्यं ५ याति ६ अभ्यास योग युक्तेन ७ चेतसा ८ न ९ अन्यगामिना १० + ८ + उ० + परमेश्वर के स्मरण करने में दो प्रकार साधन हैं अन्तरङ्ग वहिरंग यज्ञादि निष्काम कर्मों का अनुष्ठान करना वहिरंग साधन है और शमादि अन्तरंग साधन हैं क्रम से दोनों प्रकार के साधनों का अनुष्ठान करना आवश्यक है इसी वास्ते पहले मंत्र में वहिरंग साधन कहा अब अन्तरंग साधन कहते हैं अ० + हे अर्जुन १ शास्त्र गुरुसे जैसा स्वरूप परमेश्वर का निश्चय किया है उसी प्रकार परमेश्वर को + चिंतवन करता हुआ २ परम ३ पुरुष ४ दिव्यको ५ प्राप्त होता है ६ अर्थात् कारण ब्रह्मको अर्चि आदि

मार्ग करके प्राप्त होता है उसका अन्तरंग साधन यह है कि स्त्रीधनादि पदार्थों से मन हटाकर परमेश्वर में लगाना योग्य है जब जब किसी पदार्थ में मनजावे उसी समय वहां से हटाकर परमेश्वर में लगाना इस को अभ्यास योग कहते हैं इस + अभ्यास योग करके युक्त ७ जो चित्त ऐसे + चित्त करके ८ परमेश्वर का चिंतवन होसक्ता है और दूसरा विशेषण उस चित्त का यह है कि पीछे इस अभ्यास योगके + नहीं ९ रहता है अन्य पदार्थ में जानने का स्वभाव जिसका १० अर्थात् स्वाभाविक किसी पदार्थ में सिवाय परमेश्वर के मन नहीं जाता है ऐसे चित्तकरके कि जिसके ये दो विशेषण कहे अर्जुन परमेश्वर का चिंतवन करता हुआ परमेश्वर को ही प्राप्त होता है + ८ +

**कविं पुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः । सर्वस्यधातारमचिंत्यरूपमादित्यवर्णं तमसःपरस्तात् + ९ +**

कविं १ पुराणं २ अनुशासितारं ३ अणोः ४ अणीयांसं ५ सर्वस्य ६ धातारं ७ अचिन्त्यरूपं ८ आदित्यवर्णम् ९ तमसः १० परस्तात् ११ यः १२ अनुस्मरेद् १३ + ९ + अ० उ० + उस परम पुरुष के ये विशेषण हैं और इस मंत्रका पिछले मंत्रके साथ सम्बंध है कैसा है वह परंपुरुष + सर्वज्ञ १ अनादिसिद्ध २ नियंता प्रेरक ३ सूक्ष्म से ४ अति सूक्ष्म ५ सब का ६ पालने वाला ७ अचिंत्य शक्तिमान् होनेसे और अप्रमाण महिमा और गुण प्रभाव होने से + अचिंत्य रूप ८ आदित्यवत् स्वप्रकाश रूप ९ अर्थात् ज्ञान स्वरूप अग्नि सूर्य्यवत् उसका प्रकाश नहीं समझना केवल शुद्ध ज्ञान प्राप्ति चित् चिती चैतन्यमात्र अनुभव करना चाहिये फिर इसी को व्यतिरेक मुख करके कहते हैं + अज्ञान से १० परे ११ पूर्वोक्त ऐसे पुरुषोंको + जो १२ शुद्ध ब्रह्म का जिज्ञासु + स्मरण करता है १३ सो उसी परंपुरुष दिव्यको प्राप्त होता है पिछले मंत्रकेसाथ इसका अन्वय है फिर शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्माको ज्ञान द्वाराप्राप्तहोता है + ९ +

**प्रयाणकालेमनसाचलेन भक्त्यायुक्तोयोगबलेन चैव । भ्रुवोर्मध्येप्राणमावेश्यसम्यक् सतंपरंपुरुषमुपैतिदिव्यम् + १० +**

प्रयाण काले १ अचलेन २ मनसा ३ योगबलेन ४ च ५ एव ६ प्राणं ७ भ्रुवोः ८ मध्ये ९ सम्यक् १० आवेश्य ११ भक्त्या १२ युक्तः १३ सः १४ तं १५ परं १६ पुरुषं १७ दिव्यं १८ उपैति १९ +१० + अ० उ० + इस प्रकार सच्चिदानन्द पुरुष को जो स्मरण करता है सो तिसही सच्चिदानन्दको प्राप्त होताहै यह कहते हैं + अन्तकालमें १ अचल २ मनकरके ३ योग के बलसे ४ । ५ । ६ प्राण को ७ दोनों भ्रूके ८ बीच में ९ भलेप्रकार १० ठहराय कर ११ भक्तिकरके १२ युक्त १३ जो पुरुष जैसेपीछे कहाहै उस प्रकार का सच्चिदानन्द को स्मरण करता है + सो १४ तिस १५ परं १६ पुरुष १७ दिव्य को १८ प्राप्तहोता है १९ टी०+सिवाय सच्चिदानन्द निराकार के किसी पदार्थ साकार में स्त्री पुत्र धनादि मानापमानादि में मन नजावे २ । ३ आसन प्राणायामादि के बल से ४ सुषुम्णामार्ग करके प्राण को स्थिर करके ७ । ८ । ९ । १० । ११ उस समय सच्चिदानन्द का ध्यान करना यही भक्ति है ऐसी भक्तिकरता हुआ १२ । १३ परं पुरुष सच्चिदानन्द कोही प्राप्तहोगा अर्थात् सच्चिदानन्द रूपहोजायगा + १० +

**यदक्षरंवेदविदोवदंतिविशंतियद्यतयोवीतरागाः।यदिच्छंतोब्रह्मचर्यंचरंति तत्तेपदंसंग्रहेणप्रवक्ष्ये + ११ +**

वेदविदः १ यद् २ अक्षरं ३ वदन्ति ४ वीतरागाः ५ यतयः ६ यद् ७ विशन्ति ८ यत् ९ इच्छतः १० ब्रह्मचर्यं ११ चरंति १२ तत् १३ पदं १४ ते १५ संग्रहेण १६ प्रवक्ष्ये १७ + ११ + उ० + महा वाक्यों का अर्थ बिचारने में जो समर्थ हैं अर्थात् निर्मल और तीव्र बुद्धिवाले जो अन्तर्मुखहैं वे तो उत्तम अधिकारीहैं उनको ब्रह्मविद्याका श्रवण करना यही उपाय मुक्ति का मुख्य उनके वास्ते है और जो मन्द बुद्धि हैं और मन्द वैराग्य हैं गृहस्थ छोड़कर जिन्हेंासे ब्रह्मवित् जनोंका सेवन नहीं होसक्ता अथवा ब्रह्मबिद्या के पढ़ने वाले गुरु किसी कारण से उनको प्राप्त नहीं होते अथवा ब्रह्मविद्या के पढ़ने की सामग्री पुस्तकादि नहीं मिलती हैं जिनको ऐसे पुरुष मन्द और मध्यम अधिकारी हैं मोक्ष मार्गमें उनकेलिये परम करुणाकर श्रीभगवान् ऐसा अच्छाउपाय बताते हैं कि उस का अनुष्ठान करने से शीघ्र बे संदेह ज्ञानद्वारा मुक्तिको प्राप्तहोंगे प्रथम उस मुक्ति पदको स्तुति करते हैं फिर आगेके दो श्लोकों में उसकी प्राप्तिका उपाय कहेंगे + अ० + वेदके जानने वाले १ जिसको २ अक्षर ३ कहते हैं ४ और दूर होगया है राग जिनका ५ ऐसे + संन्यासी ज्ञाननिष्ठ

महात्मा ६ जहां ७ प्रवेश होते हैं ८ और जिसको ९ इच्छा करते हुये १० ब्रह्मचारी गुरुदेव जी के घर रह कर + ब्रह्मचर्य व्रत ११ करते हैं १२ सो १३ पद १४ तेरे अर्थ १५ संक्षेप करके १६ कहूंगा१७ अर्थात् उस पद की प्राप्ति का उपाय तुझसे कहूंगा कि जिस पद को वेदों का तात्पर्य और सिद्धान्त जानने वाले अक्षर ब्रह्म कहते हैं और सब पदार्थों में दूर होगया है राग जिनका न इस लोक के किसी पदार्थ में राग है न परलोक के किसी पदार्थ में ऐसे बिरक्त साधु महात्मा बिज्ञानी महापुरुष जिस परंपद में प्रवेश होते हैं और जिस पद की इच्छा करके ब्रह्मचारी काश्यादि क्षेत्रों में जाकर और वहां गुरुदेव की टहल करके सांगोपांग वेदों का अध्ययन करते हैं अर्थात् वेद शास्त्र भलेप्रकार पढ़ते विचारते हैं ब्रह्मचर्य व्रत में स्थित रहते हैं ऐसे पदकी प्राप्ति का उपाय तुझसे कहूंगा सावधान होकर सुन + ११ +

**सर्व्वद्वाराणिसंयम्यमनोहृदिनिरुध्यच । मूर्ध्न्याधायात्मनःप्राणमास्थितोयोगधारणाम् + १२ +**

सर्व्वद्वाराणि १ संयम्य २ मनः ३ हृदि ४ निरुध्य ५ च ६ आत्मनः ७ प्राणं ८ मूर्ध्नि ९ आधाय १० योगधारणाम् ११ आस्थितः १२+ १२+ अ० उ०+उत्तम उपासना सनातन की यह है दो मंत्रों में कहते हैं सब इन्द्रियों के द्वारों को १ रोक कर २ और मनको ३ हृदयमें ४ रोककर ५ । ६ और अपने ७ प्राण को ८ मूर्द्धा में ९ ठहराय कर १० योग धारणा को ११ आश्रय किया हुआ १२ परंगति को प्राप्त होता है अगले मंत्र के साथ इसका अन्वयहै टी०+चक्षुरादि का रूपादि के साथ सम्बन्ध नहीं होने देना इसीको इन्द्रियोंका रोकना कहतेहैं अर्थात् देह यात्रा से सिवाय दर्शनादि क्रिया नहीं करनी १ । २ अन्तःकरणको वहिर्मुख नहीं करना अर्थात् बाहर के शब्दादि पदार्थों का सङ्कल्प विकल्पनहीं करना सिवाय आत्माके किसी पदार्थ भूत भविष्यत्का चिंतवन नहींकरना सिवायआत्मा के और किसी पदार्थमें निश्चयात्मिका बुद्धि नहींकरनी अर्थात् यहपदार्थ सत्य है तात्पर्य सिवाय आत्मा के और किसी को सत्य नहीं समझना और देहादि के साथ तादात्म्यता सम्बन्ध करके अहंकार नहीं करना इसको अन्तःकरण का निरोध कहते हैं ३ । ४ । ५ प्राणायाम के अभ्यास से प्राण की गतिको मस्तक में निश्चल करके तात्पर्य प्राण का निरोध

करना चाहिये प्राणके निरोध करने सेही अन्तःकरण निरोध होता है मन की और प्राणको एक गति है ७। ८। ६। १० यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि ये आठ अंग योग के हैं इस योग का अवश्य आश्रय रखना चाहिये अवश्य अनुष्ठान करना उचित है जितनी अपनी सामर्थ्य हो इसका अनुष्ठान किये विना मन प्राणका निरोधकठिन है जब कि प्राण मन का निरोध न हुआ तो आत्मानन्द का साक्षात्होना बहुत कठिन है और जीवन्मुक्तिकाहोनातो बहुतही दुर्लभ है पूर्व संस्कार वा ईश्वर महात्मा जनों का अनुग्रह दूसरी बात है मार्ग तो अपरोक्ष ज्ञानका यही है इसके पीछे विचार है और इसका फल प्रत्यक्ष है जिसको यहयोग थोड़ासाभी प्राप्त है उसको बहुत पढ़ने सुननेकी अपेक्षानहीं ॥१२॥

**ॐमित्येकाक्षरंब्रह्मव्याहरन्मामनुस्मरन् । यःप्रयातित्यजन्देहंसयातिपरमांगतिम् ॥ १३ ॥**

ओम् १ इति २ एकाक्षरं ३ ब्रह्म ४ व्याहरन् ५ मां ६ अनुस्मरन् ७ यः ८ देहं ६ त्यजन् १० प्रयाति ११ सः १२ परमां १३ गतिं १४ याति १५ ॥ १३ ॥ अ० ८ उ० ॥ ओम् इस शब्द का उच्चारण करना वेदोंमें बहुत जगह लिखा है और इस का बड़ा प्रत्यक्ष परचाहै ॥ ओम् १ यह २ एक अक्षर ३ ब्रह्म का वाचक होनेसे ॥ ब्रह्म स्वरूप है ४ इस का दीर्घ स्वर में ॥ उच्चारण करता हुआ ५ और इसका वाच्य जो ईश्वर मैं हूं ॥ मुझ सच्चिदानन्द ईश्वर को ६ स्मरण करता हुआ ७ जो ब्रह्म का जिज्ञासु ८ शरीर को १० छोड़कर ११ अर्चिरादि मार्ग करके ॥ जाता है १२ सो १३ परं १४ गति को १५ प्राप्त होता है १६ अर्थात् ऐसे उपासक का फिर जन्म नहीं होता ब्रह्म लोक में जाकर ज्ञान द्वारा परमानन्द स्वरूप आत्मा को प्राप्त होता है ॥ जैसे घंटा का शब्द एकबेर तो बढ़ चला जाता है फिर सहज सहज कम होकर जहां से उठा था वहीं समाजाता है इसी प्रकार ओम का दीर्घ स्वरसे उच्चारण करना चाहिये थो ड़ीदेर पीछे स्थित होकर मकार में थमजाना यह उपासन बहुत बढ़कीहै ॥ ओंकारः सर्ववेदानां सारस्तत्त्वप्रकाशकः । तेन चित्तसमाधानं मुमुक्षूणां प्रकाश्यते ॥ असंख्यात श्लोकों में ओम् का अर्थ है वेद शास्त्रों में बहुत जगह जो नाम उच्चारण का माहात्म्य लिखा है वहां तात्पर्य इसी नाम के उच्चारण करने से है और तारक मंत्र यही है चारों वेद षट्शास्त्र पुराणादि इसकी टीका हैं इसको जप करने की विधि महात्मा ओंसे श्रवण करके अवश्यही

अनुष्ठान करना चाहिये अन्तकाल में एक बार उच्चारण करनेसे जब परंगतिकी प्राप्तिहोती है तो फिर क्या कहना है कि जो पहले से अभ्यास करनेवाले परंगतिको प्राप्तहों यह ओंकार सब वेदों का सार ब्रह्मतत्त्वका प्रकाश करनेवाला और चित्त का समाधान करनेवालाहै + १३ +

**अनन्यचेताःसततंयोमांस्मरतिनित्यशः। तस्याहंसुलभःपार्थनित्ययुक्तस्ययोगिनः + १४ +**

अनन्यचेताः १ यः २ मां ३ सततं ४ नित्यशः ५ स्मरति ६ पार्थ ७ तस्य ८ नित्ययुक्तस्य ९ योगिनः १० अहं ११ सुलभः १२ + १४ + अ० उ० + इसप्रकार अन्तकाल में धारण करके मेरा स्मरण नित्यप्रति दिन अभ्यासकरने वालाहो करसक्ता है बिना अभ्यासके अंतकाल में मेरा स्मरण कठिन है यहबात पहले भी कहचुके हैं श्रीभगवान् फिरभी उसी का स्मरण कराते हैं + अ० + नहीं है अन्यपदार्थ में मन जिसका अर्थात् सिवाय परमेश्वर के और किसी पदार्थ पुत्रमित्र स्त्री धनादि मेंनहीं है चित्त जिसका ऐसा ब्रह्मका जिज्ञासु + जो २ मुझ को ३ निरंतर ४ प्रतिदिन ५ स्मरण करता है ६ हे अर्जुन ७ तिस ८ नित्ययुक्त ९ योगी को १० मैंसुलभ ११ हूं और को नहीं टी०+प्रातःकाल सायंकाल पर्यंत और सायंकालसे प्रातःकाल पर्यंत अंतर न पड़े अर्थात् अष्टप्रहरके बीच में निद्रा शौच स्नान भोजनादि प्रमितक्रिया के बिनासिवाय नारायण के और किसी पदार्थ का चिन्तवन न हो ४ जबतक जीवे कोई एकदिन वा महीना वा वर्ष वा शतवर्ष तबतक उसके बीचमें सिवाय सच्चिदानन्द के और कहीं मन मुख्य होकर न जावे ५ ऐसे समाहित चित्तको मैं सुलभ हूं अर्थात् अंतकाल में मेरीप्राप्ति उसको बेसंदेह सुख पूर्वकहोगी+१४+

**मामुपेत्यपुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम् । नाप्नुवन्तिमहात्मानः संसिद्धिंपरमांगताः + १५ +**

महात्मानः १ मां २ उपेत्य ३ पुनः ४ जन्म ५ न ६ आप्नुवंति ७ परमां ८ संसिद्धिं ९ गताः १० दुःखालयं ११ अशाश्वतं १२ + १५+ अ० उ०+आपको प्राप्तिमें क्या लाभ है इस प्रश्नके उत्तरमें यह कहते हैं + महात्मा विरक्त वैराग्यवान् १ मुझको २ प्राप्तहोकर ३ अर्थात् सच्चिदानन्द रूप होकर ३ फिर ४ जन्मको ५ नहीं ६ प्राप्त होतेहैं ७ क्योंकि वे जीवते

हो + परं ८ सिद्धिको ९ अर्थात् जीवन्मुक्ति को ८ । ६ प्राप्त हे।गये हैं १० कैसाहै वह जन्म + दुःखोंको खानि स्थान है ११ फिरभी यह नहीं कि ऐसाही बना रहे क्योंकि दूसरा विशेषण उसका यहहै कि + अनित्यहै अर्थात् क्षणभंगुरहै दूसरेक्षणमें दूसरा जन्महोते देर नहीं लगती+१५+

**आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्त्तिनोऽर्जुन। मामुपेत्यतुकौन्तेय पुनर्जन्मनविद्यते + १६ +**

अर्जुन १ आब्रह्मभुवनात् २ लोकाः ३ पुनरावर्तिनः ४ कौन्तेय ५ मां ६ उपेत्य ७ तु ८ पुनः ६ जन्म १० न ११ विद्यते १२ + १६ + अ०उ० + ब्रह्म लोकादि की प्राप्ति में क्या आपकी प्राप्तिनहीं सच्चिदानन्द स्वरूपहोने मेंहीं आपकी प्राप्तिहै इसअपेक्षा में श्रीमहाराज कहतेहैं क्योंकि+हे अर्जुन १ ब्रह्मलोक से लेकर २ जितने सावयव + लोक ३ हैं सब + पुनरावर्त्ति वालेहैं अर्थात् सब लोकोंमें बैकुंठादि मेंभी जाकर लौटआता है मनुष्य लोकमें और जो ब्रह्माके साथ मुक्त सच्चिदानन्द रूपको प्राप्तहोताहै सोशुद्ध सच्चिदानन्द निराकार का उपासकही प्राप्तहोता है उससे सिवाय सबलौट आतेहैं क्योंकि वे मुक्त शुद्ध सच्चिदानन्द के उपासक नहीं अर्थात् ज्ञाननिष्ठ वे नहीं भेदवादीहैं और + हे अर्जुन ५ मुक्तशुद्ध सच्चिदानन्द के उपासक तो + मुक्त सच्चिदानन्द रूपको ६ प्राप्तहोकर ७। ८ दूसरे ६ जन्म को १० नहीं ११ प्राप्तहोतेहैं १२ तात्पर्य ब्रह्मलोकका अर्थ यह नहीं समझना कि वहलोक ब्रह्माजीका है उसमें केवल ब्रह्माजी के उपासक जाते हैं और रामकृष्णविष्णु शिवादि के उपासक गोलोक बैकुंठादि में जाते हैं वे नित्य हैं यह सब अर्थ बाद है और स्थूल बुद्धिवालों के लिये स्थूल रोचक वाक्य हैं क्योंकि सब देवतों के उपासक अपने अपने स्वामी के लोकको सबसे बड़ा और नित्य कहतेहैं प्रत्युत यह कहते हैं कि इससे सिवाय कोई दूसरा लोक है नहीं सिवाय इसके गोलोकादिका वर्णन वेदों में तो है नहीं पुराणों में सुना जाता है स्वर्ग का वर्णन वेदों में बहुत जगह है पूर्व मीमांसा वाले वेद का प्रमाणदेकर स्वर्ग को नित्य अनादि कहते हैं अब विचार करना चाहिये कि स्वर्ग को श्रीभगवान् ने क्यों अनित्य कहा जो यह कहो कि स्वर्गके नित्य प्रतिपादन करने में जो श्रुति हैं वे रोचक वाक्य हैं उनको अर्थ बाद समझना चाहिये अब विचारो कि वेद की श्रुतिको तो अर्थ बाद और रोचक माना फिर

पुराणों के वाक्यों को रोचक और अर्थवाद मानने में क्यों शंका करतेहो प्रत्युत पुराणों का वाक्य जब तक प्रमाण के योग्य नहीं कि जब तक उस वाक्य के अनुसार श्रुति न पावें क्योंकि कितने पुराण संदिग्ध हैं स्पष्ट यह बात हम कहते हैं कि भागवत दो प्रसिद्धहैं उनमें से एक बेसन्देह मनुष्यकृत है जब कि एक पण्डित ने एक पुराण बनाकर अठारहसहस्र श्लोकों का प्रचार कर दिया तो क्यों न संशय पड़ेगा उन पुराणों में कि जो श्रुति के अनुसार न होगा तात्पर्य ब्रह्मलोक पूर्ण ब्रह्म नारायण का लोक है पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द के उपासक उस लोकमें जाते हैं जब वही अनित्य है तो और को अनित्यता में क्या संदेह है ब्रह्मलोक में जाकर कोई तो ब्रह्माजी के साथ मुक्त होजातेहैं और कोई लौट आतेहैं यह बात भी इसी अध्याय में आगे कहेंगे + १६ +

**सहस्रयुगपर्य्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणोविदुः। रात्रिंयुगसहस्रांतांतेऽहोरात्रविदोजनाः + १७ +**

अहोरात्रविदः १ जनाः २ ते ३ ब्रह्मणः ४ यद् ५ अहर् ६ सहस्रयुगपर्य्यन्तम् ७ विदुः ८ रात्रिं ९ युगसहस्रान्तां १० +१७+ अ० टी०+ ब्रह्मलोकादि इस हेतु से अनित्य हैं + दिन रात के जाननेवाले अर्थात् कालकी संख्या करनेवाले १ जो + पुरुष २ वे ३ ब्रह्माजी का ४ जो ५ दिन ६ है उसको + सहस्र युग पर्यन्त ७। ४३२०००००० कहते हैं ८ अर्थात् सत्ययुग १७२८००० त्रेता १२९६००० द्वापर ८६४००० कलियुग ४३२००० इन चारों युगों का जोड़ ४३२०००० वर्ष होतेहैं ४३२०००० को १००० से गुणा जावे तो चार अरब बतीस करोड़ ४३२००००००० वर्ष होते हैं चार अरब बतीस करोड़ वर्ष का ब्रह्माजी का एक दिन होताहै और रात्रि भी इतने ही वर्षों की होती है + रात्रि को ९ भी + युग सहस्रान्ता १० कहते हैं इसप्रकार महीनों और वर्षों की कल्पना करके शत वर्ष की अवस्था आयु ब्रह्माजी की है जिस दिन ब्रह्माजी प्रयाण करते हैं उसी दिन सब लोक सावयव नाश होजाते हैं दिन रात ब्रह्माजीकी आठ अर्ब चौंसठ करोड़ वर्षों की होती है ८६४००००००० इस संख्या के निरूपण करने का तात्पर्य वैराग्य में है टी० + हज़ार युगों पर अन्त है जिसका उसको सहस्र युग पर्य्यन्त कहते हैं और हज़ार युगों का अंत है जिसका उसको युग सहस्रांता कहते हैं सहस्र युग शब्द का तात्पर्य सहस्र चौकड़ी में है + १७ +

**अव्यक्ताद्व्यक्तयःसर्वाः प्रभवंत्यहरागमे । रात्र्या-
गमेप्रलीयंते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके + १८ +**

अहरागमे १ सर्वाः २ व्यक्तयः ३ अव्यक्तात् ४ प्रभवंति ५ रात्र्यागमे ६ अव्यक्तसंज्ञके ७ तत्र ८ एव ९ प्रलीयंते १० + १८ + अ० उ० + यह मनुष्य लोक और कई लोक इससे ऊपर के और नीचे के ब्रह्माजी की रात मेंही नाश होजाते हैं और रात भर कारण रूप हुये सब अविद्या में रहते हैं फिर + अ० + दिनके आगम में अर्थात् ब्रह्माजी का दिन उदय होतेही १ सब २ व्यक्ति ३ अर्थात् सब भूत आकाशादि कार्य के सहित + अव्यक्त से ४ अर्थात् कारणरूप से + प्रकट होजाते हैं ५ और रात्रिके आगममें ६ अव्यक्त संज्ञाहै जिसकी ७ तिसमें ८ ही ९ लय होजाते हैं १० टी० + स्थावर जंगम सब ब्रह्माजीकी स्वप्न अवस्थामें लय होजाते हैं और जाग्रत् अवस्था में उसी स्वप्नमें से सब प्रकट होजाते हैं तात्पर्य यह संसार ब्रह्मलोकादि और ब्रह्मादि के सहितसब स्वप्न है यह समझकर सिवाय सच्चिदानन्द आत्माके अन्य किसी पदार्थ में प्रीति न करनी क्योंकि सब अनित्यहैं अनित्य पदार्थ वर्तमान कालमें भी दुःखका हेतु होता है + १८ +

**भूतग्रामःसएवायं भूत्वाभूत्वाप्रलीयते । रात्र्याग-
मेऽवशःपार्थ प्रभवत्यहरागमे + १९ +**

अयं १ भूतग्रामः २ सः ३ एव ४ अवशः ५ अहरागमे ६ भूत्वा ७ पार्थ ८ रात्र्यागमे ९ प्रलीयते १० भूत्वा ११ प्रभवति १२ + १९ उ० + यह नहीं समझना कि नई सृष्टि में नये जीव उत्पन्न होते हैं क्योंकि जीव नित्य और अनादि हैं और संसार अनादिशांत है इस वास्ते यह श्लोक वैराग्यके लिये कहतेहैं + अ० + यह १ भूतोंका समूह २ जो पूर्वकल्प में लय होगया था + सो ३ ही ४ परतंत्र हुआ५अर्थात् अविद्या के वश हुआ ५ दिनके आगम में ६ प्रकट + होकर ७ हे अर्जुन ८ रात्रि के आगम में ९ लय होजाता है १० और फिर दिन के आगम में सूक्ष्म + होकर ११ प्रकट होता है १२ टी० + भूत्वा भूत्वा दो बार कहने से यह अभिप्राय है कि जब तक ज्ञान नहीं होता तब तक यह चक्र चलाही जाता है इस वास्ते अवश्य ज्ञान में हीं यत्न करना चाहिये अथवा इस श्लोक का अन्वय ऐसे करना कि हे अर्जुन यह भूतों का

समुदाय भी प्रथम कल्प में था सोई अवश हुआ रात्रिके आगम में हो-कर फिर लयहोकर फिर होकरलय होजाता है और दिन के आगम में प्रकट होजाता है तात्पर्य इस अन्वय में भीव ही अक्षरों का जोड़ और प्रकार है + १६ +

**परस्तस्मात्तुभावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः। यःसःसर्वेषुभूतेषु नश्यत्सुनविनश्यति + २० +**

तस्मात् १ अव्यक्ताद् २ तु ३ यः ४ सनातनः ५ भावः ६ अव्यक्तः ७ सः ८ परः ९ अन्यः १० सर्वेषु ११ भूतेषु १२ नश्यत्सु १३ न १४ विनश्यति १५ + २० + अ० उ० + सावयव लोकोंको अनित्य कहकर शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप को परात्पर नित्य प्रतिपादन करते हैं और उसी को परमगति और अपना धाम अपने से अभिन्न कहते हैं अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप परमेश्वर से जुदा कोई धाम नहीं और न कोई जुदा मुक्ति पदार्थ है पूर्ण ब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द नित्य मुक्त आत्मा को जानना यही मुक्ति है और यही परंधाम है और यही परमेश्वर की दर्शन प्राप्ति है इस से भिन्न सब भ्रांति है यह कहते हैं दो श्लोकों में और तीसरे श्लोक में प्रथम यह पद है कि पुरुषः सपरः वहां तक अन्य है + चराचर का कारण जो अव्यक्त + तिस से १ अर्थात् पूर्वोक्त + अव्यक्त से २ भी ३ जो ४ सनातन ५ पदार्थ ६ अव्यक्त ७ है + सो ८ श्रेष्ठ ९ और विलक्षण १० है कैसा है वह कि + सर्व भूतों के ११ । १२ नाश हुये भी १३ नहीं १४ नाश होता है १५ टी० + सोपाधिक मायोपहित ब्रह्म को कारण अव्यक्त कहते हैं और शुद्ध सच्चिदानन्द अखण्ड नित्य मुक्त अद्वैत एक-रस निराकार को शुद्ध अव्यक्त कहते ज्ञान काल में उपाधि का नाश हो जाता है फि केवल अद्वैत माया रहित अखण्ड सच्चिदानन्द रह जाता है इसी को अव्यक्त निराकार कहते हैं + २० +

**अव्यक्तोऽक्षरइत्युक्तस्तमाहुःपरमांगतिं । यंप्राप्य नानिवर्त्तन्ते तद्धामपरमंमम + २१ +**

अव्यक्तः १ अक्षरः २ इति ३ उक्तः ४ तं ५ परमां ६ गतिं ७ आहुः ८ तद् ९ मम १० परमं ११ धाम १२ यं १३ प्राप्य १४ न १५ निवर्तन्ते १६ + २१ + अ० उ० + शुद्ध अव्यक्त सच्चिदानन्द को अद्वैत सिद्ध करते हैं सच्चिदानन्द से जुदा कोई और पदार्थ नहीं + अव्यक्त को १ ही अक्षर

२ कहते हैं ३।४ और तिसको ५ ही + परं ६ गतिः ७ मोक्ष मुक्तिः ७ कहते हैं ८ और सोई ६ मेरा १० परं ११ धाम १२ है कैसा है वह धाम कि + जिसको १३ प्राप्त होकर १४ नहीं १५ लौट कर आते हैं १६ अर्थात् फिर सच्चिदानन्द जीव को उपाधि का सम्बन्ध नहीं होता क्योंकि ज्ञान से उपाधि का अत्यन्त अभाव होजाता है + तात्पर्य सब दुःखों की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति को ही परंगतिः और मुक्तिः और परंधाम कहते हैं गोलोक सत्यलोक बैकुंठ अयोध्या वृन्दावन कैलासादि सब इसी अव्यक्त सच्चिदानन्द परंधाम के नाम हैं इस प्रकार समझ कर जो बैकुंठादि को नित्य परात्परकहें तो उसका कहना सत्य है और जो उनको सावयव और सच्चिदानन्द से भिन्न कहें अर्थात् बैकुंठादि को तो श्रेष्ठ मंदिर बतावे और विष्णु आदि देवतों का उन मंदिर लोकों का स्वामी भिन्न बतावे यह अर्थ बाद है अधिकार प्रतिस्थूल रोचक वाक्य हैं इस मंत्र में यह अर्थ स्पष्ट है कि परमात्मा से परमात्मा का धाम भिन्न नहीं क्योंकि परमात्मा निराकार है आप्त्रा साकारों को चाहता हैं परमेश्वर अपने को अव्यक्त अमूर्त अक्षर अखण्ड अविनाशी कहते हैं ऐसा अर्थस्पष्ट सुन देखकर भी जो फिर भी परमेश्वर को और उन के धाम को सावयव साकार सिद्धांत और परमार्थ में बतावे वह मूर्ख तम बिना पुच्छ का पशु है जिस का भगवद् वाक्य में बिश्वास नहीं + २१ +

**पुरुषःसपरःपार्थभक्त्यालभ्यस्त्वनन्यया। यस्यान्तःस्थानिभूतानि येनसर्वमिदंततम् + २२ +**

पार्थ १ सः २ परः ३ पुरुषः ४ भक्त्या ५ लभ्यः ६ तु ७ अनन्यया ८ यस्य ६ भूतानि १० अंतःस्थानि ११ येन १२ इदं १३ सर्वं १४ ततम् १५ + २२ + अ० उ० + परं गति की प्राप्तिका उपाय सब से श्रेष्ठ मुख्य ज्ञान लक्षण अनन्य परा भक्ति है इसी को उत्तम पुरुष और परं पुरुष परमात्मा कहते हैं + पुरुषान्नपरं किंचित्स काष्ठा सापरागतिः + श्रुति ने यह कहा कि पुरुष से परे श्रेष्ठ कुछ नहीं यही पुरुष परात्पर अवधि है और यही परगति है + हे अर्जुन १ सो २ परं ३ पुरुष ४ अर्थात् परब्रह्म पूर्ण नारायण सच्चिदानन्द ४ भक्ति करके ५ प्राप्त होता है ६ यह तु शब्द विलक्षण अर्थ में आता है इसजगह विलक्षणता यह है कि भजन कीर्तन सेवा प्रदक्षिणादि भक्ति का अर्थ नहीं क्योंकि आगे उस के अनन्यया विशेषण है श्री भगवान् कहते हैं कि परमात्मा भक्ति

उसके प्राप्त होती है परन्तु कैसी भक्ति करके कि + अनन्य करके ८ अर्थात् सिवाय सच्चिदानन्द के अन्य अर्थात् दूसरा कोई और पदार्थ जिस की वृत्ति में नहीं रहा ऐसी वृत्ति करके परमात्मा प्राप्त होता है घंटा बजाना परिक्रमा करनी यह तो बालक और मूर्खबहिर्मुख विषयी भी करसक्ते हैं सुन्दर पदार्थ में सब का ही मन लग जाता है सिवाय इसके यह बात स्पष्ट है कि श्रीभगवान् अर्जुन को उपदेश करते हैं श्यामसुन्दर स्वरूप तो अर्जुन को प्राप्त ही है सच्चिदानन्द निराकार आत्मा का ही उस को ज्ञान नहीं उसी को परं पुरुष श्री भगवान् बताते हैं+जिसके ६ भूत १० आकाशादि +भीतर स्थित है ११ अर्थात् सब जगत् सोपाधिक सच्चिदानन्द कारण ईश्वर में स्थित है और + जिस करके १२ यह १३ सब १४ जगत् १४ व्याप्त है १५ अर्थात् सब जगत् में सच्चिदानन्द अस्ति भाति प्रिय होकर पूर्ण हो रहा है + २२ +

**यत्रकालेत्वनावृत्तिमावृत्तिंचैवयोगिनः। प्रयाता यांतितंकालंवक्ष्यामिभरतर्षभ** + २३ +

यत्र १ काले २ तु ३ प्रयाताः ४ योगिनः ५ अनावृत्तिं ६ आवृत्तिं ७ च ८ एव ६ यांति १० भरतर्षभ ११ तं १२ कालं १३ वक्ष्यामि १४+२३+अ०उ०+ ज्ञानीजीतेही ब्रह्माजी से प्रथमही स्वतंत्रहोकर मुक्तहोता है और ब्रह्माका उपासक ब्रह्मा जीके साथ परतंत्र होकर मुक्तहोता है और कर्मनिष्ठा वाले और भेद उपासनावाले सदा परतंत्र रहते हैं स्वर्गादि में जाकरसालो कादि मुक्तिको प्राप्त होकर फिर जन्म मरण चक्र में घूमते हैं सो इनपर-तंत्र मुक्ति वालों का मार्ग मुझ से सुन आगे दो श्लोकों में कहूंगा बिना ब्रह्म ज्ञान जो इन का हाल होता है वहिर्मुख विषयी पामरों का तो कुछ प्रसंग ही नहीं वे तो संसार में डूबे रहते हैं + अ० +जिस मार्ग में १।२।३ जाते हुये ४ योगी ५ अनावृत्ति ६ और आवृत्ति को ७।८।६ प्राप्तहोते हैं १० हे अर्जुन ११ तिस १२ मार्गको १३ कहूंगा मैं १४ तुझ से आगे दो श्लोकों में अभिप्राय मेरा उन मार्गों के कहने से यह है कि जब तक बने स्वतंत्र होना चाहिये+पराधीन सपनेहुसुखनाहीं। शोचबिचारदेखु मनमाहीं टी०+कर्मनिष्ठ और भेद बादी आवृत्ति मार्ग होकर परतंत्र पराधीन हुये स्वर्गादि में जाते हैं ब्रह्म के उपासक अनावृत्ति मार्ग होकर ब्रह्मलोक में जाते हैं ज्ञानी महात्मा स्वतंत्र होकर सब से पहले मुक्त होतेहैं वे किसी के घर नहीं जाते निजानन्दको प्राप्त होते हैं +२३+

**अग्निर्ज्योतिरहःशुक्लः षण्मासाउत्तरायणम् । तत्र प्रयातागच्छन्तिब्रह्मब्रह्मविदोजनाः २४ +**

अग्निः १ ज्योतिः २ अहः ३ शुक्लः ४ षण्मासाउत्तरायणं ५ तत्र ६प्रयाताः ७ब्रह्मविदः ८जनाः ९ ब्रह्म १० गच्छन्ति ११+२४+ उ० +- सच्चिदानन्द ब्रह्म निराकारके उपासकों का अनावृत्ति मार्ग कहतेहैं अर्थात् ब्रह्मपदकी मंजिल मंजिल हैं+ अ०+ अग्निः १ ज्योतिः २ दिन ३ शुक्लपक्ष ४ छःमहीने उत्तरायण ५ इस मार्ग में ६ जाते हुये ७ ब्रह्मके जाननेवाले ८ अर्थात् ब्रह्मोपासक ८ जन ९ क्रम क्रम से अर्थात् उत्तरोत्तर मंजिल दरमंजिल+ब्रह्मको १० प्राप्त होंगे ११ अर्थात् फिर उनका जन्म न होगा ज्ञान द्वारा परमानन्द स्वरूप आत्मा को प्राप्त होंगे + टी० + अग्नि के देवता को फिर ज्योतिके फिर दिनके फिर शुक्ल पक्ष के फिर उत्तरायण के देवता को प्राप्त होंगे तात्पर्य यह है कि पहिले अग्नि के देवता के पास ब्रह्मउपासक पहुंचेंगे फिर वह देवता ज्योतिके देवताके पास पहुंचा देगा इसी प्रकार आगे भी कल्पना करलेनी इसी प्रकार ब्रह्मलोकमेंपहुंचेंगे फिर ब्रह्मा जीके साथ मुक्त हो जावेंगे अग्नि आदि शब्द देवतों के उपलक्षण हैं तात्पर्य देवतों से है यह मार्ग सनातन श्रौत उपासनाका है इसी प्रकार की उपासना इन दिनों में बहुत कम करतेहैं प्रत्युतइसके जानने वाले भी कमहैं हेतु इस में यह है कि रूप रंग नृत्यवाली उपासना में आसक्त हो रहे हैं यथार्थ उपासना और भक्ति यह है कि जिस भक्ति उपासना की वेद शास्त्रों में बड़ाई है + २४ +

**धूमोरात्रिस्तथाकृष्णः षण्मासादक्षिणायनम् । तत्र चांद्रमसंज्योतिर्योगीप्राप्यनिवर्त्तते + २५ +**

तथा १ धूमः २ रात्रिः ३ कृष्णः ४ षण्मासा दक्षिणायनम् ५ तत्र ६ योगी ७ चांद्रमसं ८ ज्योतिः ९ प्राप्य १० निवर्तते ११ +२५ +अ०उ०+ कर्मनिष्ठा वालोंका आवृत्ति मार्ग कहते हैं अर्थात् वह रस्ता कि जिस रस्ते जाकरलौट आते हैं जैसे अनावृत्ति मार्ग वाले ब्रह्मवित् अग्निआदि देवताओं को पहले प्राप्त होकर ब्रह्म को प्राप्त होते हैं फिर उनका जन्म नहीं होता + तैसे १ कर्मनिष्ठ आवृत्ति मार्ग वाले धूमादि देवतों को पहले प्राप्त होकर फिर स्वर्ग लोकको प्राप्त होकर लौटआतेहैं उनकीमंजिल यहहै + धूम २ रात्रि ३ कृष्णपक्ष ४ छः महीने दक्षिणायन ५ इनरस्तों

में ३ जाता हुआ + कर्म्मयोगी ७ चांद्रमास ८ अर्थात् स्वर्ग ९ प्राप्त होकर १० लौट आताहै ११ मनुष्य लोक में + पहिले धूमके देवता के पास जाताहै फिर रात्रिके फिर कृष्णपक्ष के फिर दक्षिणायन इस प्रकार उत्तरोत्तर क्रम क्रमसे मंजिल दर मंजिल स्वर्गमें पहुंचाता है तात्पर्य जो निवृत्ति मार्ग में स्थित होकर अंतरंग उपासना करते हैं अर्थात् सच्चिदानन्द अक्षर निराकार आत्मा का जो आराधन करते हैं वे क्रम क्रम से ब्रह्मलोक में पहुंच कर मोक्ष होंगे कर्म निष्ठ वहां का भोग भोगकर लौट आवेंगे निषिद्ध कर्म करने वाले नरक में जाकर फिर मनुष्यों में जन्म लेंगे और अति निषिद्ध कर्म करने वाले चौरासीलक्ष योनियों में भ्रमेंगे +२५+

**शुक्लकृष्णेगतीह्येतेजगतःशाश्वतेमते। एकयायात्यनावृत्तिमन्ययाऽऽवर्त्ततेपुनः + २६ +**

शुक्लकृष्णे १ एते २ गती ३ हि ४ जगतः ५ शाश्वते ६ मते ७ एकया ८ आवृत्तिं ९ याति १० अन्यया ११ पुनः १२ आवर्तते १३ + २६ + अ० टी० + शुक्ल और कृष्ण १ ये २ दो गति ३। ४ जगत्की ५ अनादी ६ मानीहैं ४ क्योंकि संसार अनादी है इस वास्ते इन दोनों मार्गों को भी अनादि मानाहै महात्मा + ही यह शब्द स्पष्ट करताहै कि यह बात वेद शास्त्रों में प्रसिद्ध है + एक करके ८ अर्थात् शुक्ल मार्ग करके ८ अनावृत्तिको ९ प्राप्त होता है १० अर्थात् फिर उसका जन्म नहीं होता ब्रह्मा जीके साथ मुक्त होजाता है जब तक ब्रह्म लोक में दिव्य भोग भोगताहै और ब्रह्म ज्ञान श्रवण करताहै और + अन्य करके ११ अर्थात् दूसरे कृष्ण मार्ग करके फिर १२ जन्म मरणको प्राप्त होता है अर्थात् कृष्ण मार्ग करके जो स्वर्गादि में जाताहै वह लौट आता है और जो शुक्ल मार्ग करके जाता है वह मुक्त होताहै +टी०+ जगत् कहने से सब जगत् नहीं समझना इस जगत् में ज्ञाननिष्ठ और कर्मनिष्ठ जो पुरुषहैं उनकी ये दोगति हैं सब जगत् की नहीं भेद वादी उपासकादि का कर्मनिष्ठ पुरुषों में अन्तर्भाव है ज्ञान प्रकाश स्वरूप है इस वास्ते उसको शुक्ल कहा और कर्म तम जड़ रूप है इस वास्ते उनका मार्ग कृष्णकहा स्पष्ट बात है कि ज्ञान मार्ग अज्ञान को दूर कर सक्ता है तात्पर्य यहहै कि ज्ञानी प्रकाश वाले रस्ते जाते हैं और अज्ञानी कामी अन्धकार के रस्ते जाते हैं अब बिचारना चाहिये कि इन दोनों मार्गोंमें से श्रेष्ठ ज्ञानमार्ग है व कर्म मार्ग है + २६ +

**नैतेसृतीपार्थजानन्‌योगीमुह्यतिकश्चन । तस्मा-त्सर्वेषुकालेषु योगयुक्तोभवार्जुन + २७ +**

पार्थ १ कश्चन २ योगी ३ एते ४ सृती ५ जानन्‌ ६ न ७ मुह्यति ८ अर्जुन ९ तस्मात्‌ १० सर्वेषु ११ कालेषु १२ योगयुक्तः १३ भव १४ + २७ + ढ०+पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द का ध्यान करने वाला योगी इन दोनोंमार्गों में प्रीति नहीं करता तात्पर्य यह है कि ब्रह्म लोकादि में जाने की इच्छा नहीं करता ब्रह्मा जी से पहलेही मुक्त हुआ चाहता है + अ० + हे अर्जुन १ कोई २ योगी ३ इन दो ४ मार्गों को ५ जानता हुआ ६ नहीं ७ मोह को प्राप्त होता है ८ बहिर्मुख विषयी सब पदार्थों के भोगने की इच्छा करते हैं जैसे इस लोक के भोग वैसेही परलोक के क्योंकि दोनों अनित्य दुःखदायी हैं जो कोई ब्रह्मलोक में जाकर मुक्त होंगे उन को क्या दुःख है इस का उत्तर यह है कि जैसे व्यवहार में राज्य करने में द्रव्य ऐश्वर्य ईश्वरता की प्राप्ति में और उन के साधनों में भी तो सुख मानते हैं और कहते हैं कि राज्य करने में क्या दुःख है ऐसाही यहप्रश्न है बिचार करो कि एक के मकान में उस की आज्ञामें रहना दुःख है व सुख है जिन्हों ने सदा स्त्री धन राज्यादि की सेवा टहल करी है उनको सेवा में ही सुख प्रतीत होता है इसी हेतु से परमेश्वर के भी दास बना चाहते हैं + हे अर्जुन ९ तिस कारण से १० सब काल में ११ । १२ योग-युक्त १३ हो तू १४ + टी० + सच्चायोगी कोईभी ब्रह्मलोकादि की इच्छा नहीं करता क्योंकि इन मार्गों को जानता है और समझता है कि जगहजगह धक्के खाकर ब्रह्म लोक में पहुंचता है फिर वहां ब्रह्मा जी बूझते हैं कि तूकौन है ऐसी तू तड़ाक नीच आदमी सहते हैं महात्मा ऐसी जगह नहीं जाते जहां कोई तू तड़ाक करे इसी वास्ते हे अर्जुन उत्साह और धीरज की कमर बांध दिन रात्रि गंगा प्रवाह वत्‌ शुद्ध सच्चिदानन्द का ध्यान कर पूर्ण सच्चिदानन्द कोही प्राप्त होगा + २७ +

**वेदेषुयज्ञेषुतपस्सुचैव दानेषुयत्पुण्यफलंप्रदिष्टम्‌ । अत्येतितत्सर्वमिदंविदित्वा योगीपरंस्थानमुपैतिचा-द्यम्‌ + २८ +**

यत्‌ १ पुण्यफलं २ वेदेषु ३ यज्ञेषु ४ तपस्सु ५ च ६ एव ७ दानेषु ८

प्रविष्टं ६ योगी १० इदं ११ विदित्वा १२ तत् १३ सर्वं १४ अत्येति १५ च १६ आद्यं १७ परं १८ स्थानं १६ उपैति २० + २८ + अ० उ० + श्रद्धा बढ़ाने के लिये योगकी स्तुति करते हैं श्री भगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन सुन ध्याननिष्ठ योगीका माहात्म्य + जो १ पुण्य फल २ वेदोंमें ३ और यज्ञों में ४ और तपमें ५। ६। ७ और दान में ८ वेदशास्त्र और महात्माओंने + कहा है ६ अर्थात् सांग और सोपांग विधिवत् वेदों के अध्ययन करनेमें जो पुण्य का फल होता है कि जैसा शास्त्र ने कहा है + ध्याननिष्ठ योगी अर्थात् पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्द निराकाररूपका ध्यान करनेवाला १० यह ११ जानकर १२ अर्थात् जो पीछे कहा वह सब फल मुझको हुआ यह समझ कर अथवा सप्त प्रश्नों का अर्थ भले प्रकार जान कर और उनका भले प्रकार अनुष्ठान करके + तिस १३ सबको १४ उलंघ जाता है १५ अर्थात् यह फल आवान्तर बीचकाफल जिसको गौण कहते हैं उसको उलंघकर उससे श्रेष्ठ फल को प्राप्त होता है अर्थात् फिर १६ आदि १७ परं १८ स्थान को १६ प्राप्त होता है अर्थात् कारण ब्रह्मको प्राप्त होता है + २८ +

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन-
संवादे महापुरुषयोगो नाम अष्टमोऽध्यायः + ८ +
स्वामी आनन्दगिरिकृत परमानन्दप्रकाशिका भाषाटीका में
आठवांअध्यायसमाप्तहुआ ॥ ८ ॥



---

## नवें अध्यायका प्रारम्भहुआ॥

**श्री भगवान् उवाच। इदंतुतेगुह्यतमं प्रवक्ष्या-म्यनसूयवे। ज्ञानंविज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वामोक्ष्यसे-ऽशुभात् + १ +**

इदं १ तु २ ज्ञानं ३ विज्ञान सहितं ४ गुह्यतमं ५ ते ६ प्रवक्ष्यामि ७ अनसूयवे ८ यत् ६ ज्ञात्वा १० अशुभात् ११ मोक्ष्यसे १२ + १ + उ० + इस अध्याय में अचिंत्य प्रभाव और अपनी अचिंत्य शक्ति निरूपण

करके तत्पदार्थ की त्वम् पदार्थ के साथ एकता लक्ष्यार्थ में दिखाकर उसकी प्राप्तिका सुलभ उपाय निरूपण करेंगे और वह उपाय सबके वास्ते असाधारण है + अ० + जो इस अध्याय में कहना है यह १ । २ ज्ञान ३ अनुभव के साथ ४ गुप्ततम ५ तेरे अर्थ ६ कहूंगा ७ कैसा है तू कि + असूया रहित है ८ अर्थात् किसीके गुणों में अवगुण आरोपण नहीं करता है तू किसी के गुणों में अवगुण आरोपण करना बड़ा अनर्थ है वह ब्रह्म विद्या का अधिकारी नहीं इस विशेषण से अर्जुन को ब्रह्म-विद्या का अधिकारी दिखाया कैसा है वह ज्ञान कि + जिस को ९ जान कर १० अर्थात् जिस ज्ञान करके आत्मा को यथार्थ जान कर + अशुभ संसार से ११ छूट जायगा तू १२ टी० + तू यह शब्द ऐसी जगह विशेष आता है कि जहां पूर्वोक्त से विलक्षण विशेष निरूपण होगा + धर्मतत्त्व गुप्त है और उपासना का तत्त्व गुप्ततर है और ज्ञान का तत्त्व गुप्ततम है ५ केवल तेरे कल्याण के अर्थ तुझ से कहूंगा मेरा कुछ मतलब नहीं ६ ऐसे कौनहैं कि गुण में अवगुण निकालें सुनो ज्ञान-निष्ठा में जो तर्क करतेहैं श्रद्धा नहीं करते जान बूझ ब्रह्म विद्या का उलटा अर्थ करतेहैं ८ तात्पर्य ब्रह्म विद्या का अधिकारी जान कर तुझ से कहूंगा तू मेरा भक्त है इस ज्ञान के आसरे से तू मुक्तहोगा कोई कोई जो यह कहते हैं कि बिना अद्वैत ब्रह्मज्ञान के भी मोक्ष होजाता है सो नहीं किन्तु इसी ज्ञान कि जो बिज्ञान के सहित मैं कहूंगा जिस से आत्मा अद्वैत जाना जावे उससे मोक्ष होगा द्वैत ज्ञान में तेरे सन्देह नहीं साक्षात् द्वैत उपासना का फल मैं प्रत्यक्ष हूं आत्मा का यथार्थ ज्ञान तुझ को नहीं वह मैं विलक्षण कहूंगा इस वास्ते तू पद इस श्लोक में है + १ +

**राजविद्याराजगुह्यंपवित्रमिदमुत्तमम्। प्रत्यक्षावगमं धर्म्यंसुसुखंकर्तुमव्ययम्** + २ +

इदं १ राजविद्या २ राजगुह्यं ३ पवित्रं ४ उत्तमं ५ प्रत्यक्षावगमं ६ धर्म्यं ७ कर्तुं ८ सुसुखं ९ अव्ययम् १०+२+उ०+इस श्लोकमें ब्रह्मज्ञानके सब विशेषण हैं + अ० + यह १ ब्रह्म ज्ञान + सब विद्या का राजा है २ अर्थात् अठारह विद्या हैं प्रसिद्ध यह सब का राजा है और + गुप्त पदार्थों का भी राजा है ३ क्योंकि कोई बिरले महात्मा जानते हैं और यह + पवित्र ४ है क्योंकि निरवयव पदार्थ है चतुर्थ अध्याय

में श्रीभगवान् ने कहा है कि ज्ञान के सदृश और कोई पदार्थ पवित्र नहीं और सब से + श्रेष्ठ ५ है क्योंकि अनेक जन्मों के पापों को अनादि काल की अविद्या को एक चण में नाश कर देता है + दृष्ट फल वाला है ६ क्योंकि आत्मा को जीते हुये ही अनुभव करादेते हैं अर्थात् ज्ञानी को परात्पर परमानन्द नित्य मुक्त की प्राप्ति जीते जी होती हैं क्योंकि ज्ञानियों को जीवन्मुक्त कहते हैं + और सब धर्मों का फल यही है सब धर्म कर्म उपासना इसी के वास्ते हैं + ७ और कहने को ८ अर्थात् अनुष्ठान करने के लिये + सुखाला हैं ९ अर्थात् सुखपूर्बक इसका अनुष्ठान हो सक्ता है क्योंकि अपना आत्मा सुख रूप है सुख को सब जानते हैं सुख पदार्थ के जानने में कुछ प्रयत्न नहीं करना पड़ता केवल इतना और समझना चाहिये कि मेरे हृदय में जो यह सुख प्रतीत होता है इसका अखंड अद्वैत पुञ्ज हूं मैं वशिष्ठ जी ने श्री रामचन्द्र जी से कहा है कि हे राम फूल के मलने में बिलम्ब और यत्न होता है ज्ञान की प्राप्ति उस से भी जल्दी होती है क्योंकि स्वयं शुद्ध आत्मा सदा प्राप्त है केवल अज्ञान दूर होना चाहिये और अज्ञान दूर होने में पल भी नहीं लगती मूर्ख बका करते हैं कि अजी ज्ञान बड़ा कठिन है देखो श्री भगवान् उन के मुख पर क्या धूल डालते हैं जड़ पदार्थों के जानने में ज्ञान की इच्छा होती है ज्ञान स्वरूप के जानने में क्या प्रयत्न चाहिये जैसे कोई कहे कि मैं अपनी आंखनहीं देखता हूं उस मूर्ख से कहना चाहिये कि जिससे तू सबको देखता है वह तेरी आंख है और जैसे कोई बोले और कहे कि मेरे मुखमें जीवहै वा नहीं ऐसे ही अज्ञानी कहते हैं कि ब्रह्मज्ञान हमको है वा नहीं सो निश्चय उनको ज्ञाननहीं और न होगा क्योंकि ज्ञान स्वरूप आत्मासे पृथक् पदार्थ को ब्रह्मजाना चाहते हैं वह कैसे प्राप्त होगा और इसका फल + अबिनाशी १० है क्योंकि आत्मानित्य है आत्मा से पृथक् सब पदार्थ अनित्य हैं प्रत्युत परमार्थ दृष्टि करके अभावरूप हैं + २ +

**अश्रद्दधानाःपुरुषा धर्मस्यास्यपरंतप। अप्राप्य मांनिवर्त्तंते मृत्युसंसारवर्त्मनि + ३ +**

परंतप १ अस्य २ धर्मस्य ३ अश्रद्दधानाः ४ पुरुषाः ५ मां ६ अप्राप्य ७ मृत्युसंसारवर्त्मनि ८ निवर्तन्ते ९ + ३ + उ० + जब कि यह ब्रह्म-

ज्ञान सब गुण सम्पन्न है तो बहुतलोग कर्म कांडी द्वैतबादी इस का क्यों नहीं आदर करते यह शंका करके कहते हैं +अ०+ हे अर्जुन १ इस २ धर्म के ३ अश्रद्धा वाले ४ पुरुष ५ अर्थात् जो ब्रह्मज्ञान में श्रद्धा नहीं करते वे + मुझ को ६ नहीं प्राप्त होकर ७ जन्म मरण रूप संसार मार्ग में ८ भ्रमा करते हैं ६ तात्पर्य अन्तःकरण मैला होनेसे और कम समझ से ब्रह्म विद्याका कर्मकांडी द्वैतबादी उपासकादि श्रवण नहीं करते इसी हेतुसे वे इस परं धर्म का अनुष्ठान नहीं करते और जो श्रवण भी करते हैं और पढ़ते भी हैं तो उसका अर्थ उलटा समझते हैं तात्पर्य अभिप्राय शास्त्र का नहीं समझते रोचकअर्थबाद वाक्योंमें विश्वास करतेहैं सिद्धान्तमें श्रद्धा नहीं करते इसी हेतु से उलटा ही फल उनको मिलता है अर्थात् वेदोक्त अनुष्ठान करने से परंफल मुक्त होना चाहिये सो वे आप अपने मुखसे यह कहते हैं कि हम वृन्दाबन के गीदड़ शृगाल हो जावें परंतु मुक्ति हम नहीं चाहते इस वाक्य को बिचारो कि जिनको मुक्तिफल में श्रद्धा नहीं तो ज्ञान निष्ठा तो मुक्ति का साधन है उसमें उनको श्रद्धा कब हो सक्ती है चतुर्थ अध्याय में कह चुके हैं कि ज्ञान को श्रद्धावान प्राप्त होताहै यह जो लोग बहिर्मुख हैं और रूप रसादिहीमें सुखसमझते हैं अन्तर सुख नहीं जानते यह बहिर्मुख होनाही ज्ञाननिष्ठा में अश्रद्धा का कारण है और यह न समझना चाहिये कि भक्ति उपासना के आश्रय सम्बन्ध आड़ मिस बहानेसे जो रूपका देखना और शब्दका सुननाहै यह विषय विषवत् नहीं इनसे कुछ क्षति नहीं होती किन्तु विषयसब बराबरहैं केवल इतना भेद है जैसे लोहेकी बेड़ी और सोनेकी बेड़ी तात्पर्य लौकिक प्रसिद्ध विषयों से वे अच्छे हैं यह बात कुछ बुरे माननेकी नहीं बिचार देखो कि राम लीलादि के देखने वाले प्रायशः विषयी बहिर्मुख पामर होतेहैं व प्रेमी बैराग्यवान् विवेकी साधन सम्पन्नहैं और शतपचास लोग जो नये श्रद्धापूर्वक ऐसी भक्ति में लगेंगे ऐसी भक्ति को पुण्यजनक मोक्षप्रदा परात्पर समझ कर भी जो लगेंगे व लगते हैं तो वे परिणाम में बहिर्मुखही रहतेहैं व अन्तर्मुख शमदमादि साधन सम्पन्न हो जातेहैं तात्पर्य यहहै कि जो ऐसा २ रस चखते हैं उनको ज्ञाननिष्ठा आपही फीकी लगेगी यह व्यवस्था सुनी हुई और अनुमानद्वारा मैंने नहीं लिखी किन्तु अपनी आंखों से देखी हुई और बरतीहुई लिखीहै ऐसे आदमियों के सामने ज्ञान का नाम भी लेना दुःख का मूलहै + ३ +

**मयाततमिदंसर्वंजगदव्यक्तमूर्त्तिना। मत्स्थानिस-र्वभूतानिनचाहंतेष्ववस्थितः + ४ +**

मया १ अव्यक्त मूर्त्तिना २ इदं ३ सर्वं ४ जगत् ५ ततं ६ सर्वभूतानि ७ मत्स्थानि ८ अहं ९ तेषु १० न ११ च १२ अवस्थितः १३ + ४ + उ० + ज्ञाननिष्ठा के अनधिकारियों को फलके सहित कहकर और अर्जुन को ज्ञान निष्ठा में श्रद्धावान् असूयारहित समझ कर अर्जुन को सम्मुख करके ब्रह्मज्ञान कहते हैं + मुझ १ अव्यक्त मूर्ति करके अर्थात् सोपाधिक सच्चिदानन्द करके २ यह ३ सब ४ जगत् ५ व्याप्त हो रहा है ६ अर्थात् इन्द्रिय मनके विषय जो जो पदार्थ हैं सब में निराकार सत् चित् आनन्द पूर्ण हो रहा है ऐसा कोई पदार्थ नहीं कि जिस में सत्ता चैतन्यता आनन्दता न हो + सब भूत सूक्ष्म स्थूल मुझ सोपाधिक सच्चिदानन्द में स्थितहैं अर्थात् कल्पित हैं ७ जैसे शुक्तिमें रजत और + मैं ८ तिनमें १० नहीं ११। १२ स्थित हूं १२ अर्थात् मैं असंग हूं मेरा किसी के साथ सम्बन्ध नहीं जैसे यह कहत हैं कि घट में आकाश है सो नहीं बास्तव घटही आकाश में है और जो भीतर भी प्रतीत होता है तो भी निर्विकार असंग है + ४ +

**नचमत्स्थानिभूतानिपश्यमेयोगमैश्वरम्। भूतभृन्नच भूतस्थो ममात्माभूतभावनः + ५ +**

भूतानि १ न २ च ३ मत्स्थानि ४ न ५ च ६ भूतस्थः ७ मे ८ योगं ९ ऐश्वर्य्यं १० पश्य ११ ममात्मा १२ भूतभृत् १३ भूतभावनः १४ +५+ उ० + परमानन्द स्वरूप नित्यमुक्त निराकार परमात्मा में त्रिगुणात्मक जगत् स्थूल सूक्ष्म औ इन दोनों का कारण अज्ञान कल्पित है यह भी जिज्ञासु के समझाने के लिये अध्यारोपमें कहा जाताहै वास्तव तीनकाल में यह जगत् नहीं परमात्मा अखंड अद्वैत नित्य मुक्त है कल्पितशब्द भी कल्पित है जो यह कहो कि इस कल्पना रूप क्रिया का कर्ता कर्म अधिकरण कौन है सुनो यह सब अविद्या है अर्थात् कर्त्ता कर्म क्रिया अधिकरण यह सब अविद्या है अर्थात् कल्पना करने वाली भी अविद्या कल्पना भी अविद्या जो पदार्थ कल्पना किया जाता है सो भी अविद्या जिस में कल्पना होती है सो भी अविद्या जिस कर के जिसके लिये जिस से होती है कल्पना वह सब अविद्या है अविद्या

का लक्षण क्या है सुनो + अविद्याया अविद्यात्वमिदमेवहिलक्षणम् + अविद्या का अविद्याही रूप है और जो कोई यह प्रश्न करे कि चैतन्य रूप आत्मा में अज्ञान होना असंभव है उससे फिर बूझना कि जब तुम आपही कहते हो हम तो प्रथमही कहचुके हैं कि तीनकाल में अज्ञान है नहीं और जो यह कहो कि अज्ञान हमको और बहुत लोगों को प्रतीत होता है तो बिचारना चाहिये कि आत्मा चैतन्य वा जड़ है प्रत्यक्ष में प्रमाण और युक्तियों की क्या आकांक्षा है और तुम कैसे कहते हो कि ज्ञानरूप में अज्ञान नहीं बनसक्ता है यह बातें अलौकिकहैं सोई परमेश्वर इस मंत्रमें कहते हैं कि वास्तव + अ० + भूत १ न २। ३ मुझमें स्थित है ४ और न ५। ६ मैं + भूतों में स्थित हूं ७ हे अर्जुन + मेरे ८ इस + योग ६ और ईश्वरता को १० देख ११ अर्थात् बिचार कर कि + मेरा आत्मा अर्थात् मैंहीं १२ असङ्ग नित्यमुक्त निर्विकारहूं और मैंहीं + भूतोंको धारण करताहूं १३ भूतों को पालन करताहूं १४ भूतों को जो धारण करे उसको भूतभृत् कहते हैं जो भूतोंको पालन करे उसको भूतभावन कहते हैं और योगशब्द जो इस मंत्रमें है उसका अर्थ अचिंत्य शक्ति है जगत् की रचना स्थिति लय के विषय बुद्धि को बहुत श्रम देना न चाहिये केवल अपने कल्याण पर दृष्टि रखनी योग्यहै जीव को स्पष्ट प्रतीत यह होता है कि मैं अज्ञान करके जगत् में फँसरहा हूं अपनी व्यवस्था और अपने घरकी व्यवस्था मुझको मालूम नहीं फिर परमेश्वर की व्यवस्था और उनकी लीला की व्यवस्था मैं कैसे जान सकूंगा। तात्पर्य अज्ञान की निवृत्ति का उपाय करना चाहिये जो बूझो कि क्या उपाय है स्पष्टबात है कि अज्ञान ज्ञान से दूर होता है जो बूझो ज्ञान किसको कहते हैं उत्तर इसका बहुतसीधा और सहज है परन्तु अधिकारीकी समझ में आता है और इस गीताशास्त्र में जगहर ज्ञानका उपदेश है प्रथम ज्ञानमें श्रद्धा करनी योग्य है और जितेन्द्रिय तत्परहोना चाहिये सद्गुरु की कृपा से ज्ञान प्राप्त हो जायगा जो श्रीभगवान् ने ऊपर निरूपण किया सब समझ में आजायगा केवल इस बात में विद्या और चर्चाका काम नहीं तीनों साधन जो पीछे कहे वे प्रथम हैं पीछे विद्या और चर्चा भी चाहिये + ५ +

**यथाकाशस्थितोनित्यंवायुःसर्वत्रगोमहान् । तथा सर्वाणिभूतानि मत्स्थानीत्युपधारय +६ +**

यथा १ महान् २ सर्वत्रग: ३ वायु: ४ नित्यं ५ आकाशस्थित: ६ तथा ७ सर्वाणि ८ भूतानि ६ मत्स्थानि १० इति ११ उपधारय १२ + ६ + उ० + दो श्लोकों में जो अर्थ पीछे निरूपण किया उस को दृष्टान्त देकर स्पष्ट करते हैं + अ० + जैसे १ अप्रमाण २ सब जगत् ३ वायु: ४ सदा ५ आकाश में स्थित है ६ तैसेही ७ सब ८ भूत ६ मुझ में स्थित हैं १० यह ११ जान तू १२ + ६ +

**सर्वभूतानिकौन्तेयप्रकृतिंयांतिमामिकाम् । कल्पक्षयेपुनस्तानि कल्पादौविसृजाम्यहम् + ७ +**

कौन्तेय १ कल्पक्षये २ सर्वभूतानि ३ मामिकां ४ प्रकृतिं ५ यांति ६ कल्पादौ ७ पुन: ८ तानि ६ अहं १० विसृजामि ११ + ७ + उ० + जगत् जैसे स्थित है सो व्यवस्था कह कर सृष्टि और लय कहते हैं अर्थात् श्रीभगवान् यह कहते हैं कि जैसे जगत् की स्थिति काल में मैं असंग हूं ऐसे ही सृष्टि और प्रलय कालमें भी असंग हूं + अ०+हे अर्जुन १ कल्प के क्षय में २ अर्थात् प्रलय काल में + सब भूत सिवाय ब्रह्मवित् के + मेरी ४ प्रकृति को ५ अर्थात् अपरा त्रिगुणात्मिका माया को + प्राप्त होते हैं ६ माया में लय होजातेहैं सूक्ष्मरूप होकर और+ कल्प के आदि में अर्थात् जगत् की सृष्टि समय ७ फिर ८ तिनको ६ मैं १० रच देता हूं ११ प्रकट कर देता हूं इत्यभिप्राय: तात्पर्य माया और उसका कार्य और परा प्रकृति जीव रूप सब परतंत्रहैं स्वतंत्र कोई नहीं सब ईश्वराधीन हैं इस वास्ते सदा ईश्वर का आराधन करना योग्य है जो स्वतंत्र और मुक्त होना चाहे सो + ७ +

**प्रकृतिंस्वामवष्टभ्य विसृजामिपुन:पुन: । भूतग्राममिमंकृत्स्नमवशंप्रकृतेर्वशात् + ८ +**

स्वां १ प्रकृतिं २ अवष्टभ्य ३ इमं ४ कृत्स्नम् ५ भूतग्रामं ६ पुन: ७ पुन: ८ विसृजामि ६ प्रकृते: १० वशात् ११ अवशं १२ +८+ उ०+ निराकार निरवयव आप जगत् को कैसे रचते हो यह शंका करकेकहते हैं + अ०+ अपनी १ प्रकृति को २ बश करके ३ अर्थात् माया के साथ सम्बन्ध करके + इस ४ समस्त ५ भूतों के समूह को ६ बारम्बार ७।८ मैं रचता हूं ६ कैसा है यह भूतग्राम अर्थात् जगत् + प्रकृति के १० बशहै ११ परतंत्र है १२ यह जगत् अपने कर्मों के बश में है स्वतंत्र

नहीं इत्यभिप्रायः + टी० + त्रिगुणात्मक जो अज्ञान है वह शुद्ध सत्व प्रधान हुआ माया कहा जाता है उस मायाके सम्बन्ध से जगत् रचता हूं और उसके मैं बश नहीं वह मेरे आधीन है और वही अज्ञान मलिन सत्व प्रधान हुआ अविद्या कहा जाता है यह समस्त जगत् अविद्या के आधीन होरहा है अर्थात् अबश परतंत्र हो रहा है उन कर्मों के अनुसार बारम्बार उन को मैं रचता हूं बारम्बार कहने से यह तात्पर्य है कि यह जगत् अनादि है असंख्यात बार उत्पन्न हुआ और नाश हुआ यह सब जगत् अविद्या के बश में है और अविद्या ईश्वरके बशमेंहै +८+

**नचमांतानिकर्माणितानिबध्नन्तिधनंजय । उदासीनवदासीनमसक्तंतेषुकर्मसु + ९ +**

धनंजय १ तानि २ कर्माणि ३ मां ४ नच ५ निबध्नन्ति ६ उदासीनवत् ७ आसीनं ८ तेषु ९ कर्मसु १० असक्तं ११ + ९ + उ०+ जब कि रचना पालना संहार करना इन क्रिया के आप कर्ता हो तो जीव वत् आप को वे बंधन कैसे नहीं करते यह शंका करके कहते हैं + अ०+हे अर्जुन १ जगत् की रचनादि जो कर्म हैं + वे २ कर्म ३ मुझको ४नहीं ५ बंधन करते हैं ६ क्योंकि मैं उदासीन वत् ७ स्थित हूं ८ और तिन ९ कर्मों में १० सक्तनहीं ११ टी० + असक्तं और आसीनं ये दोनों मां शब्द के बिशेषण हैं उदासीन भी होना और कर्म भी करना इन का स्थिति गति वत् बिरोध है इस वास्ते उदासीनवत् कहा तात्पर्य कर्म करने से जीव भी बंध को नहीं प्राप्त होता हैं कर्मों में सक्त होजाना बंध है जो जीवकर्मों में सक्त न हो तो उसको भी कर्म्म बंधन नहीं करसक्ते फिर मैं कैसे बद्ध हो सक्ता हूं + ९ +

**मयाध्यक्षेणप्रकृतिःसूयतेसचराचरम् । हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्त्तते + १० +**

प्रकृतिः १ मया २ अध्यक्षेण ३ सचराचरं ४ सूयते ५ कौन्तेय ६ अनेन ७ हेतुना ८ जगत् ९ विपरिवर्त्तते १०+१० + उ०+ जगत् की रचनादि क्रिया में विषम दोष प्रतीत होता है यह शंकाकरके कहते हैं + अ०+ प्रकृति १ मुझ २ अध्यक्षरूप करके ३ अर्थात् मुझ निमित्त मात्र कारण करके + सचराचर ४ जगत् को उत्पन्न करती है ५ हे अर्जुन ६ इस ७ हेतु करके ८ जगत् बारम्बार उत्पन्न होता है १० टी०+जगत् की रच-

नादि क्रिया में प्रकृति उपादान कारण है और मैं निमित्त कारण हूं वह प्रकृति मेरी अचिंत्य शक्ति है मुझ से भिन्न नहीं इस वास्ते मैं अभि-निमित्तोपादान कारण हूं यह बात दृष्टांत के सहित भले प्रकार आन-न्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में लिखी है निमित्त कारण होना और उदासीन रहना यह दोनों बन सक्ते हैं ऐसे जैसे प्रकाश व्यवहार में निमित्तकारण है बिना प्रकाश कुछ व्यवहार भी नहीं होसक्ता और प्रकाश में जो बुरा भला कर्म करे वह प्रकाश को नहीं लगेगा क्रिया करनेवाले को लगेगा इसी प्रकार वह विषम दोष मायामें है ईश्वर में नहीं यह बात भले प्रकार बिचारने के योग्य है जो ईश्वर को जगत्का कर्त्ताकहा जावे तो ईश्वर में विषम दोष आता है और जो माया को कर्त्ता कहा जावे तो वह जड़ है और जो जगत् को अनीश्वर कहा जावे तो वेद शास्त्रादि सब व्यर्थ हुये जाते हैं तात्पर्य यह है कि ईश्वर जगत् के अभिन्न निमित्तोपादान कारण है इस में कोई दोष नहीं बिना चैतन्य काआश्रा सम्बन्ध लिये स्वतंत्र माया जगत् को नहीं रच सक्ती और प्रकाशवत् ईश्वर को निमित मात्रहोने में कुछ दोष नहीं + १० +

**अवजानन्तिमांमूढा मानुषींतनुमाश्रितम्। परंभाव-मजानन्तो ममभूतमहेश्वरम् + ११ +**

मूल: १ मां २ अवजानंति ३ मानुषीं ४ तनुं ५ आश्रितं ६ मम ७ परं ८ भावं ९ अजानंत: १० भूत महेश्वरं ११ + ११ + उ० + जैसा स्वरूप मैंने पीछे कहा बहुत जीव मुझको ऐसा नहीं जानते हैं मनुष्यों की बराबर मुझको समझ कर मेरा निरादर करते हैं मेरे बाक्यमें जो श्रद्धा नहीं करते यही मेरी अवज्ञा है मुझ निराकार को हठ करके अज्ञान से मोहके वश होकर साकार कहते हैं + अ० + बिबेक रहित अर्थात् नित्यक्या है और अनित्यक्या है इसप्रकार आत्मा अनात्मा का जिनको बिचार नहीं ऐसे मूढ १ मुझको २ निरादर करते हैं अर्थात् मेरी अवज्ञा तिरस्कार करते हैं ३ कौनसे मेरे स्वरूपका अनादर करते हैं कि जो+ मनुष्य सम्बन्धी ४ शरीर ५ मैंने + आश्रय किया है ६ अर्थात् दुष्टों के नाशकरने को और साधु जन अपने भक्तोंकी रक्षा करने को मनुष्य कैसा आकारवाला जोमैं प्रतीतहोताहूं उसस्वरूपको मूर्ख मनुष्य राज पुत्रादिही समझतेहैं यही मेरीअवज्ञाहै + मेरे ७ परं ८ प्रभावको ९ नहीं जानते १० अर्थात् मुझको ऐसा नहीं समझते कि यह + भूतों के महेश्वर हैं ११

मुझ मनुष्याकार को मनुष्य ही समझते हैं यही मेरी अवज्ञा है + तात्पर्य अध्यारोप अपवाद न्याय करके निष्प्रपंच वस्तु सच्चिदानन्द में त्रिगुणात्मक जगत् प्रपंच निरूपण किया है महात्मा और वेदोंने वास्ते समझाने जिज्ञासु के जैसे तत्पद का वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ और त्वंपद का वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ अध्यारोप में निरूपण किया है और ईश्वर को जगत् का अभिन्न निमित्तोपादान कारण वर्णन किया फिर लक्ष्यार्थ में दोनोंपदों की एकता जैसे कही तीन सम्बन्ध और लक्षणादि करके इस प्रकार जो जीव ईश्वरको नहीं जानते अथवा जानबूझ निरादर करते हैं अर्थात् शास्त्रीयज्ञान हो भी जाता है शास्त्रके पढ़ने सुननेसे तोभी उसमें श्रद्धा नहीं करते अध्यारोप और पूर्व पक्षको श्रुति स्मृतियों का प्रमाण दे दे कर वृथा वाद करते हैं यही ईश्वर की अवज्ञा निरादर है और अपने मनुष्य शरीर में जो सच्चिदानन्द आत्मा है उसके परं प्रभाव को नहीं जानते वर्ण आश्रमवाला औरोंका दास सिद्धान्त में भी सदा समझते हैं यह सच्चिदानन्द की अवज्ञा तिरस्कार है इतिहास से इस बातको स्पष्ट करते हैं+इतिहास+एक साहूकार बालक लड़के को घरमें छोड़ परदेश में चला गया लड़का तरुण होकर वास्ते तलाश करने अपने पिता के निकला और ढूंढ़ता ढूंढ़ता पिताके पास पहुंच गया न पिता ने पहचाना न लड़के ने और उस लड़के को टहल करनेके लिये नौकर रख लिया लड़केने कहा भी उस देवदत्त साहूकार का नाम लेकर कि मैं अमुक देवदत्त साहूकार का लड़का हूं अपने पिता की तलाश करने को आया हूं उनका पता नहीं लगता कोई कहीं बताता है और कोई कहीं और मैं महादीन होगया वह साहूकार ने सुना भी और कुछ बिश्वास भी हुआ परन्तु मूर्ख सह वासियों के उपदेश से उसमें बिश्वास न किया कि यही मेरा लड़का है सदा से उसी लड़के की तलाशमें था दिन रात्रि चाहता था कि किसी प्रकार मेरा लड़का मुझको मिले एक आदमी सच्चा सद्गुणाकर बिद्यावान् उस लड़के को पहचानता था उसी जगह का रहने वाला था जहां साहूकार का पहला घरथा दैवयोग से वह आदमी साहूकार के पास जा पहुंचा लड़के को देखा पहचाना परन्तु साहूकार की प्रीति उस लड़के में पुत्रवत् न देखी इस हेतु से और अन्य कारण से भी साहूकार से यह न कहा कि इस लड़के में तेरी प्रीति पुत्र वत् क्यों नहीं और न कभी साहूकार ने बूझा था इस वास्ते भी कुछ न कहा एकदिन एकान्त में साहूकार ने उस आदमी से अपने

लड़के के स्नेह की व्यवस्था कह कर लड़के का पता बूझा और लड़के के कहने के अनुसार कुछ बिश्वास हुआ था और मूर्ख सहवासियों के कहने से लड़के में बिश्वास नहीं किया था यह सब व्यवस्था कही उस आदमी ने कहा कि तेरा लड़का बे संदेह यही है साहूकार यह सुनकर पुत्रानन्द में मग्न हो गया लड़के को छाती में लगा कर बहुत सन्मान किया और उन सह वासी उपदेश करने वाले मंत्रियों को मूर्ख और लालची समझा उस आदमी के साथ बहुत स्नेह किया अपनासुहृद हितकारी समझा इस दृष्टान्त के एक एक पद में दार्ष्टान्त हैं भलेप्रकार बिचारो जैसे साहूकार ने लड़के का तिरस्कार किया मूर्ख मंत्रियों के उपदेश से इसी प्रकार अज्ञानी जीवन ने तिरस्कार किया है सच्चिदानन्द आत्मा का मूर्खों के उपदेश से जो कोई कहे कि साहूकारके सहवासी मंत्री उप देष्टा तो मूर्ख अन जानथे उनका क्या दोष था उत्तर उस का यह है कि मूर्खों को मंत्री और उपदेष्टा बनाना किसने कहा है दार्ष्टांत में साहूकार के उपदेश करने वालों की जगह लोभी लालची कम समझ विषयी वहिर्मुख प्रवृत्ति मार्ग वाले उपदेश करने वालों को समझना चाहिये जैसे साहूकार के सहबासी मंत्रियों ने जान बूझ कर अपने खाने पीने का हर्ज समझकर लड़के में विश्वास न होने दिया इसी प्रकार प्रवृत्ति मार्ग वाले उपदेष्टा आचार्य गुरु अपने विषयानन्द में ब्रह्म ज्ञान को बिक्षेप का हेतु समझ कर आत्मा में बिश्वास नहीं होने देते नाना प्रकार की युक्ति और तर्क सिखाते हैं तात्पर्य ब्रह्म ज्ञान में मोहन भोग और तस्मई आदि पदार्थ खाने को और फूल बंगला हिंडोला नृत्यादि देखने को रागादि सुनने को स्त्री छोकरे राजादि धनी बिषयी जन चेली चेना करने को नहीं मिलते हैं इस हेतु से ब्रह्मज्ञान को भूसे का कूटना बताते हैं ऐसे पुरुषों के लक्षण और कर्म फलके सहित अगले मंत्र में श्री भगवान् निरूपण करेंगे + ११ +

**मोघाशामोघकर्माणोमोघज्ञानाविचेतसः। राक्षसीमासुरींचैवप्रकृतिंमोहिनींश्रिताः + १२ +**

मोघाशा १ मोघकर्माणः २ मोघज्ञाना: ३ विचेतस: ४ राक्षसीं ५ आसुरीं ६ च ७ एव ८ प्रकृतिं ६ मोहिनीं १० श्रिताः ११ + १२ + उ०+ जब तक शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्ण ब्रह्म आत्मा को नहीं जाना है तब तक उनका कर्म और ज्ञान और आशा ये सब निष्फल हैं क्योंकि

जो पदार्थ अनित्य है अथवा दीवार में प्रेतवत् प्रतीत होता है ऐसे पदार्थों की आशा रखनी और उनके लिये प्रयत्न करना ये सब निष्फल हैं अनित्य फल की जो प्राप्ति भी होजावे सो भी निष्फल है प्रत्युतपहले से सिवाय दुःख की हेतु है प्राप्त होकर जो पदार्थ जाता रहे उससे न मिलना उस पदार्थ का अच्छा है पिछले मंत्र में जो मूढ़ शब्द हैं उसी के इस मंत्र में विशेषण हैं कैसे हैं वे मूढ़ कि + अ० + निष्फल हैं आशा जिन की १ अर्थात् सच्चिदानन्द रूप आत्मा से अन्य ईश्वर के मिलनेकी जो आशा रखते हैं यह आशा उनको निष्फल है क्योंकि आत्मा से भिन्न परमार्थ में कोई ईश्वर नहीं और + निष्फल हैं कर्म जिनके २ अर्थात् आत्मा से पृथक् ईश्वर वा स्वर्ग बैकुंठादि की प्राप्ति के लिये जो प्रयत्न करते हैं वह भी निष्फल हैं इस में भी वही पहला हेतु है और + निष्फल हैं ज्ञान जिनके ३ अर्थात् आत्मा से भिन्न जो जो पदार्थ उन्होंने सच्चे समझरक्खे हैं सब झूठे हैं क्योंकि आत्मा अद्वैत एक है इस विशेषण से यह भी समझना चाहिये कि वे बालकवत् मूढ़ अज्ञानी नहीं अनात्म शास्त्र का उनको बहुत ज्ञान है अर्थात् अनात्माको तो यथार्थ नहीं जानते अनात्म पदार्थ बहुत जानते हैं आत्मा के यथार्थ न जानने में और मोघाशादि होनेमें ये दो हेतु हैं प्रथम यह कि वे + विक्षिप्त चित्त हैं ४ अर्थात् बहिर्मुख विषयी मूर्खवत् रूप रसादि विषयोंकी इच्छा रखते हैं अंतरसुख में वृत्ति नहीं लगाते यह हेतु हेतुगर्भित विशेषण है अर्थात् इस हेतु दूसरा हेतु यह है कि + राक्षसी ५ और आसुरी ६। ० माया ८ मोह मयी को १० आश्रय कर रक्खा है ११ अर्थात् जैसे असुर और राक्षस देहाभिमानी होते हैं ऐसे ही अज्ञानी अनात्मदर्शी होते हैं क्योंकि जिस को अन्तर आत्मानन्द प्राप्त न होगा वह बेसन्देहै विषयानन्द की कामना रक्खेगा कामना से क्रोधादि असुर राक्षसों कासा स्वभाव अवश्य होगा तात्पर्य इन दोनों मंत्रों का ज्ञान निष्ठा में प्रयत्न करने के लिये है अनात्म दर्शियों की निष्ठा हटाने में और उनकी निन्दा करने में तात्पर्य नहीं क्योंकि प्रवृत्ति मार्ग भी अधिकार प्रति मोक्षमार्ग है + १२ +

**महात्मानस्तुमांपार्थदैवींप्रकृतिमाश्रिताः। भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वाभूतादिमव्ययम् + १३ +**

पार्थ १ महात्मानः २ तु अनन्य मनसः ३ दैवीं ४ प्रकृतिं ५ आश्रिताः

६ भूतादि ७ अव्ययं ८ मां ६ ज्ञात्वा १० भजंति ११ + १३+उ०+ ऐसे पुरुष परमेश्वर का आराधन करते हैं +अ०+हे अर्जुन १ महात्मा पुरुष २ अनन्य मन हुये ३ दैवी ४ प्रकृति को ५ आश्रय किये हुये ६ आकाशादि भूतों का कारण ७ अविनाशी ८ मुझ को ६ जान कर सेवते हैं ११ टी०+ संसार को दुःख रूप मुक्ति को मुख्य पुरुषार्थ समझ कर संसार के विषयों से उपराम हुये मोक्ष में जो प्रयत्न करते हैं वे महात्मा हैं २ सिवाय श्री नारायण के और किसी जगह पुत्रमित्र स्तुति मानादि में नहीं है मन जिनका ३ सोलहवें अध्यायमें छब्बीस लक्षण दैवी सम्पत् के कहेंगे उन साधनों करके संपन्न अर्थात् धीरज वाले इन्द्रियों को बिषयों से बिमुख करने वाले ऐसे लक्षण हैं जिन में वे परमेश्वर को ही सेवते हैं स्त्री छोकरों को वहिर्मुख धनी कामी जनों को नहीं सेवते +१३+

**सततंकीर्त्तयन्तोमां यतंतश्चदृढव्रताः। नमस्यंतश्च मांभक्त्या नित्ययुक्ताउपासते + १४ +**

सततं १ कीर्त्तयंतः २ मां ३ उपासते ४ नित्ययुक्ताः ५ भक्त्या ६मां ७ च ८ नमस्यंतः ६ यतंतः १० च ११ दृढव्रताः १२ + १४ + उ० + महात्मा इस प्रकार भजन करते हैं जैसा इन दो मंत्रों में बर्णन करते हैं + अ०+महात्मा +निरंतर १ कीर्त्तन करते हुये २मुझ को ३ सेवते हैं ४ अर्थात् मोक्ष शास्त्र का पढ़ाना जिज्ञासुओं को सुनाना बिष्णुसहस्र नाम गीतादि का पाठ करना नामोच्चारण करना गुरु मंत्र गायत्री जपना और सब से श्रेष्ठ यह है कि गायत्री का जप करना यही मेरी उपासना है इस प्रकार महात्मा मेरी उपासना करते हैं कैसे हैं वे कि सदा + युक्त हुये ५ प्रेम लक्षणा भक्ति करके ६ मुझ को ७। ८ नमस्कार करते हैं ६ अर्थात् सदा यही स्मरण करते हैं कि बिश्वम्भर नारायण हमारे स्वामी हैं यह समझ कर बहुत प्रीति नम्रता के साथ ॐ नमो नारायणाय इत्यादि मंत्र पढ़ कर बारम्बार नमस्कार करते हैं फिर कैसे हैं कि मोक्ष मार्ग में सर्वाङ्ग लगा कर सदा + यत्न करते हैं १०।११ जैसे धन स्त्री की चाह वाले रुपये स्त्री के लिये प्रयत्न करते हैं औरफिर कैसे हैं कि + दृढ़ ब्रत हैं जिनके १२ अर्थात् ब्रह्मचर्यादि ब्रत में ऐसे दृढ़ हैं कि जहां तक बने स्वप्न में भी बीर्य को स्खलित नहीं होने देते बुद्धिपूर्बक बीर्य का त्याग करना तो महा पामरों पाजियों का काम है यद्यपि गृहस्थों के वास्ते अपनी स्त्री का संग करना कहीं २ लिखा है

परंतु वहां भी तात्पर्य उनका वीर्य के निरोधमें हीहै जो पुरुष वीर्य का निरोधन नहीं करसक्ता उस से मोक्ष मार्ग में प्रयत्न करना कठिन है क्योंकि घर की पूंजी को तो वृथा व्यय करता है फिर यह कैसे बिश्वास हो कि यह कुछ बाहर से कमाई करके इकट्ठा करेगा यह बीर्य एक अमोल प्रकाशमान रत्न है जिस के भीतर यह बना रहेगा वह भगवत् स्वरूप को देखसकेगा और जो यह रत्न खोदिया तो परमेश्वर के दर्शन से निराश होवे इसी प्रकार खोटा धन अपने ख़र्च में नहीं लाना किसी को किसी प्रकार दुःख नहीं देना प्रारब्ध परमेश्वर पर बिश्वास रखना और भी बहुत ऐसे अनेक दृढ़ ब्रत नियम हैं जिनके यह सब परमेश्वर की भक्ति है + १४ +

**ज्ञानयज्ञेनचाप्यन्ये यजन्तोमामुपासते । एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधाविश्वतोमुखम् + १५ +**

ज्ञानयज्ञेन १ मां २ यजंतः ३ उपासते ४ अन्ये ५ च ६ अपि ७ एकत्वेन ८ पृथक्त्वेन ६ बहुधा १० विश्वतोमुखं ११ + १५ + ख० + कोईमहात्मा तो + ज्ञान यज्ञ करके १ मुझको २ पूजते हुये ३ उपासना करते हैं ४ अर्थात् मुझ सच्चिदानन्द को सब भूतों में जानते हैं साधु महात्मा भगवद्भक्तों को जो पूजन करना उनकी सेवा उपासना करनी उनको भगवत् स्वरूप समझना यह मेरी उत्तम उपासनाहै क्योंकि जैसे मेरे रामकृष्णादि निमित्त अवतार हैं ऐसेही साधु महात्मा मेरे भक्त नित्य अवतारहैं + और कोई ५ । ६ । ७ लक्ष्यार्थ में जीव ईश्वरको एक समझकर + अभेद अद्वैत भावना करके ८ अर्थात् सोहम् ब्रह्माहमस्मि यहीनिरन्तर निदिध्यासन करते रहते हैं और कोई + पृथक् भावना करके ६ अर्थात् परमेश्वर सच्चिदानन्द घन सर्वज्ञता भक्त वत्सलता करुणादि अनेक गुण शक्ति करके युक्त नित्य मुक्त प्रभु सगुण ब्रह्म है यद्यपि मैंभी सच्चिदानन्द हूं परंतु अनादि त्रिगुण मय मायामें फँस रहा हूं उस पूर्ण ब्रह्म सगुणाकार की कृपासे छूटूंगा और अपने परमानन्द स्वरूप को प्राप्त हूंगा यह दोनों बातैं बिना भगवत् की कृपा प्राप्त न होंगी यह समझ कर पूर्ण ब्रह्म सच्चिदानन्द की उपासना करते हैं और कोई + बहुत प्रकार का १० मुझ को समझ कर मेरी उपासना करते हैं अर्थात् ब्रह्मा विष्णु महेश सूर्य शक्ति गणेश अग्नि चन्द्र राम कृष्णादि को मेराहीरूप साक्षात् मुझ सच्चिदानन्द को मूर्त्तिमान् समझ कर मेरी उपासना करते हैं और कोई +

बिराट् विश्वरूप ११ मुझको समझ कर मेरी उपासना करते हैं अपने अपने अधिकार में ये सब महात्माहैं पूर्ण ब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार निर्विकार नित्य मुक्त मेरेस्वरूपको अवश्य काल पाकर प्राप्तहोंगे+१५+

**अहंक्रतुरहंयज्ञःस्वधाहमहमौषधम् । मंत्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहंहुतम् + १६ +**

क्रतुः १ अहं २ यज्ञः ३ अहं ४ स्वधा ५ अहं ६ अहं ७ औषधं ८ मंत्रः ९ अहं १० अहं ११ एव १२ आज्यं १३ अहं १४ अग्निः १४ अहं १५ हुतम् १६ + १६ + अ०उ०+ पिछले मंत्र में दश अंकवाला जो पदहै उसकी व्याख्या चार मंत्रों में करते हैं + श्रौत यज्ञ १ अग्निष्टोमादि + अहम् २ अर्थात् मैं हूं + स्मार्त्त यज्ञ अतिथि अभ्यागत की पूजादि पंचयज्ञ ३ मैं हूं ४ पित्रों को जो अन्न दिया जाताहै मंत्र से सो ५ मैं हूं ६ मनुष्यादि जो यवादि भक्षण करते हैं सो ७ मैं हूं ८ यज्ञ में जो पढ़े जाते हैं ॐ नमःशिवाय इत्यादि मंत्र ९ मैंही हूं १० । ११ होमादि का साधन १२ मैंहूं १३ अग्नि १४ मैंहूं १५ होम १६ मैंहूं तात्पर्य ये सब अन्तःकरण शुद्धि के कारण हैं और मोक्षके साधन हैं + १६ +

**पिताहमस्यजगतोमाताधातापितामहः । वेद्यंपवित्रमोंकारऋक्सामयजुरेवच + १७ +**

अस्य १ जगतः २ अहं ३ पिता ४ माता ५ धाता ६ पितामहः ७ वेद्यं ८ पवित्रं ९ ॐकारः १० ऋक्सामयजुः ११ एव १२ च १३+ १७+ अ०+इस जगत् का १। २ मैं ३ पिता ४ माता ५ विधाता ६ पितामह ७ हूं + जानने के योग्य ८ पवित्र शुद्ध ९ प्रणव १० ऋक्सामयजुर् चारों वेदभी ११ । १२ । १३ मैंहूं टी०+उत्पन्न करने वाला पालन करने वाला कर्मोंके फलका देनेवाला वेदादि प्रमाणों का विषय प्रमेय चैतन्य मैंहीहूं सब वेद मुझकोही प्रतिपादन करते हैं चकारसे अथर्वण वेदभी जानना चाहिये ऋगादि वेद और ओम् प्रमाण भी मैंही हूं और प्रमाता प्रमाण भी मैंहीहूं इतितात्पर्यार्थः + १७ +

**गतिर्भर्ताप्रभुःसाक्षीनिवासःशरणंसुहृत । प्रभवःप्रलयःस्थानंनिधानंबीजमव्ययम् + १८ +**

गतिः १ भर्त्ता २ प्रभुः ३ साक्षी ४ निवासः ५ शरणं ६ सुहृत् ७ प्रभवः ८ प्रलयः ६ स्थानं १० निधानं ११ अव्ययं १२ बीजं १३ +१८ + अ०+ कर्मों का फल १ पोषण करने वाला २ समर्थ स्वामी ३ शुभाशुभ देखने वाला ४ भोग स्थान ५ रक्षा करने वाला ६ बे प्रयोजन हित करने वाला ७ जगत् का आविर्भाव है जिससे ८ संहर्त्ता ६ सर्व भूत स्थितहैं जिसमें १० लयका स्थान ११ अबिनाशी १२ बीज १३ मैंहूं + १८ +

**तपाम्यहमहंवर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामिच । अमृतंचैवमृत्युश्चसदसच्चाहमर्जुन + १९ +**

अहं १ तपामि २ वर्षं ३ उत्सृजामि ४ च ५ निगृह्णामि ६ अमृतं ७ च ८ एव ६ मृत्युः १० च ११ सद् १२ असद् १३ च १४ अहं १५ अर्जुन १६ + १६ + अ० + ग्रीष्म ऋतु में सूर्य में स्थित होकर मैं जगत् को तपाता हूं २ बर्षाको ३ बर्षाता हूं ४ और ५ जब कभी प्रजा पुण्य करना छोड़ देती है तब बर्षाका + निग्रह कर लेता हूं अर्थात् पानी नहीं बर्षाता हूं अमृत अर्थात् जीवना भी और मृत्युः अर्थात् भूतों का अदर्शन भी ७ । ८ । ६ । १० । ११ मैं ही हूं और + स्थूल १२ सूक्ष्म प्रपंच १३ । १४ मैं ही हूं १५ हे अर्जुन १६ तात्पर्य बहुत महात्मा इस प्रकार मुझको जानकर सर्वात्म दृष्टि कर मेरी उपासना करते हैं +१६+

**त्रैविद्यामांसोमपाःपूतपापायज्ञैरिष्ट्वास्वर्गतिं प्रार्थयन्ते । तेपुण्यमासाद्यसुरेन्द्रलोकमश्नंति दिव्यान्दिविदेवभोगान् + २० +**

त्रैविद्याः १ सोमपाः २ पूत पापाः ३ यज्ञैः ४ मां ५ इष्ट्वा ६ स्वर्गतिं ७ प्रार्थयन्ते ८ ते ६ पुण्यं १० लोकं ११ आसाद्य १२ दिवि १३ दिव्यान् १४ देवभोगान् १५ अश्नन्ति १६ + २० + अ० उ० + जो कामना करके वेदोक्त भी कर्म करते हैं उनका जन्म मरण बिना ज्ञान निष्ठा के दूर न होगा प्राकृतों का तो कुछ प्रसंग ही नहीं यह कहते हैं दो श्लोकों में + जो + तीन वेद के जानने वाले १ अमृत के पान करने वाले २ पवित्र जन ३ श्रौत स्मार्त + यज्ञों करके ४ मुझ को ५ पूजन करके ६ स्वर्ग की प्राप्ति ७ चाहते हैं ८ वे ६ पुण्य फल १० स्वर्गलोक को ११ प्राप्त होकर १२ अर्थात् पुण्यों का फल जो स्वर्ग लोक है तिस में बसकर १२

स्वर्ग में १३ दिव्य १४ अर्थात् अलौकिक जो इस लोक में नहीं स्वर्ग में ही हैं उन + देव भोगोंको १५ भोगते हैं १६ टी० + ऋक् साम यजुर् इन तीन वेद के जानने वाले अर्थात् अथर्वण वेदमें ब्रह्म बिद्या विशेष है उसको नहीं जानते १ यज्ञ के शेष भाग को अर्थात् यज्ञ में से बचा हुआ जो अन्न उस को अमृत कहते हैं उस अन्न के भोजन करने वालों का अंतःकरण शुद्ध हो जाता है जो निष्काम हो कर करेंगे नहीं तो स्वर्ग को प्राप्त होंगे इत्यभिप्रायः २ बनज नौकरी आदि लौकिक कर्म करने वालों से वैदिक कर्म करने वाले अच्छे हैं इस हेतु से वैदिक कर्म करने वाले पवित्र कहे जाते हैं ३ वेदोक्त कर्मों का जो करना है कर्म्म-कांडी इसीको ईश्वरमानते हैं अर्थात् कर्महीको स्वर्ग फलदाता समझतेहैं ४ । ५ । ६ तात्पर्य वेदोक्त कर्म्मों का निष्काम जो अनुष्ठान करना है अथवा भगवद्भक्ति और ज्ञान निष्ठा के सम्बन्धी जो कर्म हैं उन का करना बन्ध का हेतु नहीं अन्तःकरण की शुद्धि और जीवन्मुक्ति का हेतु है और मुक्ति के लिये भेद उपासना भी अच्छी है बैकुंठादि लोकों की प्राप्ति के लिये और सावयव भगवत् मूर्त्तिकी प्राप्तिके लिये जो मूर्त्तिमान् भग-वत् की सकाम उपासना करते हैं उनको भी इन्हीं लोगोंमें अन्तर भाव है कि जिनका बीसवें और इक्कीसवें श्लोकों में प्रसंग है जो फल अ-नित्य कर्मकांडियों को होगा वही फल भेद बादियोंको होगा मूर्त्तिमान् परमेश्वर की उपासना भी निष्काम करनी चाहिये रूप देखने के वास्ते न करे उसका फल अनित्य और दुःखका हेतु होगा जैसे प्रथम किसी समय दशरथ कौशल्या गोपी यशोदा नन्दादि को हुआ है और जो उसको दुःख न समझे वह बेसन्देह करे + २० +

**तेतंभुक्त्वास्वर्गलोकंविशालंक्षीणेपुण्येमर्त्यलोकंवि-शंति। एवंत्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतंकामकामालभंते + २१ +**

ते १ तं २ विशालं ३ स्वर्गलोकं ४ भुक्त्वा ५ पुण्ये ६ क्षीणे ७ मर्त्यलोकं ८ विशंति ९ एवं १० त्रयीधर्मं ११ अनुप्रपन्नाः १२ कामकामाः १३ गतागतं १४ लभंते १५ + २१ + अ० + वे १ अर्थात् शब्द स्पर्शादि विषयों की कामना वाले वेदोक्त कर्म करनेवाले सकामपुरुष १ तिस २ विशाल ३ स्वर्गको ४ भोग करके ५ अर्थात् अपने कर्मों के फलको स्वर्ग में भोग करके ५ पुण्य ६ नाश

होतेही ७ मनुष्य लोकमें ८ प्राप्तहोंगे ६ इसप्रकार १० वेदोक्तधर्म ११ करनेवाले १२ भोगोंकी कामना वाले १३ गतागतको १४ प्राप्तहोते हैं १५ अर्थात् स्वर्गादि में गये फिर वहां से धक्के खाकर मनुष्य लोक में आये फिर भी वेही कर्म किये और जब खोटे कर्म बनगये तब नरक में गये सदा वे लोग कभी नरकमें कभी स्वर्ग में कभी मनुष्य योनिमें कभी पशु पक्षियों की योनि में भटकते फिरा करते हैं सदा शुद्ध सच्चिदानन्द भगवत् से विमुख होकर भोगों के बशमें फँसे रहते हैं जब कि ऐसे लोगों की व्यवस्था है तो जो सदा लौकिक बखेड़ोंमें ही लगारहता है उसकी व्यवस्था क्या कही जावे और यह एक बारीक बात शोचनेके योग्य है कि सकाम बैदिक कर्म्म करने वालों की तो यह व्यवस्थाहै पुराणोक्त सकाम कर्म और सकाम उपासना जो करते हैं उनको क्या फल होगा अपनी अपनी बुद्धिके अनुसार बिचार करना चाहिये प्रकट करके लिख देने में बहुत लोग कि जो मोक्ष मार्ग का आश्रय लेकर भोग भोगते हैं दुःख पावेंगे बुद्धिमान् मनमें समझ लेते हैं इस शास्त्रमें जिस जगह सकाम कर्म का प्रसंग है तो उस जगह अर्थ से सकाम उपासना को भी वैसाही समझना चाहिये और जिस जगह स्वर्गादि फलका प्रसंगहै वहां बैकुंठादि फलको भी वैसाही समझना चाहिये + २१ +

**अनन्याश्चिंतयन्तोमांयेजनाःपर्युपासते । तेषांनित्याभियुक्तानां योगक्षेमंवहाम्यहम् + २२ +**

ये १ जनाः २ अनन्याः ३ मां ४ चिन्तयन्तः ५ पर्युपासते ६ तेषां ७ नित्याभियुक्तानां ८ योगक्षेमं ६ अहं १० वहामि ११ + २२ + अ०उ० + जो ज्ञाननिष्ठ पुरुष अभेद भावना करके मेरी उपासना करते हैं उनको इस लोक परलोक के पदार्थ मुक्ति पर्यन्त देकर मैंहीं रक्षाकरताहूं यह कहते हैं + जो १ जन २ अर्थात् कर्म फलके संन्यासी अभेद उपासक २ अनन्य ३ मुझको ४ चिन्तवन करते हुये ५ उपासना करते हैं ६ अर्थात् सदा वे यह चिन्तवन करते रहतेहैं कि शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण से परे सच्चिदानन्द स्वरूप तीनों अवस्थाका साक्षी जो यहहमारा आत्मा है यही पूर्ण ब्रह्महै कि जिसको महा वाक्य प्रतिपादन करते हैं इससे अन्य जुदा और कोई सच्चिदानन्द ब्रह्म नहीं इस प्रकार अनन्य हुये निदिध्यासन करते हैं शरीरादि बिजातीय पदार्थों का तिरस्कार करके सजातीय पदार्थ सच्चिदानन्द आत्मा में निर्मल अन्तःकरण को वृत्ति का

गंगावत् प्रवाह कियाहै जिन्होंने + तिन ७ नित्य आत्मनिष्ठों को ८ योगक्षेम ६ में सोपाधिक सच्चिदानन्द मायोपहित ईश्वर १० प्राप्त करता हूं ११ टी०+अप्राप्त पदार्थ को प्राप्त करना उसको योग कहतेहैं और प्राप्त पदार्थ की रक्षा करनी उसको क्षेम कहते हैं आत्मनिष्ठ पुरुषोंको आत्मतत्त्वकी प्राप्ति मेरी कृपा से होती है और मैंही उसकी रक्षाकरता हूं और करूंगा यह मेरी प्रतिज्ञा है कबतक कि जब तक ज्ञाननिष्ठा का भले प्रकार परिपाक न होगा जो कोई यह शंकाकरे कि जो भगवद्भक्त नहीं उनको क्या पदार्थ रुपये आदि नहीं मिलते हैं और उनके क्या पदार्थोंकी रक्षा नहीं होती उत्तर इसका यहहै कि जो भगवद्भक्त नहीं वे दिनरात्रि आप पदार्थों के योग क्षेम में प्रयत्न करते हैं फिर भी सन्देह रहता है और परमानन्द रूप मुक्ति से तो वे सदा विमुख रहतेहैं और जो भगवद्भक्त हैं उनको मुख्य फल पदार्थ परमानन्द स्वरूप मुक्ति तो अवश्यही मिलेगी परंतु गौण फल शरीर यात्रा के लिये अन्न वस्त्रादि उनको बेयत्न प्राप्त होते हैं और उनकी रक्षा अन्तर्यामी करता है वे सदा बे सन्देह रहते हैं जैसे कोई फलकी इच्छा करके बागमें गया वह फल तो उसको अवश्य ही मिलेगा और रस्ते में फुलवारी का देखना सुगन्धका सूंघना इत्यादि गौण फल उसको अपने आप मिल जाते हैं और मुख्य फल भी प्राप्त होता है भक्त और अभक्त के योग क्षेममें इतना भेदहै + २२ +

**येऽप्यन्यदेवताभक्ता यजन्तेश्रद्धयान्विताः। तेऽपि मामेवकौंतेय यजन्त्यविधिपूर्वकम् + २३ +**

कौन्तेय १ ये २ अपि ३ भक्ताः ४ श्रद्धया ५ अन्विताः ६ अन्य देवताः ७ यजंते ८ ते ६ अपि १० मां ११ एव १२ यजंति १३ अविधिपूर्वकं १४ + २३ + अ० उ०+जो भक्त आत्मा से जुदा विष्णु महेश राम कृष्णादि देवता को समझ कर भेद भावना करके व्यासादि के वाक्यों में विश्वास करके राम कृष्ण इन्द्रादि की उपासना करतेहैं वे भी परमेश्वर का ही भजन करते हैं परंतु वह निष्ठा उनकी अज्ञान पूर्वक है उसको स्थिरता नहीं यह बात इस मंत्र में श्री भगवान् स्पष्ट वर्णन करते हैं + हे अर्जुन १ जो २। ३ भक्त ४ श्रद्धा करके ५ युक्त ६ अन्य देवता का अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा से अन्य पृथक् सावयव वा निरवयव देवता का ७ यजन पूजा सेवा ध्यान करते हैं ८ वे ६ भी १० मेरा ही ११। १२ यजन करते हैं १३ परन्तु + अज्ञानपूर्वक १४ यजन

करते हैं तात्पर्य उनके भजने में तो सन्देह नहीं परन्तु वह भजन मेरा अज्ञानपूर्वक है क्योंकि वास्तव न मेरा स्वरूप उन्हों ने जाना न अपना परन्तु जो वह भजन निष्काम होगा तो वे भी ज्ञानद्वारा अवश्य मोक्ष होंगे और उनका योग क्षेम भी मैं ही करूंगा जो निष्काम भजन करता है बिदेह मोक्ष पर्यन्त पदार्थ उसको मैं देता हूं और रक्षा करता हूं तौ भी पशु वृत्ति का त्यागना अवश्य चाहिये जैसे पशु मनुष्यों का दास बना रहता है ऐसे ही अन्य देवता का उपासक देवता का पशु बना रहता है जो आपको ब्रह्म नहीं जानता वह निराकार सच्चिदानन्द होकर साकार रूप का दास बनकर साकारों के आधीन रहता है और आप भी साकार बनता है इससे परे और क्या अज्ञान होगा पूर्ण अनन्य को परिच्छिन्न तुच्छ एक देशी मानना जड़ चैतन्यद्रष्टा और दृश्यको एक समझना इससे परे और क्या अज्ञान होगा+तदुक्तम् + अन्योसावहमन्यो-स्मीत्युपासतेयोन्यदेवताम् । नसवेदनरोब्रह्मसदेवानांयथापशुः । तात्पर्यार्थ इस मंत्र का ऊपर लिखा गया + २३ +

**अहंहिसर्वयज्ञानां भोक्ताचप्रभुरेवच । नतुमामभि-जानंति तत्त्वेनातश्च्यवंतिते + २४ +**

सर्वयज्ञानां १ भोक्ता २ च ३ प्रभुः ४ एव ५ च ६ अहं ७ हि ८ मां ९ तत्त्वेन १० न ११ तु १२ अभिजानंति १३ अतः १४ ते १५ च्यवंति १६ + २४ + अ० उ० + पिछले मंत्र में कहा कि भेदबादी अज्ञान पूर्वक मेरा भजन करते हैं इस मंत्र में फिर उसी बातको स्पष्ट करते हैं+सब यज्ञोंका १ भोक्ता२ । ३ और+स्वामी ४।५ । ६ मैं ७ ही ८ हूं + मुझको ९ तत्त्वसे १० नहीं ११ । १२ जानते १३ इस वास्ते १४ वे १५ गिर पड़ते हैं १६ तात्पर्य श्रौत स्मार्त सब यज्ञोंका भोगने वाला और मालिक मैं सच्चिदानन्द हूं मुझको यथार्थ नहीं जानते अर्थात् यह नहीं समझते कि फल दाता अंतर्यामी सच्चिदानन्द मायोपहित हुआ वही एक शुद्ध सच्चिदानन्द रूप यज्ञोंका स्वामी और फलदाता है अबिद्योपहित हुआ वही उस फल का भोगता है और वह मुझ सच्चिदानन्द रूप आत्मा से कोई जुदा बास्तव सच्चिदानन्द नहीं इस प्रकार जो ईश्वर का स्वरूप नहीं जानते वे इस हेतु से जन्म मरण के चक्र में घूमते हैं इस मंत्र में प्रभु शब्द तत्पदका वाच्यार्थ है और भोगता शब्द त्वंपदका वाच्यार्थ है ल-

च्यार्थ में दोनों की एकता श्रीभगवान् स्पष्ट कहते हैं कि प्रभु भी और भोक्ता भी दोनों मैं हीहूं अहं शब्द का लक्ष्यार्थ में तात्पर्य है अर्थात् श्रीभगवान् कहते हैं कि मैं शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप मायोपहित हुआ तो सबयज्ञों का फलदाता हूं और अविद्योपहित हुआ उसीफलका मैं ही भोगता हूं अब विचार करना चाहिये कि जप स्वाध्याय इन्द्रिय प्राणादि का निरोधादि जो यज्ञ चतुर्थ अध्याय में श्रीभगवान् ने निरूपण करे हैं उनका भोक्ता ईश्वर है वा जीव + २४ +

**यांतिदेवव्रतादेवान्पितॄन्यांतिपितृव्रताः। भूतानि यांतिभूतेज्यायांतिमद्याजिनोऽपिमाम + २५ +**

देवव्रता: १ देवान् २ यांति ३ पितृव्रता: ४ पितॄन् ५ यांति ६ भूतेज्या: ७ भूतानि ८ यांति ६ मद्याजिन: १० मां ११ अपि १२ यांति १३ + २५ + अ० उ० + भेद भावना करके व अभेद भावनाकरके जो परमेश्वर का आराधन करते हैं उन दोनों का फल इस मंत्रमें कहते हैं + देवतों के उपासक १ देवतों को २ प्राप्त होते हैं ३ पित्रों का उपासक ४ पित्रों को ५ प्राप्त होतेहैं ६ भूतों के उपासक ७ भूतों को ८ प्राप्त होते हैं ६ मेरे उपासक १० मुझको ११ ही १२ प्राप्त होते हैं १३ टी० + ब्रह्मा विष्णु महेश राम कृष्णादि और इन्द्रादि मूर्तिमान् देवतों के आराधन करने वाले १ सालोक्य सारूप्य सामीप्य सायुज्यको प्राप्त होतेहैं २ विनायक मातृगण भूतों के पूजने वाले मातृगण भूतोंमें जा मिलेंगे और इस कलियुग में जो मीरां डूंगादि पीरोंका भूत प्रेतों का जो पूजन करतेहैं वे उनको ही प्राप्त होंगे अर्थात् मर कर सब भूत प्रेतबनेंगे ७ और मुझ शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्माके यजनकरनेवाले अर्थात् ज्ञाननिष्ठावाले १० मुझ नित्यमुक्त परमानन्दस्वरूप निराकार निर्विकारको ११ अवश्यनिश्चय१२ प्राप्त होंगे १३ अर्थात् नित्य मुक्त परमानन्द स्वरूप ही हो जावेंगे + मांशब्द का अर्थ जो सावयव मूर्तिमान् वासुदेव किया जावे तो इस गीता शास्त्र को योगशास्त्र ब्रह्म विद्या कहना नहीं बनता क्योंकि इस अर्थ में यह ग्रंथ स्पष्ट एक देशी प्रतीत होता है मूर्तिमान् वासुदेव श्री कृष्णचन्द्र महाराज के उपासकों का यह ग्रंथहुआ औरों को इससे क्या प्रयोजन रहा यह बात नहीं किन्तु माम् शब्द का अर्थ सच्चिदानन्द निराकार है सो वह नित्य है उस से पृथक् सब अनित्य है इतने में ही तात्पर्यार्थ समझलेना श्री महाराज ने आठवें अध्याय में स्पष्टकह दिया है कि ब्रह्म-

लोक से बड़ा और कोई लोकनहीं क्योंकि उसका निरूपण वेदों में है जब उसी को अनित्य कहा तो औरों को कैमुतिकन्याय से अनित्य समझलेना चाहिये और ब्रह्म शब्द का अर्थ बड़ा बृहत् है इस प्रकार नहीं समझना कि ब्रह्मलोक केवल ब्रह्माजी के लोक को कहते हैं ब्रह्माजी से बिष्णु महेश बड़े हैं उनके लोक जुदे हैं सो नहीं किन्तु पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर के सावयव लोकका नाम ब्रह्मलोक है और वह एकही है सत्यलोक बैकुंठ कैलासादि यह पुराणों की प्रक्रिया है + २५ +

**पत्रंपुष्पंफलंतोयंयोमेभक्त्याप्रयच्छति । तदहंभक्त्युपहृतमश्नामिप्रयतात्मनः + २६ +**

यः १ पत्रं २ पुष्पं ३ फलं ४ तोयं ५ मे ६ भक्त्या ७ प्रयच्छति ८ तद् ९ भक्त्या १० उपहृतं ११ प्रयतात्मनः १२ अहं १३ अश्नामि १४ + २६ + अ० उ० + परमेश्वर का दासहूं मैं इस प्रकार भेद भावना करके श्रद्धापूर्वक परमेश्वर की जो भक्ति करते हैं उनको ज्ञाननिष्ठा की प्राप्ति का सुलभ उपाय श्री भगवान् बताते हैं + जो १ भक्त+पत्र २ फूल ३ फल ४ जल ५ मेरे अर्थ ६ भक्ति करके ७ अर्पण करता है ८ सो ९ भक्तिकरके १० अर्पणकिया हुआ ११ पदार्थ थोड़ा भी रूखा सूखा + शुद्धान्तःकरणवाले अपने भक्त का १२ मैं १३ आदरपूर्वक प्रीति के साथ + खाता हूं अर्थात् ग्रहण करता हूं तात्पर्य पत्र तुलसी बिल्वपत्रादि और जल सदा शिव जी पर जो चढ़ाते हैं उससे महेश्वर प्रसन्न होते हैं श्री महाराज कहते हैं कि मैं फल भोजन करता हूं फूल सूंघता हूं पत्र ग्रहण करताहूं जल पान करताहूं जैसे गुलदस्ते में फूल भी होते हैं उसको हाथमें ग्रहणकर के फूलों को सूंघते और पत्रों को देखते हैं दुर्योधन की मेवात्यागी शाक बिदुर घर खायो इसी प्रकार किसी जगह पत्रका भोजनभी होताहै+२६+

**यत्करोषियदश्नासियज्जुहोषिददासियत् । यत्तपस्यसिकौन्तेयतत्कुरुष्वमदर्पणम् + २७ +**

कौन्तेय १ यत् २ करोषि ३ यद् ४ अश्नासि ५ यत् ६ जुहोषि ७ यत् ८ ददासि ९ यत् १० तपस्यसि ११ तत् १२ मदर्पणं १३ कुरुष्व १४ +२७+ अ० उ० + परम करुणाकर श्री भगवान् उससे भी और सुलभ उपाय बताते हैं पत्रादि करके जो श्री नारायण का पूजन करना है सो परतंत्र है यह स्वतंत्र उपाय सुन + हे अर्जुन १ जो २ करता है तू ३ जो ४ खाता है

तू ५ जो ६ होम करता है तू ७ जो ८ देता है तू ९ जो १० तप करता है तू ११ सो १२ सब + मेरे अर्पण १३ करतू १४ तात्पर्य्य लौकिक वैदिक शुभाशुभ जो तू कर्म करता है अर्थात् जो खाता है पहरता है होम करता है देता है तप करता है हे अर्जुन सबको मेरे अर्पण कर तात्पर्य निष्काम हो फल की इच्छा मतकर + आत्मात्वंगिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं पूजाते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधि स्थितिः। संचारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वागिरो यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शंभो तवाराधनम्॥ यह शरीर आपका घर शिवालय है इस शरीर में सदा शिव रूप सच्चिदानन्द आत्मा आपही बुद्धि श्री पार्बती जी हैं आपके साथ चलने वाले नौकर प्राण हैं ये जो मैं बिषयानन्द के वास्ते बिषय भोगता हूं खाता पीता देखता सुनता बोलता स्पर्शकरता हूं यही मैं आपकी पूजा करता हूं निद्रा मेरी समाधि है फिरनामेरा आपकी प्रदक्षिणा है जो कुछ मैं बोलता हूं यह सब आपकी स्तुति करता हूं जो जो और भी मैं कर्म करता हूं हे चन्द्रशेखर सब प्रकार आपका ही मैं आराधन करता हूं आप आशुतोष हो जल्दी मुझपर कृपा करो बिदेह मुक्तिको मैं प्राप्त हूं + २७ +

**शुभाशुभफलैरेवंमोक्ष्यसेकर्मबन्धनैः। संन्यासयोगयुक्तात्माविमुक्तोमामुपैष्यसि + २८ +**

एवं १ शुभाशुभफलैः २ कर्मबंधनैः ३ मोक्ष्यसे ४ संन्यासयोगयुक्तात्मा ५ विमुक्तः ६ मां ७ उपैष्यसि ८ + २८ + अ० उ० + निष्काम कर्मकरने वाले निष्फल नहीं रखते उनको अनन्त अविनाशी परमानन्दफल प्राप्त होता है इस हेतुसे हे अर्जुन इसप्रकार तू मेरी भक्ति करताहुआ बेसंदेह मुक्त अविनाशी परमानन्दरूपको प्राप्त होगा यह कहते हैं इस श्लोक में + शुभ अशुभफल हैं जिनके २ तिन कर्म बंधनों से ३ छूट जायगा तू ४ फिर पीछे + संन्यासीयोग करके युक्तहै आत्माअन्तःकरण जिसका ऐसा तू ५ होकर + जीवन्मुक्तहुआ ६ शरीरपात के पीछे + मुझ परमानन्द स्वरूप नित्यमुक्त पूर्णब्रह्म शुद्ध अनन्त आत्माको ७ प्राप्त होगातू ८ तात्पर्य निष्काम उपासना करनेसे चित्त शुद्ध होकर एकाग्र होजाता है फिर कर्म उसको अपने आप बंधनविक्षेपरूप प्रतीतहोने लगते हैं उनसब कर्मोंका त्याग करके बिरक्त संन्यासी होजाता है तब बिरक्त अवस्थामें ज्ञाननिष्ठा प्राप्तहोती है फिर जीते जी उस परात्पर परमानन्द को अनुभव

करता है और जीवन्मुक्तहुआ बिचरता है प्रारब्ध कर्म नाशहोने के पीछे देहपात हो जाताहै मूलाज्ञान कार्यसहित नाश होजाता है यही सब अनर्थोंकी निवृत्ति और परमानन्दकीप्राप्तिहै इसीकानामकैवल्यमुक्तिहै+२८+

**समोहंसर्वभूतेषुनमेद्वेष्योस्तिनप्रियः । येभजंतितुमांभक्त्यामयितेतेषुचाप्यहम् + २९ +**

सर्व भूतेषु १ अहं २ समः ३ न ४ मे ५ द्वेष्यः ६ अस्ति ७ न ८ प्रियः ९ तु १० ये ११ मां १२ भक्त्या १३ भजन्ति १४ ते १५ मयि १६ तेषु १७ च १८ अपि १९ अहं २० + २९ + अ०टी० + कोई कोई प्राणी अपने को बड़ी समझ वाला समझ कर भगवत् भक्ति रहित यह कहा करते हैं । बिना भक्ति तारो तो तारबो तिहारो है ॥ यह आलसी बिषयी वहिर्मुखों की बात है इस वाक्य से यद्यपि महिमा भगवत् की पाई जाती है परन्तु भक्ति का माहात्म्य जाता है तात्पर्य इस वाक्य का भगवत् माहात्म्य में समझना चाहिये इस जगह भक्तिके माहात्म्य का प्रसंग है क्योंकि भगवत् अपने को राग द्वेषादि रहित सम कहते हैं दूसरे का भला बुरा बिना राग द्वेषनहीं हो सक्ता बिना भक्ति भगवत् यदि किसी का भला करें तो बड़ी बिषमता की बात है अन्य जीव भक्ति फिर क्यों करेंगे तात्पर्य भगवत् भक्ति करनी आवश्यक है सोई कहते हैं + सब भूतोंमें अर्थात् भक्त अभक्तों में १ मैं २ बराबर ३ हूं + न ४ कोई + मेरा ५ वैरी ६ है ७ न ८ कोई मेरा + प्यारा ९ है परन्तु १० जो ११ मुझको १२ भक्ति करके १३ भजते हैं १४ अर्थात् मेरीभक्ति सेवा करते हैं १४ वे १५ मुझमें १६ हैं + और तिनमें १७ । १८ । १९ मैं २० हूं अर्थात् वे मेरे हृदय में हैं मुझको उनके उद्धार करने का स्मरण सदा बनारहता है और तिनके हृदयमें मैं सदा बिराजमान रहता हूं यह मेरीभक्ति का प्रताप है जैसे अग्निसम है उसका किसी से रागद्वेष नहीं परन्तु जो अग्नि के पास जाता है उसीका शीत दूर होता है जो अग्निका सेवन नहीं करता उसका शीत दूर नहीं होता इसी प्रकार जो भगवत् की भक्तिकरते हैं वेही मोक्षहोंगे तात्पर्यार्थ यहहुआ कि जनोंमें बिषमता दोषहै क्योंकि कोई भक्ति करता है कोई नहीं ईश्वरमें यहदोष नहीं जो दोपुरुष भक्ति करें एक मोक्षहो एक न हो तो ईश्वर में बिषमता आवे जो कोई यह शंकाकरे कि अजामीलादि बहुत जीव बिना भक्ति मोक्ष हुये यह झूंठ उनकेपहिले जन्मोंकी कथा श्रवणकरनी चाहिये वे लोगयोगभ्रष्ट थे +२९+

**अपिचेत्सुदुराचारो भजतेमामनन्यभाक्। साधुरेवसमंतव्यः सम्यग्व्यवसितोहिसः + ३० +**

चेत् १ अनन्य भाक् २ सुदुरा चार: ३ अपि ४ मां ५ भजते ६ स ७ साधु: ८ एव ९ मंतव्य: १० हि ११ स: १२ सम्य ग्व्यवसित: १३+३०+ उ० + भगवद्भक्तिका माहात्म्य और अतर्क्य प्रभाव कहते हैं + अ०+ कदाचित् १ अनन्य भजन करने वाला अर्थात् सब तरफ से मन को रोककर केवल श्रीनारायण का जो आराधन करता है वह लोक दृष्टि में यदि २ अत्यन्त दुराचार भी है अर्थात् वह स्नानादि आचार नहीं भी करता परंतु अनन्यहुआ ३।४ मुझको ५ भजताहै ६ अर्थात् सदा नारायण का ध्यान श्री कृष्णादि के चरित्रों का स्मरण करता रहताहै अथवा ज्ञान निष्ठ महा पुरुष आत्मानन्द में मग्न रहताहै ६ सो ७ साधु ८ ही ९ मानना योग्य है १० कभी उसको बुरा नहीं समझना मुख से बुरा कहना तो बड़ाही अनर्थ है + क्योंकि ११ सो १२ भले प्रकार बहुत अच्छे निश्चय वाला है १३ अर्थात् भीतर का निश्चय उसका अच्छा है निश्चय यह बातहै कि पार हुये पीछे नौकाका क्या कामहै आचारपूजा पद्धी तब तकहै कि जब तक श्री महाराज के चरण कमलोंमें व आत्म स्वरूप में मन अनन्य होकर नहीं लगाहै + ज्ञाननिष्ठोविरक्तोवामद्भक्तोवानपेक्षक:। सलिंगानाश्रमांस्त्यक्त्वाचरेदविधिगोचर:॥इसश्लोकका तात्पर्य यह है कि ज्ञान निष्ठ विरक्त वा मेरा भक्त बे परवाह सब दिखावट के चिन्ह आश्रमों को त्यागकर सिवाय भगवत्भजन व आत्म निष्ठा के सब वेद शास्त्रकी विधिको नमस्कारकर पंचमाश्रम परमहंस अवस्थामें विचरे+ वेद में भी यह लिखा है कि जिसको वर्णाश्रम का अभिमान है वह बे सन्देह श्रुतिस्मृति का दास है औ जो वर्णाश्रम रहित अपने को सर्वथा श्री नारायण का दास व सच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्म आत्मा को जानता है वह श्रुति मार्ग को उलंघन करके वर्तता है अर्थात् यह समझता है कि वेदको विधि तब तकहै कि जब तक स्त्री पुत्र धन राज्यादि का दास है अनन्य नारायण का दास नहीं और आत्म निष्ठनहीं और यह प्रकट रहे कि यह कथा सच्चे पुरुषों की है बिना भक्ति वा बिना ज्ञान भ्रष्ट भी ऐसेही होते हैं तथाहि। वर्णाश्रमाभिमानेन श्रुतिदासोभवेन्नर:। वर्णाश्रम विहीनश्चवर्त्ततेश्रुतिमूर्द्धनि + ३० +

**क्षिप्रंभवतिधर्मात्मा शश्वच्छान्तिंनिगच्छति। कौन्तेयप्रतिजानीहि नमेभक्तःप्रणश्यति + ३१ +**

धर्मात्मा १ भवति २ क्षिप्रं ३ शश्वत् ४ शांतिं ५ निगच्छति ६ कौंतेय ७ प्रतिजानीहि ८ मे ९ भक्तः १० न ११ प्रणश्यति १२ + ३१ + अर्जुन सुन भक्ति का माहात्म्य अनन्य भक्त दुराचार भी + धर्मात्मा १ है २ शीघ्र जलदी ३ नित्य ४ शांति को ५ अर्थात् उपराम उपशम को ५ प्राप्त होगा ६ हे अर्जुन ७ इस बात की + तू प्रतिज्ञा कर ८ कि + मेरा ९ भक्त १० अर्थात् परमेश्वर का दुराचार भी भक्त १० नहीं ११ भ्रष्ट होता-है अर्थात् अधोगति को नहीं प्राप्त होता है १२ उपासना कांड का यह सूत्रहै ॥ अथातो भक्ति जिज्ञासा+पीछे धर्म के भक्तिको जिज्ञासा होतीहै इस हेतु से प्रतीत होताहै कि पहले जन्मों में वह धर्म कर चुका इसी वास्ते श्री महाराजने भी उसको धर्मात्मा कहा और अपने भक्त से कहते हैं कि भुजा उठाकर कुतर्कियों की सभा में यह प्रतिज्ञा कर कि भगवत् भक्त दुराचार भी नहीं दुर्गति को प्राप्त होताहै भक्ति मार्ग वालोंका यह डंका बजता है + ३१ +

**मांहिपार्थव्यपाश्रित्ययेपिस्युःपापयोनयः। स्त्रियो वैश्यास्तथाशूद्रास्तेपियांतिपरांगतिं + ३२ +**

पार्थ १ ये २ अपि ३ पाप योनयः ४ स्युः ५ ते ६ अपि ७ मांऽहि ८ व्यपाश्रित्य १० तथा ११ शूद्राः १२ स्त्रियः १३ वैश्याः १४ परां १५ गतिं १६ यांति १७ + ३२ +उ०+ आचार भ्रष्ट को जो मेरी भक्ति पवित्र कर दे तो इस में क्या आश्चर्य मानता है तू हे अर्जुन मेरी भक्ति रजोगुणी तमोगुणी जन्मके पापियों को कृतार्थ कर देती है +अ०+ हे अर्जुन १ जो २ निश्चय ३ जन्मके पापी ४ भी + हैं ५ अर्थात् पापियों के कुल में अन्त्यज म्लेच्छ वर्णसंकरों में उत्पन्न हुये हों ५ वे ६ भी ७ मुझको ८ ही ९ आश्रय करके १० परम गति मुक्तिको प्राप्त १ होंगे पहिले बहुतहोगये अबहैं और होंगे और जैसे ये मेरा आश्रय लेकर मुझको प्राप्त होते हैं + तैसही ११ शूद्र १२ स्त्री १३ वैश्य १४ परम गतिको १५ ।१६ प्राप्त होते-है १७ अर्थात् रजोगुणी तमोगुणी मूर्ख पण्डित सब लोग लुगाई मेरा आश्रय लेकर मुझको प्राप्त होते हैं मेरी कृपा और भक्तिके प्रतापसे ज्ञान-

वान् होकर सब परमानन्द स्वरूप आत्मा को प्राप्त होते हैं मेरी भक्ति में सब का अधिकार है भक्त जनही मुझको प्यारा है मेरा भक्त व्यवहार में कोई जात कहलाताहो शूद्र वा म्लेच्छ वा बर्ण संकर जो वह मेराभक्त है तो परमार्थ में उसको साधु संन्यासी समझना चाहिये क्योंकि उत्तम पदका भागी वही है ज्ञाता पुरुष विद्वान् व्यवहार में भी उस को श्रेष्ठ जानते हैं परमार्थ में तो वह बे सन्देह सब से श्रेष्ठ है बारवें अंक से सत्तवें अंक तक की टीका लिखते हैं + मैत्रेयी गार्गी मदाल सा मीरा कर मेती इत्यादि हज़ारों परमपद को प्राप्त हुई बर्तमान काल में बहुत स्त्री उदार दाता तपस्वी ज्ञानी भक्त प्रसिद्ध हैं जिनकी सहाय से और मुख्य जिन के वास्ते यह टी० बनी वे बीबी बीरा और बीबी जानकी ये दोनों स्त्री ब्राह्मणी हैं जानकी के दो बिशेषण बिद्वानों ने दिये हैं ब्राह्मण बंश बिद्वज्जनैर्वन्दिता अर्थात् ब्राह्मणों के बंश में जो बिद्वान् जन वे उस को भक्ति बिरक्त के प्रताप से बन्दना करते हैं और श्री सम्प्रदाय चन्द्रिका अर्थात् श्रीसम्प्रदाय के प्रकट और प्रसिद्ध करने के लिये यह जानकी चांदनी के सदृश है गुजरात देश अहमदाबाद नगरी की रहने वाली शंकर लाल बिष्णु नागर ब्राह्मण की बेटी मानक लाल प्रसिद्ध सांकल लाल की पत्नी श्री मान् उत्तम गुणों की खानि अब श्री वृन्दाबन चन्द्र में बास करती हैं घर में इनका नाम पार्वती था श्री सम्प्रदाय की जब ये शरणागत हुई तब बिधिवत् द्वितीय नाम बीबी जानकी रक्खा गया बीबी बीरा का द्वितीय नाम बीबी झुनिया भी प्रसिद्ध है इन्हों ने श्री बीर बिहारी जी और बीरेश्वरमहादेवजी का मन्दिर बना कर सर्बस्व दान कर दिया यह भी वृन्दाबन में बास करे हैं हरी राम सारस्वत ब्राह्मण की बेटी शिवदत्त की पत्नीहैं सरबस्व दान से बिशेष कोई दान नहीं सर्बस्व दान का फल अक्षय है और जीते जी प्रत्यक्ष होता है इस में इतिहास यह है श्री मत्परमहंस परि ब्राज का चार्य महाराज एक स्त्री के घर भिक्षा के लिये गये उस समय स्त्री के घर में कुछ न था स्त्री बड़ी पछताई श्री महाराज को करुणा आई कहा कि तेरे घर में जो दाना अन्न का या कोई फल सूखा पड़ा हो ढूंढ़ करला एक आमला उस स्त्री को मिला अति संकोच केसाथ महाराज के भिक्षा वस्त्र में दिया जो कि उस स्त्री के घर में सिवाय उस आमले के कुछ न था श्री महाराज ने सर्वस्व दान की कल्पना कर लक्ष्मीजी का आवाहन किया श्री जी आई महाराजने कहा इस स्त्रीको

विशेष द्रव्यदो महारानी जी ने कहा हमको देनेमें इनकार नहीं परंतु सप्त जन्म यह दरिद्री रहेगी ऐसे इसके कर्म हैं और यह मर्यादभी आप की बांधी हुई है महाराज ने कहा इसने इस समय सर्वस्व दानकिया इसका प्रत्यक्ष शीघ्र मन वांछित फल होना चाहिये देवी जी बोलीं कि सत्य है जो आज्ञा हो महाराज ने कहा कि इसका घर सोनेके आमलों से भर दो उसी समय सोनें के आमले वर्षे उसके घरमें घर भरगया श्री महाराज उस स्त्री को सर्वस्व दानका माहात्म्य बिचार कर परम पद की प्राप्ति का बरदान देगये बिचारो भक्ति मार्ग में तर्क का अवसर नहीं स्त्री शूद्रादि भक्ति करके सब परम पद के अधिकारी हैं भक्ति का फल प्रत्यक्ष देखने के लिये बीबी जानकी और बीबी बीरा की कथा लिखी गई + भक्ति भक्त भगवन्त गुरु चतुर्नाम वपु एक । तिन के पद बन्दन किये नाशत बिघन अनेक । अथवा तिन के यश वरणन किये नाशत बिघन अनेक ॥ चारों का प्रभाव इस टीका में लिखा गया ग्रंथ के बीच का यह मंगला चरण है आनन्द चन्द्र प्रभा ग्रंथ बार्तिक भाषा में बीबी बीरा और जानकी ने मिलकर बनाया है संख्या में दश हजार श्लोकों से कम नहीं सिवाय होगा—अ—क—ह—इत्यादि अक्षरों की संख्या पर अकार से हकार पर्यन्त कई सौ प्रमाणीक महानुभावों की कथा उस में सिवाय वैराग्य विद्या भक्ति इत्यादिकों से विशेष लिखी हैं उस ग्रंथ से और शब्दादि प्रमाणों करके यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि स्त्रीशूद्रादि सब लोग लुगाई मात्र भक्ति के प्रताप से परेगति को प्राप्त होते हैं जिससे परे अन्य श्रेष्ठ कोई गति नहीं उसको ही परम गति कहते हैं + ३२ +

## किंपुनर्ब्राह्मणाःपुण्याभक्ताराजर्षयस्तथा। अनित्यमसुखंलोकमिमं प्राप्यभजस्वमां + ३३ +

तथा १ ब्राह्मणाः २ राजर्षयः ३ पुण्याः ४ भक्ताः ५ पुनः ६ किं ७ असुखं ८ अनित्यं ६ इमं १० लोकं ११ प्राप्य १२ मां १३ भजस्व १४ +३३ + उ० + व्यवहार में जो ब्राह्मण क्षत्री कहलाते हैं यह मेरी भक्ति करके परमगतिको प्राप्तहों तो इसमें क्या कहना है अर्थात् यह बात बे सन्देह है इसमें व्यवहार परमार्थ दोनोंका सम्मत है परन्तु बिना मेरी भक्ति हे अर्जुन जो तू चाहे कि मैं व्यवहार में क्षत्री कहलाता हूं इस हेतु से परम गति को प्राप्त हो जाऊंगा इस का लेश मात्र भी भरोसा मत रख

मैं तुझ को समझता हूं कि यह व्यवहारिक जाति का अभिमान छोड़ जल्द मेरा भजन कर शरीरों का भरोसा नहीं शरीर का नाम दुःखालय है अर्थात् यह शरीर दुखों का घर है इसमें सुखकी आशा छोड़ वर्तमान में जैसा तू है वैसा ही भजन कर तात्पर्य इस श्लोक का लिखा गया अब अक्षरार्थ लिखते हैं श्री भगवान् कहते हैं कि जैसे व्यवहार में जो शूद्र वर्णसंकरादि कहलाते हैं वे मेरा आश्रय लेकर मुझको प्राप्तहोंगे अर्थात् परमगतिको प्राप्त होतेहैं + अ० + तैसे १ ही व्यवहार में जो ब्राह्मण २ और + राजऋषि क्षत्री ३ कहलाते हैं कैसे हैं यह कि व्यवहार में भी उनको जन्म से ही पवित्र कहते हैं यह मेरे ४ भक्त ५ होकर अर्थात् मेरी भक्ति करके परमगति को प्राप्तहों तो + फिर ६ क्या ७ कहना है इस बात काहो अर्जुन निश्चय रख बेसन्देह तू भक्ति करके परमगति को प्राप्तहोगा इसवास्ते + अनित्य ८ और + असुख अर्थात् नहीं है किसी काल में सुख जिसमें ऐसे ९ इस १० शरीर को ११ प्राप्त होकर १२ मेरा १३ भजनकर १४ मुझको भज तात्पर्य अनित्य होने से तू देर मत कर और असुख होने से यह मत समझ कि जिसकाल में सुखहोगा तब भजन करूंगा इस में कभी सुख होताही नहीं सुख भजन में ही है व्यवहार की जाति का आश्रय छोड़ भक्ति का आश्रा ले जिस भक्तिके प्रताप से व्यवहार में जो शूद्र वर्ण संकर कहेजाते हैं वे भी परमगति को प्राप्त होते हैं और तू तो व्यवहारमें भी उत्तम कहलाता है तू क्यों देर करता है जल्द भजन कर यह मतलब है महाराज का + ३३ +

**मन्मनाभवमद्भक्तोमद्याजीमांनमस्कुरु । मामेवैष्यसियुक्त्वैवमात्मानंमत्परायणः + ३४ +**

मन्मना १ भव २ मद्भक्तः ३ मद्याजी ४ मां ५ नमस्कुरु ६ एवं ७ आत्मानं ८ युक्त्वा ९ मत्परायणः १० मां ११ एव १२ एष्यसि १३ + ३४ + उ० + भजनका प्रकार दिखलाते हुये फल पूर्वक इस प्रसंग को समाप्त करते हैं + अ० + मुझ में है मन जिसका १ ऐसा + हो तू २ अर्थात् मुझमें हो मनलगा और + मेरा भक्त ३ हो + और + मेरा यजन करने वाला ४ हो तू अर्थात् मेरी पूजा कर और + मुझको ५ नमस्कार कर ६ इस प्रकार ७ मनको ८ मुझमें + लगा करके ९ मुझ परायण हुआ

१० मुझको ११ ही १२ प्राप्त होगा तू १३ अर्थात् मुक्त परमानन्द स्वरूप को प्राप्त होगा + ३४ +

इति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सुब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रेश्रीकृष्णार्जुन सम्वादेराजविद्याराजगुह्ययोगोनामनवमोऽध्यायः + ९ +
स्वामीआनन्दगिरिकृतपरमानन्द प्रकाशिका भाषाटीकामें नवां अध्याय समाप्त हुआ + ९+

---



## अथ श्री भगवद्गीता उत्तरार्द्ध लि०

## श्रीभगवानुवाच।

**भूयएवमहाबाहो शृणुमेपरमंवचः। यत्तेहंप्रीयमाणायवक्ष्यामिहितकाम्यया + १ +**

महा बाहो १ भूयः २ एव ३ मे ४ वचः ५ शृणु ६ यत् ७ परमं ८ ते ९।९ प्रीयमाणाय १० हित काम्यया ११ अहम् १२ वक्ष्यामि १३ + १ +
उ० + सातवें नवें अध्यायमें संक्षेप करके तो मैं ने अपनी बिभूतियों का निरूपण किया अब बिस्तार पूर्वक कहता हूं + अ० + हे अर्जुन १ फिर २ भी ३ मेरा ४ बचन ५ सुन ६ कैसा है वहबचन कि + जो ७ परमार्थनिष्ठा वाला ८ अर्थात् मेरा वचन सुनने में परमार्थमें निष्ठाहोजाती है बारम्बार तुझ से इसलिये कहताहूं कि मेरे वचन सुनने में तेरीप्रीतिहै + तुझप्रीतिमानकेअर्थ ९।१० अर्थात् तू मेरे वचन में श्रद्धा करता है इसवास्ते तेरे अर्थ अर्थात् तुझसे + हितकी कामना करके ११ अर्थात् तू मेरा प्याराहै मैं यह चाहता हूं कि तेरा पीछे भला हो इस वास्ते भी + मैं १२ कहूंगा १३ + १ +

**नमेविदुःसुरगणाः प्रभवंनमहर्षयः। अहमादिर्हिदेवानांमहर्षीणांचसर्वशः + २ +**

मे १ प्रभवं २ न ३ सुरगणाः ४ विदुः ५ न ६ महर्षयः ७ हि ८ सर्वशः ९ देवानां १० महर्षीणां ११ च १२ अहं १३ आदिः १४ + २ +
उ० + सिवाय मेरे मेरेप्रभाव को कोई नहीं जानता इसवास्ते भी कहूंगा + अ० + मेरे १ प्रभाव को २ न ३ देवतों के समूह ४ जानते हैं ५ न ६

महर्षि ७ क्योंकि ८ सब प्रकार से ६ देवतों का १० और महर्षियों का भी ११ । १२ में १३ आदि १४ हूं तात्पर्य प्रभु की अचिन्त्य शक्ति और सामर्थ्य को जब देवता नहीं जानते तो फिर मनुष्य कब जानसक्ते हैं क्योंकि कारण का कार्य आदि हो जाता है कार्य कारणको नहीं जान सक्ता परंतु कार्य से कारण का अनुमान होसक्ता है तात्पर्य सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा से पृथक् कोई परमेश्वर को नहीं जानसक्ता + २ +

**योमामजमनादिंच वेत्तिलोकमहेश्वरं । असंमूढः समर्त्येषुसर्वपापैःप्रमुच्यते + ३ +**

यः १ मां २ अजं ३ अनादिं ४ च ५ लोक महेश्वरं ६ वेत्ति ७ स ८ मर्त्येषु ६ असंमूढः १० सर्वपापैः ११ प्रमुच्यते १२+ ३ + उ० + मुझको इस प्रकार जो जानता है सो तो जानताहै और वह ज्ञानी बेसंदेह मुक्त होगा + अ० + जो १ मुझको २ अर्थात् सच्चिदानन्दस्वरूप आत्मा को मुझसे अभिन्न + जन्मरहित ३ अनादि ४ । ५ और सच्चिदानन्द सोपाधिक मायो पहित हुआ + लोकों का महेश्वर ६ है इसप्रकार जो मुझ को जानता है + सो ८ मनुष्यों में ६ अज्ञानी रहित है १० अर्थात् उसी का अज्ञान दूर हुआ वही + सब पापों करके ११ अर्थात् समस्त कर्मों के फल अगले पिछलों से+मुक्त होगा बे संदेह १२ जोइस श्लोक का अर्थ ऐसे किया जाय कि मुझ वासुदेव को अज अनादिलोकों का महेश्वर जानता है सो मनुष्यों में ज्ञानी है सब पापों करके मुक्तहोगा इस अर्थ में यह शङ्का है कि श्री कृष्णचन्द्र महाराज मूर्तिमान्‌को उपासक जन भी अजादि महेश्वर कहते हैं और ज्ञान निष्ठा वालेभी यहीकहते हैं वे कौन कि जो श्री महाराज को जन्मादि वाला जीव कहताहैप्राकृ मूर्ख स्त्री बालक नास्तिकों का इस जगह कुछ प्रसंग नहीं कर्मोंकर्महो को फल दाता जानते हैं कर्म्म से पृथक् कोई ईश्वर नहीं मानते + विचारो कि यह उपदेश श्री भगवान् का किस को है तात्पर्य मायोपहित सच्चिदानन्द को अविद्योपहित सच्चिदानन्दसे अर्थात् ईश्वरको जीव से जो लक्ष्यार्थ में अपृथक् समझते हैं कि मायोपहित हुआ यही अविद्योपहित जीव सच्चिदानन्द महेश्वर है इसी हेतुसे अज अनादि है जब ऐसा सच्चिदानन्द आत्मा को जानेंगे तब वे मुक्त होंगे जो ज्ञान इस श्लोकमें कहाहै वह कुछ सहज नहीं समझना पिछले श्लोकमें श्रीभग॰ वान् कह चुके हैं कि मेरे प्रभाव को ऋषि देवताभी नहींजानते मनुष्य

तो क्या जानेंगे बे सन्देह ईश्वर से अभिन्न निर्विकार आत्माको सच्चिदा-
नन्द जानेगा वही भगवत्के प्रभावको जानेगा और जो आपकोभक्त ऋषि
देवता मनुष्य जानेंगे वे नहीं जानेंगे इस प्रकार समझनाचाहिये+३+

**बुद्धिर्ज्ञानमसंमोहः क्षमासत्यंदमःशमः। सुखंदुःखंभ
वोभावोभयंचाभयमेवच + ४ +**

बुद्धिः १ ज्ञानं २ असंमोहः ३ क्षमः ४ सत्यं ५ दमः ६ शमः ७ सुखं
८ दुःखं ९ भवः १० भावः ११ भयं १२ च १३ अभयं १४ एव १५ च १६
+ ४ +उ०+अब तीन श्लोकों में सोपाधिक अपने स्वरूपकी ईश्वरता
प्रकट करते हैं + भा० +सारासार को भले प्रकार जानने वाली अन्तः
करण की वृत्ति १ आत्मा को निश्चय करनेवाली आत्माकार अन्तःकरण
की वृत्ति २ जिस काम में प्रवृत्त होना विवेक पूर्वक होना और उस
जगह चित्त व्याकुल न होना सदा चैतन्य रहना ३ पृथिवी वत् सहन
शील होना ४ यथार्थ सन्देह रहित बोलना ५ इन्द्रियों का निरोध ६
अन्तः करण का निरोध ७ अनुकूल पदार्थ में जो अन्तः करणकी वृत्ति ८
प्रतिकूल में जो अन्तः करण की वृत्ति ९ उद्भव होना १० उद्भवन होना
११ त्रास होना १२ । १३ त्रासन होना १४ । १५ । १६ अगले श्लोकके साथ
इसका सम्बन्ध है अगले श्लोक में श्रीभगवान् कहेंगे कि यह शमादि
पृथक् पृथक् भाव मुझ सोपाधिक ईश्वर से होतेहैं अर्थात् शुद्ध सच्चिदा-
नन्द आत्मा निर्विकार है इसप्रकार निरुपाधिक और सोपाधिक सच्चिदा
नन्द को जानना भगवत् का जानना है + ४ +

**अहिंसासमतातुष्टिस्तपोदानंयशोऽयशः। भवन्तिभा
वाभूतानांमत्तएवपृथग्विधाः + ५ +**

अहिंसा १ समता २ तुष्टिः ३ तपः ४ दानं ५ यशः ६ अयशः ७ पृथ-
ग्विधा ८ भावा ९ भूतानां १० मत ११ एव १२ भवन्ति १३ + ५ +अ०+
हिंसारहित १ रागद्वेषादि रहित २ दैवयोग से अपने आप जो पदार्थ
प्राप्त होना उसीमें सन्तोष ३ इन्द्रियों का निग्रह ४ न्यायसे कमाया हुआ
अन्न सुपात्रोंको देना ५ सत्कीर्त्ति अर्थात् सज्जनोंमें कीर्त्ति होनी ६ अकीर्त्ति
७ अर्थात् जो लोग भगवत् सेबिमुख हैं और भगवत् भक्तों से बैर रखते
हैं इसहेतु से उन की बुराई होती है उसको अकीर्त्ति कहते हैं ये
सबकीर्त्ति अकीर्त्ति नाना प्रकार के भाव ८ । ९ बुद्धि ज्ञानादि+प्राणियों

के १० मुख से ११ ही १२होते हैं १३ तात्पर्य सोपाधिक चैतन्य से ये सब होतेहैं हानि लाभ जीवन मरण यश अपयश बिधि हाथ। पुराणों में कथा है कि पृथिवी पर भग वत् सम्बन्धी स्त्री पुरुषों के मुख से जब तक जिसका यश श्रवण करने में आता है तबतक वे कीर्तिमान् स्वर्ग में निवास करते हैं + ५ +

**महर्षयःसप्तपूर्वेचत्वारोमनवस्तथा। मद्भावामानसा जातायेषांलोकइमाःप्रजाः + ६ +**

पूर्वे १ चत्वारः २ सप्त ३ महर्षयः ४ तथा ५ मनवः ६ मद्भावा ७ मानसा ८ जाता ९ येषां १० लोके ११ इमाः १२ प्रजाः १३+ ६+ अ०+सि० मैथुनी सृष्टि से + पहिले १ जो हुये + चार १ सनकादि + और+ सात ३ भृगु आदि + महर्षि ४ तैसेही ५ मनु ६ स्वायम्भू आदि मेराही है प्रभाव जिन में ७ मुझहिरण्य गर्भात्मा के + संकल्प मात्र से ८ उत्पन्न हुये हैं ९ अर्थात् उन के शरीरों को माया मय समझना उनका प्रभाव यह है कि + जिनको १० लोक में ११ यह १२ प्रजा १३ है तात्पर्य प्रजा दो प्रकार की हैं निवृत्ति मार्ग वाले एक प्रवृत्ति मार्गवाले दूसरे निवृत्ति मार्ग के आचार्य सनकादि प्रवृत्ति मार्ग के आचार्य भृगु आदि हैं ये दोनों मार्ग अनादि हैं सनकादि महाराज ने प्रवृत्ति मार्ग की तरफ़ कभी किसी काल में दृष्टि भी नहीं करी जब से उन का आविर्भाव हुआ तब से हो बाल जितेन्द्रिय ब्रह्मचर्य ब्रत में स्थित परम हंस हुये विचरते रहते हैं जिस जगह जाते हैं सब देवता विष्णु महेशादि उन के सामने खड़े हो जाते हैं और यह सामर्थ्य रखते हैं चाहें जिस देवता को शाप देदें अनुग्रह करदें यह प्रताप ज्ञान निष्ठा और निवृत्ति का समझना मोक्ष मार्ग निवृत्ति मार्ग वाले संन्यासी परम हंसों से ही मिलता है जो आप प्रवृत्ति बंध हैं दूसरे को कैसे मुक्त करेंगे + ६ +

**एतांविभूतिंयोगंच ममयोवेत्तितत्त्वतः। सोऽविकंपेन योगेन युज्यतेनात्रसंशयः + ७ +**

एतां १ मम २ विभूतिं ३ योगं ४ च ५ यः ६ तत्त्वतः ७ वेत्ति ८ सः ९ अविकंपेन १० योगेन ११ युज्यते १२ अत्र १३ न १४ संशयः १५ + ७ + उ०+यथार्थ ज्ञान का मुक्ति फल है सो दिखलाते हैं +अ०+

इस १ मेरी २ विभूति को और + योग को ४ जो ५ यथार्थ ६ जानता है ७ सो ८ निश्चल ६ योगकरके १० युक्त होजाता है ११ अर्थात् संशय विपर्यय रहित होजाता है + इसमें १२ नहीं है १३ संशय १४ + ७ +

**अहंसर्वस्यप्रभवो मत्तःसर्वंप्रवर्त्तते । इतिमत्वाभजंते मां बुधाभावसमन्विताः + ८ +**

सर्वस्य १ प्रभवं २ अहं ३ मत्तः ४ सर्वं ५ प्रवर्त्तते ६ इति ७ मत्वा ८ भाव समंवितः ६ बुधाः १० मां ११ भजन्ते १२ + ८ + उ० + संशय विपर्यय रहित भगवद्भक्त ऐसा भगवत् को मानकर भजन करतेहैं यह बात फिर भगवत् की कृपा से उनको आत्मा ज्ञान होजाताहै यह बात कहते हैं चार श्लोकों में + अ० + सब की १ उत्पत्ति है जिससे २ सो मंचादि + मैं ३ हूं मुझसे ४ ही बुध्यादि पदार्थ + सब ५ चेष्टा ६ करते हैं अर्थात् सबका प्रेरक अन्तर्यामीहै + यह ७ समझकर ८ श्रद्धा पूर्वक ६ विद्वान् १० मुझको ११ भजते हैं १२ + ८ +

**मच्चित्तामद्गतप्राणाबोधयंतःपरस्परं । कथयंतश्च मांनित्यं तुष्यन्तिचरमंतिच + ६ +**

मच्चित्ताः १ मद्गत प्राणाः २ परस्परं ३ बोधयंतः ४ नित्यं ५ मां ६ कथयन्तः ७ च ८ तुष्यन्ति ६ च १० रमन्ति ११ च १२ + ६ + उ० + प्रीति पूर्वक भजन करने वालों का लक्षण यह है उत्तरोत्तर उनकी वृत्ति इस प्रकार भगवत् स्वरूप में बढ़ती है एक अंक में प्रथम भूमिकावालों का लक्षण है + अ० + मुझ सच्चिदानन्द में है चित्त जिन का १० मुझमें लगा दिया है प्राण जिन्हों ने २ अर्थात् अपना जीवना मेरे आधीन समझते हैं परस्पर आपस में ३ बोधन करते हैं ४ अर्थात् दो चार भक्त तत्त्व के जिज्ञासू मिलकर बिचार करते हैं श्रुति स्मृति युक्ति प्रमाणों करके परस्पर बोधन करते हैं कोई श्रुति प्रमाण देता है कोई स्मृति कोई युक्ति करके सिद्ध करतेहैं जब सब भक्तोंका और श्रुतिस्मृतियुक्तियों का शंका समाधान पूर्वक एक पदार्थ भगवत् तत्त्व में सम्मत हो जाता है उसको जान कर जिज्ञासुओं से + नित्य सदा ५ मुझको ६ कहते हैं ७।८ अर्थात् भक्तों को भगवत् स्वरूप का उपदेश करते रहते हैं और उसी भगवत् स्वरूप के आनन्द में + सन्तोष करते हैं ६। १० अर्थात् वह निरतिशय आनन्द है उस आनन्द से परे विषयानन्दको तुच्छ सम-

झते हैं सदा उसी आनन्द में + रमते हैं ११। १२ अर्थात् उसमें प्रीति रखते हैं सच्चिदानन्द स्वरूप में मग्न रहते हैं + ९ +

**तेषांसततयुक्तानांभजतांप्रीतिपूर्वकं। ददामिबुद्धि योगंतंयेनमामुपयांतिते + १० +**

सततयुक्तानां १ प्रीति पूर्वकं २ भजतां ३ तेषां ४ तं ५ बुद्धियोगं ६ ददामि ७ येन ८ मां ९ ते १० उपयान्ति ११+ १० अ०+ निरन्तरयुक्त हुये १ प्रीति पूर्वक २ जो मेरा + भजन करतेहैं उनको ४ वह ५ ज्ञान योग ६ दूंगा मैं ७ कि + जिस करके ८ मुझको ९ वे १० प्राप्त होंगे ११ + टी० + सो ज्ञान योग देता हूं वा ५।६ + १० +

**तेषामेवानुकंपार्थमहमज्ञानजंतमः। नाशयाम्यात्म भावस्थोज्ञानदीपेनभास्वता + ११ +**

तेषां १ एव २ अनुकम्पार्थं २ अहं ३ अज्ञानजं ४ तमः ५ नाशयामि ६ आत्मभावस्थः ७ भास्वता ८ ज्ञानदीपेन ९ + ११ + अ० + तिन के १ भलेके लिये २ मैं ३ अज्ञानसे उत्पत्तिहै जिसकी ऐसा जो तम ४।५ अर्थात् संसार तिसको + नाश कर देता हूं ६ बुद्धि की वृत्ति में स्थित होकर ७ प्रकाश रूप ज्ञान दीप करके ८। ९ तात्पर्य जो निरन्तर पूर्व रीति करके मेरा भजन करते हैं उनको निरतिशय परमानन्द की प्राप्ति के मूला ज्ञान और तूला ज्ञानको मैं नाश कर देता हूं निर्मल बुद्धि की वृत्तिमें स्थित होकर ऐसा प्रकाश करता हूं कि सब संसार उसको मिथ्या प्रतीत होने लगता है और आत्मा शुद्ध स्वरूप सच्चिदानन्द निराकार निर्विकार अपरोक्ष होजाता है ऐसा ज्ञान रूप दीपक उसके हृदयमें प्रज्व-लित करता हूं कि अपने आप सब पदार्थ नित्य अनित्य भले प्रकार फुरने लगते हैं फिर विवेक वैराग्यादि साधन चतुष्टय सम्पन्न होकर आत्म ज्ञान द्वारा परमानन्द को प्राप्त होजाता है + ११ +

**अर्जुनउवाच॥ परंब्रह्मपरंधामपवित्रंपरमंभवान्। पुरुषंशाश्वतंदिव्यमादिदेवमजंविभुम् + १२ +**

अर्जुन उवाच + भवान् १ परं २ ब्रह्म ३ परं ४ धाम ५ परमं ६ पवित्रं ७ पुरुषं ८ शाश्वतं ९ दिव्यं १० आदिदेवं ११ अजं १२ विभुं १३ + १२ + अ० + आप १ परं २ ब्रह्म ३ परं ४ धाम ५ परं ६ पवित्रं ७

हो व्यासादि आप को ऐसा कहते हैं और + पुरुष ८ नित्य ६ दिव्य १० आदिदेव ११ अज १२ व्यापक १३ कहते हैं इस श्लोक का अगिले श्लोक के साथ संबन्ध है + १२ +

**आहुस्त्वामृषयःसर्वेदेवर्षिर्नारदस्तथा।असितोदेव लोव्यासःस्वयंचैवब्रवीषिमे + १३ +**

सर्वे १ ऋषयः २ देवर्षिर्नारदः ३ तथा ४ असितः ५ देवलः ६ व्यासः ७ त्वां ८ आहुः ६ स्वयं १० च ११ एव १२ मे १३ ब्रवीषि १४ + १३ + अ०+इस श्लोक का पिछले श्लोक के साथ संबन्ध है +अ०+ सब १ ऋषि २ देवऋषि नारद जी ३ और असित ५ देवल ६ व्यासजी ७ आप को ८ ऐसा + कहते हैं ६ कि जैसा पिछले श्लोक में परब्रह्म से लेकर बिभुतक निरूपण किया + और आप भी १० । ११ । १२ मुझ से १३ अपने आप को वैसाही कहते हो १४ कि जैसा आप को व्यासादि कहते हैं + १३ +

**सर्वमेतदृतंमन्येयन्मांवदसिकेशव।नहितेभगवन्व्यक्तिंविदुर्देवानदानवाः + १४ +**

केशव १ यत् २ मां ३ वदसि ४ एतत् ५ सर्व ६ ऋतं ७ मन्ये ८ भगवन् ६ हि १० ते ११ व्यक्तिं १२ न १३ देवाः १४ विदुः १५ न १६ दानवाः १७+१४+अ०+हे केशव १ जो २ तुमसे ३ कहते हैं आप ४ यह सब ६ सत्य ७ मानता हूं मैं ८ हे भगवन् ६ वे सन्देह यथार्थ १० आपके ११ स्वरूप को वा प्रभाव को १२ न १३ देवता १४ जानते हैं १५ न १६ दानव १७ तात्पर्य शुद्ध स्वरूप परमात्मा का विषय वत् कोई भी नहीं जानसक्ता उपाधि सहित स्वरूप भगवत् का विषयवत् जानाजाता है आत्मा स्वयं प्रकाश है + १४ +

**स्वयमेवात्मनात्मानंवेत्थत्वंपुरुषोत्तम। भूतभावन भूतेशदेवदेवजगत्पते + १५ +**

पुरुषोत्तम १ भूतभावन २ भूतेश ३ देवदेव ४ जगत्पते ५ स्वयं ६ एव ७ आत्मना ८ आत्मानं ६ त्वं १० वेत्थ ११ +१५ +अ०+ हे पुरुषोत्तम १ हे भूत भावन २ हे भूतेश ३ हे देव देव ४ हे जगत्पते ५ आप ६ हो ७ आत्मा करके ८ आत्मा को ६ आप १० जानते हो ११ तात्पर्य जैसे

सूर्य स्वयं प्रकाश है सूर्य के देखने में किसी पदार्थ की इच्छानहीं ऐसेही शुद्ध स्वरूप सच्चिदानन्द भगवत् का आत्मा करके ही जाना जाता है मन बाण और उन के देवतों का विषय नहीं फिर मनुष्यों का विषय ये कैसे हो सक्ता है +टी०+ भूतों के उत्पन्न करने वाले २ भूतों व ईश्वर ३ देवतों के भी देवता ४ जगत् के स्वामी ५ ये सब हेतु गर्भित विशेषण हैं + १५ +

**वक्तुमर्हस्यशेषेणदिव्याह्यात्मविभूतयः। याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वंव्याप्यतिष्ठसि + १६ +**

आत्मविभूतयः १ दिव्या २ हि ३ अशेषेण ४ वक्तुं ५ अर्हसि ६ याभिः ७ विभूतिभिः ८ इमान् ९ लोकान् १० व्याप्य ११ त्वं १२ तिष्ठसि १३+ १६+उ०+जब कि अपने स्वरूप को और अपने ऐश्वर्य्य को आपही जानते हो इस वास्ते आप से ही आपको विभूति सुना चाहता हूं+अ०+ अपना ऐश्वर्य्य १ दिव्य २।३ समस्त ४ कहने को ५ योग्य हो ६ अर्थात् जो जो आपकी दिव्य विभूति हैं वे समस्त मुझसे कहिये + जिन विभूति करके ७।८ इस लोक को ९।१० व्याप्रकर ११ आप १२ स्थित हो अर्थात् जिन जिन विभूति करके इस लोक में आप व्याप्तहो रहे हो मैं उनका चिंतवन किया चाहता हूं इस वास्ते मुझसे कहो + १६ +

**कथंविद्यामहंयोगिंस्त्वांसदापरिचिंतयन्। केषुकेषुचभावेषुचिंत्योसिभगवन्मया +१७ +**

योगिन् १ कथं २ त्वां ३ सदा ४ परि चिंतयन् ५ अहं ६ विद्यां ७ भगवन् ८ मया ९ केषु १० केषु ११ च १२ भावेषु १३ चिंत्यः १४ असि १५ +१७+ अ०+ हे योगीश्वर १ किस प्रकार २ आप शुद्ध सच्चिदानन्द को ३ सदा ४ चितवन करता हुआ ५ मैं ६ जानूं ७ अर्थात् इस प्रकार मुझको उपदेश कीजिये कि जिस प्रकार आप का शुद्ध स्वरूप जाना जाय + हे कृष्णचन्द्र ८ मुझ करके ९ किन पदार्थों में १०।११।१२ ।१३ चितवन करनेके योग्य १४ हो आप १५ अर्थात् किस किस पदार्थका चित वन करने से अन्तः करण शुद्ध होकर आप का यथार्थ स्वरूप जाना जाता है उन पदार्थों को मैं जाना चाहता हूं तात्पर्य अन्तः करण की शुद्धिका उपाय अर्जुन बूझता है + १७ +

**विस्तरेणात्मनोयोगंबिभूतिंचजनार्दन । भूयःकथयतृप्तिर्हिशृण्वतोनास्तिमेऽमृतं + १८ +**

जनार्दन १ विस्तरेण २ आत्मनः ३ योगं ४ विभूतिं ५ च ६ भूयः७ कथय ८ हि ६ अमृतं १० शृण्वतः ११ मे १२ तृप्तिः १३ न १४ अस्ति १५ +१८ + उ०+जब मेरा चित्त बहिर्मुख हो तब भी आपका चितवन करता रहूं इस वास्ते + अ०+हे प्रभो १ बिस्तार करके २ अपना योग ३ ४ और बिभूति ५ । ६ फिर ७ कहा ८ क्योंकि ६ अमृतरूप १० आपका वचन + सुनने से ११ मेरी १२ तृप्ति १३ नहीं १४ है १५ टी० + दुष्ट जनों को जो दुःख दे वा भक्त जनों को आनन्द दे व भक्त जन जिन से मोक्ष की याचना करें उसको जनार्द्दन कहते हैं यहनाम श्री कृष्णचन्द्र महाराजका है १ सर्वज्ञतादि अचिंत्य शक्तियोंको योगकहते हैं ५ ऐश्वर्य को बिभूति कहते हैं जैसे राजा हाथी घोड़े सेनादि ऐश्वर्य से जाना जाता है ऐसेही ईश्वर अपनी बिभूतियों करके जाने जाते हैं और जैसे राजा के मंत्रियों का आश्रय लेने से राजा मिलजाता है इसी प्रकार परमेश्वर जो आगे बिभूति वर्णन करेंगे उनके आश्रय से शुद्ध सच्चिदानन्द परमेश्वर प्राप्त होजाते हैं श्री कृष्णचन्द्र इस अध्याय में बासुदेव और रामचन्द्रादि को अपनी बिभूति कहैंगे इस बातका तात्पर्य समझना चाहिये अपनी बुद्धि के अनुसार + १८ +

**श्रीभगवानुवाच । हंततेकथयिष्यामिदिव्याह्यात्मबिभूतयः।प्राधान्यतःकुरुश्रेष्ठनास्त्यंतोबिस्तरस्यमे १९ +**

श्री भगवानुवाच + हन्त १ प्राधान्यतः २ दिव्याः ३ हि ४ आत्म बिभूतयः ५ ते ६ कथयिष्यामि ७ कुरु श्रेष्ठ ८ मे ६ बिस्तरस्य १० अन्तः ११ न १२ अस्ति १३ + १६ + अ०+जिज्ञासु जब प्रश्न करता है पीछे उन के गुरु जिस समय कृपा करके उत्तर दिया चाहते हैं तो उस प्रश्न के आदरार्थ और जिज्ञासु की प्रसन्नता के लिये ऐसा बोलते हैं कि हन्त अर्थात् हां जो तुमने बूझा यह हमने अंगीकार किया अच्छा बूझा है अब उसका उत्तर सुनो १ प्रधान प्रधान २ जो जो + दिव्य३।४ मेरी बिभूति ५ हैं तिनको + तुझ से कहूंगा ७ हे अर्जुन ८ मेरे ६ बिस्तार का १० अर्थात्मेरी बिभूतियों के बिस्तार का + अन्त ११ नहीं १२ है १३ + १६ +

**अहमात्मागुडाकेशसर्वभूताशयःस्थितः। अहमादि प्रचमध्यंचभूतानामंतएवच + २० +**

गुड़ाकेश १ सर्वभूता शय स्थितः २ आत्मा ३ अहं ४ भूतानां ५आदि ६ च ७ मध्य ८ च ९ अन्तः १० एव ११ च १२ + २० + अ०+ इस शब्द का अर्थ घन केश भौहें अर्थात् गुंजान बाल हों जिस के उस को घनकेश कहते हैं यह नाम अर्जुन का है १ श्री भगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन चैतन्य हो अपनी बिभूति सुनाता हूं प्रथम सबसे श्रेष्ठ बिभूति को सुन + सबभूतों के हृदय में बिराज मान २ आत्माशुद्ध सच्चिदानन्द रूप ३ मैं ४ हूं सदा इसी का ध्यान करना चाहिये और जो इसमें मन न लगे और समझ में न आवे तो स्थूल बिभूति मेरी सुन + भूतोंका ५ आदि ६ और ७ मध्य ८ और ९ अन्त १० मैंहीं ११ । १२ हूं अर्थात्यह समझ कि ये सब भूत मुझसेही हुये मुझ मेंहीं स्थित हैं मुझमेंहीं लय होंगे तात्पर्य ऐसा चिंतवन करना यही परमेश्वरकी उपासना है +२०+

**आदित्यानामहंविष्णुर्ज्योतिषांरविरंशुमान् । मरीचिर्मरुतामस्मिनक्षत्राणामहंशशी + २१ +**

आदित्यानां १ बिष्णुः २ अहं ३ ज्योतिषां ४ अंशुमान् ५ रविः ६ मरुतां ७ मरीचिः ८ अस्मि ९ नक्षत्राणां १० शशी ११ अहं १२ + २१ + अ०+आदित्योंमें १ बिष्णुनाम वाला आदित्य २ मैं ३ हूं + ज्योतियोंमें ४ किरणवाले ५ श्रीसूर्य नारायण पूर्णब्रह्म शुद्धसच्चिदानन्द मैं हूं ६ मरुद्गणों में ७ मरीचिः ८ मैं हूं ९ नक्षत्रों में १० चन्द्र ११ मैं १२ हूं + २१ +

**वेदानांसामवेदोऽस्मिदेवानामस्मिवासवः । इन्द्रियाणांमनश्चास्मिभूतानामस्मिचेतना + २२ +**

बेदानां १ सामबेदः २ अस्मि ३ देवानां ४ वासवः ५ अस्मि ६ इन्द्रियाणां ७ मनः ८ च ९ अस्मि १० भूतानां ११ चेतना १२ अस्मि १३ + २२ +अ०+ वेदों में १ सामवेद २ मैं हूं ३ देवतों में ४ इन्द्र ५ मैंहूं ६ इन्द्रियों में ७ मन ८।९ मैंहूं १० प्राणियोंमें ११ ज्ञानशक्ति १२ मैंहूं+२२+॥

**रुद्राणांशंकरश्चास्मिवित्तेशो यक्षरक्षसां । बसूनां पावकश्चास्मिमेरुः शिखरिणामहं + २३ +**

रुद्राणां १ शंकरः २ च ३ अस्मि ४ यक्षरक्षसां ५ बित्तेशः ६ बसूनां

७ पावकः ८ च ६ अस्मि १० शिखरिणां ११ मेरुः १२ अहं १३ + २३ + अ०+रुद्रों में १ श्री सदा शिवजी महाराज शंकर भगवान् शुद्ध सच्चिदानन्द पूरण ब्रह्म २ मैंहूं ३।४ यक्ष राक्षसों में ५ कुवेर ६ वसून में ७ अग्नि मैंहूं ८।६ । १० शिखरों में ११ सुमेरु १२ मैंहूं १३ + २३ +

**पुरोधसांचमुख्यंमांविद्धिपार्थबृहस्पतिं । सेनानीनामहंस्कंदः सरसामस्मिसागरः + २४ +**

पार्थ १ पुरोधसां २ बृहस्पतिं ३ मां ४ मु ५ विद्धि ६ सेनानीनां ७ च ८ स्कन्दः ६ अहं १० सरसां ११ सागरः १२ अस्मि १३ + २४ + अ०+हे अर्जुन १ पुरो हितों में २ बृहस्पति ३ मुझ को ४ मुख्य ५ जान तू ६ और सेनाके सरदारों में ७।८ देव सेना पति स्वामि कार्तिक ६ मैं १० हूं +स्थित जलों में ११ समुद्र १२ मैंहूं १३ + २४ +

**महर्षीणांभृगुरहंगिरामस्म्येकमक्षरम् । यज्ञानांजपयज्ञोस्मिस्थावराणांहिमालयः + २५ +**

महर्षीणां १ भृगुः २ अहं ३ गिरां ४ एकं ५ अक्षरं ६ अस्मि ७ यज्ञानां ८ जप यज्ञः ६ अस्मि १० स्थावराणां ११ हिमालयः १२ + २५+अ०+ महर्षियों में १ भृगु २ मैं ३ हूं + वाणी में अर्थात् जो बोलने में आते उस में ४ एक ५ अक्षर प्रणव ओम् ६ मैं ७ हूं + यज्ञों में ८ जपयज्ञ ६ मैं १० हूं + स्थावरों में ११ हिमालय पर्वत १२ + २५ +

**अश्वत्थःसर्ववृक्षाणांदेवर्षीणांचनारदः । गंधर्वाणांचित्ररथः सिद्धानांकपिलोमुनिः + २६ +**

सर्ववृक्षाणां १ अश्वत्थः २ देवर्षीणां ३ च ४ नारदः ५ गंधर्वाणां ६ चित्ररथः ७ सिद्धानां ८ कपिलः ६ मुनिः १० + २६ + अ०+सबवृक्षोंमें १ पीपल २ देवऋषियों में ३ नारदजी ४।५ गधर्वों में ६ चित्ररथ ७ सिद्धों में ८ कपिल देव जी ६ मुनि १० मैंहूं + २६ +

**उच्चैः श्रवसमश्वानांविद्धिमाममृतोद्भवं । ऐरावतंगजेन्द्राणांनराणांचनराधिपं + २७ +**

अश्वानां १ उच्चैः श्रवसं २ मां ३ विद्धि ४ अमृतोद्भवं ५ गजेन्द्राणां ऐरावतं ७ नराणां ८ च ६ नराधिपम् १० + २७ + अ० + घोड़ोंमें १

उच्चैः श्रवानाम घोड़ा २ मुझ को ३ जान तू ४ कैसा है वह घोड़ा कि जब + अमृत के अर्थ समुद्र मथा गया था उस समय समुद्र में से निकला है यह विशेषण उच्चैः श्रवा का भी है और ऐरावत का भी है ५ हाथियों में ६ ऐरावत को ७ मेरी बिभूति जान + और नरों में राजा को ८ । ६ । १० मेरी बिभूति जान तू + २७ +

**आयुधानामहंवज्रं धेनूनामस्मिकामधुक् । प्रजनश्चास्मिकंदर्पः सर्पाणामस्मिवासुकिः + २८ +**

आयुधानां १ अहं २ वज्रं ३ धेनूनां ४ कामधुक् ५ अस्मि ६ प्रजनः ७ च ८ कन्दर्पः ६ अस्मि १० सर्पाणां ११ बासुकिः १२ अस्मि १३ + २८ + अ० + शस्त्र हथियारों में १ मैं २ बज्र ३ हूं + गौओं में ४ कामधेनु ५ मैं हूं ६ प्रजा की उत्पत्ति का जो हेतु ७।८ कामदेव ६ सो मैं हूं १० बिष वाले सर्पों में ११ वासुकि १२ मैं हूं १३ + २८ +

**अनन्तश्चास्मिनागानांबरुणोयादसामहं । पितृणामर्यमाचास्मियमः संयमतामहं + २६ +**

नागानां १ अनन्तः २ च ३ अस्मि ४ यादसां ५ बरुणः ६ अहं ७ पितृणां ८ अर्यमा ६ च १० अस्मि ११ संयमतां १२ यमः १३ अहं १४ + २६ + अ० + निर्विष नागों में १ शेषजी २ । ३ मैं हूं ४ जलचरों में ५ बरुण ६ मैं हूं ७ पितरों में ८ अर्यमा नाम पितर ६ । १० मैं हूं ११ दंड देने वालों में १२ यमराज १३ मैं १४ हूं + २६ +

**प्रह्लादश्चास्मिदैत्यानांकालःकलयतामहम् । मृगाणांचमृगेन्द्रोहंवैनतेयश्चपक्षिणां + ३० +**

दैत्यानां १ प्रह्लादः २ च ३ अस्मि ४ कलयतां ५ कालः ६ अहं ७ मृगाणां ८ च ६ मृगेन्द्रः १० अहं ११ पक्षिणां १२ बेनतेयः १३ च १४ + ३० + अ० + दैत्यों में १ प्रह्लाद २ । ३ मैं हूं ४ संख्या वाले पदार्थों में ५ काल ६ मैं ७ हूं + चौपायों में ८ । ६ सिंह १० मैं ११ हूं + पक्षियों में १२ गरुड़ जी १३ । १४ + ३० +

**पवनःपवतामस्मिरामःशस्त्रभृतामहम् । झषाणांमकरश्चास्मिस्रोतसामस्मिजाह्नवी + ३१ +**

पवतां १ पवनः २ अस्मि ३ शस्त्रभृतां ४ रामः ५ अहं ६ झषाणां ७ मकरः ८ च ९ अस्मि १० स्रोतसां ११ जाह्नवी १२ अस्मि १३+३०+ अ०+ वेग वालों में १ वायु २ मैंहूं ३ शस्त्रधारियों में ४ श्री रामचन्द्र जी महाराज शुद्ध सच्चिदानन्द पूर्ण ब्रह्म ५ मैं ६ हूं + मछलियों में ७ मकर नाम वाली मच्छी ८ मैंहूं ९। १० बहने वाले जलों में ११ श्रीगंगा भागीरथी १२ मैंहूं १३ + ३१ +

**सर्गाणामादिरन्तश्चमध्यंचैवाहमर्जुन । अध्यात्म विद्याविद्यानांवादःप्रवदतामहम् + ३२ +**

अर्जुन १ सर्गाणां २ आदिः ३ मध्यं ४ च ५ अंतः ६ अहं ७ विद्यानां ८ अध्यात्मविद्या ९ प्रवदतां १० वादः ११ अहम् १२ + ३२ + अ० + हे अर्जुन १ जगत् का २ आदि ३ और मध्य ४। ५ अन्त ६ मैं ७ हूं + विद्या के बीचमें ८ आत्म विद्या वेदान्त शास्त्र ९ वेदान्तशास्त्र में केवल आत्माके बन्ध मोक्ष का बिचार है इसी वास्ते इसको अध्यात्म विद्या कहते हैं मोक्ष शास्त्र यही है बिना इस शास्त्र के पढ़े सुने आत्मा अनात्मा का ज्ञान कभी नहीं होता अज्ञान संशय बिपर्यय इसी शास्त्र के पढ़ने सुनने से नाश होते हैं इस शास्त्र का सेवन करना साक्षात् भगवत् का प्रत्यक्ष सेवन करना है + चरचा करने वालों में १० बाद ११ मैं १२ हूं + टी० + चरचा तीन प्रकार की हैं जल्प, वितंडा, बाद, जो केवल अपनेही पक्ष में श्रुत्यादिकों का प्रमाण देकर युक्तियों के सहित अपनेही पक्ष को सिद्ध किये जाय दूसरे पक्षपर दृष्टि न दे उसको जल्प कहते हैं और जो दूसरे के पक्ष में दोषही कहता चला जाय अपने पक्ष के दोषों का स्मरण न करे उसको वितंडा कहते हैं और जो अपने और दूसरे पक्ष को शंका प्रमाणों के साथ प्रतिपादन करे गुरु शिष्यको बोधके लिये उस को बाद कहते हैं बाद परमार्थ निर्णय के लिये होता है उस का फल परमानन्द है जल्प वितंडा वाक्य बादहैं उनका फल दुःख है जिस का पक्ष चरचा में दब जायगा बे सन्देह वह दुःख पावेगा और जिसनेविद्या के बलसे झूंठी बातको सिद्ध किया वह बे सन्देह पापका भागी होकर पर लोक में दुःख पावेगा न्याय शास्त्रादि विद्या अन्य पदार्थ हैं और परमार्थ का यथार्थ निर्णय अन्य पदार्थ है क्या हुआ जो किसी ने अन जान के सामने अपना झूंठा पक्ष सिद्ध कर दिया किसी दिन बिद्वानोंके सामने दब जायगा चरचा का सार सत्यार्थ है + ३२ +

**अक्षराणामकारोऽस्मिद्वन्द्वःसामासिकस्यच । अहमे वाक्षयःकालोधाताहंविश्वतोमुखः + ३३ +**

अक्षराणां १ अकारः २ अस्मि ३ सामासिकस्य ४ द्वन्द्वः ५ च ६ अहं ७ एव ८ अक्षयः ९ कालः १० धाता ११ विश्वतोमुखः १२ अहं १३ + ३३ + अ० + अक्षरों में १ अकार २ मैंहूं ३ समासों में ४ द्वंद्व समास ५ मैंहीं हूं ६।७।८ अक्षयः ९ काल १० भी मैंहूं पंछे कालके कहा ११ कि जो संख्या में आता है पल घड़ी दिन रात्रि वर्ष योमें का छत काल कहते हैं यह अक्षय कालका विशेषण है अथवा परमेश्वर का नाम कालका भी कलहै कर्म फल निधाता ११ विराट १२ मैं १३ हूं + ३३ +

**मृत्युःसर्वहरश्चाहमुद्भवश्चभविष्यतां । कीर्तिःश्री र्वाक्चनारीणांस्मृतिर्मेधाधृतिःक्षमा + ३४ +**

मृत्युः १ सर्वहरः २ च ३ अहं ४ भविष्यतां ५ उद्भवः ६ च ७ नारीणां ८ कीर्तिः ९ श्रीः १० वाक् ११ च १२ स्मृतिः १३ मेधा १४ धृतिः १५ क्षमा १६ + ३४ + अ० + मृत्युः १ सब का हरने वाला २ मैं ३ । ४ हूं + होनेवाले पदार्थों में ५ अर्थात् बड़ाई होने के योग्य जो पदार्थ हैं उन में मोक्ष की प्राप्ति का हेतु उद्भव उत्कर्ष अभ्युदय ६ । ७ मैं हूं + स्त्रियों में ८ कीर्तिः ९ अर्थात् महापुरुषों में शम दम औदार्य दानादि गुणों की ख्याति होनी वह कीर्ति भगवत् की बिभूति है + लक्ष्मी वा कान्तिः वा शोभा १० मधुरबाणी ११ । १२ बहुत दिनों की बात याद रहनी १३ ग्रंथ धारण शक्तिः १४ क्षुत्पिपासादि समय चित में क्षोभ न होना १५ अपमानादि समय क्षोभ न होना १६ ये सब कीर्तिः श्री वाक् स्मृतिः मेधा धृतिः क्षमा परमेश्वर की बिभूति हैं जिनके आभास मात्र सम्बन्ध से स्त्री पुरुष श्रेष्ठ कहलाते हैं + ३४ +

**बृहत्सामतथासाम्नांगायत्रीछंदसामहं । मासानां मार्गशीर्षोहमृतूनांकुसुमाकरः + ३५ +**

साम्नां १ तथा २ बृहत्साम ३ छन्दसां ४ गायत्री ५ अहं ६ मासानां ७ मार्गशीर्षः ८ अहं ९ ऋतूनां १० कुसुमाकरः ११ + ३५ + उ० + वेदों में सामबेद मैंहूं यह श्री भगवान् ने पंछे कहा अब कहते हैं कि + साम बेद में १ भी २ बृहत्साम ऋचा ३ मैंहूं + छन्दों में ४ गायत्री ५ मैं

४ हूं + महीनों में ७ अगहन मगशिर ८ मैं हूं + ऋतु में १० बसन्त ऋतु ११ मैंहूं मीन और मेष का सूर्य जब तक वर्तता है इनहीं दोनों महीनों को बसन्त कहते हैं इसी ऋतु में यह टीका बनी है + ३५+

**द्यूतंछलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहं। जयोस्मि व्यवसायोस्मिसत्वंसत्ववतामहं + ३६ +**

छलयतां १ द्यूतं २ अस्मि ३ तेजस्विनां ४ तेजः ५ अहं ६ जयः ७ अस्मि ८ व्यवसायः ९ अस्मि १० सत्त्ववतां ११ सत्त्वं १२ अहं १३+ ३६ + अ०+छलकरने वालों में १ जुवा २ मैंहूं ३ तेजस्वी पुरुषों में ४ तेज ५ मैं ६ हूं + जीतने वालों में जय ७ मैं हूं ८ निश्चय करनेवालों में + आत्मनिश्चय ९ मैं हूं १० सतोगुणी पुरुषों में ११ सत्वगुण १२ मैं हूं १३ टी०+छलिया लोगों के लिये जुआ अपनी विभूति परमेश्वरने कही है + ३६ +

**वृष्णीनांवासुदेवोस्मिपांडवानांधनंजयः। मुनीनामप्यहंव्यासः कवीनामुशनाःकविः + ३७ +**

वृष्णीनां १ वासुदेवः २ अस्मि ३ पांडवानां ४ धनंजयः ५ मुनीनां ६ अपि ७ अहं ८ व्यासः ९ कवीनां १० उशनाः ११ कविः १२ + ३७ + अ० +वृष्णियों में १ वासुदेव २ मैं हूं ३ अर्थात् श्रीकृष्णचन्द्र महाराज शुद्ध सच्चिदानन्द पूरण ब्रह्म मूर्तिमान् बसुदेव जी के पुत्र कि जो अर्जुन को उपदेश करते हैं यही बासुदेव हैं + पांडवन में ४ अर्जुन ५ कि जिस को भगवान् उपदेश करते हैं + मुनीश्वरों में ६। ७ मैं ८ श्रीवेद व्यासजी ९ हूं कबि पुरुषों में १० शुक्राचार्य ११ कविः १२ मैंहूं +३७+

**दंडोदमयतामस्मिनीतिरस्मिजिगीषतां। मौनंचैवास्मिगुह्यानांज्ञानंज्ञानवतामहं + ३८ +**

दमयतां १ दण्डः २ अस्मि ३ जिगीषतां ४ नीतिः ५ अस्मि ६ गुह्यानां ७ मौनं ८ च ९ एव १० अस्मि ११ ज्ञानवतां १२ ज्ञानम् १३ अहम् १४ + ३८ + अ० + निरोध करने वालों में १ दण्ड २ मैं हूं ३ जीतने की इच्छा वालों में ४ नीतिः ५ मैंहूं ६ गुप्त पदार्थों में चुप रहना ८। ९। १० मैंहूं ११ ज्ञानवालों में १२ ब्रह्मज्ञान आत्मज्ञान १३ मैं १४ हूं + दूसरे का स्वरूप और ऐश्वर्य जानने से किसी को क्या मिलता है अपना स्वरूप और अपना ऐश्वर्य जानना चाहिये + ३८ +

**यच्चापिसर्वभूतानांबीजंतदहमर्जुन। नतदस्तिविना-यत्स्यान्मयाभूतंचराचरं + ३९ +**

सर्वभूतानां १ यत् २ च ३ अपि ४ बीजं ५ तत् ६ अहं ७ अर्जुन ८ चराचरं ६ भूतं १० मया ११ बिना १२ यत् १३ स्यात् १४ तत् १५ न १६ अस्ति १७ + ३६ + अ० + सब भूतों का १ जो २। ३। ४ बीज ५ सो ६ मैं ७ हूं + हे अर्जुन ८ चराचर ६ सत्तामात्र १० मेरे ११ बिना १२ जो १३ हो १४ सो १५ नहीं १६ है १७ तात्पर्य ऐसा पदार्थ कोई नहीं कि जिसमें सत चित् आनन्द ये तीन अंश भगवान् के नहीं + ३६ +

**नांतोस्तिममदिव्यानांविभूतीनांपरंतप। एषतूद्देश तःप्रोक्तोविभूतेर्विस्तरोमया +४० +**

परंतप १ मम २ दिव्यानां ३ विभूतीनां ४ अन्तः ५ न ६ अस्ति ७ एष ८ तु ६ विभूतेः १० विस्तरः ११ उद्देशतः १२ मया १३ प्रोक्तः १४ +४०+ अ०+ हे अर्जुन १ मेरी २ दिव्य ३ विभूतियों का ४ अन्त ५ नहीं ६ है ७ और जो वर्णन किया + यह ८ तो ६ विभूतियों का १० विस्तार ११ संक्षेप से १२ मैंने १३ कहा है १४ + ४० +

**यद्यद्विभूतिमत्सत्वंश्रीमदूर्जितमेववा । तत्तदेवाव गच्छत्वंममतेजोंशसंभवं + ४१ +**

यत् १ यत् २ सत्वं ३ विभूतिमत् ४ श्रीमत् ५ वा ६ ऊर्जितं ७ एव ८ तत् ६ तत् १० एव ११ मम १२ तेजोंशसंभवं १३ त्वं १४ अवगच्छ १५ + ४१ + उ० + जो तू मेरे ऐश्वर्य का विस्तार जाना चाहता है तो इस प्रकार जान+ अ०+जो १ जो २ पदार्थ ३ ऐश्वर्यवान ४ श्री मान् ५ वा ६ किसी अन्यगुण करके + श्रेष्ठ ७ हि ८ कहलाता है + तिस ६ तिसको १० हि ११ मेरे १२ तेज के अंश से उत्पन्न हुआ १२ तू १३ जान १४ तात्पर्य संसार में जो जो पदार्थ श्रेष्ठ हैं सब भगवत् की बि-भूति हैं जो जिस गुण करके श्रेष्ठ समझा जाता है वह गुण भगवत् का ही अंश है आनन्दो ब्रह्म इस श्रुतिसे स्पष्ट प्रतीत होता है कि आनन्द ब्रह्म है तो फिर जो जो पदार्थ विशेष आनन्द जनक हैं सो भगवत् की बिभूति हैं + ४१ +

**अथवाबहुनैतेनकिंज्ञानेनतवार्जुन । विष्टभ्याहमिदंकृत्स्नमेकांशेनस्थितोजगत् + ४२ +**

अर्जुन १ अथवा २ एतेन ३ बहुना ४ ज्ञानेन ५ तव ६ किं ७ अहं ८ इदं ९ कृत्स्नं १० जगत् ११ एकांशेन १२ विष्टभ्य १३ स्थितः १४ + ४२ + अ०+हे अर्जुन १ अथवा २ इस ३ बहुत ४ पृथक् पृथक् + ज्ञानकरके ५ तुमको ६ क्या ७ काम है ऐसे समझ कि + मैं ८ इस ९ समस्त १० जगत् को ११ एक अंश से १२ धारण करके १३ स्थितहूं १४ तात्पर्य यह सब जगत् भगवत् के एक अंश में कल्पित है भगवत् से जुदा नहीं जगत् में जो आनन्द प्रतीत होता है यही प्रभु का अंश है अंश से अंशी का ज्ञान जल्द होता है + ४२ +

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योग शास्त्रे श्री कृष्णार्जुन सम्बादे विभूतियोगो नाम दशमोऽध्यायः १० ॥

स्वामी आनन्दगिरि कृत परमानन्दप्रकाशिका टीका में दशवां अध्याय समाप्तहुवा १० ॥

---

**श्रीपरमात्मनेनमः । अर्जुनउवाच । मदनुग्रहायपरमंगुह्यमध्यात्मसंज्ञितं । यत्त्वयोक्तंवचस्तेनमोहोयंविगतोमम + १ +**

## ग्यारहवें अध्याय का प्रारम्भहुवा + अर्जुनउवाच ॥

मदनुग्रहाय १ परमं २ गुह्यं ३ अध्यात्म संज्ञितं ४ यत् ५ वचः ६ त्वया ७ उक्तं ८ तेन ९ अयं १० मम ११ मोहः १२ विगतः १३ + १+ उ०+पिछले अध्याय में श्रीभगवान् ने कहा कि यह जगत समस्त मेरे एक अंश में कल्पित है यह सुन अर्जुन को इच्छा हुई कि बिश्वरूप श्री भगवान का देखना चाहिये इस वास्ते अर्जुन श्री भगवान् को स्तुति करता हुवा बोला है चारमंत्रोंमें + अ० + मेरे अनुग्रह के वास्ते अर्थात् मेरा शोक दूर करनेके लिये १ परमार्थ निष्ठा वाला २ गुप्त ३ आत्मा

अनात्माका ज्ञान हो जिससे ४ ऐसा + जो ५ बचन ६ आपने ७ कहा ८ तिस बचन करके ६ यह १० मेरा ११ मोह १२ गया १३ अर्थात् इनको मैं मारता हूं ये मारे जाते हैं इस प्रकार जो शुद्ध निर्विकार आत्मा को कर्ता कर्म समझताथा यह भ्रांति मेरी आप की कृपा से दूर हुई मैंने जाना कि आत्मा शुद्ध सच्चिदानन्द निर्विकार है कर्ता कर्म भ्रांति से प्रतीत होता है जैसे शुक्ति में रजत रज्जु में सर्प आकाश में नीलता नाव में बैठे मन्दिरों का चलना प्रतीत होता है इसी प्रकार आत्मा विकारवान् प्रतीत होता है वास्तव आत्मा निर्विकार है यह मैं समझा + १ +

**भवाप्ययौहिभूतानांश्रुतौविस्तरशोमया। त्वत्तःकमलपत्राक्षमाहात्म्यमपिचाव्ययं + २ +**

कमल पत्राक्ष १ त्वत: २ मया ३ विस्तरश: ४ भूतानां ५ भवाप्ययो ६ हि ७ श्रुतौ ८ माहात्म्यं ६ च १० अपि ११ अव्ययम् १२ + २ + अ० + हे भगवन् १ आप से २ मैंने ३ विस्तार पूर्वक ४ भूतों की ५ उत्पत्ति और लय ६ इन दोनों को + सुना ८ अर्थात् सब भूतों की उत्पत्ति आप से ही है और तुम्हारे ही स्वरूप में लय होजाते हैं सब भूत यह भी मैंने सुना और समझा + और माहात्म्य ६ । १० भी ११ आपका + अक्षय १२ सुना तात्पर्य आप जगत् को रची भी हो और पालन संहार भी करो हो शुभाशुभ कर्मों का फल भी देते हो बन्ध मोक्ष सब आपके आधीन हैं जैसी भक्तों की इच्छा होती है उनकेवास्ते वैसेही नाना रूप धारण करते हो वैसेही चरित्र करतेहो ऐसे विषम व्यवहार में भी आपसदा अकर्ता निर्विकार निर्लेप उदासीन रहते हो यही आपका माहात्म्य है करने को न करनेको और का और करदेने को जो समर्थ उसी को ईश्वर कहते हैं ऐसे आपही हैं आपकी कृपा से मैंने अब आप का माहात्म्य सुनकर आप को जाना + २ +

**एवमेतद्यथात्थत्वमात्मानंपरमेश्वर। द्रष्टुमिच्छामि तेरूपमैश्वरंपुरुषोत्तम + ३ +**

परमेश्वर १ यथा २ आत्मानं ३ आत्थ ४ त्वं ५ एतत् ६ एव ७ पुरुषोत्तम ८ ते ६ ऐश्वरं १० रूपं ११ द्रष्टुं १२ इच्छामि १३ + ३ + अ० + हे परमेश्वर १ जैसा २ आत्मा को ३ कहते हो ४ आप ५ यह ६ इसी

प्रकार है ७ अर्थात् वे संदेह आप अचिंत्य शक्ति मान् हैं + हे प्रभो ८ आप के ९ ऐश्वर्य १० रूप के ११ देखने की १२ इच्छा करता हूं १३ अर्थात् आप का ऐश्वर्य और विश्वरूप देखा चाहताहूं ज्ञान ऐश्वर्य बल वीर शक्ति तेज इन करके युक्त आपका रूप देखा चाहता हूं परमार्थ दृष्टि में आप निराकार पूर्ण हैं उसी स्वरूप को मूर्त्तिमान् देखा चाहता हूं यद्यपि यह बात असंभव है परन्तु आप समर्थ हो दिखा सक्ते हो + ३ +

**मन्यसेयदितच्छक्यंमयाद्रष्टुमितिप्रभो । योगेश्वर ततोमेत्वंदर्शयात्मानमव्ययं + ४ +**

प्रभो १ योगेश्वर २ यदि ३ मया ४ तत् ५ द्रष्टुं ६ शक्यं ७ मन्यसे ८ ततः ९ मे १० त्वं ११ अव्ययं १२ आत्मानं १३ दर्शय १४ इति १५ ॥ + ४ + उ० + यदि आप की दृष्टि में उस रूप के देखने का मैं अधिकारी हूं तो दिखाइये + अ० + हे समर्थ १ हे योगेश्वर २ यदि ३ मुझ करके ४ सो रूप ५ देखने को ६ समर्थ ७ समझो ८ अर्थात् उस रूप को मैं इन नेत्रों करके देख सक्ता हूं + तो ९ मुझे १० आप ११ निर्विकार १२ आत्मा को १३ दिखाइये १४ यह १५ मेरा तात्पर्य है + ४ +

**श्री भगवानुवाच + पश्यमेपार्थरूपाणिशतशोथ सहस्रशः । नानाविधानिदिव्यानि नानावर्णाकृतीनिच + ५ +**

श्री भगवानुवाच + पार्थ १ शतशः २ अथ ३ सहस्रशः ४ दिव्यानि ५ मे ६ रूपाणि ७ पश्य ८ नाना ९ विधानि १० च ११ नाना १२ वर्णाकृतीनि १३ + ५ + अ० + श्री भगवान् बोलेकि + हे अर्जुन १ सैकरों हजारों २ । ३ । ४ दिव्य ५ मेरे ६ रूपों को ७ देख ८ नाना प्रकार के ९ भेद हैं १० और ११ नाना प्रकार के १२ वर्ण नील पीतादि और आकृति हैं जिसमें १३ ऐसा रूप देख वह विश्वरूप एक ही था परन्तु नाना प्रकार के जो उसमें भेद थे इस वास्ते श्लोक में रूप का वहुवचन है रूपाणि इति ॥ + ५ +

**पश्यादित्यान्वसून्रुद्रानश्विनौमरुतस्तथा । बहून्यदृष्टपूर्वाणिपश्याश्चर्याणिभारत + ६ +**

भारत १ आदित्यान् २ वसून् ३ रुद्रान् ४ अश्विनौ ५ मरुतः ६ पश्य ७ तथा ८ बहूनि ९ अदृष्टपूर्वाणि १० आश्चर्याणि ११ पश्य १२ + ६ +

श्र०+हेअर्जुन १ बारह सूर्योंको २ आठ बसुओं को ३ ग्यारह रुद्रोंको ४ दोनों अश्विनीकुमारोंको ५ उनचास मरुतगणोंको ६ देख ७ और ८ बहुत ९ पदार्थ जो तुमने और औरों ने कभी + नहीं देखेहैं १० ऐसे + आश्चर्य रूपों को ११ देख १२ अब मैं दिखाता हूं + ६ +

**इहैकस्थंजगत्कृत्स्नं पश्याद्यसचराचरम् ।ममदेहे गुडाकेशयच्चान्यद्द्रष्टुमिच्छसि + ७ +**

गुडाकेश १ इह २ एकस्थं ३ अद्य ४ मम ५ देहे ६ सचराचरम् ७ कृत्स्नम् ८ जगत् ९ पश्य १० यत् ११ च १२ अन्यत् १३ द्रष्टुं १४ इच्छसि १५ + ७ + उ० + समस्त भूत भविष्यत् वर्तमान काल की व्यवस्था तुझको दिखाता हूं जो असंख्यात जन्मों में तू या और कोई नहीं देख सक्ता वह सब तनक देरमें दिखाता हूं + हे अर्जुन १ इसी जगह २ मुझ एक में स्थित ३ अभी ४ मेरे ५ देहमें ६ स्थावर जंगम ७ सम्पूर्ण ८ जगत् को ९ अर्थात् कार्य कारण के सहित समस्त जगत् को + देख १० और जो ११ । १२ अन्य पदार्थ के देखने को १३।१४ इच्छा करता है तू १५ अर्थात् इस जगत् का आसरा क्याहै कैसे उत्पत्ति हुआहै कैसे इसकी स्थिति है कैसे लय होता है उपादान इसका क्या है कैसे कैसे यह रूप बदलता है इस लड़ाई में किसकी जीत होगी हे अर्जुन जो तेरी इच्छा हो सब देख जो मैं अपनी इच्छा से दिखाता हूं सो देख और जो तेरी इच्छा हो सो भी देखले ऐसा समय मिलना कठिनहै + टी० + गुड़ाका नाम निद्रा का है अर्जुन के निद्रा बशमें थी इस हेतु से गुड़ाकेश अर्जुन का नाम है + ७ +

**नतुमांशक्यसेद्रष्टुमनेनैवस्वचक्षुषा । दिव्यंददामिते चक्षुः पश्यमेयोगमैश्वरम् + ८ +**

अनेन १ चक्षुषा २ मां ३ एव ४ द्रष्टुं ५ न ६ शक्यसे ७ ते ८ तु ९ दिव्यं १० चक्षुः ११ ददामि १२ मे १३ योगं १४ ऐश्वरं १५ पश्य १६ + ८ + उ० + अर्जुन ने कहा था कि वह रूप मैं देख सक्ताहूं या नहीं श्री भगवान् कहते हैं कि इन नेत्रों से तो नहीं देख सक्ता दिव्य चक्षुमैं देताहूं तिन करके देखेगा + श्र० + इन नेत्रों करके १ । २ मुझको ३ बे सन्देह ४ देखने को ५ नहीं ६ समर्थ है तू ७ परंतु तुझ को ८ । ९ दिव्य चक्षु १० । ११ देताहूं १२ मेरे १३ योग १४ ऐश्वर्यको १५ देख १६

किसी लोकमें जो देखने सुननेमें न आवे उसको दिव्य अलौकिक कहते हैं जो बात सम्भव न हो वह बात समझ में आजावे जिस करके उस को योग कहते हैं जीवसे जो बात न हो सके ईश्वरही में वह बात पावे और जिस करके जीवसे जुदा ईश्वर पहचाना जावे उसको ऐश्वर्य कहते हैं कि जिसको असाधारण लक्षण भी ईश्वर कहते हैं ईश्वर का एक साधारण लक्षण है एक असाधारण साधारण वह कि जो ईश्वरमें भी पावे और जीवमेंभी पावे जैसे कंसादिका मारना गोवर्द्धनका उठालेना बहुरूपहो जाना इत्यादि कर्म तो जीवभी करसक्ता है रावणादिकी कथा कैलास का उठालेना इत्यादि बहुत प्रसिद्धहैं परंतु विश्वरूप जीवनहीं दिखा सका यह ईश्वर का असाधारण लक्षण है + ८ +

**संजयउवाच। एवमुक्त्वाततोराजन् महायोगेश्वरोह-रिः। दर्शयामासपार्थायपरमंरूपमैश्वरम् + ९ +**

संजयउवाच॥ राजन् १ महायोगेश्वरः २ हरिः ३ एवं ४ उक्त्वा ५ ततः ६ पार्थाय ७ परमं ८ ऐश्वरं ९ रूपं १० दर्शयामास ११ + ९ + उ० + संजय धृतराष्ट्र से कहता है कि + अ० + हे राजन् १ महा योगेश्वर २ ब्रजचन्द ३ इस प्रकार ४ पूर्वोक्त + कहकर ५ फिर ६ अर्जुन को ७ परं ८ ऐश्वर्य ९ रूप १० दिखाते भये ११ श्रीभगवान् ने परमअद्भुत रूप अर्जुन को दिखाया ८ + ९ +

**अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम्। अनेकदिव्या-भरणंदिव्यानेकोद्यतायुधम् + १० +**

अनेकवक्त्रनयनं १ अनेकाद्भुतदर्शनं २ अनेकदिव्याभरणं ३ दिव्या-नेकोद्यतायुधं ४ + १० + उ० + उसविश्वरूप के ये विशेषण हैं + अ० + अनेक मुख नेत्रहैं जिसमें १ अनेक अद्भुत आश्चर्य करने वाले दर्शन हैं जिसमें २ अनेक दिव्य गहने हैं जिसमें ३ अनेक दिव्यशस्त्रउ-ठायेहुयेहैं जिसमें ४ ऐसा रूप श्रीमहाराजकाथाकिजोअर्जुननेदेखा + १० +

**दिव्यमाल्यांबरधरंदिव्यगंधानुलेपनम्। सर्वाश्चर्य मयंदेवमनंतंविश्वतोमुखम् + ११ +**

दिव्यमाल्यांबरधरं १ दिव्यगन्धानुलेपनं २ सर्वाश्चर्यमयं ३ देवं ४ अनन्तं ५ विश्वतोमुखं ६ + ११ + अ० + दिव्य माला वस्त्र धारण कर

रक्खे हैं जिसने १ दिव्य गंधका लेपन है जिसके २ सब आश्चर्यरूप हैं ३ प्रकाशरूप ४ नहीं है अन्त जिसका ५ सब ओर हैं मुखजिसमें +११+

**दिविसूर्यसहस्रस्यभवेद्युगपदुत्थिता। यदिभाःसदृशीसास्याद्भासस्तस्यमहात्मनः + १२ +**

यदि १ दिवि २ सूर्यसहस्रस्य ३ युगपद् ४ उत्थिता ५ भवेत्६तस्य ७ महात्मनः ८ भासः ९ सा १० भाः ११ सदृशी १२ स्यात् १३ +१२+ टी० + उस विश्वरूप का प्रकाश ऐसा था + अ० + जो १ आकाश में २ हज़ार सूर्य की ३ एकबारही ४ प्रभा उदय ५ हो ६ तो + तिसमहात्मा की ८ प्रभाकी ९ सो १० प्रभा ११ बराबर १२ हो १३ न भी हो इत्यभिप्रायः क्योंकि यह अनुपमरूप है + १२ +

**तत्रैकस्थंजगत्कृत्स्नंप्रविभक्तमनेकधा। अपश्यद्देवदेवस्यशरीरेपांडवस्तदा +१३ +**

तत्र १ एकस्थं २ अनेकधा ३ प्रविभक्तं ४ कृत्स्नं ५ जगत् ६ तदा ७ पांडवः ८ देवस्य ९ शरीरे १० अपश्यत् ११ + १२ + अ० + तिसबिश्वरूप में १ एककेही बिषे स्थित २ अनेक प्रकार का ३ जुदा जुदा ४ समस्त ५ जगत् को ६ तिस कालमें ७ अर्जुन ८ देवतों के भी जो देवता उन देव देव के ९ शरीर में १० देखता भया ११ +टी०+ पितर मनुष्य गंधर्बादि को ३। ४ जगत् में जितने पदार्थ हैं अर्जुन को सब भगवत्के शरीर में देखते थे इत्यभिप्रायः + १३ +

**ततःसविस्मयाविष्टोहृष्टरोमाधनंजयः। प्रणम्यशिरसादेवंकृतांजलिरभाषत + १४ +**

ततः १ सः २ धनंजयः ३ विस्मय ४ आविष्टः ५ हृष्टरोमा ६ कृतांजलिः ७ देवं ८ शिरसा ९ प्रणम्य १० अभाषत ११ + १४ + टी० + जबजब अर्जुन ने ऐसा स्वरूप देखा + अ० + पीछे उस के १ अर्जुन आश्चर्य करके ४ युक्त हुआ ५ अर्थात् आश्चर्य मानता हुआ + ऐसाबलो प्रफुल्लित हो गई हैं रोम जिसकी ६ करी है अंजलिजिसने ७ अर्थात् दोनों हाथ जोड़ कर उसी + देव को ८ शिरसे प्रणाम करके १० अर्थात् शिर झुका कर नमस्कार करके + बोलता भया ११ अर्थात् यह बोला किजो आगे सत्रह श्लोकों में कहना है + १४ +

**अर्जुनउवाच + पश्यामिदेवांस्तवदेवदेहेसर्वांस्तथाभूतविशेषसंघान् । ब्रह्माणमीशंकमलासनस्थमृषीं-श्चसर्वानुरगांश्चदिव्यान् + १५ +**

अर्जुनउवाच ॥ देव १ तव २ देहे ३ सर्वान् ४ देवान् ५ तथा ६ भूत-विशेषसंघान् ७ कमलासनस्थं ८ ईश ९ ब्रह्माणं १० च ११ सर्वान् १२ ऋषीन् १३ दिव्यान् १४ उरगान् १५ च १६ पश्यामि १७ + १५ + उ० + जैसा बिश्वरूप अर्जुन को दीखा उस को कहता है सत्रह श्लोकों में + अ० + हे देव १ आप के २ शरीर में ३ सब देवतों को ४ । ५ और भूतों के बिशेष समुदायों को अर्थात् जे राजादिकों को ८ । ९ । १० । ११ सब १२ बशिष्ठादि + ऋषियों को १३ दिव्य १४ तक्षादि + नागों को १५ भी १६ देखता हूं मैं १७ + टी० + आप की नाभि में जो कमल उस पर ब्रह्मा जी को बिराजमान देखता हूं + १५ +

**अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं पश्यामित्वांसर्वतोऽनंतरूपम् । नांतंनमध्यंनपुनस्तवादिंपश्यामिविश्वेश्वरविश्वरूप + १६ +**

विश्वेश्वर १ विश्वरूप २ तव ३ न ४ आदिं ५ पुनः ६ न ७ मध्यं ८ न ९ अन्तं १० पश्यामि ११ सर्वतः १२ अनन्तरूपं १३ त्वां १४ अनेक-बाहूदरवक्त्रनेत्रं १५ पश्यामि + १६ + अ० + हे बिश्वके ईश्वर १ हे बिश्वरूप २ आपका ३ न ४ आदि ५ और ६ न ७ मध्य ८ न ९ अन्त १० देखता हूं ११ सब ओर से १२ अनन्त रूप वाला १३ आपको १४ अनेक हाथ पेट मुख नेत्र हैं जिसके १५ ऐसा आपको + देखताहूं + १६ +

**किरीटिनंगदिनंचक्रिणंच तेजोराशिंसर्वतोदीप्तिमंतम् । पश्यामित्वांदुर्निरीक्ष्यं समंताद्दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् + १७ +**

त्वां १ समंतात् २ किरीटिनं ३ गदिनं ४ चक्रिणं ५ च ६ तेजोराशिं ७ सर्वतः ८ दीप्तिमन्तं ९ दुर्निरीक्ष्यं १० दीप्तानलार्कद्युति ११ अप्रमेयं १२ पश्यामि १३ + १७ + अ० + आपको १ सब ओर से २ मुकुट वाला ३ गदा वाला ४ चक्र वाला ५ और ६ तेजका पुंज ७ सब ओर से ८ दीप्तिमान् ९ दुःख करके देखा जाता है अर्थात् उसका देखना बहुत

कठिन प्रतीत होता है १० चैतन्य अग्नि सूर्य की प्रभावत् प्रभा है उस की ११ प्रमाण नहीं हो सक्ता उसका कि इस स्वरूप की इतनी चौड़ाई लम्बाई है १२ ऐसा आपको + देखता हूं १३ तुमको पश्यामि यह क्रिया सब के साथ लगती है जितने त्वां एक अंक वाले पदके विशेषण हैं + १७ +

**त्वमक्षरंपरमंवेदितव्यं त्वमस्यविश्वस्यपरंनिधानम। त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वंपुरुषो मतोमे + १८ +**

त्वं १ परमं २ अक्षरं ३ वेदितव्यं ४ त्वं ५ अस्य ६ विश्वस्य ७ परं ८ निधानं ९ त्वं १० अव्ययः ११ शाश्वत धर्मगोप्ता १२ सनातनः १३ पुरुषः १४ त्वं १५ मे १६ मतः १७ + १८ + उ० + आपकी यह योग शक्ति देखने से तो मैं अब यह अनुमान करता हूं कि + अ०+ आप १ परं २ ब्रह्म ३ हो मुमुक्षु करके + जानने के योग्य ४ आप ५ हीहो इस ६ विश्वका ७ परं ८ आसरा ९ भी आपही हो + और + आप १० नित्य धर्म के पालन करने वाले १२ सनातन १३ पुरुष १४ आप १५ हीहो + मेरी १६ समझसे १७ बेद भी ऐसा ही प्रतिपादन करतेहैं+१८+

**अनादिमध्यांतमनंतवीर्यमनंतबाहुंशशिसूर्यनेत्रमपश्यामित्वांदीप्तहुताशवक्त्रं स्वतेजसाविश्वमिदंतपंतम १९ +**

त्वां १ पश्यामि २ अनादि मध्यान्तं ३ अनन्तवीर्य्यं ४ अनन्तबाहुं ५ शशिसूर्यनेत्रं ६ दीप्तहुताश वक्त्रं ७ स्वतेजसा ८ इदं ९ विश्वं १० तपन्तं ११ + १९ + अ० + आप को १ ऐसा + देखता हूं मैं २ कि जिसके बिशेषण ये हैं + नहीं है आदि मध्य अन्त जिसका ३ अनन्त पराक्रम है जिसका ४ अनन्त भुजा हैं जिसकी ५ चन्द्र सूर्य्य नेत्र हैं जिसके ६ जलती हुई लपट उठती हुई अग्नि मुख में है जिसके ७ अपने तेज करके ८ इस विश्वको ९।१० तपाते हुये ११ मुझको दीखतेहो+१९+

**द्यावापृथिव्योरिदमंतरंहिव्याप्तं त्वयैकेनदिशश्च सर्वाः। दृष्ट्वाद्भुतंरूपमुग्रंतवेदं लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन + २० +**

महात्मन् १ द्यावापृथिव्योः २ इदं ३ अन्तरं ४ एकेन ५ त्वया ६ हि

७ व्याप्तं ८ सर्वाः ६ दिशः १० च ११ तव १२ इदं १३ अद्भुतं १४ उग्रं १५ रूपं १६ दृष्ट्वा १७ लोकत्रयं १८ प्रव्यथितं १६ + २० + अ० + हे भगवन् १ आकाश पृथिवी का २ यह ३ अन्तरिक्ष ४ अकेले ५ आप करके ६ ही ७ व्याप्त ८ है और पूर्वादि दशों दिशा १० । ११ भी आप करके व्याप्त हो रहीहैं अर्थात् सब जगत् में आपही पूर्ण हो रहेहो + आपका १२ यह १३ अद्भुत १४ क्रूर १५ रूप १६ देखकर १७ तीनों लोक १८ भयको प्राप्त हैं १६ ऐसा मैं आप को देखता हूं + २० +

**अमीहित्वांसुरसंघाविशंति केचिद्भीताःप्रांजलयो गृणंति। स्वस्तीत्युक्त्वामहर्षिसिद्धसंघाःस्तुवंतित्वांस्तु-तिभिःपुष्कलाभिः + २१ +**

अमी १ सुर संघाः २ त्वां ३ हि ४ विशन्ति ५ केचित् ६ भीताः ७ प्रांजलयः ८ स्वस्ति ६ इति १० उक्त्वा ११ गृणंति १२ महर्षिसिद्धसं-घाः १३ पुष्कलाभिः १४ स्तुतिभिः १५ त्वां १६ स्तुवंति १७ +२१+ अ०+ वे १ देवतों के समूह २ तुम को ही ३।४ प्रवेश होते हैं ५ अर्थात् आप को देवतों ने अपना आश्रा समझ रक्खाहै आपकी शरण को प्राप्त हैं और उन में से + कोई ६ भय को प्राप्त हुये ७ दोनों हाथजोड़ रक्खे हैं जिन्होंने ८ स्वस्ति ६ यह १० शब्द + कह कर ११ अर्थात् आपका क-ल्याण भला हो यह कहते हुये आपकी + प्रार्थना कर रहेहैं १२ अर्थात् आपकी जयहो जयहो आप हमारी रक्षा करो यह कह रहे हैं और + बड़े बड़े ऋषीश्वर सिद्धोंके समूह १३ बड़े बड़े १४ स्तोत्रों करके १५ आ-पकी १६ स्तुति कर रहे हैं १७ + २१ +

**रुद्रादित्यावसवोयेचसाध्याविश्वेऽश्विनौमरुतश्चो-ष्मपाश्च। गंधर्वयक्षासुरसिद्धसंघावीक्ष्यंतेत्वांविस्मि ताश्चैवसर्वे + २२ +**

रुद्रादित्यावसवः १ साध्याः २ च ३ ये ४ विश्वे ५ अश्विनौ ६ मरुतः ७ च ८ उष्मपाः ६ च १० गंधर्वयक्षासुरसिद्धसंघाः ११ च १२ सर्वे १३ एव १४ विस्मिताः १५ त्वां १६ वीक्ष्यंते १७ + २२ + अ० + ग्यारह रुद्र बा-रहसूर्य आठ वसु १ और साध्य देवता २। ३ जो ४ हैं + बिश्वेदेवा ५ अश्विनी कुमार ६ और उनचास मरुत गण७।८ और पितर ६।१० और

गंधर्व हूहू हाहादि यक्षकुबेरादि असुर बिरोचनादि सिद्ध कपिल देवादि इन सबके समूह ११। १२ कहां तक कहूं सब १३ ही १४ आश्चर्य हुये १५ आप को १६ देखते हैं १७ इस प्रकार का रूप मैं आप का देखता हूं ✱ टी० + उष्मपा पितरों का नाम इस वास्तेहै कि वे गरमगरमभोजन के भागी हैं जब तक अन्नगरम रहता है और जब तक ब्राह्मण चुपचाप भोजन करता रहे बोले नहीं तब तक ही पितर भोजन करते हैं॥ तदुक्तं + यावदुष्णं भवेदन्नं यावदश्नन्ति वाग्यताः। पितरस्तावदश्नंति यावन्नोक्ताःहविर्गुणाः + २२ +

**रूपंमहत्तेबहुवक्त्रनेत्रंमहाबाहोबहुबाहूरुपादम्। बहूदरंबहुदंष्ट्राकरालंदृष्ट्वालोकाःप्रव्यथितास्तथाहम्+२३+**

महाबाहो १ ते २ महत् ३ रूपं ४ दृष्ट्वा ५ लोकाः ६ प्रव्यथिताः ७ तथा ८ अहं ९ बहु वक्त्रनेत्रं १० बहुबाहूरुपादं ११ बहूदरं १२ बहुदंष्ट्रा करालं १३ + २३ + अ० + हे महाबाहो १ आपका २ बड़ा ३ रूप४ देखकर ५ लोक ६ भय को प्राप्तहो रहे हैं ७ और जैसे और लोक भयभीत हो रहे हैं + तैसे ही ८ मैं ९ भी भय को प्राप्त हूं क्योंकि वह रूपहो आपका ऐसा है कि जिसके ये विशेषण हैं + बहुत मुख नेत्र हैं जिसके १० बहुत भुजा जंघा चरण हैं जिसके ११ बहुत पेट हैं जिस के १२ बहुत बिकराल कठिन डाढ़ है जिस की १३ ऐसा आप का रूप है कि जिसको देखकर मैं डरता हूं + २३ +

**नभःस्पृशंदीप्तमनेकवर्णंव्यात्ताननंदीप्तविशालनेत्रम्। दृष्ट्वाहित्वांप्रव्यथितांतरात्मा धृतिंनविंदामिशमंच विष्णो + २४ +**

विष्णो १ त्वां २ नभःस्पृशं ३ दीप्तं ४ अनेकवर्णं ५ व्यात्ताननं ६ दीप्तविशालनेत्रं ७ दृष्ट्वा ८ हि ९ प्रव्यथितांतरात्मा १० धृतिं ११ शमं१२ च १३ न १४ विन्दामि १५ +२४+ अ० + हे विष्णो १ आप को २ आकाशके साथ स्पर्श करता हुआ अर्थात् समस्त आकाश में व्याप्त ३ तेजरूप ४ अनेक वर्ण वाला ५ फैला हुआहै मुख जिस का ६ प्रज्वलितहो रहे हैं बल रहे हैं बड़े बड़े नेत्र जिस के ७ ऐसा आप को+ देखकर ८ ही ९ बहुत भय को प्राप्त हुआ है अन्तःकरण मेरा १० और उपशम

को १२।१३ नहीं १४ प्राप्त होता हूं १५ अर्थात् मुझ को न धीरज बँधता है न मन में संतोष होता है ऐसा स्वरूप आप का देख मेरा चित्त घबराता है + २४ +

**दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि दृष्ट्वैव कालानलसन्निभानि। दिशो न जाने न लभे च शर्म प्रसीद देवेश जगन्निवास +२५+**

देवेश १ जगन्निवास २ ते ३ मुखानि ४ कालानलसन्निभानि ५ दृष्ट्वा ६ एव ७ च ८ दंष्ट्राकरालानि ९ दिशः १० न जाने ११ शर्म १२ च १३ न १४ लभे १५ प्रसीद १६ + २५ + अ०+हे देवतों के ईश्वर १ हे जगत् के आश्रय २ आप के ३ मुख ४ प्रलयाग्नि को सम ५ देखकर ६।७ कैसे को ८ नहीं १० जानता हूं मैं ११ अर्थात् मुझ को यही नहीं प्रतीत होता कि पूर्व किधर उत्तर किधर पृथिवी कहां आकाश कहां है + और सुख को १२ नहीं १३ प्राप्त हूं मैं १४ अर्थात् मेरा अन्तःकरण विक्षेप को प्राप्त है + प्रसन्न हूजिये १५ आप + २५ +

**अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः सर्वे सहैवावनिपालसंघैः। भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथासौ सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः + २६ +**

अमी १ च २ सर्वे ३ धृतराष्ट्रस्य ४ पुत्राः ५ अवनिपालसंघैः ६ सह ७ भीष्मः ८ द्रोणः ९ तथा १० असौ ११ सूतपुत्रः १२ अस्मदीयैः १३ अपि १४ योधमुख्यैः १५ सह १६ त्वां १७ एव १८ + २६ + उ० + श्री भगवान् ने कहा था कि इस संग्राम में जो जीतेगा हे अर्जुन सो भी देख वही बात अर्जुन देखता हुआ कहता है पांच श्लोकोंमें + अ०+ और वे १।२ सब ३ धृतराष्ट्र के ४ पुत्र ५ राजों के समूह सहित ६।७ भीष्म पितामह ८ द्रोणाचार्य ९ और १० वह ११ कर्ण १२ और + हमारे १३ भी १४ मुख्य योधाओं के साथ १५।१६ तुमको १७ हो १८ प्रवेशहोते हैं अर्थात् आपके मुखमें प्रवेश होते हैं इस श्लोक का अगले श्लोक के साथ सम्बन्ध है तात्पर्य कुछ यह नहीं कि दुर्योधनादि आपके मुख में प्रवेश होतेहैं किन्तु हमारी ओर के भी सब राजा आप के मुख में दौड़ दौड़ प्रवेश होतेहैं यह आश्चर्य में देखता हूं + २६ +

**वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति दंष्ट्राकरालानि भया-**

नकानि। केचिद्विलग्नादशनांतरेषु संदृश्यन्तेचूर्णितै-रुत्तमांगैः + २७ +

त्वरमाणाः १ ते २ वक्त्राणि ३ विशन्ति ४ दंष्ट्राकरालानि ५ भयानकानि ६ केचित् ७ चूर्णितैः ८ उत्तमांगैः ९ दशनान्तरेषु १० विलग्नाः ११ संदृश्यन्ते १२ + २७ + अ० + यह सब योधा + दौड़े हुये १ आप के २ मुखों में ३ प्रवेश होते हैं ४ कैसे हैं वे मुख कि + कठिन डाढ़ दाँत हैं जिनमें ५ भयानक रूप ६ जो मुख में प्रवेश होते हैं उनमें + कोई ७ तो ऐसे हैं कि + चूर्ण होगये हैं शिर जिनके ८।९ वे + दांतों के बीचमें ही १० लटकेहुये ११ दीखते हैं १२ तात्पर्य जैसे अन्न भोजनान्त दांतों में रहजाता है जिसको तिनके से निकालते हैं इस प्रकार बहुत शूर वीर श्रीमहाराजके दांतों की सन्धिमें उलझेहुये दीखतेहैं + २७ +

यथानदीनांबहवोंबुवेगाः समुद्रमेवाभिमुखाद्रवं-ति। तथातवामीनरलोकवीरा विशंतिवक्त्राण्यभिवि-ज्वलंति + २८ +

यथा १ नदीनां २ बहवः ३ अम्बुवेगाः ४ समुद्रं ५ एव ६ अभिमुखाः ७ द्रवन्ति ८ तथा ९ अमी १० नरलोकवीराः ११ तव १२ अभिविज्वलन्ति १३ वक्त्राणि १४ विशन्ति १५ + २८ + उ० + अर्जुन दृष्टान्त देतेहैं कि इस प्रकार आपके मुख में प्रवेश होते हैं + अ० + जैसे १ नदी के २ बहुत ३ जलका वेग ४ समुद्र के ५ ही ६ सम्मुख ७ दौड़ताहै ८ तैसे ९ वे १० नरलोक वीर ११ आपके १२ सब ओरसे जरते हुये १३ मुखों में १४ प्रवेश होते हैं १५ तात्पर्य आप का मुख तो सब ओर से प्रज्वलित होरहा है उसमें दौड़ दौड़ गिरते हैं महाराज के मुखमें सब ओर से अग्नि जलती हुई प्रतीत होती है जैसे कहतेहैं कि दीपक जल रहाहै वैसे यहां कहा कि महाराजका मुख प्रज्वलित होरहाहै + २८ +

यथाप्रदीप्तंज्वलनंपतंगा विशन्तिनाशायसमृद्ध-वेगाः। तथैवनाशायविशन्तिलोकास्तवापिवक्त्राणि समृद्धवेगाः + २९ +

यथा १ समृद्धवेगाः २ पतंगाः ३ नाशाय ४ प्रदीप्तम् ५ ज्वलनम् ६ विशन्ति ७ तथा ८ एव ९ समृद्धवेगाः १० लोकाः ११ नाशाय १२ अपि

१३ तव १४ वक्त्राणि १५ विशन्ति १६ + २९ + उ० + नदी के दृष्टान्त से तो यह प्रकट किया कि परबश हुये आपके मुख में प्रवेश होते हैं अब पतंग के दृष्टान्त से यह दिखाता है कि जानबूझ आप के मुखमें प्रवेश होते हैं बहुत शूर + अ०+ जैसे १ समृद्धबेग है जिनका अर्थात् शीघ्र चाल हैं जिनकी दौड़ते उड़ते हुये २ छोटे छोटे जानवर ३ मरने के लिये ४ प्रदीप्त ५ अग्निमें ६ अर्थात् जलती हुई अग्नि या दीपक की अग्नि में + प्रवेश होते हैं ७ तैसे ८ ही ९ बड़ावेग है जिनका १०ऐसे+ लोग शूरवीर ११ मरने के लिये १२ ही १३ आपके १४ मुख में १५ प्रवेश होते हैं १६ + २९ +

**लेलिह्यसेग्रसमानः समंताल्लोकान्समग्रान्वदनैर्ज्व-लद्भिः । तेजोभिरापूर्यजगत्समग्रंभासस्तवोग्राः प्रत-पंतिविष्णो + ३० +**

ज्वलद्भिः १ वदनैः २ समग्रान्३ लोकान्४ समंतात् ५ ग्रसमानः ६ लेलि-ह्यसे७विष्णो ८ तव ९ उग्राः१०भासः११तेजोभिः १२ समग्रं १३ जगत् १४ आपूर्य १५ प्रतपंति १६ + ३० + अ० + दीप्तिमान् १ मुखों करके २ सब लोकों को ३ । ४ अर्थात् महा महा इन शूरवीरों को + सब ओर से ५ ग्रास करते हुये ६ भले प्रकार भक्षण कर रहे हो ७ हे पूर्ण ब्रह्म व्यापक ८ आप की ९ तीव्र १० प्रभा ११ अपने + तेज से १२ समस्त १३ जगत् को १४ व्याप्त करके १५ जला रही है १६ अर्थात् आपके तेज की किरण सब जगत् में फैल कर जला रही है सब जगत् को चटनी की तरह चाट रही है आप ऐसे मुझ को दीखते हो + ३० +

**आख्याहिमेकोभगवानुग्ररूपो नमोस्तुतेदेववरप्र-सीद । विज्ञातुमिच्छामिभवंतमाद्यंनहिप्रजानामितव प्रवृत्तिम + ३१ +**

भगवान् १ उग्ररूपः २ कः ३ मे ४ आख्याहि ५ नमः ६ अस्तु ७ देव-वर ८ प्रसीद ९ भवंतं १० आद्यं ११ विज्ञातुं १२ इच्छामि १३ तव १४ प्रवृत्तिं १५ नहि १६ प्रजानामि १७ + ३१ + अ० + आप १ उग्र रूप २ कौन ३ हो यह + मुझ से ४ कहो ५ मेरी आपको + नमस्कार ६ हो ७ हे देवतों में श्रेष्ठ ८ प्रसन्न हो ९ आप आद्य हो अर्थात् सब से

पहले आप ही इस बात को १० । ११ भले प्रकार जानने की १२ इच्छा करता हूं १३ अर्थात् आदि पुरुष जो आप हो आपको भले प्रकार जाना चाहता हूं + आपकी १४ प्रवृत्ति को १५ नहीं १६ जानता हूं १७ अर्थात् यह ऐसा स्वरूप आपने क्यों धारण किया है + ३१ +

**श्री भगवानुवाच ॥ कालोऽस्मिलोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्तुमिहप्रवृत्तः। ऋतेऽपित्वांनभविष्यंतिसर्वेयेऽवस्थिताःप्रत्यनीकेषुयोधाः + ३२ +**

श्रीभगवानुवाच + लोकक्षयकृत् १ प्रवृद्धः २ कालः ३ अस्मि ४ लोकान् ५ समाहर्तुं ६ इह ७ प्रवृत्तः ८ त्वां ९ ऋते १० अपि ११ ये १२ सर्वे १३ योधाः १४ प्रत्यनीकेषु १५ अवस्थिताः १६ न १७ भविष्यन्ति १८ + ३२ + ३० + हे अर्जुन जो तू बूझता है तो सुन कि जो मैं हूं और जिस वास्ते मैं ने यह रूप धारण किया है तीन श्लोकों में कहते हैं + अ०+ लोकों का नाश करने वाला १ अति उग्रः २ काल ३ हूं मैं ४ लोकों के नाश करने को ५ । ६ इस लोक में ७ प्रवृत्त ८ हुआ हूं तूने जो बूझा था कि आप कौन हो और किस वास्ते आप की यह प्रवृत्ति है सो समझ और सुन + तेरे ९ बिना १० भी ११ ये १२ सब १३ योद्धा १४ दोनों सेना में १५ जो + स्थित हैं १६ नहीं १७ होंगे १८ अर्थात् तू जो यह शंका करता है कि मैं इनका मारने वाला हूं ये सब तेरे बिना मारे भी सब मरैंगे जो ये सब दीखते हैं मुझ काल रूपसे कोई भी नहीं बचैगा क्षत्री जाति में तू मेरा भक्त है तुझको तो यह एकयश देता हूं + ३२ +

**तस्मात्त्वमुत्तिष्ठयशोलभस्व जित्वाशत्रून्भुंक्ष्वराज्यं समृद्धम्। मयैवैतेनिहताःपूर्वमेव निमित्तमात्रंभवसव्यसाचिन् + ३३ +**

तस्मात् १ त्वं २ उत्तिष्ठ ३ यशः ४ लभस्व ५ शत्रून् ६ जित्वा ७ समृद्धं ८ राज्यं ९ भुंक्ष्व १० एते ११ एव १२ पूर्वं १३ एव १४ मया १५ निहताः १६ सव्यसाचिन् १७ निमित्तमात्रं १८ भव १९ + ३३ + अ० + तिस कारण से १ तू २ खड़ा हो ३ युद्धके लिये जिसको ४ प्राप्त हो ५ जो भीष्मपितामह द्रोणादि देवतोंसे भी जीते न जावें उनको अर्जुनने जीता

इस यश को प्राप्त हो पीछे उसके + बैरियोंको ६ जीतकर ७ पदार्थों का भराहुआ ८ राज ९ भोग १० ये ११ तो १२ पहले १३ ही १४ मैंने १५ मार रक्खे हैं १६ हे अर्जुन १७ निमित्तमात्र १८ होजातू १९ अर्थात् इन का तो काल आपहुंचा प्रत्यक्ष देखता है तू कि यह कालके मुखमेंअपने आप दौड़े जाते हैं तू तो केवल एक नाम मात्र मारने वाला हो यश लेले + टी० + बायें हाथसे भी अर्जुन धनुष खैंचकर तीर चलाता था इस वास्ते अर्जुन का नाम सव्यसाची है + ३३ +

**द्रोणंचभीष्मंचजयद्रथंचकर्णंतथान्यानपियोधवीरान् । मयाहतांस्त्वंजहिमाव्यथिष्ठायुध्यस्वजेतासिरणेसपत्नान् + ३४ +**

द्रोणं १ च २ भीष्मम् ३ च ४ जयद्रथं ५ च ६ कर्णं ७ तथा ८ अन्यान् ९ अपि १० योधमुख्यान् ११ मया १२ हतान् १३ त्वं १४ जहि १५ माव्यथिष्ठाः १६ युद्ध्यस्व १७ रणे १८ सपत्नान् १९ जेता २० असि २१ + ३४ + उ० + पीछे हे अर्जुन तुमने यह कहा था कि मैं यह नहीं जानता ये हमको जीतेंगे या हम इनको वह अब सब तूने प्रत्यक्ष देख लिया कि बे सन्देह तूही जीतेगा + अ० + द्रोणाचार्य १ । २ और भीष्मपितामह ३ । ४ और जयद्रथ ५ । ६ कर्ण ७ तैसेही ८ औरोंको ९ भी १० कि जो जो + योधा मुख्य हैं ११ इन सब + मेरे १२ मारेहुओं को १३ तू १४ मार १५ भय मतकर १६ इनके साथ + युद्ध कर १७ रण में १८ बैरियों को १९ जीतेगा तू २० । २१ + ३४ +

**संजयउवाच । एतच्छ्रुत्वावचनंकेशवस्य कृतांजलिर्वेपमानःकिरीटी । नमस्कृत्वाभूयएवाहकृष्णं सगद्गदंभीतभीतःप्रणम्य + ३५ +**

संजयउवाच ॥ किरीटी १ केशवस्य २ एतत् ३ वचनं ४ श्रुत्वा ५ कृतांजलिः ६ वेपमानः ७ नमः ८ कृत्वा ९ आह १० भूयः ११ एव १२ भीतभीतः १३ सगद्गदं १४ कृष्णं १५ प्रणम्य १६ + ३५ + उ० + संजय धृतराष्ट्र से कहता है किहे राजन् + अ० + मुकुट वाला अर्जुन १ भगवान् का २ यह ३ बचन ४ सुनकर ५ करी है अंजलि जिस ने ६ अर्थात् दोनों हाथ जोड़ेहुये + कम्पता हुआ ७ नमस्कार ८ करके ९ बोला १०

फिर ११ भी १२ बहुत डरता हुआ १३ गद्गद कंठ हो रहाहै जिसका १४ श्रीकृष्ण जी को १५ प्रणाम करके १६ यह बोला कि जो आगे ग्यारह श्लोकों में कहना है तात्पर्य बारम्बार नमो नमो नारायणाय यह कह कर स्तुति करता है + ३५ +

**अर्जुनउवाच ।स्थानेहृषीकेशतवप्रकीर्त्याजगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यतेच । रक्षांसिभीतानिदिशोद्रवंति सर्वेनमस्यंतिचसिद्धसंघाः + ३६ +**

अर्जुनउवाच + हृषीकेश १ तव २ प्रकीर्त्या ३ जगत् ४ प्रहृष्यति ५ अनुरज्यते ६ च ७ भीतानि ८ रक्षांसि ९ दिशः १० द्रवंति ११ सर्वे १२ च १३ सिद्धसंघाः १४ नमस्यंति १५ स्थाने १६ +३६+ अ०+ हृषीक नाम इन्द्रियों का है इन्द्रियोंका जो स्वामी प्रेरक अंतर्य्यामी उस को हृषीकेश कहते हैं अर्जुन कहता है कि हे श्री कृष्णचन्द्र जी १ आपको २ प्रकीर्ति करके ३अर्थात् आपका माहात्म्य कहने सुनने से+जगत् आनन्द होताहै और अनुरागको प्राप्त होता है अर्थात् आप में जगत् ४ प्रीतिकरता है ६।७ और + डरतेहुये ८ राक्षस ९ पूर्वादि दिशाओं को १० दौड़ते हैं ११ कोई पूर्वको कोई उत्तरको भागता है + और सब १२ । १३ सिद्धों के समूह १४ आप को + नमस्कार करते हैं १५ यह सब युक्त है १६ अर्थात् यहबात ऐसे ही चाहिये + ३६ +

**कस्माचतेननमेरन्महात्मन् गरीयसेब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे । अनंतदेवेशजगन्निवास त्वमक्षरंसदसत्तत्परंयत् + ३७ +**

महात्मन् १ अनन्त २ देवेश ३ जगन्निवास ४ कस्मात्५ ते ६ न ७ नमेरन् ८ ब्रह्मणः ९ अपि १० गरीयसे ११ च १२ आदिकर्त्रे १३ यत् १४ सत् १५ असत् १६ परं १७ अक्षरं १८ तत् १९ त्वम् २० + ३७+ उ० + आपको नमस्कार करने में ये नव हेतुहैं फिर यह कब हो सक्ता है कि यह यह सब जगत्आपको नमस्कार न करै+अ०+हेमहात्मन् १ हेअनन्त २ हे देवेश ३ हे जगन्निवास ४ किस हेतुसे ५ आपको ६ नहीं ७ नमस्कार करैं ८ आपके सामने नम्र होने में चार हेतु तो मैंने कहे कि आप महात्मा हो अनन्त देवेश जगत् का आसरा हो और पांच सुनिये प्रथम

यह कि आप ब्रह्माजी के ६ भी १० गुरुतर ११ हो दूसरे यह कि ब्रह्माजी के कर्ता भी आप ही हो इसी वास्ते आप को + आदि कर्ता १३ कहते हैं तुम्हारे अर्थ नमस्कार हो आदि कर्त्रे और गरीयसे ये दोनों + ते + छठें अंक वाले पद के विशेषण हैं तीनों पदों में चतुर्थी विभक्ति है सोई अर्थ समझना चाहिये + तीसरे यहकि + जो १८ सत् व्यक्त १५ असत् अव्यक्त १६ और इन दोनों से + परे १७ जो + अक्षर ब्रह्म १८ सो १३ आप २० ही हो अर्थात् तीसरे यह कि जो व्यक्त मूर्तिमान् हो सो भी आप हो चौथे यह कि जो अव्यक्त स्वरूप आपका है सो भी आप हो पांचवें यह कि जो व्यक्त और अव्यक्तसे परे अक्षर पूर्ण ब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्दहै सो भी आप हो + ३७ +

**त्वमादिदेवःपुरुषःपुराणस्त्वमस्य विश्वस्यपरंनिधानम्। वेत्तासिवेद्यंचपरंचधाम त्वयाततंविश्वमनन्तरूप + ३८ +**

त्वं१ आदिदेवः २ पुराणः ३ पुरुषः ४ त्वं ५ अस्य ६ विश्वस्य ७ परं निधानं ८ वेत्ता ६ असि१० वेद्यं ११ च १२परं १३ च १४ धाम१५ त्वया १६ विश्वं १७ ततं १८ अनन्त रूप १६ + ३८ + ३० + और आप के सामने नम्र होने में सात हेतु और भी ये हैं प्रथम यह कि + आप १ आदिदेव २ पुराण ३ पुरुष ४ हो दूसरे यह कि +आप ५ इस विश्व के ६ । ७ लयका स्थान ८ हो अर्थात् प्रलय समय यह सब जगत् मायासहित आपके स्वरूप में ही लय हो जाता है तीसरे यह कि सब पदार्थों के + जानने वाले ६ हो आप १० चौथे यह कि + जानने के योग्य ११ भी १२ आपही हो अर्थात् आपका ही जाननाश्रेष्ठहै और सब पण्डिताई वृथा है पांचवें यह कि + परधाम भी १३ । १४ । १५ अर्थात् परमहंसों का पद भी आपही हो छठें यह कि + आप करके १६ यह समस्त + विश्व १७ प्राप्त १८ हो रहा है सातवें यह कि आप + अनन्त रूप १६ हो हेअनन्तदेव इनहेतु करके आप हमारे पूज्य हो इस वास्ते हम आपको बारम्बार नमस्कार करते हैं + ३८ +

**वायुर्यमोऽग्निर्वरुणःशशांकःप्रजापतिस्त्वंप्रपितामहश्च। नमोनमस्तेऽस्तुसहस्रकृत्वः पुनश्चभूयोपिनमोनमस्ते + ३९ +**

वायुः १ यमः २ अग्निः ३ वरुणः ४ शशांकः ५ प्रजापतिः ६ प्रपितामहः ७ त्वं ८ ते ६ नमः १० नमः ११ च १२ अस्तु १३ सहस्रकृत्वः १४ भूयः १५ च १६ अपि १७ पुनः १८ ते १६ नमः २० नमः २१ + ३६ उ० + अनन्त सातवें हेतु का इस श्लोक में बिस्तार करके कहता है + अ० + पवन १ यमराज २ अग्नि ३ वरुण ४ चन्द्रमा ५ ब्रह्मा ६ ब्रह्मा के भी पितामह ७ आप ८ हो अर्थात् आप असंख्यात रूप हो + आप को ६ बारम्बार नमोनमः १० । ११ । १२ हो १३ हज़ार बार १४ फिर भी १५ । १६ । १७ बारम्बार १८ आपको १६ नमोनमः २० । २१ अर्थात् जैसे आप अनन्त रूप हो वैसेही मेरी अनन्त नमस्कार हैं असंख्यात बारम्बार नमस्कार करनेसे अति श्रद्धा भक्ति श्रीमहाराजमें प्रकट करता है + ३६ +

**नमःपुरस्तादथपृष्ठतस्ते नमोऽस्तुतेसर्वतएवसर्व । अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वंसमाप्नोषि ततोऽसिसर्वः + ४० +**

सर्व १ पुरस्तात् २ ते ३ नमः ४ अथ ५ पृष्ठतः ६ ते ७ नमः ८ अस्तु ६ सर्वतः १० एव ११ अनन्तवीर्य १२ त्वं १३ अमितविक्रम १४ सर्वं १५ समाप्नोषि १६ ततः १७ सर्वः १८ असि १६ + ४० + उ० + फिर भी और प्रकार से नमस्कार करता हुआ श्री महाराज की स्तुति करता है + अ० + हे सर्व १ अर्थात् सर्वरूप सबके आत्मा + पूर्व को ओरसे २ आप को ३ नमस्कार ४ और ५ पिछली ओरसे ६ आप को ७ नमस्कार ८ हो ६ सब ओर से १० ही ११ आप को नमस्कार करता हूं इत्यभिप्रायः + हे अनन्तवीर्य १२ आप १३ बे मर्याद पराक्रम वाले १४ हो + सब १५ जगत् में + भले प्रकार आप व्याप्त हो १६ तिस कारण से १७ सर्वरूप १८ हो आप + टी० + कोई कोई वीर्यवान् अर्थात् बलवान् होते हैं परंतु समय पर पराक्रम नहीं करते वीर्य और विक्रम पराक्रम शब्दों में यह भेद इस जगह समझना तात्पर्य यह है कि श्री भगवान् अनन्त वीर्य भी हैं और अनन्त पराक्रमवाले भी हैं + ४० +

**सखेतिमत्वाप्रसभंयदुक्तं हेकृष्णहेयादवहेसखेति । अजानतामहिमानंतवेदंमयाप्रमादात्प्रणयेनवापि ४१**

सखा १ इति २ मत्वा ३ प्रसभं ४ यद् ५ उक्तं ६ हेकृष्ण ७ हे यादव ८ हे सखे ६ इति १० अजानता ११ तव १२ इदं १३ महिमानं १४ मया

१५ प्रमादात् १६ वा १७ प्रणयेन १८ अपि १९ + ४१ + उ० + अर्जुन श्री कृष्णचन्द्र महाराज को पहले सदा से अपना सखा समझता हँसी चौहल के समय जो चाहता था सोई कह देता था अब श्री महाराज की यह महिमा देख उस अपराध को क्षमा कराता है दो श्लोकों में + अ० + आप को प्राकृतवत् अपना + सखा १ ही २ समझकर ३ हठपूर्वक ४ जो ५ मैंने + कहा ६ सो आप क्षमा कीजिये क्या क्या कहा मैंने सो सुनो + हेकृष्ण ७ मेरा कहा नहीं मानता इस प्रकार आधा नाम लेकर आप को बोला + हेयादव ८ यहां नहीं आता + हेसखा ९ तू क्या करता है इस प्रकार १० प्राकृतों की तरह आपको सम्बोधन किया + नहीं जानने वालों में ११ आप की १२ इस महिमाका १३ । १४ था अर्थात् इस आप की महिमा को मैं नहीं जानता था इसहेतु से + मैंने १५ प्रमाद से १६ आप को ऐसा कहा + अथवा १७ स्नेह से १८ भी १९ ऐसा कहना बन सक्ता है + ४१ +

**यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि विहारशय्यासनभोजनेषु । एकोथवाप्यच्युततत्समक्षं तत्क्षामयेत्वामहमप्रमेयम् + ४२ +**

भोजनेषु १ एकः २ अथवा ३ तत्समक्षं ४ अपि ५ अवहासार्थं ६ यत् ७ च ८ असत्कृतः ९ असि १० अच्युत ११ तत् १२ त्वां १३ अहं १४ क्षामये १५ अप्रमेयं १६ + ४२ + अ० + विहार शय्या आसन भोजन के समय १ अकेले २ अथवा ३ तिन मित्रों के सामने ४ भी ५ आपने और अपने हँसाने के लिये ६ जो ७ जो ८ असत्कार किया है ९ । १० मैंने आप का + हे निर्विकार ११ सो १२ आपसे १३ मैं १४ क्षमाकराताहूं १५ आप क्षमा कीजिये कैसे हैं आप कि + नहीं है प्रमाण आपका आप अप्रमेय हो १६ आपकी महिमा का वारापार नहीं इत्यभिप्रायः आप की लीला चरित्रों में जो तर्क करते हैं वे बड़े मूर्ख हैं आप अचिन्त्य शक्तिमान् हो + टी + सैर करना खेलना इत्यादि क्रिया को विहार कहते हैं पलंग पर लेटना उस समय को शय्या का समय कहतेहैं मसनद गद्दी तकिये लगे हुये बिछौने पर बैठना उसको आसन का समय कहते हैं भोजन का समय प्रसिद्ध स्पष्ट है इन समय में अर्जुन ब्रजचन्द भी औरों के सामने भी चौहल हँसी किया करता था श्री महाराज कभी

चुप होजाते थे कभी आप भी छेड़ छाड़ करने लगते थे इस भक्ति की महिमा के प्रताप पर और मेरे इस संक्षेप लिखने पर शोचना चाहिये कि निर्भाग यह माहात्म्य भगवत् का सुनते भी हैं परंतु संसार से टूटकर नारायण के चरण कमलों में प्रीति नहीं करते न जानिये फिरकौनसा मुहूर्त्त आवेगा जिसदिन भगवत् में ऐसे श्रोताओं की प्रीतिहोगी +४२+

**पितासिलोकस्यचराचरस्य त्वमस्यपूज्यश्चगुरुर्गरीयान्। नत्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकःकुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव + ४३ +**

अस्य १ चराचरस्य २ लोकस्य ३ त्वं ४ पिता ५ असि ६ पूज्यः ७ च ८ गुरुः ६ गरीयान् १० त्वत्समः ११ न १२ अस्ति १३ अन्यः १४ अभ्यधिकः १५ कुतः १६ अप्रतिमप्रभाव १७ लोकत्रये १८ अपि १६ +४३+ उ० + अचिन्त्य प्रभाव श्री भगवान् का निरूपण करता है + इस १ चराचर २ लोक के ३ आप ४ जनक ५ हो ६ और पूजने के योग्य ७। ८ गुरुः ६ गुरुतर १० भी आप हो जिस से एक अक्षर भी सीखा जावे उस को भी गुरुकहते हैं या जिससे कोई लौकिक विद्या सीखी जाय पुरोहित संस्कार कराने वाले को भी गुरु कहते हैं एक कुल गुरु होते हैं जैसे इनदिनों में कंठी बांधने का रिवाज प्रचार है कंठी बंध भी गुरु कहलाते हैं और एक सद्गुरु होते हैं कि जो जिज्ञासुका अज्ञानसंशय विपर्यय अपने ज्ञान के प्रताप से दूर करके परमानन्द स्वरूप आत्माको प्राप्त करते हैं ऐसे गुरुतर दुर्लभ हैं श्री सदाशिवजी कहते हैं कि हे पार्वतीजी धनके हरने वाले गुरुबहुत हैं शिष्यका सन्ताप हरने वाले गुरुतरदुर्लभ हैं + तदुक्तं+गुरवो बहवः सन्ति शिष्यवित्तापहारकाः। दुर्लभः सगुरुर्देवि शिष्यसन्तापहारकः + अर्जुन कहता है कि महाराज + आपके समान ११ नहीं १२ है १३ कोई भी फिर+दूसरा १४ अधिक१५ कहांसे १६ हो + हे अनुपम प्रभाव वाले १७ तीनलोक में १८ भी १६ कोई न आप के सदृश न आपसे अधिक जैसा आप का प्रभावहै ऐसा प्रभाव वाला कोई उपमा के वास्ते भी नहीं + ४३ +

**तस्मात्प्रणम्यप्रणिधायकायं प्रसादयेत्वामहमीशमीड्यम। पितेवपुत्रस्यसखेवसख्युः प्रियःप्रियायार्हसिदेवसोढुम + ४४ +**

तस्मात् १ त्वां २ अहं ३ प्रसादये ४ ईशं ५ ईड्यं ६ कायं ७ प्रणिधाय ८ प्रणम्य ९ पुत्रस्य १० पिता ११ इव १२ सख्युः १३ सखा १४ इव १५ प्रियः १६ प्रियायाः १७ देव १८ सोढुं १९ अर्हसि २० + ४४ + उ० + अनजान में मुझसे दोषहुआ + अ० + तिस कारण से १ आपको २ मैं ३ प्रसन्नकर्ता हूं ४ आप + ईश्वर ५ स्तुतिकरने के योग्यहैं ६ इसवास्ते + शरीर को ७ नीचा झुकाकर ८ बहुत नम्रहोकर ९ आपसे यह प्रार्थना करताहूं कि + पुत्र का १० अपराध + पिता ११ जैसे १२ मित्रका १३ अपराध + मित्र १४ जैसे १५ पुरुष १६ स्त्रीका १७ अपराध जैसे क्षमा करताहै इसी प्रकार + हेदेव १८ मेरा पिछला अपराध + क्षमाकरने को १९ योग्यहो आप २० अर्थात् पीछे मुझसे जोजो दोषहुये आपकृपाकरिके अब क्षमा कीजिये आपसे मैं इस समय बहुत डरताहूं अबकभी आपकी हँसी नहीं करूंगा न औरों से कराऊंगा इत्यभिप्रायः + ४४ +

**अदृष्टपूर्वंहृषितोऽस्मिदृष्ट्वा भयेनचप्रव्यथितंमनो मे । तदेवमेदर्शय देवरूपंप्रसीददेवेशजगन्निवास + ४५ +**

देव १ देवेश २ जगन्निवास ३ तत् ४ एव ५ रूपं ६ मे ७ दर्शय ८ प्रसीद ९ अदृष्टपूर्वं १० दृष्ट्वा ११ हृषितः १२ अस्मि १३ भयेन १४ च १५ मे १६ मनः १७ प्रव्यथितं १८ + ४५ + उ० + अपराध क्षमा करा के प्रार्थना करता है इस प्रकार अब आज्ञा नहीं करता है कि मेरे रथ को दोनों सेनाके बीच में खड़ा करो + अ० + हे देव १ हे देवेश २ हे जगन्निवास ३ सोई ४ । ५ रूप ६ मुझको ७ दिखाइये ८ किजो श्याम सुन्दर रूप पहले मैंने देखाथा + आप प्रसन्न हो जाइये ९ नहीं देखाथा पहले मैंने १० यहरूप आप का इस वास्ते जो इस को + देख कर ११ आनन्दहोता हूं मैं १२।१३ परन्तु इस रूप से + भय करके १४।१५ मेरा १६ मन १७ डरता है १८ भय इस वास्ते लगता है कि आप काल रूप भयंकर मूर्तिमान् हो रहे हैं + ४५ +

**किरीटिनंगदिनं चक्रहस्तमिच्छामित्वांद्रष्टुमहंतथैव । तेनैवरूपेणचतुर्भुजेन सहस्रबाहोभवविश्वमूर्ते + ४६ +**

सहस्रबाहो १ विश्वमूर्ते २ तथा ३ एव ४ किरीटिनं ५ गदिनं ६ च-

कहस्तं ७ त्वां ८ अहं ९ द्रष्टुं १० इच्छामि ११ तेन १२ एव १३ चतुर्भुजे-न १४ रूपेण १५ भव १६ + ४६ + उ० + माधुर्य रूप श्रीमहाराज का अर्जुन सदा जो देखा करता था उसीको देखा चाहता है + अ० + हे सहस्रबाहो १ हे विश्वमूर्ते २ तैसे ३ ही ४ किरीट वाला ५ गदा वाला६ चक्रहै हाथ में जिनके ७ ऐसा + आपको ८ मैं ९ देखने की १० इच्छा करता हूं ११ तिस तिसही १२ । १३ चतुर्भुज रूप वाले १४ । १५ हो जाइये १६ अब इस हज़ारों भुजा वाले विश्वरूपको शान्त कीजिये अर्जुन को सदा श्रीकृष्णचन्द्र महाराज चतुर्भुज दीखा करते थे अर्जुन उसी रूप का उपासक है इस वास्ते अर्जुन को वही रूप प्यारा लगताहै + ४६ +

**श्री भगवानुवाच । मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं रूपं परं दर्शितमात्मयोगात् । तेजोमयं विश्वमनंतमाद्यं यन्मेत्वदन्येन न दृष्टपूर्वम् + ४७ +**

श्री भगवानुवाच + अर्जुन१ मया २ प्रसन्नेन ३ आत्मयोगात् ४ तव ५ इदं ६ यत् ७ मे ८ आद्यं ९ अनन्तम् १० तेजोमयं ११ परं १२ विश्वं १३ रूपं १४ दर्शितं १५ त्वदन्येन १६ न १७ दृष्टपूर्वं १८ + ४७ + उ० + श्री भगवान कहते हैं कि + अ० + हे अर्जुन १ मैंने २ प्रसन्न होकर ३ अपने योग से ४ तुझको ५ यह ६ जो ७ अपना ८ आदि ९ अनन्त १० तेजोमय ११ परं १२ विश्वरूप १३ । १४ दिखाया १५ सिवाय तेरे अर्थात् सिवाय तुझ सदृश भक्तों के १६ नहीं १७ देखाहै पहले १८ किसी अभक्त ने योगमायादि अनेक अनन्त अचिन्त्य शक्ति हैं श्री महाराज ब्रजचन्द्र में उन शक्तियों करके जब चाहैं विश्वरूप दिखा सक्तेहैं + ४७ +

**नवेदयज्ञाध्ययनैर्नदानैर्नचक्रियाभिर्नतपोभिरुग्रैः । एवंरूपःशक्यअहंनृलोकेद्रष्टुंत्वदन्येनकुरुप्रवीर+४८+**

कुरुप्रवीर १ नृलोके २ त्वदन्येन ३ एवं ४ अहं ५ रूपः ६ द्रष्टुं ७ न८ वेदयज्ञाध्ययनैः ९ न १० दानैः ११ नच १२ क्रियाभिः १३ न१४ उग्रैः१५ तपोभिः १६ शक्यः १७ + ४८+उ०+ यह मेरा विश्वरूप बिना मेरीकृपा के वेदोक्त कर्मों का अनुष्ठान करने से कोई नहीं देख सक्ता + अ० + हे अर्जुन १ मर्त्य लोक में २ सिवाय तेरे ३ इस प्रकार ४ मेरा५ रूप ६ देखने को ७ न८ वेद यज्ञों का अध्ययन करके ९ न १० दान करके ११ न १२ क्रिया करके १३ न १४ अत्यन्त तप करके १५ । १६ कोई + समर्थ

१७ हुआ न होगा + टी० + यज्ञ एक विद्या है उस विद्या का नाम यज्ञ भी है + ४८ +

**मातेव्यथामाचविमूढभावोदृष्ट्वारूपंघोरमीदृङ्ममेदम्। व्यपेतभीःप्रीतमनाःपुनस्त्वं तदेवमेरूपमिदंप्रपश्य + ४९ +**

ईदृक् १ मम २ इदं ३ घोरं ४ रूपं ५ दृष्ट्वा ६ ते ७ व्यथा ८ मा ९ विमूढभावः १० च ११ मा १२ व्यपेतभीः १३ प्रीतमनाः १४ पुनः १५ त्वं १६ मे १७ तत् १८ एव १९ रूपं २० इदं २१ प्रपश्य २२ + ४९ + उ०+ श्री भगवान् ने विश्वरूप की बहुत स्तुति भी करी परन्तु अर्जुन का डर न गया तब श्री महाराज ने अर्जुन से कहा कि हे अर्जुन क्यों डरताहै फिर वही श्यामसुन्दर स्वरूप जो प्यारा लगता है देख + अ० + इस प्रकार १ मेरा २ यह ३ घोर ४ रूप ५ देखकर ६ तुझको ७ व्यथा ८ मत ९ हो + और मूढ़ता १० । ११ मत १२ हो+ मूढ़ता से दुःख भयहोता है + भय दूरकर १३ मनमें प्रीतिकर १४ फिर १५ तू १६ मेरा १७ सोई १८ । १९ रूप २० यह २१ देख २२यह कह कर श्री भगवान् उसी समय श्याम सुन्दर स्वरूप हो गये कि जो अर्जुन को प्रिय लगता था + ४९ +

**संजयउवाच + इत्यर्जुनंवासुदेवस्तथोक्त्वा स्वकं रूपंदर्शयामासभूयः। आश्वासयामासचभीतमेनंभूत्वा पुनःसौम्यवपुर्महात्मा + ५० +**

संजयउवाच + वासुदेवः १ इति २ अर्जुनं ३ उक्त्वा ४ भूयः ५ तथा ६ स्वकं ७ रूपं ८ दर्शयामास ९ पुनः १० च ११ महात्मा १२ सौम्यवपुः १३ भूत्वा १४ एनं १५ भीतं १६ आश्वासयामास १७ + ५० + + उ० + संजय धृतराष्ट्र से कहता है कि हे राजन् श्री कृष्णचन्द्र महाराजने फिर अपना वही सुन्दर स्वरूप अर्जुन को दिखाया + अ० + वासुदेव १ इस प्रकार २ अर्जुन से ३ कहकर ४ जैसे पहिले थे किरीटादि युक्त + फिर ५ तैसेही ६ अपना ७ रूप ८ दिखाते भये ९ और फिर करुणाकर १२ शान्त प्रसन्न रूप १३ होकर १४ इस भयमानको १५ १६ अर्थात् अर्जुन को + आश्वास करते भये १७ तात्पर्य श्री भगवान्जीने कहा कि हे अर्जुन अब डर मतकर प्रसन्न हो + ५० +

**अर्जुनउवाच। दृष्ट्वेदंमानुषंरूपं तवसौम्यंजनार्दन। इदानीमस्मिसंवृत्तः सचेताःप्रकृतिंगतः + ५१ +**

अर्जुनउवाच + जनार्दन १ तव २ इदं ३ सौम्यं ४ मानुषं ५ रूपं ६ दृष्ट्वा ७ इदानीं ८ सचेताः ९ संवृत्तः १० अस्मि ११ प्रकृतिं १२ गतः १३ + ५१ + अ० + अर्जुन श्री महाराज से कहता है कि + हे जनार्दन १ आप का २ यह ३ शान्त ४ मनुष्य ५ रूप ६ देख कर ७ अब ८ प्रसन्नचित्त ९ हुआ १० हूं मैं ११ और अपने + स्वभाव को १२ प्राप्त हुआ १३ + ५१ +

**श्रीभगवानुवाच। सुदुर्दर्शमिदंरूपंदृष्टवानसियन्मम देवाअप्यस्यरूपस्य नित्यंदर्शनकांक्षिणः + ५२ +**

श्री भगवानुवाच + इदं १ यत् २ मम ३ रूपं ४ दृष्टवान् ५ असि ६ सुदुर्दर्शं ७ अस्य ८ रूपस्य ९ देवाः १० अपि ११ नित्यं १२ दर्शनकांक्षिणः १३ + ५२ + अ० + श्री भगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन + यह १ जो २ मेरा ३ रूप ४ देखा ५ है तुमने ६ इस का + देखना बहुत कठिन है ७ इस ८ रूपको ९ देवता १० भी ११ सदा १२ दर्शन की इच्छा वाले १३ रहते हैं अर्थात् देवता भी इस रूप के देखने की सदा इच्छा करते हैं परन्तु यह बिश्वरूप उनको दीखता नहीं + ५२ +

**नाहंवेदैर्नतपसा नदानेननचेज्यया। शक्यएवंविधं द्रष्टुं दृष्टवानसिमांयथा + ५३ +**

यथा १ मां २ दृष्टवान् ३ असि ४ एवंविधः ५ अहं ६ न ७ वेदैः ८ न ९ तपसा १० न ११ दानेन १२ नच १३ इज्यया १४ + ५३ + उ० + यह दर्शन बहुत दुर्लभ था कि जो तुमने देखा सोई कहते हैं + अ० + जैसा १ मुझको २ देखा ३ है तुमने ४ इस प्रकार का ५ मुझको ६ न ७ वेदों करिके ८ न ९ तप करके १० न ११ दान करके १२ न १३ यज्ञ कर के १४ देख १५ सक्ता है १६ कोई तात्पर्य भगवत् के दर्शन में भक्ति मुख्य साधन है तप दानादि गौण साधन हैं + ५३ +

**भक्त्यात्वनन्ययाशक्य अहमेवंविधोऽर्जुन। ज्ञातुं द्रष्टुंचतत्त्वेन प्रवेष्टुंचपरंतप + ५४ +**

अर्जुन १ परंतप २ एवंविधः ३ अहं ४ अनन्यया ५ भक्त्या ६ तु ७ तत्त्वेन ८ ज्ञातुं ९ द्रष्टुं १० च ११ प्रवेष्टु १२ च १३ शक्यः १४ + ५४ + उ० + अनन्य भक्ति करके भगवत् का स्वरूप देखा जाता है जाना जाता है प्राप्त होताहै सोई कहते हैं श्री भगवान् +अ०+ हे अर्जुन १ हे परंतप २ इस प्रकार ३ अर्थात् जैसा विश्वरूप पीछे दिखाया +मुझको ४ अनन्य ५ भक्ति करके ६ तो ७ परमार्थ से ८ जान ने को ९और देखने को १०।११ और प्रवेश होने को १२।१३ शक्य १४ है + टी० + औरों को अपने तपके सामने तपाने वाला अर्थात् अर्जुन के तपको देखकर अन्यराजा मनमें तपा करते थे कि हाय ऐसा तप हमारा नहीं कि जैसा अर्जुन का है कि जिस तपके प्रतापसे प्रभुअर्जुन को अपना परमप्यारा मित्र समझ कर उस की इच्छा के अनुसार वर्तते हैं + परमार्थ से भगवत् का जानना यह है कि परमेश्वर निराकार नित्यमुक्त निर्विकार शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्ण ब्रह्म मुझसे अभिन्न हैं और देखना यह है कि आत्माको पूर्वोक्त विशेषणों करके विशिष्ट साक्षात् अपरोक्ष देखना अनुमानादि प्रमाणों करके देखना और सावयव मूर्तिमान् का देखना नहीं कहलाता और प्रवेश होना यह है कि अविद्या कार्यके सहित नाश होजावे पीछे शुद्ध परमानन्द स्वरूप रह जाना यही परमेश्वर में प्रवेश होना है ऐसा नहीं समझना कि ज्योति में ज्योति जा मिलती है जैसे थोड़ा जलसमुद्र में जाकर प्रवेश हो जाता है यह नहीं समझना + ५४ +

**मत्कर्मकृन्मत्परमोमद्भक्तःसंगवर्जितः। निर्वैरःसर्वभूतेषुयःसमामेतिपांडव + ५५ +**

पांडव १ यः २ मद्भक्तः ३ मत्कर्मकृत् ४ मत्परमः ५ संगवर्जितः ६ सर्वभूतेषु ७ निर्वैरः ८ सः ९ मां १० एति ११ + ५५ + उ० + सबशास्त्र साधनों का सार मुक्ति के साधन कहते हैं + अ० + हे अर्जुन १ जो २ मेराभक्त ३ मेरेअर्थ कर्म करता है ४ मैं हीहूं पर पुरुषार्थ जिस के ५ पुत्रादि में + आसक्ति रहित ६ सब भूतों में ७ निर्वैर ८ सो ९ मुझको १० प्राप्त होता है ११ तात्पर्य जो कर्म करना सो भगवत् में प्रीति बढ़ने

के लिये करना प्राणी मात्र से वैर नहीं करना इति सिद्धान्तः + ५५ +

इति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विश्वरूपदर्शनो नामैकादशोऽध्यायः + ११ +

इति श्री आनन्दगिरिविरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां एकादशोऽध्यायः + ११ +



—※—

## बारहवें अध्याय का प्रारम्भ हुआ॥

**अर्जुनउवाच। एवंसततयुक्तायेभक्तास्त्वांपर्युपासते। येचाप्यक्षरमव्यक्तंतेषांकेयोगवित्तमाः + १ +**

अर्जुनउवाच + एवं १ सततयुक्ताः २ ये ३ भक्ताः ४ त्वां५पर्युपासते ६ ये ७ च ८ अपि ९ अक्षरं १० अव्यक्तं ११ तेषां १२ के १३ योगवित्तमाः १४ + १+ अ० + अर्जुन कहताहै कि हे नारायण + इसप्रकार १ सदा युक्त हुये २ जो ३ भक्त ४ आपकी ५ उपासना करते हैं ६ और जो ७।८ निश्चय ९ अक्षर १० अव्यक्तकी११उपासना करतेहैं तिनमें १२ कौनसे १३ योगवित्तम हैं १४ + टी० + कोई तो आपको शिव विष्णु रामकृष्णादि मूर्तिमान् समझते हैं और कोईविश्वरूप विराट हिरण्यगर्भ और कोई कर्महीको आपका रूप समझते हैं कोई अंश अंशी भाव से आप की उपासना करता है कोई पुरुष ईश्वरादि जानकर जिस प्रकार कि प्रथम अध्यायसे लेकर ग्यारहवें तक आपने उपदेश किया इस प्रकार सदा आपके उपदेश का अनुष्ठान करते हैं इसी को उपासना कहते हैं जो भक्त आपकी ऐसी उपासना करते हैं अर्थात् किसी की सांख्य पातंजलि योग में निष्ठा है किसी की शांडिल्य विद्या में निष्ठा है अनुक्त भी आपकी उपासना के बहुत मार्ग हैं अर्थात् जो मैंने नहींकहे अब इस अध्याय में और यह भी निश्चय है कि बहुत महात्मा आप को निर्गुण नित्यमुक्त अद्वैत समझकर आपकी उपासना करते हैं और चतुर्थादि अध्यायों में आपने श्रीमुख से निर्गुण उपासकों को आर्त्तादि सब भक्तों से विशेष श्रेष्ठ कहा

और कर्मनिष्ठ योगियों की सगुण ब्रह्मके उपासकोंकी भी आपने बहुत स्तुति करी पिछले अध्यायों में अब मैं यह समझा चाहता हूं कि कर्मी योगी सगुण ब्रह्मके उपासक जो भक्त और निर्गुणके जो उपासक इन सब में कौन अच्छी तरह भले प्रकार योग को जानते हैं योग का अक्षरार्थ एकता है वित् का अर्थ + जानता है + यह है योग कोजो जानता है उसको योगवित् कहते हैं तर तम ये दोनों शब्द विशेषार्थ में आते हैं अर्थात् योग के जानने वालों में विशेष श्रेष्ठ कौन है पूर्वोक्त इन सब में इत्यभिप्राय: + १ +

**श्रीभगवानुवाच। मय्यावेश्यमनोयेमां नित्ययुक्ता उपासते। श्रद्धयापरयोपेतास्तेमेयुक्ततमामता: + २ +**

श्रीभगवानुवाच + ये १ परया २ श्रद्धया ३ उपेता: ४ मन: ५ मयि ६ आवेश्य ७ नित्ययुक्ता: ८ मां ९ उपासते १० ते ११ मे १२ युक्ततमा: १३ मता: १४ + २ + उ० + अर्जुन का प्रश्न और यह उसका उत्तर ऐसे समझो कि जैसी ये दो कथा पुरानी हम लिखते हैं + राजा ने सूरदास जीसे बूझा कि कविता आपको अच्छी है या तुलसी दास जीकी उत्तर दिया कि मेरी राजा ने फिर बूझा कि तुलसीदास जीकी कविता कैसीहै उत्तर दिया कि तुलसीदास जीकी कविता नहीं मंत्र हैं आप का प्रश्न कविता के विषय है विचारो इस बोली में बड़ाई किसकीहुई + एक भक्तने देवी से बूझा कि कवि कालिदास जी श्रेष्ठ हैं या दण्डी स्वामी उत्तर दिया कि दण्डी स्वामी और इस वाक्य को सरस्वती जीने तीन बार उच्चारण किया ॥ कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डीनसंशय: ॥ कलिदास जीने बूझा कि हे देवि क्या मैं कवि नहीं देवी जीने कहा कि आप तो मेरा स्वरूपही हो प्रश्न कवि विषय है + इसी प्रकार अर्जुन ने उपासना अनुष्ठानक्रिया विषय प्रश्न किया है ज्ञानी महात्मा क्रियावान् उपासक नहीं होते ब्रह्मवित् ब्रह्मैव भवति ब्रह्मका जाननेवाला ब्रह्मही है अर्जुन से श्रीभगवान् ने कहा कि + अ० + जो १ परं श्रद्धा करके २। ३ युक्त ४ मन को ५ मुझ में ६ प्रवेश करके ७ नित्य युक्त हुये ८ मुझसगुण ब्रह्मकी ९ उपासना करतेहैं १० वे ११ मुझको १२ युक्ततम १३ सम्मत १४ हैं अर्थात् उनको युक्ततम मानताहूं युक्तयोगी का नाम है योगियोंमेंश्रेष्ठ है इति तात्पर्यार्थ: और जो कोई यह प्रश्नकरे कि निर्गुण ब्रह्म के उपासक युक्त तमहैं यानहीं इसका उत्तर पहलेही दो कथाओं

के प्रसंग में हो चुका कि वेयुक्तयोगी नहीं श्रीभगवान् चौथे मंत्रमें कहेंगे कि वेतो मुझको प्राप्तही हैं उनका यहांक्याप्रसंग है तीसरे चौथे मंत्र में और तेरहवें मंत्र से लेकर अध्याय की समाप्ति पर्यन्त निर्गुण उपासकों के लक्षण कहेंगे सगुण उपासकों को जो कहनाथा सो कहा यह उत्तर सूरदास जी और देवी के उत्तर के सदृश समझना चाहिये इस मंत्र में यह अर्थ किसी प्रकार नहीं जानाजाता कि निर्गुण उपासकों से सगुणब्रह्म के उपासकों को श्रेष्ठ श्रीभगवान् ने कहा+श्रेष्ठ वे सन्देह हैं परन्तु किनसे श्रेष्ठ हैं योगियों से कर्मनिष्ठोंसे विषयी पामरोंसे श्रेष्ठहैं इत्यभिप्रायः +२+

**येत्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तंपर्युपासते। सर्वत्रगमचिंत्यंचकूटस्थमचलंध्रुवं +३+ संनियम्येन्द्रियग्रामंसर्वत्रसमबुद्धयः। तेप्राप्नुवन्तिमामेवसर्वभूतहितेरताः+४+**

दो श्लोकों का एक अन्वय है + सर्वत्रसमबुद्धयः १ सर्वभूतहिते २ रताः ३ इन्द्रियग्रामं ४ संनियम्य ५ ये ६ अनिर्देश्यं ७ अव्यक्तं ८ अक्षरं ९ सर्वत्रगं १० अचिन्त्यं ११ च १२ कूटस्थं १३ अचलं १४ ध्रुवं १५ पर्युपासते १६ ते १७ तु १८ मां १९ प्राप्नुवंति २० एव २१। + ३ +४+उ०+ निर्गुण उपासकों का माहात्म्य सुन + अ० + सब कालमें समान ज्ञान रहता है जिनका १ सब भूतों के भले में २ प्रीति रखते हैं ३ अर्थात् सबका भला चाहते हैं + इन्द्रियों के समूह को ४ निरोध करके ५ जोह महात्मा निर्गुण उपासक + अनिर्देश्य ७ अव्यक्त ८ अक्षर ९ सर्वत्रगम्१० अचिन्त्य ११ और १२ कूटस्थ १३ अचल १४ ध्रुवको १५ उपासना करते हैं १६ अर्थात् आत्माको ऐसा जान कर कि जैसा सात के अंक से पन्द्रह के अंक तक कहा और संसार को इन्द्रजालवत् शुक्ति में रजतवत् समझ कर उसी परमात्मानन्द स्वरूपआत्मा में मग्न रहते हैं अपनेस्वरूप जान लेना यथार्थ जैसा ऊपर कहा यही उनकी उपासना है जो ऐसी उपासना करते हैं + वे १७ तो १८ मुझको १९ प्राप्त हैं २० ही निश्चय २१ अर्थात् जब कि उनका स्वरूप अनिर्देश्य है कहने में नहीं आता इस हेतु से उनको योगवित्तम और युक्ततम श्रेष्ठादि शब्दों कर के निर्देश करना नहीं बनता यही समझना चाहिये कि वे मेरा स्वरूप हैं जैसा मैं मन वाणी का विषय नहीं ऐसे ही वे हैं उन को उपासक कहना यह एक बोली है + टी० + सदा दुःख सुख इष्ट अनिष्टादि की

प्राप्ति में आत्माको एक रस जानते हैं ब्रह्म ज्ञानी १ कहने में नहींआता है कि वह ऐसाहै ७ रूपरसादिवत् वहप्रकट नहीं ८ कर्माकर्म नहीं होता ९ सब जगह प्राप्त है १० उसका चिंतवन नहीं हो सक्ता क्योंकि वहचित से भी सूक्ष्म परे है ११ निर्विकार १३ निश्चल १४ नित्य १५ + ३ +४ +

**क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्ताऽसक्तचेतसाम । अ-व्यक्ताहिगतिर्दुःखंदेहवद्भिरवाप्यते** + ५ +

अव्यक्तासक्तचेतसां १ तेषां २ अधिकतरः ३ क्लेशः ४ अव्यक्ता ५ हि ६ गतिः ७ देहवद्भिः ८ दुःखं ९ अवाप्यते १० + ५ + जब कि नि-र्गुण ब्रह्म के उपासक ब्रह्म रूप होते हैं तो सगुण ब्रह्म की उपासना छोड़ कर निर्गुणब्रह्म की उपासना करनी चाहिये यह शंका करके श्री भगवान् कहते हैं कि + अ० + अव्यक्त में आसक्त है चित्त जिनका १ और उस उपासना के योग्य वे अभी हुये नहीं + तिन को २ बहुत अत्यन्त ३ दुःख ४ होता है क्योंकि रूप रसादि विषयों से प्रीति दूर होनी सहज नहीं + अव्यक्ताहिगति अर्थात् अव्यक्त की प्राप्ति ५ । ६ । ७ देहाभिमानियों को ८ अर्थात् जो आत्मा को क्रियावान् समझते हैं शुद्ध सच्चिदानन्द आत्मा को पूर्ण ब्रह्म नहीं समझते तिनको + दुःख से ९ प्राप्तहोती है १० तात्पर्य उन को बहुत प्रयत्न करना पड़ता है देहा-भिमानियों के वास्ते अन्योपाय श्री भगवान् अभी इस मंत्र से आगे सात श्लोकों में बारह के श्लोक तक कहेंगे + उसका अनुष्ठान करने से नि-र्गुण ब्रह्मकी प्राप्ति उनको सुलभ हो जायगी निर्गुण ब्रह्मके उपासकों ने भी पहिले वही अनुष्ठान कियाहै जब उनको परमानन्द स्वरूप आत्मा की प्राप्ति हुई है आत्मनिष्ठा की क्रिया समझना न चाहिये सगुण ब्रह्म की उपासनावत् सगुण ब्रह्म की उपासना का फल समझना सगुण ब्रह्मके उपासक का यावत् देहमें अध्यास बना रहै देह इन्द्रियादि के साथ ममता तादात्म्यता एकता बनी रहै विवेक वैराग्यादि साधन नहीं तब तक वे निर्गुण ब्रह्मकी उपासनाके योग्य नहीं जो निर्गुण ब्रह्मकी महिमा सुनकर उस उपासना में चित्त को आसक्त करेंगे उनको प्रथम तो बहुत दुःख होगा क्योंकि निर्गुण ब्रह्म आत्मा अति सूक्ष्म देहेन्द्रियादि से वि-लक्षण है देहाभिमानी को उसकी प्राप्ति होनी बहुत कठिन है वह ब्रह्म को आत्मा से जुदा समझता है + इस प्रकरण का अर्थ जो हमनेलिखा है सो तो श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री शंकराचार्य महाराज जी

के भाष्यानुसार और श्री स्वामी आनन्द गिरि जीने भाष्यपर जो टीका बनाई है और श्री शंकरानन्दो और मधुसूदनी आदि टीकाओंके अनुसार यथामति लिखा है कोई कोई भेद बादी जानकर या भूलकर या आमर्ष ईर्षादि से जो इस प्रकरण का अनर्थ करते हैं सो भी संक्षेप करके लिखा जाता है लीला विग्रह मूर्तिमान् राम कृष्णादि की उपासना पुराणोक्त है मन्द मध्यम अधिकारियों के लिये अन्तःकरण की शुद्धिका साधनहै इस हेतुसे साधनों के प्रकरण में जितनीउस उपासना की स्तुति महिमा बड़ाई लिखी जावे वह सब सत्य प्रमाण है परन्तु वे लोग निर्गुण उपासना की प्रत्यक्ष निन्दा असूया करते हैं और कोई अर्थ का अनर्थ करतेहैं अक्षरों का अर्थ फेर देते हैं क्या अनर्थ करतेहैं वे इस प्रकरणका सो सुनो अर्जुन ने श्री कृष्णचन्द्र जी से प्रश्न किया कि सगुण ब्रह्म के उपासक श्रेष्ठ हैं या निर्गुण ब्रह्मके श्री भगवान्ने उत्तर दिया कि सगुण ब्रह्मके उपासक श्रेष्ठ हैं यद्यपि निर्गुण ब्रह्म के उपासक भी मुझको ही प्राप्त होंगे परन्तु उनको उसउपासना में बहुत दुःख होताहै क्योंकि देह धारीसे निर्गुणकी उपासना होनी बहुत कठिन है और जो सगुण ब्रह्म के उपासक हैं उनको जल्दी बिनाश्रम संसार से मैं उद्धार करूंगा यह अर्थ करते हैं वे लोग तन्न अर्थात् सो नहींहै अर्थ इस प्रकरण का क्यों नहीं सो सिद्धान्त कहते हैं बिचारो कि अर्जुन का प्रश्न यह है कि तिनमें योगवित्तम कौन है योगवित्तम का अर्थ जो हमने किया उसको बिचारो और जो वे कहते हैं उसको बिचारो श्री भगवान् ने उत्तर दिया कि सगुण ब्रह्मके उपासक युक्ततम हैं मेरे मतमें और निर्गुण ब्रह्म के उपासक तो मुझको प्राप्त हैं ही निश्चय युक्ततमका अर्थ जो हमने किया सो बिचारो और जो वेकरते हैं सो बिचारो यह अर्थ कैसे निकलता है कि सगुण ब्रह्म के उपासक निर्गुण ब्रह्मके उपासकों से श्रेष्ठ हैं प्राप्नुवन्ति इस वर्तमानक्रिया का अर्थ सगुणोपासक भविष्यत् अर्थ कर देतेहैं और +तु+ इस शब्दका + भी + यह अर्थ करते हैं अर्थात् वेभी मुझको प्राप्त होंगे अब एक तो इस अर्थ को बिचारो कि वे तो मुझको प्राप्त हैं ही निश्चय और एक इस अर्थ को बिचारो कि वेभी मुझको प्राप्त होंगे कितना अन्तर पड़ गया और अर्थ का अनर्थ हुआ या नहीं मुक्त पुरुषों को साधक कह दिया और + तु + इस शब्द का + तो + यह अर्थ छोड़कर + भी + यह अर्थ कर दिया कि परमेश्वर की प्राप्ति में + भी + भी + यह शब्द सन्देह उत्पन्न करताहै और उसी जगह + एव + यह शब्दहै उसका अर्थ + निश्चय + और +

हि + यह होताहै उसको छोड़देतेहैं उसका कुछ अर्थ करतेही नहीं + प्रकरण का अर्थ स्पष्ट है निर्गुण ब्रह्म के उपासक भगवत् को जीते जी प्राप्त हैं किसी साधनकी उनको अपेक्षा नहीं और सगुण ब्रह्मके उपासक युक्ततम हैं उत्तम योगी साधक का नाम युक्ततम है साधक योगियों में श्रेष्ठहैं यह अर्थ है युक्ततम का निर्गुण उपासकों से कभी श्रेष्ठ नहीं हो सक्ते क्योंकि ज्ञानी लोग भगवत् रूप हैं चौथे अध्याय में श्री भगवान् ने स्पष्ट कहा है कि ज्ञानी मेरा आत्मा है तीसरे अध्याय में यह कहा है कि मैंने दोनों निष्ठा कहीं हैं विरक्तों के वास्ते ज्ञान निष्ठा अज्ञानियों के लिये कर्मनिष्ठा यह जो तू बूझता है कि दोनों में श्रेष्ठ क्या है यह प्रश्नही ब योग है क्योंकि अधिकार प्रति दोनों श्रेष्ठ हैं अर्थात् ज्ञाननिष्ठा के श्रेष्ठहोने में तो कुछ संदेह है नहीं क्योंकि वह कर्म निष्ठा का फल है मोक्षदाता है बिषयी वहिर्मुखोंकी निष्ठासे कर्मनिष्ठा श्रेष्ठहै कर्म निष्ठा मेंही उपासनाका अन्तर्भाव है जैसाप्रश्न अर्जुनने तीसरे अध्यायमें किया कि ज्ञाननिष्ठा और कर्मनिष्ठा इनदोनों में से कौनसी निष्ठा श्रेष्ठहै ऐसे ही यह प्रश्न किया कि उपासकों में कौन श्रेष्ठ है प्रश्न अनजान में होताहै अर्जुन ने ज्ञाननिष्ठाको भी साधन समझा श्री भगवान् ने यह तो न कहा कि यह प्रश्न बेयोग है परन्तु उसी प्रश्न के अनुसार प्रकरणको पृथक् कर के ऐसा उत्तर दे दिया कि किसीने अपनेको निकृष्ट न समझा + पांचवें मंत्रका वे यह अर्थकरते हैं निर्गुणब्रह्म के उपासकों को दुःख बहुत होता है यह भी असत्य है क्योंकि दुःख साधकों को होता है निर्गुण ब्रह्म के उपासक साक्षात् परमानन्द को प्राप्त हैं श्री भगवान् ने उसी मंत्र में विशेषण दिया कि जिनको देहका अभिमान है उनको दुःख होता है विचारो देहाभिमानी ज्ञानी होते हैं या उपासक विना देहाभिमान उपासना नहीं बन सक्ती और विना देहाभिमान गये साक्षात् निर्गुण ब्रह्म की उपासना नहीं बनसक्ती यहनियम है और जिस को देहाभिमान है उसको हम ज्ञानी निर्गुण ब्रह्म का उपासक नहीं कहते यहां प्रसंग सच्चे उपासकों का है जो कोई वेष धारी में देहाभिमान की शंका करेतो हम तिलक माला धारी में हज़ार शंका अभक्ति पाखण्ड की कर सक्तेहैं + बिचारो एक तो साक्षात् परमानन्द को प्राप्त है परमानन्दरूप आत्मा को अपरोक्ष समझ कर उपासना करतेहैं और एक आनन्दकी इच्छा करते हुये आनन्दजनक राम कृष्णादि की उपासना करते हैं दृष्टान्त में समझो कि एक तो भोजन कररहाहै और एक भोजन बना रहा है दोनों

में दुःख किसको है और जो सगुण ब्रह्मके उपासक यह कहें कि हमारे इष्ट देव श्रीराम कृष्णादि आनन्दरूप मूर्तिमान् हैं सो नहीं हो सक्ता आनन्द पदार्थ सदा निरवयव रहता है लक्ष्यरूप राम कृष्णादिका आनन्द रूपहै सो उनको परोक्ष है और वह ज्ञानियों को अपरोक्ष है और यही भेद भी है सगुण ब्रह्मकी उपासना और निर्गुण ब्रह्मकी उपासना में और जो वे यह कहें कि हमको भी आनन्द रूप अपरोक्ष है तो हम उनको ज्ञानी निर्गुण ब्रह्मके उपासक कहेंगे यही सिद्धान्त है कि जिनको परमानन्द अपरोक्ष नहीं उनको दुःख है और परमानन्द के अपरोक्ष होने में यही परीक्षा है कि जिनको देहाभिमान वर्णाश्रम जाति दास स्वामी भाव का अभिमान है भेद भाव जिनमें प्रतीत होता है ऐसे देहाभिमानियों को परमानन्द अपरोक्ष कहां है + सगुणोपासक निर्गुणोपासना को समूल खण्डन करते हैं क्योंकि परमानन्द की प्राप्ति उन्होंने केवलसगुणोपासना से मानी कि जिसको परमपद मुक्ति कहते हैं और निर्गुण उपासना का फल दुःख बताया तो निर्गुणोपासना आपहीखण्डन होगई और निर्गुणोपासक सगुणोपासना का + खण्डन नहीं करते न उनको बुराकहते हैं जब सगुणोपासक वृथा निर्गुणोपासकों से तकरार बाद करने लगते हैं तब निर्गुणोपासक यथार्थ व्यवस्था कह देतेहैं इसी हेतुसे यह प्रसंग हमने भी लिखा है + समझो और बिचारो कि जो निर्गुण ब्रह्म की उपासना में दुःख होता तो वे सगुणोपासना को छोड़ कर क्यों अंगीकार करते दूसरे यह कि निर्गुणोपासक तो दोनों उपासनाका आनन्द जानते हैं सगुणोपासक एक को ही जानतेहैं जो अनुभव करी हुई बरती हुई बात कहे उसके वाक्य में श्रद्धा होतीहै तीसरे यह कि जो ज्ञानी होगा वह बे सन्देह बिद्यावान् होगा बिना ब्रह्मविद्या भगवत् की पहिचान नहीं हो सक्ती चौथे निर्गुण उपासना में प्रवृत्ति नहीं सगुण उपासना में अत्यन्त प्रवृत्त है जहां प्रवृत्ति होगी और जहां द्रव्य गहने वस्त्रादिका सम्बन्ध होगा वहां सब अनर्थ होंगे पांचवें सगुणोपासक बहुत सगुणोपासना को छोड़ निर्गुणोपासना करने लगते हैं निर्गुणोपासक कभी न सुना होगा कि उसने अपनी उपासना छोड़ कर सगुणोपासना करी हो मूर्खों का यहां प्रसंग नहीं आनन्द को छोड़कर दुःखमें कोई नहीं प्रवृत्त होता दुःख को छोड़ आनन्द में सब प्रवृत्त होते हैं इस हेतु से बिचार करो कि दुःख किस उपासना में है और आनन्द किस उपासना में है छठें भगवद्गीता अद्वैतामृतवर्षिणीहै इसमेंजो द्वैतसिद्धान्त समझते हैं वे अद्वैता-

मृत वर्णियों का अर्थ करें + तात्पर्य सगुणोपासना साधन है निर्गुणोपासना फल है इत्यभिप्राय: + ५ +

**येतुसर्वाणिकर्माणिमयिसंन्यस्यमत्परा:। अनन्येनैवयोगेनमांध्यायंतउपासते + ६ +**

सर्वाणि १ कर्माणि २ तु ३ मयि ४ संन्यस्य ५ ये ६ मत्परा: ७ अनन्येन ८ योगेन ६ एव १० मां ११ ध्यायंत: १२ उपासते १३ +६+उ०+ सगुणब्रह्म उपासकों के वास्ते निर्गुणब्रह्म की प्राप्ति का उपाय अधिकार भेद से कै प्रकार का कहते हैं छ: श्लोकों में भगवत् पर जैसी अपनी सामर्थ्य जाने सोई उपायकरे +अ०+ एव कर्मोंको १। २ तो ३ मुझ में ४ संन्यास करके ५ जो ६ मुझ परायण ७ अनन्य योग करके ८। ६ निश्चय १० मेरा ११ ध्यान करते हुये १२ उपासना करते हैं १३ मेरी तिन का मैं उद्धार करूंगा इस श्लोक का अगले श्लोक के साथ सम्बन्ध है तात्पर्य इस श्लोक में उन भक्तों का प्रसंग है कि जिन्होंने इस जन्म में या पिछले जन्मों में अग्निहोत्रादि कर्मों का अनुष्ठान करके अन्त:-करण शुद्ध कर लिया है उन कर्मों को तो संन्यास करके दिनरात्रि गंगा प्रवाहवत् सगुण ब्रह्मका ध्यान करतेहैं सिवाय परब्रह्मके और कुछ अपना आश्रा नहीं जानते भगवद्भक्त को ही सार सिद्धांत समझते हैं दूसरे मत को बुरा कहना न भला कहना यह लक्षण उत्तम सगुण ब्रह्म के उपासकों का है ऐसे भक्तों का ब्रह्म विद्या द्वारा अनायास जल्द परमेश्वर उद्धार करते हैं + ६ +

**तेषामहंसमुद्धर्तामृत्युसंसारसागरात्। भवामिनचिरात्पार्थमय्यावेशितचेतसाम् + ७ +**

पार्थ १ मयि २ आवेशितचेतसां ३ तेषां ४ मृत्युसंसारसागरात् ५ न ६ चिरात् ७ समुद्धर्ता ८ अहं ६ भवामि १० + ७ + उ० + भक्तोंको धीरज बांधने के लिये अपनी छातीपर हस्त कमल रखकर प्रतिज्ञाकरते हैं कि + अ० + हे अर्जुन १ मुझमें २ लग रहा है चित जिनका ३ तिनका ४ मृत्यु संसार समुद्रसे ५ जल्दी ६ च ७ उद्धारकरने वाला ८ मैं ६ हूं १० तात्पर्य जो श्रीकृष्णचन्द्र रामचन्द्रादि सदा शिवादिके भक्त हैं वे जल्दी संसार समुद्र से पार होंगे जैसे कोई मणि की प्रभाको मणि समझ कर लेने के लिये दौड़ता है प्रभा तो मणि न थी परंतु उस जगहसे सच्ची

मणि दीख पड़ती है जब उस मणि का मिलना सहज होजाता है इसी प्रकार सगुण ब्रह्म की उपासना करते करते शुद्ध सच्चिदानन्द का ज्ञान होजाताहै भगवत् का जानना यही संसार से उद्धार होना है फिर उस का जन्म मरण नहीं होता श्री भगवान् इस प्रतिज्ञाके पूर्ण होनेके लिये अपना यथार्थ स्वरूप तेरहवें अध्याय में निरूपण करेंगे जिसके जानने से जल्द उद्धार हो जावे + ७ +

**मय्येवमनआधत्स्वमयिबुद्धिंनिवेशय। निविशिष्यसिमय्येवअतऊर्ध्वंनसंशयः + ८ +**

मयि १ एव २ मन: ३ आधत्स्व ४ मयि ५ बुद्धिं ६ निवेशय ७ अत: ८ ऊर्ध्वं ९ मयि १० एव ११ निविशिष्यसि १२ न १३ संशय: १४ + ८ + उ० + जिनका मन मुझमें आसक्त है उनकामैं उद्धार करूंगा यह मैंने प्रतिज्ञा करीहै इस वास्ते हे अर्जुन तू भी + अ० + मुझमें १ हि २ मनको ३ स्थिरकर ४ मुझमें ५ बुद्धि को ६ प्रवेश कर ७ इससे ८ पीछे ९ मुझमें १० ही ११ बास करेगा तू १२ नहीं १३ संशय १४ इस वाक्य में तात्पर्य वेद की यह श्रुति है देहान्ते देव: परं ब्रह्म तारकं व्याचष्टे इति अर्थात् देहके अन्त समय परब्रह्म अपने इष्टदेव तारक मंत्र ॐकार का उपदेश करते हैं उसी समय ब्रह्म ज्ञान होकर परमानन्द को प्राप्त होजाता है यही परमेश्वर में बास करना है + ८ +

**अथचित्तंसमाधातुंनशक्नोषिमयिस्थिरम्। अभ्यासयोगेनततो मामिच्छाप्तुंधनंजय + ९ +**

धनंजय १ अथ २ मयि ३ चित्तम् ४ समाधातुं ५ न ६ शक्नोषि ७ स्थिरं ८ तत: ९ अभ्यासयोगेन १० मां ११ आप्तुं १२ इच्छा १३ + ९ + उ० + पूर्वोक्त उपायसे भी सुगम उपाय कहतेहैं + अ० + हे अर्जुन १ और जो २ मुझमें ३ चित्त ४ समाधान करने को ५ नहीं ६ समर्थ है तू ७ स्थिर ८ नहीं करसक्ता है मनको + तो ९ अभ्यास योग करके १० मेरी ११ प्राप्ति की १२ इच्छाकर १३ + मूर्तिमान् परमेश्वर में या विश्वरूप में जो दिन रात्रि चित्तस्थिर न रहे तो बारम्बार यहअभ्यासकरना कि जब मन दूसरे पदार्थ में जावे उसी समय वहां से हटाकर उसी स्वरूप में समाधान करै इसी को अभ्यास योग कहते हैं + तात्पर्य अभ्यास करते करते अवश्य मन एक जगह निश्चल हो जाताहै अभ्यास

में जल्दी न करे असंख्यात वर्षों से मन भगवत् से विमुख हो रहा है अब भी जो दो चार वर्ष में अभ्यास के बलसे भगवत् के सन्मुख होजा तो भी बड़ी बात है अभ्यास में प्रथम दुःख प्रतीत होता है दुःख समझ कर अभ्यास नहीं छोड़ देना + ९ +

**अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसिमत्कर्मपरमोभव । मदर्थम-पिकर्माणिकुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि + १० +**

अभ्यासे १ अपि २ असमर्थः ३ असि ४ मत्कर्मपरमः ५ भव ६ मदर्थं ७ अपि ८ कर्माणि ९ कुर्वन् १० सिद्धिं ११ अवाप्स्यसि १२ + १० + उ० + उससे भी सुगम उपाय कहते हैं + अ० + अभ्यास में १ भी २ असमर्थ ३ है तू ४ तो + मत्कर्म परायण ५ हो तू ६ अर्थात् साधुओं की शिर आंखों से टहल करनी दिन रात्रि उनकी सेवा में लगा रहना शिवालय केशवालय बनाने मन्दिरों में बुहारीदेना लीपना ठाकुर सेवा के बर्त्तन मांजने शुद्धजल अपने हाथ से लाना बहुत क्रिया के साथरसोई बनाना प्रथम परमेश्वर को भोग लगाना और ढूंढकर साधू को जिमाना ऐसे २ बहुत कर्म्म हैं साधु महात्मा बतासक्ते हैं ऐसे कर्मोंमें तत्परहोना चाहिये श्री भगवान् कहते हैं कि + मेरे अर्थ ७ भी ८ कर्मों को ९ करता हुआ १० अन्तःकरण शुद्धिद्वारा ज्ञानको प्राप्तहोकर + मोक्ष को ११ प्राप्त होगा तू १२ तात्पर्य भगवत् भजन और भगवत् सेवा सम्बन्धीजो कर्महैं सब अन्तःकरण को शुद्धकरसक्तेहैं + १० +

**अथैतदप्यसक्तोऽसिकर्तुंमद्योगमाश्रितः । सर्वकर्मफ-लत्यागंततःकुरुयतात्मवान् + ११ +**

अथ १ एतत् २ अपि ३ कर्तुं ४ असक्तः ५ असि ६ ततः ७ मद्योगं ८ आश्रितः ९ सर्वकर्मफलत्यागं १० कुरु ११ यतात्मवान् १२ + ११ + उ० + उससे भी सुगम उपाय कहते हैं + अ० + जो १ यह २ भी ३ करने को ४ असमर्थ ५ है तू ६ तो ७ भक्ति योग को ८ आश्रय कर के ९ सब कर्मोंकेफल का त्याग १० करतू ११ मन को जीत कर १२ अर्थात् अब तू फिर संकल्प विकल्पकुछ मत कर जो कुछ नित्य निमित्त प्रायश्चि-त्तादि कर्मों का अनुष्ठान हो सके वही कर उस के फल में आसक्ति मत कर यह समझ कि मैं तो तन मन धन कर के भगवत् की शरण हूं मैं तो उन का दास हूं वे महाराज अंतर्यामी हैं जैसा चाहैं मुझसे शुभा-

शुभ कर्म करावें और जैसा चाहें उन कर्मों का फल दें मुझको तो सिवाय परमेश्वर के और कुछ किसी तरह का आसरा नहीं परन्तु यह प्रकट रहै कि धनादि की प्राप्ति के लिये जहां तक हो सके राजादि मनुष्यों का दास जान बूझ कर न बने व्यवहार का भार तो परमेश्वरको सौंप देना और परमार्थ में मोक्षके लिये जहां तक बनसके प्रयत्न करनाचाहिये उलटा ऐसे नहीं समझना कि परलोक का भारतो परमेश्वर को सौंप देना अर्थात् यह समझना कि परमेश्वर जो चाहें सो करें मेरे करने से क्याहोता है यह मोक्ष मार्ग में नहीं समझना व्यवहार में यह समझना कि मेरे करने से कुछ नहीं होता जो प्रारब्ध में लिखा गया है वही होगा मोक्ष मार्ग में पुरुषार्थ मुख्य है व्यवहार में प्रारब्ध मुख्य है इत्यभिप्रायः + ११ +

**श्रेयोहिज्ञानमभ्यासात् ज्ञानाद्ध्यानंविशिष्यते।**
**ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छांतिरनंतरम् + १२ +**

अभ्यासात् १ ज्ञानं २ श्रेयः ३ हि ४ ज्ञानात् ५ ध्यानं ६ विशिष्यते ७ ध्यानात् ८ कर्मफलत्यागं ९ त्यागात् १० अनन्तरं ११ शान्तिः +१२+ १२ + उ० + सब कर्मों के फल का त्याग इस हेतु से श्रेष्ठ है +अ०+ अभ्यास से १ ज्ञान २ श्रेष्ठहै ३ निश्चय ४ शास्त्रीय ज्ञान से ५ ध्यान ६ विशेष है ७ ध्यान से ८ कर्मों के फल का त्याग ९ श्रेष्ठ है + त्याग से १० पीछे ११ शान्ति १२ होती है + टी० बिना भले प्रकार वेदोंका तात्पर्य जाने हुये जो किसी कर्म के अनुष्ठान में अभ्यास करना उससे प्रथम वेदों का तात्पर्य समझना जानना ज्ञान श्रेष्ठ है क्योंकि जिस को परोक्ष ज्ञान यथार्थ होगया वह अवश्यही कभी न कभी उसका अनुष्ठान भी करेगा अविद्यवान् के अनुष्ठान करने से विद्यावान् बिना अनुष्ठान किये भी श्रेष्ठ है क्योंकि वह एक मार्ग पर है अविद्यावान् मूर्खको कहां बिचार है कि मुझको किस कर्म का अधिकार है जो उसको प्रियलगता है वही करने लगता है इसी हेतुसे कर्मों का फल उन को प्रत्यक्ष नहीं होता + और पण्डित ज्ञानियों से अर्थात् परोक्ष ज्ञानियों से विद्यावान् राम कृष्णादि का ध्यान करने वाले श्रेष्ठ हैं + मूर्तिमान् परमेश्वर के ध्यान करने वालोंसे भी जो विद्यावान् कर्मोंका निष्काम अनुष्ठान करते हैं अर्थात् श्रौत स्मार्त कर्म और भगवत् आराधनऔर हिरण्यगर्भ सूर्यादि की उपासना और भी भगवत् सम्बन्धी जो कर्म इन सब कर्मों के फल

त्याग करते हैं वे श्रेष्ठ हैं क्योंकि शान्ति कर्मों का फल त्यागने से होती है बिना त्याग संसार से चित्त उपराम नहीं होता लौकिक वैदिक दोनों कर्मों के फलसे जब चित्त उपराम होताहै दोनों कर्मों के फलसे जब वैराग्य होताहै तब शान्ति उपरति होती है वैराग्य उपरति ये दोनों ज्ञाननिष्ठा के अन्तरंग मुख्य साधनहैं फिर ज्ञाननिष्ठ हो कर कृतार्थ होजाता है अर्थात् परमानन्द को प्राप्त होजाता है + १२ +

**अद्वेष्टासर्वभूतानां मैत्रःकरुणएवच । निर्ममोनिरहंकारः समदुःखसुखःक्षमी + १३ +**

सर्वभूतानां १ अद्वेष्टा २ मैत्रः ३ करुणः ४ एव ५ च ६ निर्ममः ७ निरहंकारः ८ समदुःखसुखः ९ क्षमी १० + १३ + उ० + शान्त पुरुष ज्ञाननिष्ठ महा पुरुषों के लक्षण श्री भगवान् सात श्लोकों में उत्तरोत्तर श्रेष्ठ कहेंगे + अ० + ज्ञानी जन + सब भूतों के १ साथ इस प्रकार वर्तते हैं जोकि आपसे जातिरूप धनादिमें बड़ेहैं उनके साथ तो + द्वेष नहीं करते २ बहुवचन आदरके लिये लिखतेहैं + बराबर के साथ + मित्रता ३ रखते हैं + छोटों पर दया ४ करते हैं यह चाहते हैं कि जैसे हम विद्यावान् धनवाले हैं परमेश्वर करै यह भी वैसेही हो जावें और जहां तक हो सके यथा शक्ति उनका उपकार करते हैं + और दुष्टजन चोर जार पापी जनों के साथ उपेक्षा रखते हैं अर्थात् उनको बुरा कहना न भला कहना न उनका उपकार करना न अपकार करना खल परिहरिय श्वानकी नाईं+दुष्टों को कुत्तेकी सदृश समझते हैं कुत्ते को टूक डालने में क्षति नहीं इत्यभिप्रायः ५।६ पुत्र स्त्री मित्रधन मन्दिरादि में + ममता रहित ७ यह समझते हैं कि शरीर मनतो हमारे हैं नहीं पुत्रादि हमारे क्याहोंगे ऐसे होकर फिर + अहंकार रहित ८ कभी बाणी से तो क्या कहना कि हम ऐसेहैं चित्तमें अनुसंधान भी न रखना + और + समहैं दुःखसुख जिनके ९ यही समझतेहैं कि सुख दुःख दोनों अनित्य हैं जैसे दुःख बिना संकल्प और बिना यत्न आताहै ऐसेही सुख आता है और जैसे सुख चला जाता है वैसेही दुःख भी चला जाता है दुःखकी निवृत्तिके लिये और सुखकी प्राप्तिके लिये कुछ यत्न नहीं करते + और जो कोई बे प्रयोजन भी अपने स्वभाव के अनुसार उनको बाणी शरीरादि करके दुःख देयहै उसको + क्षमा करते हैं १० यह समझतेहैं कि यह प्रारब्ध का भोग है आध्यात्मिक आधि दैवत आधिभौतिक भी

सहने पड़तेहैं जैसे उनको सहतेहैं ऐसेही इसको चाहिये उनही तीनों तापमें एक यह भी आधिभौतिक ताप है हमारे ही कर्मों का फल है कोई दुःख देने वाला नहीं हमारा मनही कारण है दुःख सुख देने में ऐसे क्षमावान् १० + १३ +

**संतुष्टःसततंयोगीयतात्मादृढनिश्चयः । मय्यर्पितमनोबुद्धिर्योमद्भक्तः समेप्रियः + १४ +**

सततं १ संतुष्टः २ योगी ३ यतात्मा ४ दृढनिश्चयः ५ मयि ६ अर्पितमनोबुद्धिः ७ यः ८ मद्भक्तः ९ स १० मे ११ प्रियः १२ + १४ + अ० + सदा १ संतुष्टः २ अर्थात् कभी किसी काल में किसी पदार्थ की चाहना-होनी सदा छके रहना + अष्टांग योगवान् अर्थात् यम नियमादि परायण ३ जीताहै स्वभाव जिसने पूर्वावस्थामें जो प्राकृतवत् स्वभाव था उसको जीत कर सौम्य शान्त स्वभाव कर लियाहै जिसने उसको यतात्मा कहते हैं ४ दृढ़ निश्चय है जिसका ५ आत्मा में वेद शास्त्रों में कभी जिन को संशय विपर्यय उदय होता ही नहीं वेदोक्त आत्मा को शुद्ध सच्चिदानन्द बेसन्देह जानते हैं + मुझ आत्मा में ६ अर्पितकिया है मन बुद्धि जिसने ७ अर्थात् अन्तःकरणकी वृत्तियोंको आत्माकार कर दिया है जिसने ऐसा + जो ८ मेरा भक्त ९ सो १० मुझको ११ प्याराहै १२ चौथे अध्याय में श्री भगवान् ने कहा था कि ज्ञानी मुझको बहुत प्यारा है उसीका इन सात श्लोकोंमें उपसंहार करते हैं जिस श्लोकमें प्रिय यह पद नहीं तोभी वहां समझ लेना चाहिये तेरह अठारहके मंत्र में यह पद नहीं और पांचों मंत्रों में है + १४ +

**यस्मान्नोद्विजतेलोको लोकान्नोद्विजतेचयः । हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तोयःसचमेप्रियः + १५ +**

यस्मात् १ लोकः २ न ३ उद्विजते ४ यः ५ च ६ लोकात् ७ न ८ उद्विजते ९ हर्षामर्षभयोद्वेगैः १० च ११ यः १२ मुक्तः १३ सः १४ मे १५ प्रियः १६ + १५ + अ० + जिस से १ जीव २ मात्र + न ३ उद्वेगकरे ४ अर्थात् किसी प्रकार जिससे अपनी हानि समझ कर चित्तमें कोई प्राणी क्षोभ न करे + और जो ५ । ६ किसी जीवसे ७ न ८ उद्वेगकरे ९ और हर्ष । आमर्ष । भय । उद्वेग । इन चारों से १० । ११ जो १२ छूटा हुआ १३ सो १४ मुझको १५ प्रिय १६ है + टी० + इष्ट वस्तु के देखने सुनने

में रोमांच का खड़ा होजाना मनमें रंजन होने लगना इसको हर्षकहते हैं + दूसरे को विद्यावान् रुपये वाला देख सुन कर मन मैला उदास होजाना इसको आमर्ष कहते हैं + किसी प्रकार की मनमें शङ्का होनी उसको भय कहते हैं + चित्तका एक जगह स्थिर न होना उसको उद्वेग कहते हैं तात्पर्य ऐसा व्यवहार चाल चलन जिन महापुरुषोंका है कि जिनसे कोई किसी प्रकार बुरा न माने वेही भगवत् को प्यारेहैं +१५+

**अनपेक्षःशुचिर्दक्ष उदासीनोगतव्यथः । सर्वारंभ-परित्यागी योमद्भक्तःसमेप्रियः + १६ +**

अनपेक्षः १ शुचिः २ दक्षः ३ उदासीनः ४ गतव्यथः ५ सर्वारंभपरित्यागी ६ यः ७ मद्भक्तः ८ सः ९ मे १० प्रियः ११ + १६ + उ० + जो पदार्थ अपने आप प्राप्त हों उनकी भी + अ० + इच्छा नहीं करनी उपेक्षा करते हैं १ पवित्र २ रहते हैं बाहर भीतरसे बाहर जल मृत्तिकादि करके शुद्ध रहना वस्त्रादि निर्मल रखने भीतर राग द्वेषादि नहीं रखने ३ चतुर ४ व्यवहार परमार्थ की बातों में व्यवहार के समय व्यवहार की बात करनी परमार्थ के समय परमार्थ की प्रथम व्यवहार शुद्ध करना चाहिये तब परमार्थ सिद्ध होताहै व्यवहार की जिन को समझ नहीं उनका परमार्थ कभी नहीं सुधरेगा परमार्थ में जीवका कुछ नहीं बिगड़ा व्यवहार बिगड़ गया है उसी को सुधारना चाहिये व्यवहार में परमार्थ परमार्थ में व्यवहार नहीं मिलाते हैं चतुर महात्मा + उदासीन ४ अर्थात् किसी मत पंथ पक्ष का खण्डन प्रतिपादन नहीं करना आनन्द मत रखना जिसमें सबका सम्मत है + मनमें किसी प्रकारका खेद नहीं रखते ५ जितने इस लोक परलोक के निमित्त आरंभ हैं सब के त्यागी ६ ऐसा + जो ७ मेरा भक्त ८ सो ९ मुझको १० प्यारा ११ है + १६ +

**योनहृष्यतिनद्वेष्टि नशोचतिनकांक्षति । शुभाशुभ-परित्यागी भक्तिमान्यःसमेप्रियः + १७ +**

यः १ न २ हृष्यति ३ न ४ द्वेष्टि ५ न ६ शोचति ७ न ८ कांक्षति ९ शुभाशुभपरित्यागी १० यः ११ भक्तिमान् १२ सः १३ मे १४ प्रियः १५ + १७ + अ० + जो १ न २ हर्षकरताहै ३ न ४ द्वेषकरता है ५ न ६ शोच करताहै ७ न ८ इच्छाकरताहै ९ शुभ अशुभ दोनोंके त्यागनेका स्वभावहै जिसका १० ऐसा + जो ११ भक्तिमान् १२ सो १३ मुझको १४ प्यारा है

१५ + टी० + इष्ट पदार्थ के मिलने से आनन्द नहीं होता अनिष्ट पदार्थों से द्वेष नहीं करता पिछली बातों का शोच नहीं करता आगेको कुछ चाहता नहीं शुभ अशुभ पदार्थ ये दोनों अज्ञानके कार्यहैं दोनोंको अनित्य समझ कर दोनों को त्याग कर शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा में भक्ति प्रीति जो रखता है श्री भगवान् कहते हैं ऐसा महापुरुष मुझ को प्रिय है शुभ वैदिक मार्ग का त्याग उन के वास्ते अच्छा है कि जो आत्मनिष्ठ हैं जैसे लक्षण ऊपर कहे ये भी सब हों विना ज्ञान शुभ-मार्ग त्याग देना मूर्खों का काम है विना ज्ञान कभी शुभ मार्ग नहीं त्यागना और ज्ञान हुये पीछे सिवाय आत्मा के किसी को उत्तम शुभ श्रेष्ठ समझना नहीं सब को त्याग देना + १७ +

**समःशत्रौचमित्रेच तथामानाऽपमानयोः । शीतो-ष्णसुखदुःखेषु समःसंगविवर्जितः + १८ +**

शत्रौ १ च २ मित्रे ३ च ४ समः ५ तथा ६ मानापमानयोः ७ शीतो-ष्णसुखदुःखे षु ८ समः ९ संगविवर्जितः १० + १८ + अ० + शत्रु में और मित्र में ।१।२।३।४ बराबर ५ तैसेही ६ मान अपमान में ७ समान+ शीत गरमी दुःख सुख में ८ समान ९ शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण काजो + संग उस करके वर्जित १० तात्पर्य शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तः-करण के साथ जब आत्मा का संगहोता है तब आत्माकी शरीरादि में आसक्ति होतीहै फिर शीतादि में इष्टानिष्ट की भ्रांति होतीहै शत्रुमित्र की समता में संग वर्जित यहीहेतुहै आत्मनिष्ठ जो महापुरुष हैं वे शरीरादि में अध्यास नहीं रखते इसी हेतु से शत्रु मित्रादि में उनकी विषमता दूर होजाती है जैसे उनको मानादि वैसेही अपमानादि मा-नापमानादि यह सब अन्तःकरण का धर्म है आत्मनिष्ठ अपने को सबसे पृथक् जानते हैं विना आत्मनिष्ठा के देहाभिमानियों से पूर्वोक्त लक्षणों का अनुष्ठान नहीं होसक्ता यह सब लक्षण ज्ञाननिष्ठा ही में बन सक्ते हैं + १८ +

**तुल्यनिंदास्तुतिर्मौनी संतुष्टोयेनकेनचित्। अनिके-तःस्थिरमतिर्भक्तिमान्मेप्रियोनरः + १९ +**

तुल्यनिन्दास्तुतिः १ मौनी २ येनकेनचित् ३ सन्तुष्टः ४ अनिकेतः ५ स्थिरमतिः ६ भक्तिमान् ७ नरः ८ मे ९ प्रियः १० ॥ + १९ + अ०+

समान है निन्दा स्तुति जिस के १ चुप रहना या वेदान्त शास्त्र का मनन करना उसको मौनी कहतेहैं २ जो पदार्थ प्रारब्ध वशात् बिनायत्न थोड़ा बहुत प्राप्त होजावे उसी करके ३ संतोष करना ४ ऐसे पुरुष को संतुष्ट कहते हैं ४ एकजगह के रहने को नियम नहीं करना उसकोअनि-केत कहते ५ हैं + अपने स्वरूपमें + निश्चल है बुद्धि जिसकी ६ ऐसा + भक्तिमान् ७ पुरुष ८ मुझ को ९ प्यारा है १० येन केनचिदाछिन्नो येनकेनचिदाशिनः। यत्र कुत्र सयायी स्यात् तंदेवा ब्राह्मणं विदुः + महाभारत का यह श्लोक है तात्पर्य पूर्वोक्त लक्षण ब्रह्मनिष्ठ ज्ञानीभक्तों के हैं अर्जुन ने बूझाया कि अक्षर ब्रह्म उपासक कैसे हैं श्रीमहाराज ने उत्तर दिया कि ऐसा होते वे ऐसे नहीं होते कि रास लीला में तमाशा तो आप देखैं राधा कृष्ण को बेसमझ लोग अन्यमत वाले बुरा कहैं और अच्छेपदार्थों का मोहन भोग नाम रखकर आपही चटकर जाना साधु अभ्यागतको न देना इस अध्याय में भक्तों के लक्षण जैसे श्रीमहाराज ने कहे हैं जिन में ये होंगे वही भक्त भगवत् को प्राप्त होगा अन्यनहीं इत्यभिप्रायः + १९ +

**येतुधर्म्याऽमृतमिदं यथोक्तंपर्युपासते। श्रद्दधाना-मत्परमा भक्तास्तेऽतीवमेप्रियाः + २० +**

मत्परमाः १ ये २ श्रद्दधानाः ३ भक्ताः ४ इदं ५ धर्म्यामृतं ६ यथा ७ उक्तं ८ पर्युपासते ९ ते १० तु ११ अति १२ इव १३ मे १४ प्रियाः १५ + २० + अ० + मैं हूं परे से परे जिन के ऐसे १ जो २ श्रद्धावान् ३ भक्त ४ इस धर्म करके युक्त अमृत को ५। ६ जैसे ७ कहाहै ८ पीछे हम उस का + अनुष्ठान करते हैं ९ वे १० भक्त तो + ११ बहुतही १२।१३ मुझ को १४ प्यारे हैं १५ अर्थात् भक्त जिन का नाम भी है जो नाम मात्र भक्त हैं वेभी भगवत् को प्यारे हैं और अद्वेष्टादिलक्षणों करके जो संपन्न हैं वेतो अत्यन्त प्यारे हैं॥ प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं सच मम प्रियः॥ यह जो सातवें अध्याय में उपक्रम किया था उसी का उपसंहार है पुनरुक्ति नहीं सब धर्मों का सार सिद्धान्त अमृत रूप यह उपदेशहै विचारना चाहिये कि ये लक्षण अनिकेत मौनादि निवृत्ति मार्ग वाले ज्ञाननिष्ठ संन्यासी महापुरुषों में पातेहैं या जो घंटा घड़ियाल बजाते हैं नृत्य देखते हैं उन में पाते हैं वास्ते उदाहरण के श्री स्वामी पूर्णा-श्रम जी महाराज संन्यासी परमहंस ज्ञाननिष्ठ नग्न मौन हुये श्रीभा-

गीरथी गंगा जी के तीर ही बिचरते रहतेहैं जितनेलक्षण सात श्लोकों में श्री भगवान्ने कहे सब उनमहाराज में प्रत्यक्ष हैं जो चाहे दर्शन करो चैत्र सुदी राम नवमी संबत् १६२१ में इस श्लोकका अर्थ मुक्त आनन्दगिरिने लिखा है श्री महाराज पूर्वोक्त परमहंसजी विद्यमान हैं और भी बहुत महात्मा हैं सिवाय संन्यासियों के कोई तो बतावे कि ऐसा कौन हुआ है पहले भी और अब आंखों से तो कौन दिखा सक्ता है इतने पर भी जो बिरक्तों का माहात्म्य न समझेगा तो वह वे सन्देह प्रवृत्त लोकों के पंजे में फँसेगा + २० +

इति श्री भगवद्गीता सूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन संवादे भक्तियोगो नाम द्वादशोऽध्यायः + १२ ॥

इति श्री आनन्दगिरि विरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥



---

## बारहवें अध्याय का प्रारम्भ हुआ ॥

**अर्जुनउवाच प्रकृतिंपुरुषंचैवक्षेत्रंक्षेत्रज्ञमेवच । एतद्वेदितुमिच्छामिज्ञानंज्ञेयंचकेशव + १ +**

अर्जुनउवाच + केशव १ प्रकृतिं २ पुरुषं ३ च ४ एव ५ क्षेत्रं ६ क्षेत्रज्ञं ७ एव ८ च ९ ज्ञानं १० ज्ञेयं ११ च १२ एतत् १३ वेदितुं १४ इच्छामि १५ + १ + यह श्लोक किसी राजा ने बनाकर श्री भगवद्गीता की पोथियों में लिखवा दिया है जो अज्ञान हैं वे इस श्लोक को भी व्यासकृत समझते हैं व्यास जीने सातसौ ७०० श्लोक बनाये हैं यह मिल कर सात सौ एक हो जाते हैं अर्थ इस का यह है कि+ अ०+ हे केशव १ प्रकृति २ और पुरुष ३।४।५ क्षेत्र ६ और क्षेत्रज्ञ ७।८।९ ज्ञान १० और ज्ञेय ११ । १२ इनके १३ जानने की १४ इच्छा करता हूं मैं १५ तात्पर्य क्षेत्रादि पदों का अर्थ जाना चाहता हूं + इस प्रश्न की कुछ आकांक्षा नथी क्योंकि श्री भगवान् ने बारहवें अध्याय में आपयह कहा है कि भक्तों का मैं शीघ्र उद्धार करूंगा जो इस प्रश्न में पद हैं बिना उन के अर्थ जाने ज्ञाननिष्ठा नहीं हो सक्ती और बिना ज्ञाननिष्ठा

के संसार से उद्धार नहीं होता इस वास्ते ये सब पदार्थ श्री महाराज ने विना प्रश्न कहे जो टीका सहित पोथी हैं उन में यह श्लोक नहीं और बहुत बिद्वान् मूल पोथियों में भी नहीं लिखते कोई कोई मूल पोथियों में लिख देते हैं + १ +

## इस यंत्र के अनुसार सात सौ श्लोक हैं गीता के अठारह अध्यायों में॥

| अ० | श्लो० | अ० | श्लो० | |
|---|---|---|---|---|
| १ | ४७ | १० | ४२ | |
| २ | ७२ | ११ | ५५ | |
| ३ | ४३ | १२ | २० | |
| ४ | ४२ | १३ | ३४ | ७०० श्लोक |
| ५ | २९ | १४ | २७ | |
| ६ | ४७ | १५ | २० | |
| ७ | ३० | १६ | २४ | समस्तश्लोक |
| ८ | २८ | १७ | २८ | |
| ९ | ३४ | १८ | ७८ | |
| जो० | ३७२ | जो० | ३२८ | |

**श्रीभगवानुवाच। इदंशरीरं कौंतेय क्षेत्रमित्यभिधीयते। एतद्योवेत्तितंप्राहुः क्षेत्रज्ञमि-तितद्विदः + २ +**

श्री भगवानुवाच + कौंतेय १ इदं २ शरीरं ३ क्षेत्रं ४ इति ५ अभिधीयते ६ यः ७ एतत् ८ वेत्ति ९ तं १० तद्विदः ११ क्षेत्रज्ञं १२ इति १३ प्राहुः १४ + १+उ०+बारहवें अध्याय में श्री भगवान् ने कहा था कि भक्तों का उद्धार संसार से शीघ्र करूंगा मैं जो कि बिना आत्म ज्ञान के उद्धार नहीं होता इस वास्ते इस अध्याय में ब्रह्म ज्ञान साधन सहित कहते हैं + अ०+ हे अर्जुन १ इस २ शरीर को ३ क्षेत्र ४ । ५ कहते हैं ६ जो ७ इसको ८ जानता है ९ तिसको १० तिनके ज्ञाता ११ अर्थात् क्षेत्र क्षेत्रज्ञ के जाननेवाले+क्षेत्रज्ञ १२।१३ कहतेहैं १४ तात्पर्य स्थूल शरीर क्षेत्र खेतकी बराबर है पाप पुण्य इसमें उत्पन्न होते हैं इसी हेतु से इस को क्षेत्र कहते हैं जो इस का अभिमानी उसको क्षेत्रज्ञ कहते हैं क्षेत्रज्ञ वास्तव शुद्ध सच्चिदानन्द असंग नित्य मुक्त है

अविद्योपहितहुआ व्यष्टिस्थूल सूक्ष्म कारण शरीरों का अभिमानी बन कर विश्व तैजसप्राज्ञ कहा जाता है और मायोपहितहुआ समष्टि स्थूल सूक्ष्मकारण शरीरोंका अभिमानी बन कर विराट् हिरण्यगर्भ ईश्वर कहा जाता है और वह माया अविद्या रहित शुद्ध सच्चिदानन्द नित्य मुक्त है अध्यारोप अपवाद न्याय करके सिद्धान्तयही है + २ +

**क्षेत्रज्ञंचापिमांविद्धिसर्वक्षेत्रेषुभारत। क्षेत्रक्षेत्रज्ञयो-र्ज्ञानंयत्तज्ज्ञानंमतंमम + ३ +**

भारत १ सर्वक्षेत्रेषु २ क्षेत्रज्ञं ३ मां ४ च ५ अपि ६ विद्धि ७ यत् ८ क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः ९ ज्ञानं १० तत् ११ ज्ञानं १२ मम १३ मतम् १४ + ३ + उ० + तत् त्वम् पदों का अर्थ पिछले मंत्र में पृथक् पृथक् निरूपण किया अब महा वाक्यार्थ निरूपण करते हैं श्री भगवान् स्पष्ट जीवई-श्वर की लक्ष्यार्थ में एकता दिखाते हैं + अ० + हे अर्जुन १ सब क्षेत्रों में क्षेत्रज्ञ ३ मुझ को हो ४। ५। ६ जानतू ७ और जगह मत ढूंढ़ इत्यभिप्रायः + इस प्रकार + जो ८ क्षेत्रक्षेत्रज्ञ का ९ ज्ञान १० सो ११ ज्ञान १२ मेरा १३ मत १४ है तात्पर्य तत् त्वत् पदोंके लक्ष्यार्थको ग्रहण करके वाच्यार्थ को त्याग कर सामान्याधिकरण्य विशेषण विशेष्य भाव लक्ष्य लक्षण भाव इन तीन सम्बध करके और भागत्याग लक्षणा करके सो यह देव दत्त है इस लौकिक वाक्यवत् क्षेत्रज्ञ और मां पदकी लक्ष्यार्थ में एकता है इस बात को इस जगह स्पष्ट करने में बहुत विस्तार होताहै आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में विशेष लिखाहै वेदान्त शास्त्र के जितने ग्रंथ हैं सब इसी की टीका हैं ऐसा ज्ञान जिसकोहुआ वही ज्ञानी परमपद का भागी होगा इस लोक में अनेक विद्या हैं सब लोक किसी न किसी विद्या के जानने वाले नाई धोबी वैश्यादि एक प्रकार के ज्ञानी हैं ब्रह्म विद्या के विना सब लौकिक विद्या लोगोंको रिझा-ने के लिये शिश्नोदर की तृप्ति के लिये वाह वाह के लिये हैं जिनका फल दुःख श्रम है जो इस शरीर में सच्चिदानन्द क्षेत्रज्ञ है वही वासुदेव है आप श्री महाराज अपने मुखारविन्द से कहते हैं + ३ +

**तत्क्षेत्रंयच्चयादृक्चयद्विकारियतश्चयत्। सचयो-यत्प्रभावश्चतत्समासेनमेशृणु + ४ +**

तत् १ क्षेत्रं २ यत् ३ च ४ यादृक् ५ च ६ यद्विकारि ७ यतः ८ च

६ यत् १० स ११ च १२ यः १३ यत्प्रभावः १४ च १५ तत् १६ समासेन १७ मे १८ शृणु १९ + ४ + उ० + प्रथम द्वितीय मंत्रों में जो संक्षेप करके कहा है उसी को विस्तार करके फिर श्री भगवान् कहा चाहते हैं महाराज ने यह जाना कि अभी अर्जुन की समझ में नहीं आया इस वास्ते अर्जुन से फिर कहते हैं ऋषीश्वरों मुनीश्वरों की अपेक्षा से फिर भी संक्षेप ही करके कहते हैं श्री भगवान् इस मंत्र में प्रतिज्ञा करते हैं कि हे अर्जुन इतने शब्दों का अर्थ तुझसे कहूंगा वे शब्द येहैं + अ० + सो १ स्थूल शरीर २ जड़ दृश्य स्वभाव वाला ३ और ४ इच्छादि धर्म वाला ५ और ६ इन्द्रियादि विकार करके युक्त ७ प्रकृति पुरुषके संयोग से होता है ८ और ९ स्थावर जंगम भेद करके भिन्न १० क्षेत्रज्ञ ११ । १२ स्वरूप से १३ और अचिंत्य ऐश्वर्य योगशक्ति आदि प्रभावकरकेयुक्त १४।१५ इन सबका अर्थ १६ संक्षेपसे १७ मुझसे १८ सुन १९ + ४ +

**ऋषिभिर्बहुधागीतंछंदोभिर्विविधैःपृथक्। ब्रह्मसू-त्रपदैश्चैवहेतुमद्भिर्विनिश्चितैः + ५ +**

ऋषिभिः १ बहुधा २ गीतं ३ छन्दोभिः ४ विविधैः ५ पृथक् ६ हेतुमद्भिः ७ ब्रह्मसूत्रपदैः ८ च ९ एव १० विनिश्चितैः ११ + ५ + उ० + जो ज्ञान मैं तुझसे कहता हूं यही ज्ञान अनादि वेदोक्त है विद्वानों ने यही निश्चय किया है + अ० + ऋषीश्वरों ने १ बहुत प्रकारसे २ इसी ज्ञान को + निरूपण किया है ३ वे दोनों ४ भी + पृथक् पृथक् करके ५ पृथक् ६ कहा है और + हेतु वाले ब्रह्म सूत्र पदों करके ७ । ८ । ९ । १० कहा गया है कैसे हैं वे सूत्र पद कि + बहुत भले प्रकार निश्चय किये गये हैं ११+टी०+वशिष्ठादि ने ध्यान धारणादि साधनों और प्रकृति पुरुषों के बिबेक से ब्रह्म की प्राप्ति होती है इस प्रकार ऋषियों ने निरूपण किया है और कर्म ही फल दाता है यज्ञादि करने से देवतों का पूजन करने से परमपद स्वर्ग की प्राप्ति है बहुत जगह वेदों में इस प्रकार निरूपण किया है और व्यासजी ने ब्रह्म सूत्र पदों को संक्षेप करके सूत्र बनाये हैं कि जिनसे यथार्थ प्रभु का स्वरूप जाना जाता है ब्रह्म जाना जावे तटस्थ लक्षण और स्वरूप लक्षण करके जिन से उन को ब्रह्मसूत्र कहते हैं + ५ +

**महाभूतान्यहंकारोबुद्धिरव्यक्तमेवच। इन्द्रियाणि दशैकंचपंचचेंद्रियगोचराः + ६ +**

महाभूतानि १ अहंकारः २ बुद्धिः ३ अव्यक्तं ४ एव ५ च ६ इन्द्रियाणि ७ दश ८ एकं ६ च १० पंच ११ च १२ इन्द्रियगोचराः १३ + ६ + उ० + क्षेत्र का लक्षण दो श्लोकों में कहते हैं + अ० + आकाशादि पंच पंचीकृत १ भूतों का कारण २ महत्तत्व ३ मूला ज्ञान ४।५।६ इन्द्रिय ७ दश ८ एक ६ मन १० और पंच तन्मात्रा अपंचीकृत सूक्ष्म भूत ११। १२ और + इन्द्रियों के बिषय शब्दादि पंच १३ इन सबका भेद और अर्थ आनन्दामृतबर्षिणी के द्वितीय अध्याय में लिखाहै + ६ +

**इच्छाद्वेषःसुखंदुःखंसंघातश्चेतनाधृतिः। एतत्क्षेत्रं समासेनसविकारमुदाहृतम् + ७ +**

इच्छा १ द्वेषः २ सुखं ३ दुःखं ४ संघातः ५ चेतना ६ धृतिः ७ एतत् ८ क्षेत्रं ६ समासे १० सविकारं ११ उदाहृतम् १२ + ७ + अ ०+ इस लोक वा परलोक के पदार्थों की चाह १ अपने इष्ट में जो बिघ्नकारी प्रतीत होता हो उस में जो अन्तःकरण की वृत्ति २ सुख तीन प्रकार का अठारहवें अध्याय में निरूपण होगा ३ विक्षेप प्रतिकूल जिस को दुःख कहते हैं ४ स्थूलशरीर ५ ज्ञानात्मिका अन्तःकरण की वृत्ति कि जिस के प्रकट होने से सब अनर्थों की निवृत्ति हो जाती है संसार कार्य कारण सहित अत्यन्ता भाव को प्राप्त हो जाता है ६ धृति तीन प्रकार की अठारहवें अध्याय में निरूपण होगी ७ यह ८ क्षेत्र ६ संक्षेप करके १० बिकार वान् ११ कहा है १२ तात्पर्य क्षेत्र बिकारवान् है क्षेत्रज्ञ निर्विकार है मूला ज्ञान से क्षेत्रज्ञ भी विकारवान् प्रतीत होता है + ७ +

**अमानित्वमदंभित्वमहिंसाक्षांतिरार्जवम्। आचार्योपासनंशौचंस्थैर्यमात्मविनिग्रहः + ८ +**

अमानित्वं १ अदंभित्वं २ अहिंसा ३ क्षांतिः ४ आर्जवं ५ आचार्योपासनं ६ शौचं ७ स्थैर्य्यं ८ आत्मविनिग्रहः ६ + ८ + उ० + आगे क्षेत्रज्ञ का लक्षण कहना है उस के समझने के लिये सतोगुणी अन्तर्मुख सूक्ष्म वृत्ति चाहिये इस वास्ते उस का साधन कहते हैं पांच श्लोकों में जिस के ये बीस साधन होंगे उस की समझ में क्षेत्र का स्वरूप आवेगा प्रथम इन साधनों में प्रयत्न करना योग्य है + अ० + मानरहित

१ दंभरहित २ हिंसारहित ३ क्षमा ४ कोमलता ५ सद्गुरु की सेवा ६ पवित्र बाहर भीतर ७ सन्मार्ग में + स्थिरता ८ शरीर का निग्रह ९ इन सब साधनों का अर्थ आनन्दामृतवर्षिणी के चतुर्थ अध्याय में भले प्रकार लिखा है और उनका पृथक् पृथक् माहात्म्य फल जैसा शास्त्रों में लिखा है वह प्रत्यक्ष होता है इन साधनों का ऐसा फल नहीं किजैसा एकादशी का फल परोक्ष है और ये साधन साधारण हैं ब्राह्मण से लेकर चांडाल पर्यन्त इन में सब का अधिकार है + ८ +

**इंद्रियार्थेषुवैराग्यमनहंकारएवच । जन्ममृत्युजरा-व्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् + ९ +**

इन्द्रियार्थेषु १ वैराग्यं २ अनहंकारं ३ एव ४ च ५ जन्यमृत्युजरा-व्याधि दुःखदोषानुदर्शनं ६ + ९ + अ० + इन्द्रियों के अर्थों में १ बैरा-ग्य २ अहंकार रहित ३ । ४ । ५ जन्म मृत्युजरा व्याधि इन चारों में दुःख और दोषों को सदा देखते रहना ६ + ९ +

**असक्तिरनभिष्वंगःपुत्रदारगृहादिषु । नित्यंचसम चित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु + १० +**

पुत्रदारगृहादिषु १ असक्तिः २ अनभिष्वङ्गः ३ इष्टानिष्टोपपत्तिषु ४ नित्यं ५ समचित्तत्वं ६ च ७ +१०+ अ० + पुत्र स्त्री गृहादिमें १ सक्त न होना २ पुत्रादि के दुःख सुख में अपने को सुखी दुःखी नहीं मानना ३ इष्ट अनिष्ट की प्राप्ति में ४ सदा ५ सम चित्त रहना ६ । ७ + १०+

**मयिचानन्ययोगेनभक्तिरव्यभिचारिणी । विविक्त-देशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि + ११ +**

मयि १ च२ अनन्ययोगेन ३ अव्यभिचारिणी ४ भक्तिः ५ विविक्तदेश-सेवित्वं ६ जनसंसदि ७ अरतिः ८ +११ + अ० + मुझमें १ । २ अनन्य योग करिके ३ अव्यभिचारिणी ४ भक्ति ५ विविक्तदेशमें रहनेका स्वभाव ६ प्राकृत जनों की सभा में ७ प्रीति रहित ८ + ११ +

**अध्यात्मज्ञाननित्यत्त्वंतत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् । एत-ज्ज्ञानमितिप्रोक्तमज्ञानंयदतोऽन्यथा + १२ +**

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वम् १ तत्त्वज्ञानार्थदर्शनं २ एतत् ३ ज्ञानं ४ इति ५ प्रोक्तं ६ यत् ७ अतः ८ अन्यथा ९ अज्ञानं १० + १२ + अ० +

वेदान्त शास्त्र को नित्य पढ़े सुने विचारे १ तत्त्व पदोंके अर्थ जानने में सदानिष्ठा रखनी २ यह ३ ज्ञान ४ यहां तक ५ कहा ६ जो ये भी साधन कहे उनको ज्ञान कहते हैं इस जगह ज्ञान का अर्थ यहहै कि सच्चिदानन्द स्वरूप जाना जावे जिस करके उसको ज्ञान कहते हैं ब्रह्मज्ञान के ये अन्तरंग साधन हैं इस वास्ते उनको भी ज्ञान कहा + जो ७ इससे ८ उलटा है ९ तिसको + अज्ञान ० कहते हैं अर्थात् जिसमें ये साधन नहीं वह अज्ञानीहै मान दम्भादि को अज्ञान का कार्य होने से उस को भी अज्ञान ही कहते हैं + १२ +

**ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वाऽमृतमश्नुते। अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते + १३ +**

यत् १ ज्ञेयं २ तत् ३ प्रवक्ष्यामि ४ यत् ५ ज्ञात्वा ६ अमृतं ७ अश्नुते ८ अनादिमत् ९ परं १० ब्रह्म ११ तत् १२ न १३ सत् १४ न १५ असत् १६ उच्यते १७ + १३ + उ० + क्षेत्रज्ञ परमानन्द स्वरूप ब्रह्म आत्मा का लक्षण कहते हैं + अ० + जो १ पूर्वोक्त साधनों करके + जानने के योग्य २ तिसको ३ भले प्रकार कहूंगा ४ जिसको ५ जानकर ६ अमृत को ७ प्राप्त होताहै ८ अर्थात् जन्म मरण से छूट सच्चिदानन्द स्वरूपको प्राप्त होता है + फल निरूपण करके स्वरूपका वर्णन करतेहैं + अनादि ९ परे से परे १० बड़ों से बड़ा ११ सो १२ न १३ सत् १४ न १५ असत् १६ कहा जाता है १७ तात्पर्य जो उसको सत् कहें तो असत् एक पदार्थ अर्थ से प्रतीत होताहै और मन वाणीका विषयभी प्रतीत होता है जो जो पदार्थ मन बाणी के विषय हैं सब अनित्य हैं यह दोष ब्रह्म में भी आता है और इस बोलीसे अद्वैत सिद्ध नहीं होता और जो असत् कहें तो यह अनर्थ है क्योंकि उनकी सत्ता से झूंठे से झूंठे पदार्थ सच्चे प्रतीत होवे हैं और जो कुछ भी न कहै तो अज्ञानियों का संसार कैसे निवृत्त हो तात्पर्य वह ऐसा अचिंत्य शक्तिमान् है कि वास्तव मनबाणी का विषय नहीं परन्तु उसके भक्त तो उसको निरूपण करतेहैं + १३ +

**सर्वतःपाणिपादंतत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्। सर्वतःश्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति + १४ +**

तत् १ सर्वतःपाणिपादं २ सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ३ सर्वतःश्रुतिमत् ४ लोके ५ सर्वं ६ आवृत्य ७ तिष्ठति ८ + १४ + उ० + अचिंत्यअद्भुत

शक्ति ब्रह्म की निरूपण करते हैं + अ० + सो १ ब्रह्म ऐसा है कि + सब तरफ हाथ पैर हैं जिसके २ सब ओर आंख शिर मुखहैं जिसके ३ सब ओर कानहैं जिसके ४ जगत् में ५ सबको ६ व्याप्तकर ७ स्थित है ८ अर्थात् सब प्राणियों की अन्तःकरण की वृत्ति में प्राणादि की क्रिया में नखसे शिखा पर्यन्त व्याप्त है जिस को कूटस्थ कहते हैं हस्त चरणादिसे जो क्रिया की जाती हैं यह उसी की सत्ता है आंख कान नाक से जो देखा सुना सूंघा जाता है यह उसी की चैतन्यता है अन्तःकरण में जो सुख प्रतीत होता है यह उसी आनन्दकी छाया है जैसे दर्पणमें अपना मुख देख कर अपना ज्ञान होता है ऐसे ही अन्तःकरणकी वृत्ति में उस आनन्द की छाया देख वास्तव सच्चिदानन्द का ज्ञान होता है इसप्रकार वह विषय भी है + १४ +

**सर्वेन्द्रियगुणाभासंसर्वेन्द्रियविवर्जितम् । असक्तं सर्वभृच्चैवनिर्गुणंगुणभोक्तृच + १५ +**

सर्वेन्द्रियगुणाभासं १ सर्वेन्द्रियविवर्जितम् २ असक्तं ३ सर्वभृत् ४ च ५ एव ६ निर्गुणं ७ गुणभोक्तृ ८ च ९ + १५ + अ० + सब इन्द्रियों के शब्दादि विषयोंमें विषयाकार होकर प्रतीत होताहै १ और वास्तव + सब इन्द्रियों करके रहित २ वास्तव + आसक्त ३ है परन्तु + सबका आधार पालने वाला ४ । ५ । ६ कहाजाताहै+वास्तव + सत्वादि गुणों करके रहित ७ है परन्तु + गुणों का भोक्ता ८ । ९ प्रतीत होताहै विषयजन्य सुख दुःखादि को अनुभव करताहुआ प्रतीत होता है +१५+

**वहिरन्तश्चभूतानामचरंचरमेवच । सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयंदूरस्थंचांतिकेचतत् + १६ +**

भूतानां १ अंतः २ वहिः ३ च ४ अचरं ५ चरं ६ एव ७ च ८ सूक्ष्मत्वात् ९ तत् १० अविज्ञेयं ११ च १२ अन्तिके १३ दूरस्थं १४ च १५ तत् १६ + १६ + अ० + भूतों के १ भीतर २ और बाहर ३ । ४ भी है जैसे चांदनी सब जगह व्याप्त है उपाधि के सम्बन्ध से किसी किसी जगह दीख पड़ती है कहीं नहीं दीखती इसी प्रकार ज्ञानचक्षु रहित पुरुषोंको नहीं प्रतीत होता है ज्ञानियों को प्रतीत होता है + अचर ५ भी है और + चर ६ भी ७ । ८ है जंगमों के साथ सम्बन्ध होने से चर प्र-

तीतहोता है स्थावरों के साथ सम्बन्ध होने से अचर प्रतीत होता है यह वह वास्तव अचर है ऐसे कहो + सूक्ष्म होनेसे ८ साकार प्रमेय नहीं इस हेतुसे + सो १० नहीं जानने के योग्य है ११ । १२ वहिर्मुख स्थूल बुद्धि वालों को + समीप १३ भी है + और दूर स्थित है १४ । १५ सो १६ क्षेत्रज्ञ परमात्मा जो उस को अपना आत्मा ही जानते हैं कि क्षेत्रज्ञ परमानन्द स्वरूप हमारा आत्मा हीहै आत्मा से पृथक् कोई पदार्थ नहीं उनको समीप है और जो वहिर्मुख विषयी उसको रूपादि मान वा बुद्ध्यादि का विषय अपने से पृथक् जान कर उसकी प्राप्ति के लिये दौड़ धूप करते हैं उनको कभी नहीं मिलैगा जैसे मृगकस्तूरी की गंध के वास्ते भटकता फिरता रहता है वैसे ही अज्ञानी भटकते रहेंगे +१६+

**अविभक्तंचभूतेषुविभक्तमिवचस्थितम् । भूतभर्तृच यंतज्ज्ञेयंग्रसिष्णुप्रभविष्णुच + १७ +**

तत् १ ज्ञेयं २ अविभक्तं ३ च ४ भूतेषु ५ विभक्तं ६ इव ७ च ८स्थितं ९ भूतभर्तृ १० च ११ ग्रसिष्णु १२ च १३ प्रभविष्णु १४ + १७ +अ०+ सो १ क्षेत्रज्ञ २ वास्तव + पृथक् नहीं ३ और ४ भूतों में ५ पृथक् पृथक् ६ वत् ७ । ८ स्थित ९ है + भूतों का पालने वाला १० स्थिति काल में विष्णु रूप होकर और ११ प्रलय काल में + नाश करने वाला १२ रुद्ररूप होकर + और १३ उत्पत्ति कालमें + उत्पत्ति करने वाला १४ ब्रह्मा रूप होकर तात्पर्य सो क्षेत्रज्ञ सब भूतों में एकही उपाधि के सम्बन्ध से पृथक् पृथक् प्रतीत होता है वास्तव सो निर्विकारहै +१७+

**ज्योतिषामपितज्ज्योतिस्तमसःपरमुच्यते । ज्ञानंज्ञेयं ज्ञानगम्यंहृदिसर्वस्यधिष्ठितम् + १८ +**

तत् १ ज्योतिषां २ अपि ३ ज्योतिः ४ तमसः ५ परं ६ उच्यते ७ ज्ञानं ८ ज्ञेयं ९ ज्ञानगम्यं १० सर्वस्य ११ हृदि १२ धिष्ठितम् १३ + १८+अ०+ सो १ ज्योतिका २ भी ३ ज्योति ४ है अर्थात् चन्द्र सूर्यादि का भी प्रकाशक आत्मा ही है इसी हेतु से + अज्ञान से ५ परे ६ कहा है ७ अज्ञान का कार्य बुद्ध्यादि का विषय नहीं अज्ञान के कार्य से जानने में नहीं आता है वह अपने आप + ज्ञान स्वरूप है ८ और अमानित्वादि साधनों करके + जानने योग्य है ९ तत्वज्ञान से ही जाना जाता है १० सब के ११ हृदय में १२ विराजमान है १३ + १८ +

कृष्णंवन्दे जगद्गुरुम्

**इतिक्षेत्रंतथाज्ञानंज्ञेयंचोक्तंसमासतः। मद्भक्तएत-द्विज्ञायमद्भावायोपपद्यते + १९ +**

इति १ क्षेत्रं २ तथा ३ ज्ञानं ४ ज्ञेयं ५ च ६ समासतः ७ उक्तं ८ मद्भक्तः ९ एतत् १० विज्ञाय ११ मद्भावाय १२ उपपद्यते १३ + १९ + अ० + यह १ क्षेत्र २ और ३ ज्ञान ४ और ज्ञेय ५। ६ संक्षेप करके ७ तुम्ह से + कहा ८ मेराभक्त ९ इसको १० जानकर ११ मेरे भावको १२ प्राप्त होता है १३ तात्पर्य अमानादि साधनसम्पन्न तत् त्वं पदोंके अर्थको जान कृतार्थ होकर सच्चिदानन्द अपने स्वरूप को प्राप्त हो जाताहै+१९+

**प्रकृतिंपुरुषंचैवविद्ध्यनादीउभावपि। विकारांश्च गुणांश्चैवविद्धिप्रकृतिसंभवान् + २० +**

प्रकृतिं १ पुरुषं २ च ३ एव ४ उभौ ५ अपि ६ अनादीं ७ विद्धि ८ विकारान् ९ च १० गुणान् ११ च १२ एव १३ प्रकृतिसंभवान् १४ विद्धि १५ + २० + अ० +ईश्वर की अचिंत्य शक्तिमाया १ और सच्चिदानन्द ब्रह्म आत्मा २। ३ ये ४ दोनों ५ ही ६ अनादि ७ हैं यह + जानतू ८ देह इन्द्रियादि ९ और सुख दुःख मोहादि को १०। ११। १२ १३ प्रकृति से उत्पन्नहुआ १४। जानतू १५ यह सृष्टि प्रकार आनन्दामृतवर्षिणी के द्वितीय अध्याय में भले प्रकार लिखा है + २० +

**कार्यकारणकर्तृत्वेहेतुःप्रकृतिरुच्यते। पुरुषःसुख-दुःखानांभोक्तृत्वेहेतुरुच्यते + २१ +**

कार्य कारण कर्तृत्वे १ हेतुः २ प्रकृतिः ३ उच्यते ४ सुखदुःखानां ५ भोक्तृत्वे ६ हेतुः ७ पुरुषः ८ उच्यते ९ + २१ + अ० + कार्य कारण के करने में १ अर्थात् शरीरादि की उत्पत्ति में + हेतुः २ प्रकृतिः ३ कही है ४ सुख दुःखों के ५ भोगने में ६ हेतुः ७ पुरुष ८ कहा है ९ + टी०+ अन्तःकरण विशिष्ट चैतन्य पुरुष भोक्ता कहा जाता है यद्यपि प्रकृति जड़ है उसको शरीरादि की उत्पत्ति में केवल हेतु कहना बेयोग है परन्तु चैतन्य के सम्बन्ध से उसको जगत् का उपादान कारण कहते हैं औ पुरुष निर्विकार है उसको सुखादि के भोग में हेतु कहना बेयोग है परन्तु प्रकृति सम्बन्ध से वह भोक्ता प्रतीत होता है जैसे चुम्बक की सन्निधि से लोहा चेष्टा करता है ऐसेही प्रकृति पुरुष की व्यवस्थाहै और

जैसे मित्र पुत्रादि के साथ स्नेह ममता करने से उन के सुख दुःख में आप भी सुख दुःख का भोक्ता होजाताहै ऐसेही जीव पुरुष देह इन्द्रियादि के साथ अध्यास आसक्ति करके दुःखादि का भोक्ता प्रतीत होने लगता है वास्तव शुद्ध परमानन्द रूप है + २१ +

**पुरुषःप्रकृतिस्थोहि भुंक्तेप्रकृतिजान्गुणान्। कारणंगुणसंगोऽस्यसदसद्योनिजन्मसु + २२ +**

पुरुषः १ प्रकृतिस्थः २ हि ३ प्रकृतिजान् ४ गुणान् ५ भुंक्ते ६ सदसद्योनिजन्मसु ७ अस्य ८ कारणं ९ गुणसंगः १० + २२ + अ० + आत्मा १ देहादिके साथ तादात्म्य अध्यास करके २ ही ३ प्रकृति से उत्पन्नहुये ४ सुख दुःखादि को ५ भोक्ता है ६ वास्तव अभोक्ताहै + देवता मनुष्यादि योनियों के विषय जो इसका जन्म ७ इसका ८ कारण ९ गुणोंकासंग १० सतोगुण के सम्बन्ध से देवता रजोगुण के सम्बन्ध से मनुष्य तमोगुण के सम्बन्ध से पशु कहा जाता है + २२ +

**उपद्रष्टाऽनुमंताच भर्ताभोक्तामहेश्वरः। परमात्मेतिचाप्युक्तोदेहेऽस्मिन्पुरुषःपरः + २३ +**

अस्मिन् १ देहे २ पुरुषः ३ परः ४ उपद्रष्टा ५ अनुमन्ता ६ च ७ भर्ता ८ भोक्ता ९ महेश्वरः १० परमात्मा ११ इति १२ च १३ अपि १४ उक्तः १५ + २३ + उ० + जो आत्मा है वह परमात्मा है और जिस को परमात्मा परमेश्वर कहते हैं वह यही आत्मा है जीव ब्रह्म की एकता स्पष्ट श्री ब्रजराज इस श्लोक में दिखाते हैं + अ० + इस १ देहमें २ जो + जीव ३ है सोई + परे से परे ४ द्रष्टावत् द्रष्टा ५ है साक्षात्द्रष्टा नहीं क्योंकि दृश्य पदार्थ जब सच्चे हों तब उसको द्रष्टा सो वास्तवकहा जाय दृश्य पदार्थ अविद्यक हैं इस वास्ते मायोपहित होने से उस को उपद्रष्टा कहते हैं + और कर्मजन्य सुख में सुख मानकर आनन्दको प्राप्त होताहै वास्तव आप आनन्द स्वरूपहै इस वास्ते उसको अनुमन्ताकहते हैं ६।७ और मायोपहित हुआ यही सच्चिदानन्द अविद्योपहित सच्चिदानन्द जीव का + पालन पोषण करने वाला है ८ और वही + भोक्ताहै ९ महेश्वर १० और परमात्मा यह भी ११।१२।१३।१४ कहा जाता है १५ तात्पर्य शुद्ध सच्चिदानन्द की माया अविद्या के सम्बन्धसे जीव ईश्वर कहते हैं जब दोनों उपाधि ब्रह्म ज्ञान से नाश हो जाती हैं फिर केवल शुद्ध सच्चिदानन्द एकही रह जाता है + २३ +

**यएवंवेत्तिपुरुषंप्रकृतिंचगुणैःसह । सर्वथावर्त्तमा-नोऽपिनसभूयोऽभिजायते + २४ +**

य: १ एवं २ पुरुषं ३ वेत्ति ४ प्रकृतिं ५ च ६ गुणै: ७ सह ८ स: ९ सर्वथावर्तमान: १० अपि ११ भूय: १२ न १३ अभिजायते १४ +२४+ अ० + जो १ इस प्रकार २ आत्माको ३ जानता है ४ और प्रकृतिको ५ । ६ गुणों के साथ ७ । ८ जानता है अर्थात् प्रकृति के स्वरूप को सत्वादिगुण और इन्द्रियार्थ के सहित जो जानता है + सो ९ सर्वथा वर्तमान १० भी ११ फिर १२ नहीं १३ जन्मलेता १४ + टी० +वेदोक्त मार्गपर चलो अथवा प्रारब्ध वशात् जैसी उसकी इच्छाहो वह तो मुक्तिमें सन्देहनहीं यह बात आनन्दामृतवर्षिणीके तीसरे अध्याय में स्पष्ट लिखीहै +२४+

**ध्यानेनात्मनिपश्यंतिकेचिदात्मानमात्मना । अ-न्येसांख्येनयोगेनकर्मयोगेनचापरे + २५ +**

केचित् १ आत्मानं २ आत्मना ३ आत्मनि ४ ध्यानेन ५ पश्यन्ति ६ अन्ये ७ सांख्येन ८ योगेन ९ च १० अपरे ११ कर्मयोगेन १२ + २५ + अ०+ कोई १ आत्मा को २ अन्तर्मुख निर्मल अन्त:करण की वृत्ति करके ३ इस देह में ४ आत्माकार वृत्ति करके ५ अर्थात् अहंब्रह्मास्मि इस का गंगावत् प्रवाह सदा बना रहे इसको ध्यान कहते हैं इस ध्यान करके+ देखते हैं ६ कोई ७ सांख्य योग करके ८ अर्थात् प्रकृति पुरुष विवेकद्वारा अथवा वेदान्त शास्त्र द्वारा + और कोईअष्टांग योगकरके ९ । १० अर्थात् यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि द्वारा + और + कोई ११ कर्म योग करके १२ देखते हैं यह क्रिया सब के साथ लगती है कर्म दो प्रकार के हैं गौण मुख्य स्नान श्राद्धादि बहिरंग कर्म गौण हैं शमदमादि अन्तरंग कर्म मुख्यहैं मुख्य साधनों में सबका अधि-कार है + २५ +

**अन्येत्वेवमजानंतः श्रुत्वाऽन्येभ्यउपासते । तेऽपि चाऽतितरंत्येवमृत्युंश्रुतिपरायणाः + २६ +**

अन्ये १ तु २ एवं ३ अजानन्त: ४ अन्येभ्य: ५ श्रुत्वा ६ उपासते ७ ते ८ अपि ९ च १० मृत्युं ११ अतितरन्ति १२ एव १३ श्रुतिपरायणा: १४ + २६ + अ० + और कोई १ । २ इस प्रकार ३ अर्थात् ध्यान रहित आत्मा को + नहीं जानते हुये ४ सद्गुरु महापुरुषों से ५ श्रवण करके

६ उपासना करते हैं ७ अर्थात् आत्मा को साक्षात् अपरोक्ष तो नहीं जानते परंतु वेद शास्त्र सद्गुरु द्वारा यह सुना है कि मैं ब्रह्म हूं अहंब्रह्मास्मि यही जप करते हुये आत्मा को उपासना करते हैं + वे ८ भी ९। १० संसार को ११ उल्लंघ जाते हैं १२ निश्चय १३ क्योंकि + श्रवण परायण हैं १४ कम समझ यह कहा करते हैं कि बिना ब्रह्मके जाने आप को ब्रह्म कहना चाहिये इस में पाप होता है तुम्हारे में ब्रह्म की क्या शक्ति है प्रतीत होता है कि ये लोग या तो ईर्षा आमर्ष से कहते हैं या भगवत् वाक्य में उनकी किंचित् श्रद्धा नहीं या मूर्ख हैं क्योंकि इस मंत्र में श्री भगवान् स्पष्ट कहते हैं कि अनजान ब्रह्म का उपासक जो अहंब्रह्मास्मि यह उपासना करता है वह परं गति को प्राप्त होता है फिर न जानिये मूर्ख इस श्लोक का क्या अनर्थ करते हैं जब कि अनजान अवस्थामें यह उपासना न करी तो ज्ञान अवस्थामें वे क्यों करेंगे उपासना साधन है फल की प्राप्ति के वास्ते करते हैं मूर्ख साधनसे पहलेही फल चाहते हैं यह कहते हैं कि जब हमको ब्रह्म साक्षात् अपरोक्ष होगा तब हम अहं ब्रह्मास्मि यह कहैंगे बिचारना चाहिये कि बिना साधन कहीं फल मिलता है कर्म और भेद उपासना ज्ञानके गौण साधन हैं मुख्य साधन ज्ञान निष्ठा का यही है कि अहंब्रह्मास्मि यह महावाक्य श्रवण करके इसी का सदा जप किया करे वेदवाक्यभी इसमें प्रमाण हैं + २६ +

**यावत्संजायते किंचित्सत्त्वं स्थावरजंगमम् । क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ + २७ +**

यावत् १ किंचित् २ सत्त्वं ३ स्थावरजंगमं ४ संजायते ५ भरतर्षभ ६ तत् ७ क्षेत्र क्षेत्रज्ञसंयोगात् ८ विद्धि ९ + २७ + अ० + जहांतक १ जो कुछ २ पदार्थ ३ स्थावर जंगम ४ उत्पन्न होता है ५ हे अर्जुन ६ तिसको ७ क्षेत्र क्षेत्रज्ञ के संयोग से ८ जान तू ९ + २७ +

**समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठंतं परमेश्वरम् । विनश्यत्स्वविनश्यंतं यः पश्यति स पश्यति + २८ +**

सर्वेषु १ भूतेषु २ विनश्यत्सु ३ परमेश्वरं ४ समं ५ अविनश्यन्तं ६ तिष्ठन्तं ७ यः ८ पश्यन्ति ९ सः १० पश्यसि ११ + २८ + ड० + बिना विवेक संसार है यह पीछे कहा अब उसकी निवृत्तिके लिये विवेकबुद्धि बताते हैं कि ऐसे आत्मा का स्वरूप जानना चाहिये तब जानना कि

अब ज्ञान हुआ + अ०+सब भूतों में १।२भूतोंका+ नाश होत सन्ते भी ३आत्मा को ४ सम ५ अबिनाशी ६ स्थित ७ जो ८ देखता है ९ सो १० देखता है ११ तात्पर्य आत्मा को जो अबिनाशी पूर्णब्रह्मपरमेश्वर जानते हैं देहादि के नाश में भी उसको अबिनाशी जानते हैं वे आत्मा को यथार्थ जानते हैं + २८ +

**समंपश्यन्हिसर्वत्रसमवस्थितमीश्वरम् । नहिनस्त्यात्मनात्मानं ततोयातिपरांगतिम् + २९ +**

ईश्वरं १ समवस्थितं २ सर्वत्र ३ समं ४ पश्यन् ५ हि ६ आत्मना ७ आत्मानं ८ न ९ हिनस्ति १० ततः ११ परां १२ गतिं १३ याति १४ + २९ + अ० + ईश्वर को १ निश्चल २ सर्वत्र ३ सम देखता हुआ ४।५।६ आत्मा करके ७ आत्मा को ८ नहीं ९ मारता है १० फिर ११ परं १२ गतिको १३ प्राप्त होता है १४ तात्पर्य जो ईश्वर को या जीव को विकारवान् बिषम देखता है सो भेदबादी अपने आप अपनानाशकरता है और ईश्वर को भी आत्मासे जुदा समझ कर परिच्छिन्न अल्प प्रमेय करता है और आत्मा को भी इस हेतु से महाहत्या आत्महत्या में जो पाप होताहै सो पाप भी भेद बादी को लागता है इसी अर्थ को व्यतिरेक मुख्य करके भगवत् ने इस में कहाहै अर्थात्जो ईश्वर आत्मा को सर्वत्र देखता है सो आत्म हत्यारा नहीं जो आत्माको बिषमप्रमेय अल्प देखताहै वह आत्महा है इत्यभिप्रायः + २९ +

**प्रकृत्यैवचकर्माणि क्रियमाणानिसर्वशः । यःपश्यतितथात्मानमकर्तारंसपश्यति + ३० +**

सर्वशः १ क्रियमाणानि २ कर्माणि ३ प्रकृत्या ४ एव ५ च ६ यः ७ पश्यति ८ तथा ९ आत्मानं १० अकर्तारं ११ सः १२ पश्यति १३ + ३० + अ० + सब प्रकार १ क्रियमाण २ कर्मों को ३ प्रकृति करके ४ ही ५।६ जो ७ देखता है ८ तैसे ही ९ आत्मा को १० अकर्ता ११ देखता १२ है १३ तात्पर्य सब कर्म बुरे भले शरीर इन्द्रिय अन्तःकरण करकेकियेजाते हैं आत्मा अकर्ता है इस प्रकार जो आत्मा को अकर्ता देखता है वह आत्मा को भले प्रकार पहचानता है ॥ + ३० +

**यदाभूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति । ततएवच विस्तारं ब्रह्मसंपद्यतेतदा + ३१ +**

यदा १ भूतपृथग्भावं २ एकस्थं ३ अनुपश्यति ४ अतः ५ एव ६ च ७ विस्तारं ८ सदा ९ ब्रह्म १० सम्पद्यते ११ ॥ + ३१ +अ०+ जिसकाल में १ भूतों के पृथग्भाव को २ आत्माके विषय ३ देखता है ४ और तिस से ही ५।६। ७ विस्तार ८ तिस काल में ९ ब्रह्म को १० प्राप्त होताहै ११ तात्पर्य अपने अज्ञान से ही सब जगत् विस्तार प्रतीत होता है और जब आत्माकार वृत्ति होतीहै उस काल में सब जगत् अत्यन्त अभाव को प्राप्त होजाताहै एक जीव वाद को जो जानते हैं वे इस बात को समझ सक्तेहैं कि अपना अज्ञान नाश हुये समस्त जगत् का अभाव हो जाता है + ३१ +

**अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्माऽयमव्ययः। शरीरस्थोऽपि कौंतेय नकरोतिनलिप्यते + ३२ +**

कौन्तेय १ अयं २ परमात्मा ३ शरीरस्थः ४ अपि ५ अनादित्वात् ६ निर्गुणत्वात् ७ अव्ययः ८ न ९ करोति १० न ११ लिप्यते १२+ ३२+ अ०+हे अर्जुन १ यह २ परमात्मा ३ शरीर में ४ भी ५ अनादि होनेसे ६ निर्गुण होने से ७ निर्विकार ८ है +न ९ करता है १० न ११ लिपायमान होताहै १२ तात्पर्य देहादि की क्रिया में आत्मा कर्ता नहीं और कर्मोंके न करने से अज्ञानीवत् पाप के साथ स्पर्श नहीं करता + ३२ +

**यथासर्वगतंसौक्ष्म्यादाकाशंनोपलिप्यते। सर्वत्रावस्थितोदेहेतथात्मानोपलिप्यते + ३३ +**

यथा १ आकाशं २ सर्वगतं ३ सौक्ष्म्यात् ४ न ५ उपलिप्यते ६ तथा ७ आत्मा ८ सर्वत्र ९ देहे १० स्थितः ११ न १२ उपलिप्यते १३ + ३३+ अ० + जैसे १ आकाश २ सर्व जगह व्याप्त है ३ सूक्ष्म होनेसे ४ किसी जगह + नहीं ५ लिपायमान होता है ६ तैसे ७ आत्मा ८ सबजगह ९ देह में १० स्थित है ११ कर्मोंके साथ और कर्मोंके फल के साथ+ नहीं १२ लिपायमान होता है १३ + ३३ +

**यथाप्रकाशयत्येकः कृत्स्नंलोकमिमंरविः। क्षेत्रं क्षेत्रीतथाकृत्स्नं प्रकाशयतिभारत + ३४ +**

यथा १ एकः २ रविः ३ इमं ४ कृत्स्नं ५ लोकं ६ प्रकाशयति ७ तथा ८ क्षेत्री ९ कृत्स्नं १० क्षेत्रं ११ प्रकाशयति १२ भारत १३+३४ +अ०+ जैसे १ एक २ सूर्य ३ इस ४ सम्पूर्ण ५ लोक को ६ प्रकाश कर रहा है

७ तैसे ही ८ क्षेत्रज्ञ ९ समस्तक्षेत्र को १० प्रकाश कर रहा है ११ तात्पर्य जो ज्ञान आनन्द देह में प्रतीत होता है सब उसी ज्ञानानन्दकी छाया है + ३४ +

**क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमंतरंज्ञानचक्षुषा । भूतप्रकृतिमोक्षंच येविदुर्यांतितत्परम् + ३५ +**

ये १ एवं २ क्षेत्रक्षेत्रज्ञयो: ३ अन्तरं ४ ज्ञानचक्षुषा ५ भूतप्रकृतिमोक्षं ६ च ७ विदु: ८ ते ९ परं १० यान्ति ११ + ३५ + अ० + जो १ इस प्रकार २ पूर्वोक्त रीति करके + क्षेत्र क्षेत्रज्ञका ३ भेद ४ ज्ञान चक्षु करके ५ देखते हैं + और भूतोंकी जो प्रकृति ध्यान विवेकादि तिन के सकाश ते मोक्षको ६ । ७ जानते हैं ८ वे ९ परमानन्द स्वरूप आत्माको १० प्राप्तवत् + प्राप्त होते हैं ११ तात्पर्य बंध की हेतु भी प्रकृति और मोक्ष में हेतु भी प्रकृति है तमोगुण रजोगुण के साथ सम्बन्ध करने से बंध को प्राप्तहोताहै सतोगुण के साथ सम्बंध करने से मोक्ष को प्राप्तहोताहै इसी अर्थ को चतुर्दश अध्याय में श्री भगवान् स्पष्ट निरूपण करते हैं + ३५ +

इतिश्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायांयोगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे क्षेत्रक्षेत्रज्ञनिर्देशयोगोनामत्रयोदशोऽध्याय: + १३ +

इति श्री स्वामी आनन्दगिरि विरचितायां परमानन्दप्रकाशिकायां टीकायां त्रयोदशोऽध्याय: + १३ +



## चौदहवें अध्याय का प्रारम्भ हुआ ॥

**श्रीभगवानुवाच । परंभूयःप्रवक्ष्यामि ज्ञानानांज्ञानमुत्तमम् । यज्ज्ञात्वामुनयःसर्वेपरांसिद्धिमितोगताः+ १ +**

श्री भगवान् उवाच + भूय: १ ज्ञानानां २ उत्तमं ३ ज्ञानं ४ परं ५ प्रवक्ष्यामि ६ यत् ७ ज्ञात्वा ८ सर्वे ९ मुनय:१० परां ११ सिद्धिं १२ इत: १३ गता: १४ + १ + उ०+सतोगुणके बढ़ाने से रजोगुण तमोगुण कम करने से ज्ञान द्वारा परमानन्द को प्राप्ति होती है इस वास्तेइसअध्याय में सत्वादि का भेद कहते हैं + अ० + हे अर्जुन + फिर भी + ज्ञानो में २ जो + उत्तम ३ ज्ञान ४ परमार्थनिष्ठ ५ तिसको मैं कहूंगा६

इस अध्याय में तुझसे + जिसको ७ जानकर ८ सबमुनीश्वर ६।१० परं-सिद्धिको ११।१२ इस देह से पीछे १३ प्राप्तहुए १४ तात्पर्य ज्ञानकेप्रकार का है कर्म उपासनादि का अर्थ जाना जाता है जिन ज्ञान करके उनको भी ज्ञान कहते हैं और परमानन्दपरमस्वरूप आत्मा का साक्षात् अपरोक्ष होना है जिस ज्ञान करके एक यह उत्तम आत्म ज्ञान है सब ज्ञानों में आत्मज्ञान उत्तम है क्योंकि साक्षात् मुक्ति का मुख्य हेतु है और परब्रह्मकी निष्ठा प्राप्त करनेवाला है इसी ज्ञान करके बहुत साधु महात्मा स्थूल देहको त्याग कर परमानन्द स्वरूप आत्माको प्राप्त हुये हैं हे अर्जुन तू मेरा प्यारा है इस वास्ते यह उत्तम ज्ञान फिरभी तुझ से कहूंगा यद्यपि पहले कहाहै परंतु अब अन्य रीतिसेकहूंगा कि जो शीघ्र समझ में आजावे + १ +

**इदंज्ञानमुपाश्रित्य ममसाधर्म्यमागताः। सर्गेपिनो-पजायंते प्रलयेनव्यथंतिच + २ +**

इदं १ ज्ञानं २ उपाश्रित्य ३ मम ४ साधर्म्यं ५ आगताः ६ सर्गे ७ अपि ८ न ९ उपजायंते १० प्रलये ११ च १२ न १३ व्यथंति १४+२+अ०+ इस १ ज्ञानको २ आश्रय करके ३ अर्थात् ये जो ज्ञान साधन सहित इसअध्याय में कहतेहैं तिसका अनुष्ठान करके + मेरे ४ स्वरूप को ५ प्राप्त हुये ६ अर्थात् शुद्ध सच्चिदानंद स्वरूप हुये + सृष्टि समय ७ भी ८ अर्थात् जब यह जगत् प्रलय होकर फिर उत्पन्न होगा उस समय भी + नहीं ९ उ-त्पन्न होंगे १० अर्थात् मायाके संबन्धी स्थूलादि देहों को नहीं प्राप्तहोंगे क्योंकि मायाके संबन्धसे दुःखहोता है मायाकाज्ञानसे नाशहोजाताहै+२+

**ममयोनिर्महद्ब्रह्मतस्मिन्गर्भंदधाम्यहम्। संभवःसर्व-भूतानांततोभवतिभारत + ३ +**

मम १ योनिः २ महद्ब्रह्म ३ तस्मिन् ४ गर्भं ५ दधामि ६ अहम् ७ भारत ८ ततः ९ सर्वभूतानां १० संभवः ११ भवति १२ + ३+ उ०+ श्रोताको सन्मुख करके सोई ज्ञान कहतेहैं +अ०+ मेरी १ योनि बीज धारण करने का स्थान सब भूतों का कारण २ प्रकृति माया ३ तिसमें अर्थात् उस त्रिगुणात्मिका मायामें ४ चिदाभासको ५ धारण करताहूं मैं ६। ७ हे अर्जुन ८ मायोपहित ब्रह्मसे ९ सब भूतों का १० आविर्भाव ११ होता है १२ अर्थात् माया में जब सच्चिदानन्द की छायावत् छाया

पड़ती है तब सब भूत सूक्ष्म स्थूल प्रकट होते हैं तात्पर्य प्रभुजगत्के अभिन्न निमित्तो पादान कारण हैं नहीं है भिन्न निमित्त और उपादान कारणजिन्हों से + ३ +

**सर्वयोनिषु कौंतेय मूर्तयःसंभवंतियाः। तासांब्रह्मम-हद्योनिरहंबीजप्रदःपिता + ४ +**

कौन्तेय १ सर्वयोनिषु २ याः ३ मूर्तयः ४ सम्भवन्ति ५ तासां ६ योनिः ७ महद् ८ ब्रह्म ९ अहं १० बीजप्रदः ११ पिता १२ + ४ +अ०+ हे अर्जुन १ सब भूतोंमें २ जो ३ मूर्त्ति ४ उत्पत्ति होती हैं ५ तिनकी ६ योनि ७ प्रकृति ८। ९ है और + मैं १० बीज देनेवाला ११ पिता १२ तात्पर्य जो जो मूर्त्ति ब्रह्माजी से ले चींटी पर्य्यन्त जंगमस्थावर जिस जिस जगह उत्पन्न होती हैं तिनकी प्रकृति उपादान कारण है ईश्वर निमित्त कारण हैं + ४ +

**सत्वंरजस्तमइतिगुणाःप्रकृतिसंभवाः। निबध्नन्तिम-हाबाहोदेहेदेहिनमव्ययम् + ५ +**

सत्वं १ रजः २ तमः३ इति ४ गुणाः ५ प्रकृतिसंभवाः ६ महाबाहो ७ देहे ८ अव्ययं ९ देहिनं १० निबध्नन्ति ११+५ + उ०+सत्वादिगुणोंने आत्मा को बंधन कर रक्खाहै यह कहते हैं +अ०+सत्व १ रज २ तम ३ यह ४ गुण ५ प्रकृति से प्रकट होते हैं६ हे अर्जुन ७इस+ देह में ८ निर्विकार ९ जीव को १० बंधन करते हैं ११ तात्पर्य जीवके स्वरूप को भुला देतेहैं आनन्दको अपने से जुदा पदार्थ जन्य जान कर जीव भ्रान्त होजाता है गुणों के सम्बन्ध से आनंद स्वरूप अपने स्वरूप को भूल जाता है + ५ +

**तत्रसत्वंनिर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम्। सुखसंगेन बध्नाति ज्ञानसंगेनचानघ + ६ +**

अनघ १ तत्र २ सत्वं ३ निर्मलत्वात् ४ प्रकाशकं ५ अनामयं ६ सुखसंगेन ७ ज्ञान संगेन८ च ९ बध्नाति १०+ ६ + उ०+सतोगुणकालक्षण और बंधन प्रकार कहते हैं + हे अर्जुन १ तीनों गुणोंमें २ सतोगुण ३ निर्मल होने से ४ प्रकाश रूप ५ शान्त रूप ६ है+सुखकेसाथ ७ और ज्ञान के साथ ८ ।९ बन्धन करता है १० आत्मा को सत्वगुण + तात्पर्य सुख और ज्ञान ये दोनों अन्तःकरण की वृत्ति हैं मिथ्या अनात्मा माया

की कार्य हैं मैं सुखी मैं ज्ञानी यह समझ कर जीव वृथा भ्रान्ति में फँसता है जिस काल में सतोगुण तिरोभाव हो जाता है तमोगुण रजोगुण प्रकट हो जाते हैं तब यह ज्ञान सुख भी जाता रहता है दुःख शोकादि में फँस जाता है + ६ +

**रजोरागात्मकंविद्धितृष्णासंगसमुद्भवम् । तन्निबध्नातिकौन्तेयकर्मसंगेनदेहिनम् + ७ +**

कौन्तेय १ रजः २ रागात्मकं ३ विद्धि ४ तृष्णासंगसमुद्भवं ५ तत् ६ देहिनं ७ कर्मसंगेन ८ निबध्नाति ९+ ७ + उ० + रजोगुण का लक्षण और बन्धन प्रकार कहते हैं + अ० + हे अर्जुन १ रजोगुण को २ रागात्मक ३ जानतू ४ अर्थात् जिस समय स्त्री मित्रादि पदार्थोंका श्रवण स्मरण दर्शनादि करके अन्तःकरण की वृत्ति में स्नेह उत्पन्न होता है और मन रंजन होने लगता है इसी को रागात्मक कहते हैं रजोगुणका यही स्वरूप है और + तृष्णा संग की उत्पत्ति है जिसमें ५ अर्थात् जब रजोगुण का आविर्भाव होता है तब जोजो पदार्थ देखने सुननेमें आता है सब में अभिलाषा होने लगती है मनमें ये संकल्प विकल्प उत्पन्नहोने लगते हैं कि अमुक पदार्थ जो हमको मिलैगा तो उस में हम को यह आनन्द मिलैगा जब वह पदार्थ मिलजाताहै तब उसमें आसक्ति होजाती है उस के वियोग में दुःख होताहै ऐसे ऐसे रजोगुणके कार्य से रजोगुण का ज्ञान होता है + सो ६ रजोगुण + जीव को ७ कामों में आसक्त करके ८ बन्धन करता है ९ वेदोक्त कर्मों में और उनके फल में फँस जाता है जीव रजोगुण ज्ञान के सन्मुख नहीं होनेदेता है + ७ +

**तमस्त्वज्ञानजंविद्धिमोहनंसर्वदेहिनाम् । प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नातिभारत + ८ +**

भारत १ तमः २ तु ३ अज्ञानजं ४ सर्वदेहिनां ५ मोहनं ६ विद्धि७ तत् ८ प्रमादालस्य निद्राभिः ९ निबध्नाति१० +८ + उ० + तमोगुण का लक्षण और बन्धन प्रकार कहते हैं + अ० + हे अर्जुन १ तमोगुण को २ । ३ आवर्ण शक्ति प्रधान ४ सब जीवन को ५ भ्रान्तिकरने वाला ६ जानतू ७ सो ८ निद्राआलस्य प्रमाद करके ९ बन्धन करता है १० +८+

**सत्वंसुखेसंजयतिरजःकर्मणिभारत । ज्ञानमावृत्य तमः प्रमादेसंजयत्युत + ९ +**

भारत १ सत्त्वं २ सुखे ३ संजयति ४ रजः ५ कर्मणि ६ तमः ७ तु ८ ज्ञानं ९ आवृत्य १० प्रमादे ११ संजयति १२ उत १३ + ९ + उ० + सत्वादि अपने अपने आविर्भाव में जो करते हैं उनकी सामर्थ्य दिखाते हैं + अ० + हे अर्जुन १ सतोगुण २ सुख में ३ लगाता है ४ अर्थात् जिस समय सतोगुण आविर्भाव होताहै उस समय सुखके सन्मुख करता है और + रजोगुण ५ कर्मों में ६ लगाता है + और तमोगुण ७।८ ज्ञान को ९ ढूंढ़कर १० प्रमाद में ११ जोड़ता है १२ आनन्दामृतवर्षिणी के पांचवें अध्याय में ये सब अर्थ स्पष्ट लिखे हैं + ९ +

**रजस्तमश्चाभिभूयसत्त्वंभवतिभारत। रजःसत्त्वंतमश्चैवतमःसत्त्वंरजस्तथा + १० +**

रजः १ तमः २ च ३ अभिभूय ४ सत्वं ५ भवति ६ भारत ७ सत्वं ८ तमः ९ च १० एव ११ रजः १२ सत्वं १३ रजः १४ तथा १५ तमः१६ + १० + उ० + ए गुण प्रकट रहता है दो तिरोभाव रहतेहैं यह नियम है सोई इस मंत्र में कहते हैं + अ० + रज १ और तम को २।३ दबाकर ४ सत्व ५ प्रकट होता है ६ हे अर्जुन ७ सत्व ८ और तम को ९। १०।११ दबाकर + रजोगुण १२ प्रकट होता है + और सत्व रज को १३। १४।१५ दबाकर + तमोगुण १६ प्रकट होता है + जिस समय जो गुण प्रकट होगा उस समय वैसेही बात प्यारीलगेगी दूसरे गुणका कार्य उससमय अच्छा नहीं लगेगा जैसे रजोगुण के आविर्भाव में नाच तमाशा स्त्री शब्दादि प्रिय लगते हैं निद्रा आलस्य शम दमादि अच्छे नहीं लगते सतोगुण के आविर्भाव में स्त्री आदि पदार्थ अच्छे नहीं लगते सत्य दया संतोषादि अच्छे लगते हैं + १० +

**सर्वद्वारेषुदेहेऽस्मिन्प्रकाशउपजायते। ज्ञानंयदातदाविद्याद्विवृद्धंसत्त्वमित्युत + ११ +**

यदा १ अस्मिन् २ देहे ३ सर्वद्वारेषु ४ प्रकाशः ५ ज्ञानं ६ उपजायते ७ तदा ८ सत्वं ९ विवृद्धं १० विद्यात् ११ इति १२ उत १३ + ११ + उ०+ जब शरीर में सतोगुण बढ़ारहता है उसका लक्षणयहहै+अ०+ जिस काल में १ इस देह के बिषय २। ३ सर्ब द्वार श्रोत्रादि में प्रकाश अज्ञानात्मक ६ उत्पन्न होताहै ७ तिस काल में ८ सतोगुण ९ बढ़ाहुआ १०।ज्ञान ११ इत्यभि प्रायः १२। १३ + ११ +

**लोभःप्रवृत्तिरारंभःकर्मणामशमःस्पृहा । रजस्येतानिजायंतेविवृद्धेभरतर्षभ + १२ +**

कुरुनन्दन १ रजसि २ विवृद्धे ३ एतानि ४ जायंते ५ लोभः ६ प्रवृत्तिः ७ आरंभः ८ कर्मणां ९ अशमः १० स्पृहा ११ + १२ + उ + जबशरीरमें रजोगुण बढ़ारहताहै उसका लक्षण यह है + उ० + जब शरीर में रजो गुण २ बढ़ने में ३ ये ४ लोभादि + उत्पन्न होते हैं ५ ज्यों ज्यों धनादि की प्राप्ति हो त्यों त्यों अभिलाषा बढ़ती है ६ धनादि की प्राप्तिके लिये ऐसे तन्मय होकर प्रयत्न करते रहना कि स्वप्न में भी चित शान्ति न हो ७ मन्दिर उपवनादि का जो प्रारंभ कर रक्खा है सो तो पूरा हुआ नहीं दूसरा और प्रारंभ कर दिया ८ कर्मों का ९ अशम १० अर्थात् यह काम करके वह काम करूंगा + बुरा भला कुछ न स्मरण करना जैसे बने यही इच्छा रखनी किसी प्रकार धनादि प्राप्तहों ११ + १२ +

**अप्रकाशोप्रवृत्तिश्चप्रमादोमोहएवच । तमस्येतानिजायंतेविवृद्धे कुरुनन्दन + १३ +**

कुरुनन्दन १ तमसि २ विवृद्धे ३ एतानि ४ जायंते ५ अप्रकाशः ६ अप्रवृत्तिश्च ७।८ प्रमादः ९ मोहः १० एव ११ च १२ + १३ + उ + जब शरीर में तमोगुण बढ़ा रहता है उसका लक्षण यह है + अ० + हेअर्जुन तमोगुण बढ़ने में २।३ ये ४ अप्रकाशादि + उत्पन्न होतेहैं ५ अबिबेक ६ और इस लोक परलोक के निमित्त प्रयत्न न करना ७।८ और करना तो यह करना कि + द्यूतादि खेल खेलने ९ और अपनी उलटी समझ से ऐसे काम करने कि उसका न इस लोक में फल न परलोक में क्रोधादि अन्य को हानि के लिये यत्न करना किसी को बुरा कहना इत्यादि १०।११।१२ + १३ +

**यदासत्वेप्रवृद्धे तुप्रलयंयातिदेहभृत । तदोत्तमविदांल्लोकानमलान्प्रतिपद्यते + १४ +**

सत्वे १ प्रवृद्धे २ तु ३ यदा ४ देहभृत् ५ प्रलयं ६ याति ७ तदा ८ अमलान् ९ उत्तमविदां १० लोकान् ११ प्रति पद्यते १२ + १४ + उ० + मरण समय जोगुण बढ़ा होयगा + उस का फल होगा कि जो अब दो श्लोकों में कहते हैं + अ० सतोगुण बढ़े हुये सन्ते १।२।३ जिस काल में ४ जीव ५ मृत्युको ६ प्राप्त होता है ७ तिस कालमें ८ निर्मल उत्तमउपासकों को ९।१० लोकों का ११ प्राप्त होता है १२ तात्पर्य हिरण्यगर्भादि

के उपासकजिन निर्मल लोकों में जाते हैं उसी लोक को वह प्राप्तहोता है कि जिसके अन्त काल में सतो गुण बढ़ा रहै + १४ +

**रजसिप्रलयंगत्वा कर्मसंगिषुजायते । तथाप्रलीन-स्तमसि मूढयोनिषुजायते + १५ +**

रजसि १ प्रलयं २ गत्वा ३ कर्मसंगिषु ४जायते ५ तथा ६ तमसि ७ प्रलीनः ८ मूढयोनिषु ९ जायते १० + १५ + अ० + रजोगुण में १ मृत्यु को २ प्राप्त होकर ३ कर्म संगी मनुष्यों में ४ उत्पन्न होता है ५ तैसेही ६ तमोगुण में ७ मराहुआ ८ पशु पक्षी मूढ़ योनियों में ९ जन्मलेताहै १० + १५ +

**कर्मणःसुकृतस्याहुःसात्त्विकंनिर्मलंफलम् । रजसस्तु फलंदुःखमज्ञानंतमसःफलम् + १६ +**

सुकृतस्य १ कर्मणः २ निर्मलं ३ सात्त्विकं ४ फलं ५ आहुः ६ रजसः ७ तु ८ फलं ९ दुःखं १० तमसः ११ फलं १२ अज्ञानं १३ + १६ +उ०+ इस देह में अपने आप बिनायत्न सत्वादि जिस हेतु से वर्त्ततेहैं उसका कारण यह है + अ० + सतोगुणी कर्म का १।२ किजिस का लक्षण अठारहवें अध्याय में कहेंगे अर्थात् पिछले जन्म में जो सतोगुणी कर्म किये हैं उन शुभ कर्मों का + निर्मल ३ सतोगुण ४ फल ५ कहते हैं ६ और रजो गुणी का फल ७ । ८।९ दुःख १० है + तमोगुण का फल ११ ।१२ अज्ञान १३ है तात्पर्य कोई प्रयत्न करके सतोगुण को बढ़ाते हैं किसी के स्वाभाविक शमदमादि देखने में आतेहैं सो पिछले सतोगुणी कर्मका फल समझना चाहिये इस प्रकार रजोगुण तमोगुणकी व्यवस्थाहै+१६ +

**सत्वात्संजायतेज्ञानं रजसोलोभएवच। प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेवच + १७ +**

सत्वात् १ ज्ञानं २ संजायते ३ रजसः ४ लोभः ५ एव ६ च ७ प्रमाद-मोहौ ८ तमसः ९ भवतः १० अज्ञानं ११ एव १२ च १३ + १७ + अ० + सतोगुणसे १ ज्ञान २ उत्पन्न होता है ३ रजोगुणसे ४ लोभ५ उत्पन्न होता है ६ । ७ प्रमाद मोह ८ तमोगुणसे ९ होतेहैं १० और अज्ञानभी ११ । १२ । १३ तमोगुण से होताहै + तात्पर्य ज्ञान लोभ अज्ञान प्रमाद मोह के उपलक्षण हैं ज्ञानादि कहनेमें सत्वादि तीनों गुणों का समस्त कार्य समझ लेना चाहिये + १७ +

**ऊर्ध्वंगच्छंतिसत्वस्था मध्येतिष्ठंतिराजसाः। जघन्यगुणवृत्तिस्था अधोगच्छंतितामसाः + १८ +**

सत्वस्थाः १ ऊर्ध्वं २ गच्छन्ति + ३ राजसाः ४ मध्ये ५ तिष्ठंति ६ जघन्य गुणवृत्तिस्थाः ७ तामसाः ८ अधः ९ गच्छन्ति १० + १८ + उ० + मर कर सत्वादि गुणों की तारतम्यता के लेख से फल होता है इस मंत्र में यह कहते हैं + अ० + सतोगुणी १ ऊपर के लोकों को २ प्राप्त होते हैं ३ रजोगुणी ४ मध्य में ५ स्थित रहते हैं ६ निकृष्ट गुण में वर्तने वाले ७ तमोगुणी ८ अधः नीचे को ९ प्राप्त होते हैं १० इसजगह तारतम्यता का जो विचार है सो आनन्दमृत वर्षिणी के पंचम अध्याय में लिखा है + १८ +

**नान्यंगुणेभ्यःकर्तारंयदाद्रष्टाऽनुपश्यति।गुणेभ्यश्च परंवेत्तिमद्भावंसोऽधिगच्छति + १९ +**

यदा १ द्रष्टा २ गुणेभ्यः ३ अन्यं ४ कर्त्तारं ५ च ६ अनु पश्यति ७ गुणेभ्यः ८ च ९ परं १० वेत्ति ११ सः १२ मद्भावं १३ अधिगच्छति १४ + १९ + उ० + गुणों के सम्बन्ध में ऐसा है यह बात पीछेकही अब यह कहते हैं कि बिवेकी गुणों के पृथक् हैं + अ० + जिस काल में १ बिवेकी २ गुणोंसे ३ पृथक् ४ कर्त्ताको ५ नहीं ६ देखता है ७ अर्थात् गुणही कर्त्ता है आत्मा साक्षी मात्रहै जो + गुणों से ८। ९ परे १० आत्मा को + जानता है ११ सो १२ मेरे भावको १३ प्राप्त होता है १४ अर्थात् शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप को प्राप्त होता है + १९ +

**गुणानेतानतीत्यत्रीन्देहीदेहसमुद्भवान् । जन्ममृत्यु जरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते + २० +**

देही १देहसमुद्भवान् २ एतान् ३ त्रीन् ४ गुणान् ५ अतीत्य ६ जन्म मृत्युजरादुःखैः ७ विमुक्तः ८ अमृतं ९ अश्नुते १० + २० + अ० + जीव १ देहाकार को प्राप्त हुये २ इन ३ तीन ४ गुणों को ५ उल्लंघकर ६ जन्ममृत्यु जराव्याधि से ७ छुटा हुआ ८ नित्यानन्द स्वरूपको ९ प्राप्त होता है १० तात्पर्य यही तीनों गुणदेहाकार हो रहे हैं इन के साथ ममता संग अध्यास छोड़ देना यही इन का उल्लंघन करना है जन्म मृत्यु जराव्याधि इन के ही सम्बन्ध से होते हैं और इनके सम्बन्ध में

अपने शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप को भूल जाता है इन के त्याग में प्रयत्न है परमानन्द की प्राप्ति में कुछ यत्न नहीं + २० +

**अर्जुनउवाच । कैर्लिंगैस्त्रीन्गुणानेतानतीतोभवतिप्र-भो । किमाचारःकथंचैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्त्तते + २१ +**

अर्जुनउवाच + प्रभो १ कैः २ लिंगैः ३ एतान् ४ त्रीन् ५ गुणान् ६ अतीतः ७ भवति ८ किमाचारः ९ कथं १० च ११ एतान् १२ त्रीन् १३ गुणान् १४ अतिवर्तते १५ + २१ + भा० + अर्जुन प्रश्न करता है कि + हे समर्थ १ किन चिह्न करके २।३ इन तीन गुणों से ४ । ५ । ६ अतीत ७ होता है ८ यह लक्षण प्रश्न है अर्थात् कैसे प्रतीत हो कि अमुक गुणातीत है वा मैं गुणातीत हूं वे कौन से लक्षण हैं और +क्या आचार है उसका ९ अर्थात् उसका व्यवहार चाल चलन कैसा होता है यह आचार प्रश्न है + और किस प्रकार १० । ११ इन तीन गुणों को १२।१३ । १४ उल्लंघन करता है १५ यह उपाय प्रश्न है अर्थात् वह क्या साधन है कि जिस करके पुरुष गुणातीत हो जावे + २१ +

**श्रीभगवानुवाच । प्रकाशंचप्रवृत्तिंचमोहमेवचपां-डव । नद्वेष्टिसंप्रवृत्तानिननिवृत्तानिकांक्षति + २२ +**

श्री भगवानुवाच + प्रकाशं १ च २ प्रवृत्तिं ३ च ४ मोहं ५ एव ६ इति ७ पांडव ८ संप्रवृत्तानि ९ न १० द्वेष्टि ११ निवृत्तानि १२ न १३ कांक्षति १४ + २२ + उ०+ द्वितीय अध्याय में भी अर्जुन ने यही प्रश्न किया अन्य रीति करके और श्री महाराज ने उत्तर भी दिया भले प्रकार अब श्री महाराज ने यह समझा कि उस रीति से अर्जुन की समझ में नहीं आया अब अन्य रीति से कहना चाहिये इस वास्ते इस बात को संक्षेप करके अन्य रीति से कहते हैं श्री भगवान् कि जिस से जल्दी समझ में आजावे ऐसे करुणाकर को छोड़ जो अन्य उपाय से मोक्ष चाहते हैं उन के अन्तःकरण में रजोगुणी तमोगुणी वृत्ति बढ़ी हुई हैं भा० + प्रकाश १ और प्रवृत्ति २ । ३ और मोह ४ ।५ ६।७ ये तीन तीनों गुणों के कार्य हैं ये तीनों उपलक्षण हैं अर्थ से सत्वादि गुणों का जितना कार्य है सब समझ लेना जो ये अपने आप + हे अर्जुन ८ भले प्रकार वर्त रहे हों ९ तो इन से + नहीं १० वैर करता है ११ अर्थात् उन की प्रवृत्ति का कुछ उपाय नहीं करता है + और फिर जब अपने

आप दूर हो जाते हैं तब + निवृत्तों की १२ नहीं १३ चाह करता है १४ यह लक्षण प्रश्न का उत्तर है तात्पर्य ब्रह्मज्ञानी न किसी गुण में प्रीति करता है न वैर करता है सतोगुण में प्रीति रजोगुण तमोगुण में द्वेष जिज्ञासु का होता है यह लक्षण स्वसम्बेद्य है परसम्बेद्य नहीं अर्थात् ऐसे महात्मा को दूसरा नहीं पहचानसक्ता क्योंकि वे आप आपे को छिपाये रखते हैं + २२ +

**उदासीनवदासीनो गुणैर्योनविचाल्यते। गुणावर्त्त-तइत्येवंयोऽवतिष्ठतिनेंगत्ते + २३ +**

यः १ उदासीनवद् २ आसीनः ३ गुणैः ४ न विचाल्यते ५। ६ गुणाः ७ वर्तंत ८ इति ९ एवं १० यः ११ अवतिष्ठति १२ न १३ इंगते १४ + २३ + उ०+गुणातीत का क्या आचार है इस प्रश्न का उत्तर देतेहैं यह लक्षण ज्ञानीका पर सम्बेद्य भी है + अ० + जो १ उदासीनवत् २ स्थित ३ गुणों करके ४ नहीं ५ बिचलता है ६ गुण बर्त रहे हैं ७। ८ यह ९ समझता है कि मेरा गुणोंसे क्या सम्बन्ध है + इस प्रकार १० जो ११ स्थित १२ अपने स्वरूप से + नहीं १३ चलता है १४ उसको गुणातीत कहते हैं + २३ +

**समदुःखसुखःस्वस्थःसमलोष्ठाश्मकांचनः। तुल्यप्रि-याप्रियोधीरस्तुल्यनिंदात्मसंस्तुतिः + २४ +**

समदुःखसुखः १ स्वस्थः २ समलोष्ठाश्मकांचनः ३ तुल्यप्रियाप्रियः ४ धीरः ५ तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ६ ॥ + २४ + अ० + सुखदुःख में सम १ अर्थात् सुख दुःख का प्रतीत होना यह अन्तःकरण का धर्म है यावत् अन्तःकरण है तावत् बे संदेह धर्मों को अपना धर्म प्रतीत होगा जिस धर्म से वह धर्मी कहा जाता था जो वह धर्म न बर्ते तो फिरि उस को उस धर्म वाला क्यों कहेंगे दुःख सुख ज्ञानी को अवश्य प्रतीत होता है समता का यह अर्थ नहीं कि दुःख सुख प्रतीत न होवें तात्पर्य यह है कि दुःख सुख परमानन्द स्वरूप आत्मा को कम सिवाय नहीं कर सक्ते + अपने स्वरूप में स्थित २ सम है लोहा पत्थर सोना जिस के ३ सम है प्रिय अप्रिय जिस के ४ धीर्य वाला ५ सम है अपनी निन्दा स्तुति जिस के ६ उस को गुणातीत कहते हैं + टी० जो आत्मा की निन्दा करता है वह अपनी पहले करता है और जो शरीरों की करता है तो सहाय करता है और जो निन्दा करता है

वह अवगुणों को करता है इस हेतु से उस को सहायक जानना योग्य है क्योंकि अवगुणों को सब बुरा कहते हैं सिवाय इस के अवगुण कहने से दूर होजाता है इस बातको इतिहास से स्पष्ट कहते हैं एक राजा ने बहुत ब्राह्मणों को एकदिन जिमाया भोजन किये पीछे वे ब्राह्मण सब मर गये मर जाने का कारण यह हुआ कि मैदान में खीर होरहीथी आकाश में चील सर्पको लियेजातीथी सर्प के मुख में से विष टपक खीर में जा पड़ा किसी ने न देखा नगर में यहचर्चाहुई कि राजाने ब्राह्मणों को विष दे दिया बहुत लोगोंका इसमें सम्मत न हुआ तब एक दुष्ट ने यह बारीकी निकाली कि राजा अमुक ब्राह्मणकी स्त्री से प्रीति रखता है अकेला उस ब्राह्मण को मरवाना राजाने योग्य न समझ बहुतोंके साथ उस को भी न्योतकर विष देदिया इस बात में बहुत लोगों को निश्चय हो गया जगह जगह यही चर्चा होने लगी राजा विचारा अकृतदोष इस निन्दा का मारा नगर छोड़ बनमें चला बन में आकाशबाणी हुई कि हे राजन् तेरा कुछ दोषनहीं यह व्यवस्था ऐसे है चील सर्प विषकी सब कथा सुनाई कि इस कथा को उन निन्दक दुष्टोंने भी सुना वह हत्या राजाको छोड़ परमेश्वर के पासपहुंची कहा कि मुझको अब जगह बतलाइये प्रभुने कहा कि जिन्होंने राजा को दोष लगाया और कहा या सुना तुझ को वहां रहना योग्य है इस में न राजा का दोष न चील का न सर्पका न रसोइया का राजा इसमें निमित्त था सो उस को फल होगया राजा अपछू घर आया और हत्या निन्दकों के मुख पर पहुंची उस दिन से हत्या निन्दकों के मुख पर और जो किसी की बुराई मन लगा कर सुनते हैं उन के मुख पर बास करती है प्रत्यक्ष देखलो किजिस समय किसी की कोई निन्दाकरताहो या सुनता हो दोनों की सूरत हत्यारों कीसी होगी + २४ +

**मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्योमित्रारिपक्षयोः । सर्वारंभपरित्यागी गुणातीतःसउच्यते +२५ +**

मानापमानयोः १ तुल्यः २तुल्यः ३ मित्रारिपक्षयोः ४ सर्वारम्भपरित्यागी ५ गुणातीतः ६ सः ७ उच्यते ८ + २५ + अ० + मान अपमान में १ सम २ मित्र अरि के पक्ष में सम ३ । ४ सब शुभ अशुभ कर्मों के आरम्भ का त्यागी ५ सो + गुणातीत ६ । ७ कहा है ८ जीवन्मुक्त ज्ञानीको गुणातीत कहते हैं + २५ +

**मांचयोव्यभिचारेण भक्तियोगेनसेवते । सगुणा-न्समतीत्यैतान ब्रह्मभूयायकल्पते + २६ +**

यः १ च २ मां ३ अव्यभिचारेण ४ भक्ति योगेन ५ सेवते ६ स ७ एतान् ८ गुणान् ९ समतीत्य १० ब्रह्मभूयाय ११ कल्पते १२ ॥ + २६ + उ० + गुणातीत होने का उपाय श्री भगवान् कहते हैं + भा० + जो १ । २ मुझको ३ अव्यभिचारी भक्ति योग करके ४ । ५ सेवन करता है ६ अर्थात् परमेश्वर की ऐसी उपासना करे कि वह दिन दिन बढ़े कम न होने पावे कोई अन्य काम बीच में न हो उसको अव्यभिचारिणी भक्ति कहते हैं + सो ७ इन गुणों को ८ । ९ उलंघ करके १० ब्रह्म भाव को ११ प्राप्त होते हैं १२ तात्पर्य परमा नन्द स्वरूप आत्मा की प्राप्ति का उपाय जैसा भक्ति है और विशेष इस समय में ऐसा अन्य उपाय शीघ्र प्रत्यक्ष जीते जी फल का देने वाला नहीं यह अवतार श्री व्रजचन्द महाराज का इसी समय के लोगोंके उद्धार करने के लिये हुआ है जैसे इससमय के पाप बलवान् हैं ऐसेही श्री भगवान् का यह अवतार इन पापों के नाश करने में समर्थ है + २६ +

**ब्रह्मणोहिप्रतिष्ठाह ममृतस्याव्ययस्यच । शाश्वत-स्यचधर्मस्य सुखस्यैकांतिकस्यच + २७ +**

अव्ययस्य १ अमृतस्य २ ब्राह्मणः ३ हि ४ अहं ५ प्रतिष्ठा ६ च ७ शाश्वतस्य ८ च ९ धर्मस्य १० च ११ एकांतिकस्य १२ सुखस्य १३ + २७ + भा० + निर्विकार १ अविनाशी २ ब्रह्म की ३ ही ४ में ५ मूर्ति ६ ७ हूं + और सनातन धर्मको ८ । ९ । १० भी ११ अखंड सुखको १२ । १३ भी में मूर्ति हूं तात्पर्य जो निराकार ब्रह्मको और धर्म को और परमानन्द को नहीं जानते हैं श्री कृष्णचन्द्र महाराज को उपासनादिन रात्रिकरते हैं वे ब्रह्मको अवश्यप्राप्त होते हैं गुणातीत होने का उपाय अर्जुन ने जो बूझा था उसका उत्तर यह दो श्लोकों करके दिया अर्थात् श्री व्रज चन्द को भक्ति करनी गुणातीत होने का उपाय है यदि निराकार निर्गुण परमा नन्द स्वरूप आत्मा का साक्षात्कार नहो।

तावत् साकार मूर्ति का आश्रय रखना चाहिये इत्यभि प्राय: + २० +

इति श्री भगवद्गीता सूपनिषत्सु ब्रह्म विद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन सम्बादे गुणत्रय विभागो नाम चतुर्दशोऽध्याय: + १४ +

इति श्री आनन्द गिरि बिरचितायां परमानन्द प्रकाशिकायां टीकायां चतुर्दशोऽध्याय: + १४ +



---

## अथ पन्द्रहवें अध्याय का प्रारम्भहुआ ॥

**श्रीभगवानुवाच । ऊर्द्धमूलमधःशाखमश्वत्थंप्राहुरव्ययं। छन्दांसियस्यपर्णानियस्तंवेदसवेदवित् +१+**

श्री भगवानुवाच + उर्द्धमूलं १ अध:शाखं २ अश्वत्थं ३ अव्ययं ४ प्राहु: ५ यस्य ६ छन्दांसि ७ पर्णानि ८ य: ९ तं १० वेद ११ स १२ वेदवित् १३ + १ + टी० + वैराग्य बिना ज्ञान नहीं होता इसवास्ते संसार को वृक्ष वत् वर्णन करतेहैं + अ० + मायो पहित ब्रह्ममूल है जिस को १ क्योंकि मायो पहित से अन्य पदार्थ संसार में उर्द्ध ऊंचा बड़ा परे नहीं और शुद्ध ब्रह्म तो संसार से पृथक् है सो मन वाणी का विषय नहीं + हिरण्य गर्भादि शाखा हैं जिस की २ क्योंकि हिरण्य गर्भादि मायो पहित ब्रह्म से नीचे पीछे हैं संसार को + अश्वत्थ ३ अव्यय ४ कहते हैं ५ बिना ज्ञान इस का नाश नहीं होता इस वास्ते तो इस को अव्यय कहते हैं भगवत् की कृपा से जो ज्ञान हो जाता तो यह ऐसा भी नहीं कि कल तक ठहरा रहे अश्वत्थ में अकारनकार की जगह है स्व इस शब्द का अर्थ कलका है जो कल तक न ठहरे उस को अश्वत्थ कहते हैं अश्वत्थ का अर्थ इस जगह पीपल नहीं समझना और यह भी नहीं समझना कि इसकी जड़ ऊपर को है वृक्षवत् और शाखा नीचे हैं ऐसे अर्थ समझना चाहिये कि जो ऊर्ध्व अधः का अर्थ ऊपर लिखा है+जिस के ६ वेद ७ पत्र ८ हैं क्योंकि वृक्ष की शोभा पत्रों से ही होती और पत्रों को ही देख वृक्ष में राग उत्पन्न होता है ऐसे वेदोक्त कर्मों के फल सुनसुन संसार में राग बढता चला जाता

है तात्पर्य वेदों का समझ में नहीं आता रोचक वाक्यों को सिद्धान्त समझ बैठते हैं + जो ६ तिसको १० जानता है ११ सो १२ वेद का जानने वाला है १३ अर्थात् जो वेद मार्ग को एक साधन समझता है और फल उस का परमानन्द स्वरूप आत्मा है सो वेद का अर्थ जानता है द्वितीय अध्याय में श्री भगवान् कह चुके हैं कि वेद अज्ञानियों के वास्ते हैं कि सत्वादि गुणों में मोह को प्राप्त हो रहे हैं + १ +

**अधश्चोर्ध्वंप्रसृतास्तस्यशाखा गुणप्रवृद्धाविषयप्र-वालाः। अधश्चमूलान्यनुसंततानि कर्मानुबंधीनिम-नुष्यलोके + २ +**

तस्य १ शाखा २ अधः ३ च ४ ऊर्ध्वं ५ प्रसृताः ६ गुण प्रवृद्धाः ७ विषय प्रवालाः ८ अधः ९ च १० मनुष्य लोके ११ कर्मानु बन्धीनि १२ मूलानि १३ अनुसंततानि १४ + २ + अ० + तिस संसार वृक्ष की १ शाखा २ नीचे ३ और ऊपर ४।५ फैल रही हैं सत्वादि गुणों करके बढ़ती हुई हैं ७ विषय इस लोक परलोक के पत्ते हैं उस वृक्ष के ८ नीचे ९।१० भी + मनुष्य लोक में ११ कर्मों के फल राग द्वेषादि १२ उस की जड़ १३ फैल रही है १४ अर्थात् बहुत दृढ़ हो रही है जैसे रज्जु से गठरी को पेंच पर पेंच देकर बांधते हैं चारों ओर से तैसे ही संसारको जड़ मनुष्य लोक में नीचे ऊपर अनस्यूत ओत प्रोत हो रही है तात्पर्य कर्म करने का अधिकार मनुष्य लोक में ही है और कर्मों का जो अनु-बंध अर्थात् पश्चात् भावि राग द्वेषादि कर्मों का फल यह भी संसार की जड़ है वास्तव संसार की जड़ मायो पहित ब्रह्म है इस हेतु से उस को ऊर्द्ध जड़ कहा मनुष्य लोक में कर्म इस की जड़ है मायो पहित ब्रह्म की अपेक्षा में मर्त्य लोक नीचा है इस वास्ते इस जगह कहा कि इस की नीचे मध्यलोक में भी कर्म कांड जड़ है+ब्रह्म लोक बैकुंठादि और मायो पहित ब्रह्म सूक्ष्म उपाधि करके उपहित हिरण्य गर्भ स्थूल उपाधि करके उपहित बिराट और उसके अन्तर्गत ब्रह्मादि देवता यह तो ऊपर को संसार की शाखा फैल रही है और मर्त्य लोक में पशु पक्षी मनुष्यादि यज्ञादिकर्म यह नीचे संसार की शाखा फैल रही हैं जैसे जैसे सत्वादि गुणों में प्रीति करते हैं तैसेही तैसे शाखा में से शाखा बढ़ती चली जाती हैं इसी हेतु से न कुछ परलोक सावयव लोकों का पता लगाता है कि चौदह लोक हैं या बैकुंठादि

कितने लोक हैं और एक एक देवता की उपासना में अनेकअनेक भेद असंख्यात हैं और अब तक अनेक भेद शाखा निकलती चली जाती हैं और नीचे मनुष्यों का जो व्यवहार है इस का कुछ प्रमाण नहीं न जाति का प्रमाण न कुल के व्यवहारों का प्रमाण है संसार वृक्ष में शब्दादि विषय कोमल सुन्दर पत्र लग रहे हैं देवता मनुष्य पश्वादि सब प्राणियों ने बिषयों का आश्रा ले रक्खा है सोई साक्षात् भोगते हैं कोई उनके लिये वेदोक्त कर्म कर रहे हैं इस संसार की व्यवस्था इस जगह बहुत संक्षेप करके लिखी गई है वैराग्यवान् पुरुषों से और योग वाशिष्ठादि ग्रंथों से इसकी व्यवस्था श्रवण करनी योग्य है कि यह कैसे अनर्थों का मूल है + २ +

**नरूपमस्येहतथोपलभ्यतेनांतोनचादिर्नचसंप्रतिष्ठा।**
**अश्वत्थमेनंसुविरूढमूलमसंगशस्त्रेणदृढेनछित्वा + ३ +**

इह १ अस्य २ रूपं ३ तथा ४ न ५ उपलभ्यते ६ न ७ अन्तं ८ नच ९ आदिः १० च ११ न १२ संप्रतिष्ठा १३ सुविरूढमूलं १४ एनं १५ अश्वत्थं १६ दृढेन १७ असंगशस्त्रेण १८ छित्वा १९ + ३ + श्व० + संसार में १ जैसा + इस संसार का २ रूप ३ वर्णन करते हैं + तैसा ४ बेसन्देह + नहीं ५ प्रतीत होता है ६ इस का न ७ अन्त ८ और न आदि ९ । १० । ११ न १२ स्थितिः १३ इस्की प्रतीत होती है कि यह कैसे उत्पन्न हुआ कैसे लयहोगा कैसे ठहर रहा है क्षण भंगुर स्वप्न इन्द्रजाल वत् इस के पदार्थ प्रतीत होते हैं अनर्थों का मूल दुःखों का स्थान है जो पदार्थ नर्क का कारण उसके बिना निर्बाह नहीं होता जो उस को अशेष त्याग दिया जावे तो यह असम्भव है इस प्रकार बन्धी हुई है भले प्रकार जड़ जिसकी १४ इस अश्वत्थ को १६ दृढ़ असंग शस्त्र से १७ । १८ छेदन १९ परंपद परमानन्द स्वरूप आत्माको ढूढ़ना चाहियेअगले मंत्र के साथ इस मंत्र का सम्बंधहै तात्पर्य इस संसार की व्यवस्था सब मतवाले जुदी जुदी कहते हैं अपने मत को सब बड़ा कहते हैं दूसरे को बुरा कहते हैं कोई बे सन्देह समन्वय नहीं करता कि वास्तवसंसार की यह व्यवस्था है और अमुक अमुक जो यह कहते हैं उनका तात्पर्य यह है कि मुमुक्षु को कैसे निश्चय हो कि अमुक मत सच्चा है जो निर्णयकरो तो एकघट का निर्णय नहीं होसक्ता है एक घट की चर्चा में समस्त अवस्था समाप्त हो जावें परन्तु घटका निर्णय नहो न्याय

शास्त्र वाले चर्चा के बल से कुछ का कुछ सिद्ध करदें विद्या की तो यह व्यवस्था हैं एक मत नहीं कि जिस पर निश्चय बना रहै तात्पर्य यह हैं कि सब प्रकार संसार दुःख रूप है इसका भी निर्णय न करे इसकेदूर होने का यत्न करे कभी इस में प्रीति न करे सदा संसार से ग्लानि बनी रहे तब परमानन्द स्वरूप आत्मा की प्राप्ति होती है + ३ +

**ततःपदंतत्परिमार्गितव्यंयस्मिन्गतानिवर्त्तंतिभूयः। तमेवचाद्यंपुरुषंप्रपद्येयतःप्रवृत्तिःप्रसृतापुराणी + ४ +**

ततः १ तत् २ पदं ३ परिमार्गि तव्यं ४ यस्मिन् ५ गताः ६ भूयः ७ न ८ निवर्त्तंते ९ तं १० एव ११ च १२ आद्यं १३ पुरुषं १४ प्रपद्ये १५ यतः १६ पुराणी १७ प्रवृत्तिः १८ प्रसृता १९ + ४ + उ० + असंग शस्त्र से संसार को छेदन करके + अ० + पीछे १ सो २ पद ३ ढूंढ़ना योग्य है ४ जिस में ५ प्राप्त होकर ६ फिर ७ न ८ लोटना पड़े ९ उसके ढूंढ़ने का भक्ति मार्ग कहते हैं + तिस ही १०।११।१२ आदि पुरुष की १३।१४ में शरण हूं १५ कि+जिस से १६ अनादि १७ प्रवृत्ति १८ फैली है १९ तात्पर्य संसार के किसी पदार्थ में नीचे ऊपर प्रीति न करे वैराग्य के पीछे वह पद ढूंढ़े कि जहां जाकर फिर जन्मलेना न पड़े यत्नउस पद की प्राप्ति का यह है कि तटस्थ लक्षण जो परमात्मा का है उस लक्षण से उस को लक्ष्य करके उसकी भक्ति करनी चाहिये स्वरूप भक्ति का यह है कि जिस परमात्मा से यह अनादि अनिर्वाच्य संसार वृक्ष नीचे ऊपर फैला है सोई आदि पुरुष मेरा आश्रा है उसकी मैं शरण हूं वह मेरी रक्षा करने वाला है वह अन्तर्यामी सबके हृदय में विराज मान समर्थ है इस संसार वन के पार मुझ को वही लगावेगा ऐसा चिंतवन सदाबना रहे इसी को भक्ति कहते हैं + ४ +

**निर्मानमोहाजितसंगदोषा अध्यात्मनित्याविनिवृत्तकामाः। द्वंद्वैर्विमुक्ताःसुखदुःखसंज्ञैर्गच्छंत्यमूढाःपदमव्ययंतत् + ५ +**

निर्मान मोहाः १ जित संग दोषाः २ अध्यात्म नित्याः ३ विनिवृत्त कामाः ४ सुख दुःखसंज्ञैः ५ द्वंद्वैः ६ विमुक्ताः ७ मूढाः ८ तत् ९ अव्ययं १० पदं ११ गच्छन्ति १२ + ५ + उ० + और भी आत्माकी प्राप्ति के साधन कहते हैं + अ० + दूर हो गयेहैं मान मोह जिनके १जीता

है संग का दोष जिन्हों ने २ वेदांत शास्त्र के श्रवण मनन विचार में नित्य लगे रहते हैं ३ समस्त कामना इस लोक परलोक की जातीरही है जिन को ४ सुख दुःख यह है नाम जिन का ५ इत्यादि + द्वंद्व कर के ६ छूटे हुये ७ ज्ञानी आत्म तत्त्वके जानने वाले ८ तिस ६ निर्विकार १० पदको ११ प्राप्त होते हैं १२ कि जिस पद के विशेषण अगले मंत्र में हैं तात्पर्य मुमुक्षु को चाहिये कि प्रवृत्ति मार्ग वालों का संग न करे और जिन ग्रंथों में प्रवृत्ति मार्ग का विशेष निरूपण है उनका भी श्रवण न करे जिस पदार्थ को जिह्वा से कहेगा कानों से सुनेगा अवश्य उसके गुण संस्कार अन्तःकरण में प्रवेशहोंगे प्रवृत्ति शास्त्रमें स्त्रीपुत्र राज संयोग वियोगादि पदार्थों का वर्णनविशेष है इसहेतु से मुमुक्षुको कहना सुनना निषेध है ब्रह्म विद्या में केवल वैराग्य उपरति शान्ति शम दमादि साधनों का निरूपणहै स्त्रियादि पदार्थोंका सम्बन्ध ऐसा अनर्थ नहीं करता कि जैसा जो उन के गुण वर्णन करता है उन का संग अनर्थ करता है + ५ +

**नतद्भासयतेसूर्योनशशांकोनपावकः । यद्गत्वानिवर्तन्तेतद्धामपरमंमम + ६ +**

यत् १ सूर्यः २ न ३ भासयते ४ न ५ शशांकः ६ न ७ पावकः ८ यत् ६ गत्वा १० न ११ निवर्तंते १२ तत् १३ मम १४ परं १५ धाम १६ + ६ + उ० + पूर्वोक्त पदके विशेषण कहते हैं + अ० + जिस को १ सूर्य २ नहीं ३ प्रकाश करसक्ता है ४ न ५ चन्द्रमा ६ न ७ अग्नि ८ और + जिसको ६ प्राप्तहोकर १० नहीं ११ लौटकर आतेहैं १२ जन्म मरणमें + सो १३ मेरा १४ परं १५ धाम १६ है तात्पर्य सूर्यादि जड़ पदार्थ अज्ञान काकार्य ज्ञान स्वरूप आत्माको कैसे प्रकाश करसक्ते हैं आत्माही को परं पद परंधाम कहते हैं तेजस सावयव मन्दिरों को बैकुंठादि नाम हैं जिन के उन को धाम इस जगह नहीं समझना क्योंकि वहां सूर्यादि सब प्रकाश कर सक्ते हैं जैसे सूर्यादि तेज का कार्यहै ऐसेही वे लोक हैं प्रभुका धाम प्रभुसे जुदा नहीं यह बातआठवें अध्याय में स्पष्ट कर चुके हैं + ६ +

**ममैवांशोजीवलोकेजीवभूतःसनातनः । मनःषष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानिकर्षति + ७ +**

जीवलोके १ सनातनः २ जीवभूतः ३ मम ४ एव ५ अंशः ६ प्रकृति

स्थानि ७ इन्द्रियाणि ८ कर्षति ६ मनः षष्ठानि १० + ७ + भा० + संसार में १ अनादि २ जीव ३ मेरा ४ हि ५ अंशवत् + अंश ६ है जैसे महाकाश का अंश घटाकाश + पर्वतवत् चित्वनका अंशचित कणजीव को समझना न चाहिये क्योंकि परमात्मा निरवयव आकाशवतहै सावयव पर्वतवत् नहीं जैसे पर्वत का अंश पत्थर काटका होता है ऐसा जीव अंश नहीं आकाश का दृष्टान्त या बिम्ब प्रतिबिम्ब का दृष्टान्त समझना चाहिये सो जीव सुषुप्तिकाल और प्रलयकाल में + प्रकृति में स्थित रहती हैं ७ जो इन्द्रिय तिन + इन्द्रियों को ८ खैंचताहै६ कैसी हैं वे इन्द्रिय + मन है छठां जिनमें १० अर्थात् पंच ज्ञानेन्द्रिय पंच कर्मेन्द्रिय पंच प्राण अन्तःकरण चतुष्टय ये सब कारण अविद्या में सूक्ष्म अविद्यारूप हुये रहते हैं सुषुप्ति प्रलय में सो इन सब को वही अविद्यो पहित चिदाभास जीव स्थूल सूक्ष्म भोगों के लिये अपने साथ लेलेता है + ७ +

**शरीरंयदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः। गृहीत्वैतानिसंयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् + ८ +**

ईश्वरः १ यद् २ शरीरं ३ अवाप्नोति ४ यद् ५ च ६ अपि ७ उत्क्रामति ८ एतानि ६ गृहीत्वा १० संयाति ११ वायुः १२ गन्धान् १३ आशयात् १४ इव १५ + ८ + भा० + देह का स्वामी जीव १ जिसकाल में २ देह को ३ प्राप्त होता है ४ और जिस काल में ५।६।७ एक देह से दूसरे देह में जाता है ८ तिस काल में + इस को ६ग्रहण करके १० प्राप्त होताहै ११ दूसरे देह में दृष्टान्त कहते हैं + वायुः १२ गंधको १३ पुष्पादि से १४ जैसे १५ लेजाता है तात्पर्य इन्द्रियादि को साथ लेकर जाता है + ८ +

**श्रोत्रंचक्षुःस्पर्शनंच रसनंघ्राणमेवच। अधिष्ठायमनश्चायं विषयानुपसेवते + ९ +**

श्रोत्रं १ चक्षुः २ स्पर्शनं ३ च ४ रसन ५ घ्राणं ६ एव ७ च ८ मनः ६ च १० अयं ११ अधिष्ठाय १२ विषयान् १३ उपसेवते १४+ ६ + भा०+ श्रोत्र १ चक्षुः २ त्वक् ३ और ४ रसना ५ और नासिका ६।७।८ और मनको ६। १० यह ११ जीव + आश्रय करके १२ विषयोंको १३ भोगता है १४ तात्पर्य बुद्धि में प्रतिबिम्ब जो चैतन्य का सो भोक्ता जीव मन

में प्रतिबिम्ब जो उसी चैतन्य का सो अन्तःकरण इन्द्रियों में प्रतिबिम्ब जो चैतन्य का सो वह करण शब्दादि विषयों में प्रतिबिम्ब चैतन्य का सो कर्म कर्ता को प्रमाता चैतन्य कर्म को प्रमेय चैतन्य कहते हैं प्रमाता प्रमेय जब ये दोनों चैतन्य एक होतेहैं उसको प्रत्यक्ष भोगकहते हैं ९ +

**उत्क्रामंतंस्थितंवापिभुंजानंवागुणान्वितम् । विमूढानानुपश्यंति पश्यंतिज्ञानचक्षुषः + १० +**

विमूढाः १ उत्क्रामंतं २ स्थितं ३ वा ४ अपि ५ भुंजानं ६ वा ७ गुणान्वितं ८ न ९ अनुपश्यन्ति १० ज्ञान चक्षुषा ११ पश्यन्ति १२+१०+ उ०+ यथार्थ जीव का स्वरूप ज्ञानीही जानते हैं वहिर्मुख विषयी नहीं जानते हैं + अ० + वहिर्मुख १ जीवको+एक देहसे दूसरे देहमें जाते हुये को २ और देह में स्थित हुये को ३ । ४ भी ५ और भोगते हुये को ६ और इन्द्रियादि के साथ संयुक्त हुये को ७ । ८ नहीं ९ देखते हैं १० ज्ञान नेत्रवाले ११ देखते हैं १२ तात्पर्य अविवेकी यह भी नहीं जानते कि जीव किस प्रकार विषयों को भोगता है अकेला ही भोगता है या इन्द्रियादि के सम्बंध से भोगता है और यह शरीरों में कैसे स्थित है शरीरादि इस का आश्रा है या आत्मा देहादि का आश्रा है या कुछ अन्य प्रकार है यह कैसे इस देह में से छूट दूसरे देह में जाताहै१०+

**यतंतोयोगिनश्चैनं पश्यंत्यात्मन्यवस्थितं । यतंतोप्यकृतात्मानो नैनंपश्यंत्यचेतसः + ११ +**

यतंतः १ योगिनः २ च ३ एनं ४ आत्मनि ५ अवस्थितं ६ पश्यन्ति ७ अचेतसः ८ अकृतात्मानः ९ यतंतः १० अपि ११ एनं १२ न १३ पश्यंति १४ + ११ + उ० + यह नहीं समझना कि आत्मा को तो सब ही जानते हैं ऐसा कौन है कि जो आप को न जाने अपना जानना यही ज्ञान की अवधि है सब प्राणी तो आत्मा को क्या जानेंगे बहुत विद्यावान् वेदोक्त अनुष्ठान् करने वाले भी नहीं जानते + अ०+ ज्ञान योग में यत्न करने वाले १ योगी २ । ३ आत्मा को ४ देहमें ५स्थित ६ और देह से बिलक्षण + देखते हैं ७ मन्द मति ८ मलिन अन्तःकरण वाले ९ यत्न करते हुये १० भी ११ आत्मा को १२ नहीं १३ देखते १४ तात्पर्य वैदिक मार्ग वाले भी कोई कोई जो आत्मा को नहीं जानते उस में हेतु यह है कि वे वेदान्त में श्रद्धा नहीं करते जीव को

परिच्छिन्न समझते हैं और एक यह बड़ा आश्चर्य्यहै कि वेदकी दृष्टि से अदृष्ट सूतकादि उनको लग जावें और आत्मा में यह निश्चय न होकि मैं ब्रह्म हूं ॥ + ११ +

**यदादित्यगतंतेजो जगद्भासयतेखिलं। यच्चन्द्रमसि-यच्चाग्नौ तत्तेजोविद्धिमामकं + १२ +**

आदित्य गतं १ यत् २ तेजः ३ अखिलं ४ जगत् ५ भासयते६ यत् ७ चन्द्र मसि ८ यत् ९ च १० अग्नौ ११ तत् १२ तेजः १३ मामकं १४ विद्धि १५ + १२ + भा० + सूर्य में १ जो २ तेज ३ समस्त ४ जगत् को ५ प्रकाश करता ६ जो७चन्द्रमा में ८ और जो ९। १० तेज + अग्नि में ११ सो १२ तेज १३ मेराही १४ जान १५ + १२ +

**गामाविश्यचभूतानि धारयाम्यहमोजसा। पुष्णा-मिचौषधीःसर्वाः सोमोभूत्वारसात्मकः + १३ +**

गां १ आविश्य २ च ३ भूतानि ४ धारयामि ५ अहं६ ओजसा७ रसा-त्मकं ८ च ९ सोमः १० भूत्वा ११ सर्वाः १२ औषधीः १३ पुष्णामि १४ + १३ + भा० + पृथवी में १ प्रवेश करके २। ३ भूतों को ४ धारण करता हूं ५ मैं ६ बलकर के ७ और रस वाला ८। ९ चन्द्र १० होकर ११ सबऔषधियों को १२। १३ पुष्ट करता हूं १४ + १३ +

**अहंवैश्वानरोभूत्वा प्राणिनांदेहमाश्रितः। प्राणापा नसमायुक्तः पचाम्यन्नंचतुर्विधं + १४ +**

प्राणिनां १ देहं २ आश्रितः ३ अहं ४ वैश्वानरः ५ भूत्वा ६ प्राणापान समायुक्तः ७ चतुर्विधं ८ अन्नं ९ पचामि १० + १४ + भा० + जीवन के १ शरीरमें २ स्थितहुआ ३ मैं ४ जठराग्नि ५ होकर ६ प्राणापानादि के साथ मिलकर ७ चार प्रकार के ८ अन्न को ९ पचाताहूं १० + टी+ पूरी आदि को भक्ष्य खीर आदि को भोज्य चटनी आदि को लेह्य पौंड़े आदि को चोष्य कहते हैं तात्पर्य सूर्य चन्द्रमा पृथिवी आदि पदार्थों में जो जो गुण हैं यह सब चैतन्य देव की सत्ता है वे सब जड़ हैं चैतन्य सब का प्रेरक है + १४ +

**सर्वस्यचाहंहृदिसन्निविष्टोमत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं-चवेदैश्चसर्वैरहमेववेद्योवेदांतकृद्वेदविदेवचाहं + १५**

सर्वस्य १ हृदि २ अहं ३ सन्निविष्टः ४ मत्तः ५ च ६ स्मृतिः ७ ज्ञानं ८ अपोहनं ९ च १० सर्वैः ११ वेदैः १२ च १३ अहं १४ एव १५ वेद्यः१६ वेदांत कृत् १७ च १८ वेद वित् १९ एव २० अहम् २१ + १५ + भा०+ सब की १ बुद्धिमें २ मैं ३ प्रवेशहूं ४ और मुझते ५। ६ स्मृतिः ७ ज्ञान ८ और इनदोनों का + भूल जाना ९ भी १० मुझसे होता है + और सब वेदों करके ११। १२। १३ मैं १४ ही १५ जानने के योग्य १६ हूं अर्थात् सब वेद मुझ को ही प्रति पादन करतेहैं + वेदान्त करनेवाला १७ और वेदों को जाननेवाला भी १८। १९। २० मैं २१ ही हूं तात्पर्य जहां जहां प्रभु अपनी विभूति कहते हैं उनका अभिप्राय जीव ब्रह्म की एकता पूर्णता में है ज्ञान शक्ति क्रिया करके उपहित जो चैतन्य उससे ज्ञान स्मृति होतीहै आवर्ण शक्ति प्रधान जो चैतन्य इस से मूल अज्ञान होता है + १५ +

**द्वाविमौपुरुषौलोकेक्षरश्चाक्षरएवच। क्षरःसर्वाणि भूतानि कूटस्थोक्षरउच्यते + १६ +**

इमौ १ द्वौ २ पुरुषौ ३ लोके ४ क्षरः ५ च ६ अक्षरः ७ एव ८ च ९ सर्वाणि १० भूतानि ११ क्षरः १२ कूटस्थः १३ अक्षरः १४ उच्यते १५ + १६ + उ० + कहे हुये पिछले अर्थ को फिर संक्षेप कर कहते हैं कि जिस से जल्द समझ में आजाय + भा० + ये १ दो २ पुरुष ३ लोक में ४ प्रसिद्ध हैं + क्षर ५ और अक्षर ६। ७। ८। ९ सब भूतों को १०।११ क्षर १२ कूटस्थ को १३ अक्षर १४ कहते हैं १५ + टी० + लौकिक बोली में देह को भी पुरुष कहते हैं इस वास्ते दोनों को पुरुष कहा देह इन्द्रियादि पदार्थों को क्षर कहते हैं और इस जगह माया का नाम अक्षर है कूट कपट में जिस की स्थिति है सो माया कूटस्थ का अर्थ- इस जगह अक्षरार्थ से माया समझना यावत् ब्रह्म ज्ञान नहीं होता तावत् माया अक्षर स्पष्ट प्रतीत होता है इत्यभिप्रायः + १६ +

**उत्तमःपुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः। योलोकत्र यमाविश्यविभर्त्यव्ययईश्वरः + १७ +**

उत्तमः १ पुरुषः २ तु ३ अन्यः ४ परमात्मा ५ उदाहृतः ६ इति ७ यः ८ अव्ययः ९ ईश्वरः १० लोकत्रयं ११ आविश्य १२ बिभर्ति १३ + १७ + उ० + शुद्ध सच्चिदानन्द परमात्मा नित्य मुक्त क्षर अक्षर दोनों से

विलक्षण है यह समझ इसको आत्मज्ञान कहतेहैं + अ० + उत्तम १ पुरुष २ तो ३ अन्य ४ ही है घट पट वत् अन्य भेद वाला नहीं बिम्ब प्रतिबिम्बवत् अन्य है उसीको + परमात्मा ५ कहा है ६ यह ७ समझ अर्थात् वह यही आत्मा है कि जिस को वेदों में ऋषीश्वर मुनीश्वरों ने परमात्मा कहा है + जो ८ निर्विकार ९ ईश्वर १० त्रिलोक में ११ प्रवेश होकर १२ धारण करता है १३ अर्थात् उसकी ऐसी अचिंत्य शक्ति है कि वह वास्तव निर्विकार ईश्वर है परन्तु त्रिलोक को धारण कर रहा है + १७ +

**यस्मात्क्षरमतीतोहमक्षरादपिचोत्तमः। अतोस्मिलोकेवेदेचप्रथितःपुरुषोत्तमः + १८ +**

यस्मात् १ क्षरं २ च ३ अक्षरात् ४ अपि ५ अहं ६ उत्तमः ७ अतीतः ८ अस्मि ९ अतः १० लोके ११ वेदे १२ च १३ पुरुषोत्तमः १४ प्रथितः १५ + १८ + अ० + जिस हेतु से १ क्षर अक्षर से २। ३। ४ भी ५ मैं ६ उत्तम मन वाणी का अविषय ७ और इन दोनोंसे + अतीत नित्यमुक्त ८ हूं ९ इसी हेतु से १० शास्त्र में ११ और वेद में १२। १३ मुझको + पुरुषोत्तम १४ कहा है १५ तात्पर्य नित्य मुक्त शुद्ध सच्चिदानन्द परिपूर्ण आत्मा को पुरुषोत्तम कहते हैं कभी किसी कालमें जहां बन्ध मोक्षसत् असत् शब्दों का कुछ प्रसंग भी नहीं + १८ +

**योमामेवमसंमूढोजानातिपुरुषोत्तमम्। ससर्वविद्भजतिमांसर्वभावेनभारत + १९ +**

भारत १ यः २ असंमूढः ३ एवं ४ मां ५ पुरुषोत्तमं ६ जानाति ७ स ८ सर्व वित् ९ सर्व भावेन १० मां ११ भजति १२ + १९ + उ० + जो आत्मा से अभिन्न परमात्मा कोही पुरुषोत्तम जानताहै उसका माहात्म्य कहते हैं + अ० + हे अर्जुन १ जो २ मूलाज्ञान रहित विद्वान् ३ इस प्रकार ४ कि मैं क्षर अक्षर दोनों से अन्य नित्य मुक्त शुद्ध सच्चिदानन्द हूं + मुझ ५ पुरुषोत्तम को ६ जानता है ७ सो ८ सर्वज्ञ विद्वान् ९ सर्व भाव करके १० मुझको ११ भजता है १२ तात्पर्य जिसको आत्म ज्ञान हुआ वह सदा भजनही करता रहता है + १९ +

**इतिगुह्यतमंशास्त्र मिदमुक्तंमयानघ। एतद्बुद्ध्वाबुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्चभारत + २० +**

अनघ १ मया २ इदं ३ गुह्यतमं ४ शास्त्रं ५ उक्तं ६ इति ७ भारत ८ एतत् ९ बुध्वा १० बुद्धिमान् ११ कृतकृत्यः १२ च १३ स्यात् १४ + २० + उ० + इस अध्याय में समस्त शास्त्र वेदोंका सिद्धान्त श्रीनारायण ने निरूपण करदिया जो इस अध्याय के अर्थ को जानगया वह कृत कृत्य हुआ उसको कुछ कर्तव्य नहीं रहा और जिस का मन पाप पुण्य में खटकता है आत्मा को असंग अकर्त्ता नहीं समझा उस ने इस अध्याय के अर्थ को भी नहीं समझा क्योंकि श्री महाराज स्पष्ट कहते हैं कि इस अध्याय के अर्थ को जान कर कृतकृत्य होजाताहै + अ० + हे अर्जुन १ मैंने २ यह ३ गुप्त तम ४ शास्त्र ५ कहा ६ इति इस शब्द का यह तात्पर्यार्थ है कि समस्त गीता शास्त्र गुप्त तमहै और गीताही को शास्त्र कहतेहैं परन्तु इस जगह शास्त्र शब्दका तात्पर्य इसी अध्याय में है ७ हे अर्जुन ८ इस को ९ अर्थात् इसी अध्यायके अर्थको + जान कर १० ब्रह्म ज्ञानी ११ और कृत कृत्य १२ । १३ हो जाता है १४ + फिर उस को कुछ कर्तव्य नहीं वह कर्म बन्धन से मुक्त हुआ + २० +

इतिश्री भगवद्गीता सूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन सम्वादे पुरुषोत्तम योगो नामपंचदशोध्यायः +१५+

इतिश्री आनन्दगिरिविरचितायां परमानन्द प्रकाशिकायां टीकायां पंचदशोध्यायः + १५ +

## अथ षोड़श अध्याय का प्रारम्भ हुआ ॥

**श्रीभगवानुवाच + अभयंसत्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः। दानंदमश्चयज्ञश्चस्वाध्यायस्तपआर्जवं+१+**

अभयं १ सत्वसंशुद्धिः २ ज्ञान योग व्यव स्थितिः ३ दानं ४ दमः ५ च ६ यज्ञः ७ च ८ स्वाध्यायः ९ तपः १० आर्जवं ११ + १ उ० + दैवी सम्पत् के २६ लक्षण कहते हैं ढाईश्लोकों में + अ० + भयन होना १ अन्तःकरण में राग द्वेषादि का न होना २ ज्ञान योग में स्थित

रहना ३ दान करना सतोगुणी कि जो सत्रहवें अध्याय में कहेंगे ४ और इन्द्रियों को दमन करना ५। ६ और यज्ञ करना सतो गुणी इसका लक्षण भी सत्रहवें अध्याय में कहेंगे ७। ८ वेदशास्त्रों का पढ़ना पाठ करना ६ तप दो प्रकार का है एक सदा नित्या नित्य पदार्थों का बिचार करना दूसरा चान्द्रायणादि व्रत करना १० सीधा पन ११ + १ +

**अहिंसासत्यमक्रोधस्त्यागःशान्तिरपैशुनं। दयाभूतेष्वलोलुत्वंमार्दवंह्रीरचापलम् + २ +**

अहिंसा १ सत्यं २ अक्रोधः ३ त्यागः ४ शान्तिः ५ अपैशुनम् ६ भूतेषु ७ दया ८ अलोलुत्वं ६ मार्दवं १० ह्रीः ११ अचापलं १२ + २ + अ० + मनबाणी शरीर करके किसी को दुःख नहीं देना १ सत्य बोलना २ क्रोध न करना ३ त्याग समस्त पदार्थों का ४ अन्तःकरण का उप शम निरोध ५ पीछे किसी का अवगुण नहीं कहना ६ यथार्थ पाप का कहने वाला बराबर का पापी होता है और जो बढ़ाकर कहे तो दूना पापी होता है + प्राणियों में ७ दया ८ नीचों के सामने दीनता न करनी ६ कोमलता १० लज्जा रखनी खोटे कामों में ११ चपल न होना १२ + २ +

**तेजःक्षमाधृतिःशौचमद्रोहोनातिमानिता। भवंति सम्पदंदैवीमभिजातस्यभारत + ३ +**

तेजः १ क्षमा २ धृतिः ३ शौचं ४ अद्रोहः ५ अति मानिता ६। न ७ भारत ८ दैवी ६ संपदं १० अभिजातस्य ११ भवन्ति १२ + ३ + अ० + प्रागल्भ्यता अर्थात् दृष्टि मात्र से दूसरा दब जाय बालक स्त्री मूर्खादि सहसा हंसी चोहल न कर बैठें जैसे राजा की दृष्टि रहती है ऐसेही पुरुषों को तेजस्वी कहते हैं १ सहना २ धीर्य ३ पवित्र रहना ४ बैर नहीं करना ५ अतिमानी ६ नहीं होना ७ हे अर्जुन ८ दैवी ६ सम्पद के १० जो संमुख + जन्मा है ११ तिस में ये लक्षण + होते हैं १२ कि जो पीछे ढाई श्लोकों में कहे तात्पर्य देवतों का पद जिसको प्राप्त होता है उस को ये लक्षण होते हैं जिस में ए लक्षण स्वाभाविक न हों उसको यत्न करना चाहिये + ३ +

**दम्भोदर्पोऽभिमानश्चक्रोधः पारुष्यमेवच। अज्ञानंचाभिजातस्यपार्थसम्पदमासुरीम् + ४ +**

दंभ: १ दर्प: २ अभिमान: ३ च ४ क्रोध: ५ पारुष्यं ६ एव ७ च ८ अज्ञानं ९ च १० पार्थ ११ आसुरीम् १२ संपदं १३ अभिजातस्य १४ + ४ उ०+इस मंत्र में तो असुरों के लक्षण संक्षेप करके कहते हैं अभी आगे फिर बिस्तार सहित कहेंगे + भा० + जो अपने में कोई तनकसा भी गुण हो तो उस को एक भाग का अनेक भाग बनाकर बारंबार लोगोंके सामने अनेक युक्तियों के साथ प्रकट करना १ धन बिद्याजाति वर्णाश्रमादि का मन में घमंड रहना २ और महात्मा साधु हरि भक्तों के सामने नम्र न होना ३। ४ द्वेष बैर करना ५ और कठोरता ६। ७। ८ अर्थात् आप तो छिप छिप मेवा मिसरी खावे घरके लोगों को गुड़ भी नहीं साधु हरि भक्तों को देखकर दुष्टों का हृदय भस्म होजाय और बाणी से दुर्वाक्य कहने लगे ऐसा कठोर + और मूला ज्ञान ९। १० हे अर्जुन ११ आसुरी सम्पत् को १२। १३ जो प्राप्त होगा आसुर पदके साम्हने सुख करके जो + उत्पन्न हुआ है १४ इस में ऐसे ऐसे लक्षण होते हैं कि दंभादि जो इस मंत्र में कहे ऐसे प्राणी पदको प्राप्त होंगे + ४ +

**दैवीसम्पद्विमोक्षायनिबन्धायासुरीमता। माशुचः सम्पदंदैवीमभिजातोसिपांडव + ५ +**

दैवी सम्पद १ विमोक्षाय २ आसुरी ३ निबंधाय ४ मता ५ पांडव ६ माशुच: ७ दैवीं ८ संपदं ९ अभिजात: १० असि ११ + ५ + उ०+ दैवीसम्पद आसुरी सम्पदका फल कहते हैं + भा० + दैवी सम्पद १ मोक्षकेलिये २ आसुरी ३ निबंधनकेलिये ४ मानी ५ हे महात्मा महापुरुषों ने + हे अर्जुन ६ तू मत शोचकर ७ दैवीसम्पत् के संमुख ८। ९ जन्मा १० हेतू ११ दैवी सम्पत् के लक्षणों की ओर तेरी वृत्ति है देवतों के पद को तू प्राप्त होगा तात्पर्य ज्ञान द्वारामोक्ष होगा दैवी सम्पत् के लक्षण जिनमें हैं उनकाही ज्ञान में अधिकार है असुरों का नहीं +५+

**द्वौभूतसर्गौलोकेस्मिन्दैवआसुरएवच। दैवोविस्तरशः प्रोक्तआसुरंपार्थमेशृणु + ६**

अस्मिन् १ लोके २ भूत सर्गौ ३ द्वौ ४ दैव ५ आसुरं ६ एव ७ च ८ पार्थ ९ दैव: १० विस्तरश: ११ प्रोक्त: १२ आसुरं १३ मे १४ शृणु १५ + ६ + भा० इस जगत् में १। २ भूतों की सृष्टि ३ दो प्रकार की ४ है + एक + दैव ५ दैव सम्बंधिनी + दूसरी + आसुर ६। ७। ८ असुर

सम्बन्धिनी हे अर्जुन ६ देव १०अर्थात् देवतों का लक्षण तो + विस्तार पूर्वक ११ मैंने +कहा १२असुरों का लक्षण १३ मुझसे १४ विस्तार पूर्वक अब+सुन१५ असुर स्वभावको त्यागना चाहिये इत्यभि प्राय: + ६ +

**प्रवृत्तिंचनिवृत्तिंचजनानविदुरासुराः। नशौचंनापिचाचारोनसत्यंतेषुविद्यते + ७ +**

प्रवृतिं १ च २ निवृतिं ३ च ४ असुरा: ५ जना: ६ न ७ विदु: ८ तेषु ९ न १० शौचं ११ न १२ अपि १३ च १४ आचार: १५ न १६ सत्यं १७ विद्यते १८ + ७ + प्र०+ प्रवृत्ति को १। २ और निवृत्ति को ३। ४ असुर जन ५। ६ नहीं ७ जानते हैं ८ तिन में ९ न १० शौच ११ और न आचार १२।१३।१४।१५ न १६ सत्य१७होताहै १८ कोई प्रवृत्ति ऐसीहोती है कि उसका फल निवृत्ति है और कोई निवृत्ति ऐसी होतीहै कि उसका फल प्रवृत्ति है यह समझ असुरों को नहीं और वेदोक्त आचार तो पृथक् रहा दुष्ट स्नान तकनहीं करते विना हाथ पैर धोये भोजन करने लगते हैं कोई कोईयह कहते हैं कि विना झूठ व्यवहार चलता ही नहीं जैसे झूठन खाने में उनको ग्लानि नहीं ऐसे झूंठ बोलना भी एक व्यवहार समझ रक्खा है सत्य सम धर्म नहीं असत्य सम अधर्म नहीं इति सिद्धान्त: + ७ +

**असत्यमप्रतिष्ठन्तेजगदाहुरनीश्वरं। अपरस्परसंभूतंकिमन्यत्कामहेतुकम + ८ +**

ते १ जगत् २ अनीश्वरं ३ आहु: ४ असत्यं ५ अप्रतिष्ठं ६ अपरस्पर संभूतं ७ काम हेतुकं ८ अन्यत् ९ किम् १० + ८ + प्र०+ वे असुर १ जगत् को २ अनीश्वर ३ कहते हैं ४ अर्थात् कर्मों के फलका देनेवाला कोई भी नहीं सब + झूठ ५ है जैसे आप झूठे हैं ऐसेही जगत् को झूठा समझते हैं कि जगत् को कुछ व्यवस्था नहीं ऐसेही गोल माल चला आता है वेद पुराणादि धर्म की+प्रतिष्ठा नहीं ६ समझते वेदादि को बड़ा नहीं समझते यह जानते हैं जैसे विद्या मनुष्यों को बनाई हुई है वेद भी किसी मनुष्य के बनाये हुये हैं धर्म के उपदेश को बहकाना समझते हैं इस प्रकार जगत् को अप्रतिष्ठ अव्यवस्थित कहते हैं असत्यं अप्रतिष्ठं ये दोनों जगत् के विशेषण हैं जो कोई उन्हों से बूझे कि क्यों जो यह जगत् कैसे उत्पन्नहुआ है इसका क्या हेतुहै तो उत्तर

यह देते हैं कि अजी + परस्पर स्त्री पुरुषों के संबंध से हुआ है ७ कामदेव इसका हेतु है ८ अन्य ६ क्या १० हेतु होता + ८ +

**एतांदृष्टिमवष्टभ्यनष्टात्मानोल्पबुद्धयः । प्रभवंत्युग्रकर्माणःक्षयायजगतोहिताः + ९ +**

नष्टात्मानः १ अल्प बुद्धयः २ उग्र कर्माणः ३ अहिताः ४ एतां ५ दृष्टिं ६ अवष्टभ्य ७ जगतः ८ क्षयाय ९ प्रभवंति १० + ९ + अ० + मलिन चित्त वाले १ मन्द मति २ हिंसात्मक कर्म वाले ३ वैरी ४ धर्म के + इस दृष्टि को ५ । ६ आश्रय करके ७ जगत् को भ्रष्ट करने के लिये ९ हुये हैं १० + टी० + जगतः अहिताः अर्थात् जगत् के वैरी हैं यह भी अर्थ हो सक्ता है दुष्ट लोग साधु हरि भक्तों के वैरी होते हैं साधु जगत् के रक्षक हैं जब कि उनसे वैर किया तो सब जगत् से उनका वैर हुआ + जो लौकिक व्यवहार है सोई सत्य है यह दृष्टि रखते हैं + ९ +

**काममाश्रित्यदुःपूरंदम्भमानमदान्विताः । मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्त्तन्तेऽशुचिव्रताः + १० +**

दम्भमान मदान्विताः १ दुःपूरं २ कामं ३ आश्रित्य ४ अशुचिव्रताः ५ मोहात् ६ असद्ग्रहान् ७ गृहीत्वा ८ प्रवर्तन्ते ९ + १० अ० + दम्भ मान मद करके युक्त १ जिसका पूरणहोना कठिन ऐसी २ कामना को ३ आश्रय करके ४ अपवित्र आचार है जिनका ५ बेहूदे पनसे दुराग्रह को ७ अंगीकार करके ८ निन्दित मार्ग में + वर्तते हैं ९ तात्पर्य यह मंत्र जप कर अमुक भूत प्रेत को सिद्ध करेंगे फिर उससे यहकाम लेंगे इसप्रकार बेहूदीबातें सुनसुन सीखसीखकि जिन बातोंमें सिवायदुःख विक्षेप के कभी कुछ अन्य सुखादिफल नहीं दम्भादि करके अन्धे होरहे हैं किसी की सुनते भी नहीं जो अंगीकार कर लिया उसमें कितनी ही निन्दा क्षति हो त्यागना नहीं और यही आशा रखनी कि यह कर्तव्य हमारा हमको अवश्य सुख देगा + १० +

**चिन्तामपरिमेयांचप्रलयांतामुपाश्रिताः । कामोपभोगपरमाएतावदितिनिश्चिताः + ११ +**

अपरिमेयां १ च २ प्रलयांतां ३ चिन्तां ४ उपाश्रिताः ५ कामोप भोग

परमाः ६ एतावत् ७ इति ८ निश्चिताः ९ + ११ + अ० + वेग्रमाण १ और २ मरण है अन्त जिसका ३ ऐसी + चिन्ता का ४ आश्रय किये हुये ५ अर्थात् सदा ऐसी चिन्ता में लगेहुये कि जो मरनेसे तो समाप्तिहो जीते जी सदा बनी रहे + काम और भोगों से श्रेष्ठ कुछ अन्य नहीं + यह ८ निश्चय है जिनका ९ ऐसे लोग अन्याय करके पदार्थों को संचय करते हैं अगले मंत्र के साथ इस मंत्र का अन्वय है + ११ +

**आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः। ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसंचयान् + १२ +**

आशापाशशतैः १ बद्धाः २ कामक्रोधपरायणाः ३ अन्यायेन ४ अर्थसंचयान् ५ कामभोगार्थं ६ ईहन्ते ७ + १२ + अ० + आशाकी सैकरों फांसी करके १ बँधे हुये हैं २ अर्थात् असंख्यात आशामें फँसेहुये हैं छूट नहीं सक्ते + काम क्रोधकोही परम स्थान बनारक्खा है अर्थात् सदा काम क्रोध परायण रहते हैं ३ अनीति करके ४ द्रव्य मकान गांव इकट्ठे करते हैं ५ भोगों के लिये ६ यही सदा + चेष्टा करते रहते हैं ७ तात्पर्य पदार्थों के छीन लेनेमें तत्पर रहतेहैं जैसे बने इत्यादि अनीति करके अपने भोग के अर्थ पराया माल छीन लेना और फिर भी असंख्यात आशा में फँसे रहना सदा काम क्रोध बनई रहने ऐसे पुरुष नरकमें पड़ेंगे वहां इस श्लोक का अन्वय है + १२ +

**इदमद्यमयालब्धमिदंप्राप्स्येमनोरथम्। इदमस्तीद-मपिमेभविष्यतिपुनर्धनम् + १३ +**

अद्य १ इदं २ मया ३ लब्धम् ४ इदं ५ प्राप्स्ये ६ मनोरथं ७ इदं ८ मे ९ अस्ति १० इदं ११ अपि १२ धनं १३ पुनः १४ भविष्यति १५ + १३ + दुष्ट जनोंका मनोराज्य चार मंत्रोंमें कहते हैं + अ० + अब १ यह २ तो + मुझको ३प्राप्तहै ४ और + यह ५ प्राप्तकरूंगा ६ यह मेरा + मनोरथ ७ है + यह ८ धन तो + मेरा ९ है १० और + यह ११ भी १२ धन १३ फिर १४ अवश्यही + प्राप्तहोगा १५ ऐसे पुरुष अपवित्र नरकमें पड़ेंगे सोलहवें मंत्रमें श्री महाराज यह कहेंगे + १३ +

**असौमयाहतःशत्रुर्हनिष्येचापरानपि। ईश्वरोहम-हंभोगीसिद्धोहंबलवान्सुखी + १४ +**

मया १ असौ २ शत्रुः ३ हतः ४ च ५ अपरान् ६ अपि ७ हनिष्ये ८

अहं ९ ईश्वरः १० अहं ११ भोगी १२ अहं १३ सिद्धः १४ बलवान् १५ सुखी १६ + १४ + अ० + मैंने १ वह २ शत्रु ३ तो + मारा ४ । ५ और अमुक अमुक + औरों को ६ भी ७ मारूंगा ८ मैं ९ समर्थ १० मैं ११ भोगी १२ मैं १३ सिद्ध १४ बल वाला १५ सुखी १६ हूं + टी० + लोगों के मारने में समर्थ हूं १० अच्छा खाता पीता हूं १२ कृत कृत्य हूं मैंने बड़े बड़े काम किये हैं कि वे मेरे ही करने के योग्य थे अन्यसे नहींहो-सक्ते + १४ +

**आढ्योऽभिजनवानस्मिकोन्योऽस्तिसदृशोमया ।य-क्ष्येदास्यामिमोदिष्यइत्यज्ञानविमोहिताः + १५ +**

आढ्यः १ अभिजनवान् २ अस्मि ३ मया ४ सदृशः ५ कः ६ अन्यः ७ अस्ति ८ यक्ष्ये ९ दास्यामि १० मोदिष्ये ११ इति १२ अज्ञानविमो-हिताः १३ + १५ + अ० + धनवान् साहूकार १ कुलीन २ हूं मैं ३ मेरी ४ बराबर ५ कौन ६ अन्यदूसरा ७ है ८ अब मैं एक + यज्ञकरूंगा ९ उसमें बहुत कुछ + दूंगा १० आनन्द को प्राप्त हूंगा ११ इस प्रकार १२ अज्ञान करके मोहित हुये १३ झूंठे वृथा मनोराज्य करतेहुये अवस्था व्यतीत करते हैं धन जाति के अभिमान में जले ही जाते हैं यज्ञकर-ने का जो मनोराज्य है उस में उनका यह तात्पर्य है कि थोड़ा बहुत रजोगुणी तमोगुणी अन्न ऐसे वैसे ब्राह्मणों को जिमा कर औरोंकी बुराई किया करेंगे और दो चार पैसे देने कोही बड़ा दान समझते हैं जब कभी किसी फ़कीर को वा खुशामदी लोगों को या नट वेश्यादिको अपनी बड़ाई के लिये कुछ देते हैं तो अपने को बड़ा दाता समझते हैं बहुत प्रसन्न होते हैं + १५ +

**अनेकचित्तविभ्रान्तामोहजालसमावृताः ।प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्तिनरकेऽशुचौ + १६ +**

अनेक चित्तविभ्रांताः १ मोह जाल समावृताः २ काम भोगेषु ३ प्रसक्ताः ४ अशुचौ ५ नरके ६ पतंति ७ + उ० + ऐसे लोगों की जो गति होती है उस को सुन + अ० + अनेक मनोराज्यमें चित्त विभ्रांत हो रहा है जिन का १ मोह के जाल में फँसे हुये २ काम भोगों में ३ आसक्त ४ हे जोसे + अपवित्र ५ नरकों में ६ पड़ेंगे ७ + १६ +

**आत्मसम्भाविताःस्तब्धा धनमानमदान्विताः। यजन्तेनामयज्ञैस्तेदम्भेनाविधिपूर्वकम् + १७ +**

आत्मसंभाविताः १ स्तब्धाः २ धनमानमदान्विताः ३ ते ४ दंभेन ५ अविधि पूर्वकं ६ नामयज्ञैः ७ यजंते ८ + १७+अ० अपनेआप ही आप को बड़ा समझ कर अपने को बड़ा प्रतिष्ठित जानते हैं १ अनम्र २ किसी महात्मा के सामने नर्म नहीं होते + धन करके जो उन का मान होता है उस मान के मदमें भरे रहते हैं ३ अर्थात् धनकी चाह वाले मूर्ख धनी लोगों का भी मान किया करते हैं + जो ऐसे उन्मत्त हैं + वे ४ दंभ करके ५ शास्त्र बिधि रहित ६ नाम यज्ञ कर के ७ यजन करते हैं ८ अर्थात् वास्तव वह यज्ञ नहीं कि जो वे करते हैं उसका यज्ञ नाम बना रक्खा है या नाम के वास्ते यज्ञ करते हैं बिधि रहित इत्यभिप्रायः + १७ +

**अहंकारंबलंदर्पं कामंक्रोधंचसंश्रिताः।मामात्मपरदेहेषुप्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः + १८ +**

अहंकारं १ बलं २ दर्पं ३ कामं ४ क्रोधं ५ च ६ संश्रिताः ७ आत्मपरदेहेषु ८ मां ९ प्रद्विषंतः १० अभ्यसूयकाः ११ + १८ + अ० + अहंकार १ बल २ दर्प ३ काम ४ क्रोध को ५। ६ आश्रय किये हुये ७ अपने देहके बिषय और दूसरे देह के बिषय ८ जो मैं सच्चिदानन्द बिराजमान हूं + मुझ से ९ द्वेष करते हैं १० मेरी + निन्दा करते हैं ११ अपनी देह या पराई देहमें जो आत्मा को पूर्ण ब्रह्म नहीं समझते वे भगवत् के निन्दक हैं और जो दूसरे से द्वेष करते हैं वे भी प्रभु के द्वेषी हैं और जो मनुष्य देह पाकर आत्मज्ञान के लिये यत्न नहीं करते वेभी प्रभु के बैरी हैं इत्यभिप्रायः + १८ +

**तानहंद्विषतःक्रूरान्संसारेषुनराधमान्। क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेवयोनिषु + १९ +**

संसारेषु १ नराधमान् २ द्विषतः ३ क्रूरान् ४ तान् ५ अहं ६ अशुभान् ७ आसुरीषु ८ योनिषु ९ एव १० अजस्रं ११ क्षिपामि १२ + १९ + उ०+ऐसे दुष्टों को जो मैं दंडदेता हूं सो सुन दो मंत्रोंमें +अ०+संसार में १ आदमियों के बिषय जो अधम नर २ साधु महापुरुषों से बैर रखते हैं ३ निर्दयी दयारहित ४ तिनको ५ मैं ६ अशुभ लोकों में ७ अर्थात्

रौरवादि नरक में + और + आसुरी योनियों में ८ । ९ निश्चय १० सदा के लिये ११ फेंकूंगा १२ अर्थात् पहिले तो बड़े बड़े नरकों में डालूंगा ऐसे दुष्टोंको कि जो मेरे भक्त साधु जनों को दुर्वाक्य बोलते हैं और जिन के लक्षण ऊपर कहे उनको सदा इसी चक्र में रक्खूंगा + १९ +

**आसुरीयोनिमापन्ना मूढाजन्मनिजन्मनि । मामप्राप्यैवकौंतेयततोयांत्यधमांगतिम् + २० +**

मूढा: १ आसुरीं २ योनिं ३ आपन्ना: ४ जन्मनि ५ जन्मनि ६ मां ७ अप्राप्य ८ एव ९ कौन्तेय १० तत: ११ अधमां १२ गतिं १३ यांति १४ + २० + उ० + ऐसे दुष्टों को मेरी प्राप्ति का मार्ग भी नहीं मिलेगा क्योंकि मेरी प्राप्ति का मार्ग मेरे भक्त साधु जानते हैं वे ऐसे दुष्टोंको न दर्शनदेते हैं न संभाषण करते हैं और जो लालच से ऐसे दुष्टों को उपदेश करते हैं वे साधु भक्त नहीं वर्ण संकर कमीन कोई नीच जाति हैं + भा० + मूढ़ १ आसुरी २ योनियों को ३ प्राप्तहुये ४ जन्म जन्म में ५ । ६ मुक्ति को ७ नहीं प्राप्त होकर ८ निश्चय ९ हे अर्जुन १० पीछे ११ अधम १२ गति को १३ प्राप्त होंगे १४ तात्पर्य हे अर्जुन किसी जन्म किसी युग में भी मेरे भक्तों की कृपा बिना मेरी प्राप्ति नहीं होती जो मुझको बुरा कहते हैं वह तो मैं सहजाता हूं परंतु जो मेरे भक्त साधु का अपराध करे वह मुझसे नहीं सहाजाता उसको मैं तुरन्त कठिन से कठिन तीव्र दण्ड देता हूं हिरण्य कशिपु ने बहुत मुझसे द्वेष किया परंतु मुझ को क्षोभ न हुआ जिस काल में प्रह्लाद मेरे भक्त के साथ द्वेषकिया एक पल न सहसका जो कुछ कि मैं ने किया सो भारतादि में प्रसिद्ध है इत्यभिप्राय: + २० +

**त्रिविधंनरकस्येदंद्वारंनाशनमात्मनः । कामःक्रोधस्तथालोभस्तस्मादेतत्त्रयंत्यजेत् + २१ +**

काम: १ क्रोध: २ तथा ३ लोभ: ४ इदं ५ त्रिविधं ६ नरकस्य ७ द्वारं ८ आत्मन: ९ नाशनं १० तस्मात् ११ एतत् १२ त्रयं १३ त्यजेत् १४ + २१ + उ० + जितने दोष आसुरी सम्पत्वाले पुरुषों के कहे उनमें काम क्रोध लोभ ये तीन सबके कारण हैं प्रथम उनको त्यागना अवश्य चाहिये + भा० + काम १ क्रोध २ और ३ लोभ ४ यह ५ तीन प्रकार का ६ नरक का ७ द्वार ८ आत्माको ९ नरक में और पशुआदिदुष्ट

योनियों में प्राप्त करनेवाला १० है + तिसकारण से ११ इन १२ तीन को १३ त्यागना १४ चाहिये तात्पर्य कामादि तीनोंही नरकके द्वारहैं इन में से जो एक भी होगा तो वह नरक को प्राप्त करैगा और जिस में ये तीनों होंगे वह तो जीते जी नरक में हैं मरकर उसको नरक प्राप्त होता इसमें क्या कहना है + २१ +

**एतैर्विमुक्तःकौंतेयतमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः। आचरत्या-त्मनःश्रेयस्ततोयांतिपरांगतिम् + २२ +**

कौन्तेय १ एतैः २ त्रिभिः ३ तमोद्वारैः ४ विमुक्तः ५ नरः ६ आत्मनः ७ श्रेयः ८ आचरति ९ ततः १० परां ११ गतिं १२ यांति १३ + २२ + उ० + कामादि के त्यागका फल कहते हैं + अ० + हे अर्जुन १ इन तीन नरक के द्वारों से २ । ३ । ४ छूटाहुआ ५ जो+पुरुष ६ आत्मा का ७ भला ८ करता है ९ अर्थात् कामादि को प्रथम त्याग कर पीछे आत्मा की प्राप्ति के लिये शुभाचरण करता है + तब १० परमगति को ११ । १२ प्राप्त होता है १३ जैसे औषध जब गुण करे है कि प्रथम खटाई मिठाई आदि पदार्थों का त्याग करदे तैसे ही शुभ कर्म जप पाठादि जब फल देंगे प्रथम कामादिका त्याग करैगा कामादि के त्यागने से अन्तर्मुख वृत्ति होती है बिना अन्तर्मुख हुये बिचार नहीं हो सक्ता बिना बिचार ज्ञान नहीं होता बिना ज्ञान मुक्तिनहीं इसवास्ते कामा-दिका त्यागना अवश्य है + २२ +

**यःशास्त्रविधिमुत्सृज्यवर्ततेकामकारतः। नससिद्धि मवाप्नोतिनसुखंनपरांगतिम् + २३ +**

यः १ शास्त्र विधिं २ उत्सृज्य ३ कामकारतः ४ वर्तते ५ सः ६ न ७ सिद्धिं ८ अवाप्नोति ९ न १० सुखं ११ न १२ परां १३ गतिं १४ + २३ + उ० + कामादि का त्याग जो लोगों से नहीं हो सक्ता उसमें हेतु यह है कि शास्त्र बिधि को छोड़ इच्छा पूर्बक वर्तते हैं + अ० + जो १ शास्त्र विधिको २ उल्लंघन करके ३ इच्छा पूर्बक ४ वर्तता है ५ सो ६ न ७ सिद्धि को ८ प्राप्त होता है ९ न १० सुखको ११ न १२ परंगति को १३ । १४ प्राप्त होता है अर्थात् उस को न इस लोकमें सुख होता है न सद्गति मुक्ति होती है और इस लोक में किसी प्रकार की उसको सिद्धि भी नहीं होती इस जगह उन लोगोंका प्रसंगहै कि जिनकाशास्त्रमेंअधि-

कार है जान बूझ शास्त्र की विधि का उल्लंघन करते हैं ज्ञानीजन कृत-कृत्य हैं उनका यहां प्रसंग नहीं और अनजानलोग या अन्य द्वीप निवासी या शास्त्रसे अन्य मत वाले शास्त्र विधि को उल्लंघन करके अपनेमत के अनुसार या स्वाभाविक इच्छा पूर्वक वर्तते हैं उनका भी यहां प्रसंग नहीं क्योंकि उनके लिये अर्जुन सत्रहवें अध्याय में प्रश्न करेंगे और श्री महाराज स्पष्ट उत्तर देंगे + २३ +

**तस्माच्छास्त्रम्प्रमाणंते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।**
**ज्ञात्वाशास्त्रविधानोक्तंकर्मकर्तुमिहार्हसि + २४ +**

तस्मात् १ कार्याकार्यव्यवस्थितौ २ ते ३ शास्त्रं ४ प्रमाणं ५ शास्त्र विधानोक्तं ६ कर्म ७ ज्ञात्वा ८ इह ९ कर्तुं १० अर्हसि ११ + २४ + अ० + तिस कारण से १ यह करना चाहिये और यह न करना चाहिये इस व्यवस्था में २ मुझको ३ शास्त्र ४ प्रमाण ५ है + शास्त्र में जो करना कहा है उस कर्म को ६। ७ जान करके ८ इस कर्मकी अधिकार भूमि में ९ अर्थात् इस मनुष्य देह से मर्त्य लोक में + कर्म + करने को १० योग्य है तू ११ तात्पर्य जो शास्त्र ने कहा सोईकर और जिस कर्म को बुरा कहा सो न कर यहां शास्त्रही प्रमाण है बुद्धि का काम नहीं इत्यभिप्राय: + २४ +

इति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन संवादेदेवासुरसम्पतिवर्णनयोगो नाम
षोड़शोऽध्याय: + १६ +



इति श्री आनन्दगिरि विरचितायां परमानन्द प्रकाशिकायां
टीकायां षोड़शोऽध्याय: + १६ +

## अथसत्रहवें अध्याय काप्रारम्भ हुआ॥

दु० + सोलहवें अध्याय में श्री भगवान् ने कहा जो शास्त्रकी विधि को उल्लंघन करके वर्तते हैं अपनी इच्छा पूर्वक उन को न इस लोक में सुख होता है न उनकी सद्गति होती है इसमें यह शंका प्रतीत होती है कम समझों को कि जिन्हों ने श्री महाराज का तात्पर्य नहीं समझा वह शंका यह है कि असंख्यात अन्यद्वीप के लोग और इसी द्वीपमें भी

वेदोक्त मतसे अन्य मतवाले और ग्रामनिवासी बहुत अनजान लोक शास्त्र की विधिको उल्लंघन करके वर्ततेहैं उनको इनमें तो जैसा सुख अपने कर्मों के अनुसार वेदोक्त कर्म करने वालों को होता है वैसा ही उनको अपने अपने कर्मोंके अनुसार प्रत्यक्ष दीखताहै और परलोकमें सबकीदुर्गति होय यह बात अयुक्तहै क्योंकि सबप्रजा एक ईश्वरकीहै वहईश्वर ऐसा नहीं अन्यद्वीप निवासियोंकी सबकी दुर्गतिकरे यह शंका एक नाममात्र संक्षेप करके लिखी गई है उत्तर भी इसका संक्षेप करके लिखा जाता है प्रथम यह कि श्री भगवान्‌ने चौदहवें अध्यायमें स्पष्ट कहाहै कि सतोगुणी ऊपर के लोकों में प्राप्त होतेहैं रजोगुणी मध्यमें स्थिर रहते हैं तमोगुणी अधो गति को प्राप्त होते हैं येतीनों गुणयत्न करनेसेभी वर्तते हैं और स्वाभाविक भी वर्तते हैं सब लोग अपने गुणोंकी तारतम्यता से सद्गति दुर्गति को प्राप्त होंगे वे किसी जाति वा किसी मतमें वा अनजान हों शास्त्रोक्त जो कर्म करते हैं जिनकी शास्त्रमें श्रद्धा है जो वे यत्न करें तो रजोगुणी तमोगुणी अपने स्वभाव को पलट सक्तेहैं और जिनकी वेद शास्त्र में श्रद्धा नहीं वे नहीं पलट सक्ते अपने स्वभाव के अनुसार रहेंगे वैदिक अवैदिक मतमें इतना अन्तर है दूसरे एक सूक्ष्म बात यहहै कि जो वेदोक्त कर्मधर्म ईश्वराराधनादि सब अध्यारोपहैं और जो शास्त्र की विधि को उल्लंघन करके अपने मतके अनुसार कर्म करते हैं वह अध्यारोप हैं विद्वानों की दृष्टि में अध्यारोप कल्पित है बिना ज्ञान सब सम हैं ज्ञान में सतोगुणी का अधिकार है सो सतोगुण स्वाभाविक हो वा प्रयत्न करके किसीने सम्पादन किया हो ज्ञानी सतोगुण को देख कर ज्ञान का उपदेश बे सन्देह करेंगे कि जिस से परमगति होती है सोलहवें अध्याय में श्री महाराज ने उन लोगों के वास्तेऐसे कहा है उनको न इस लोक में सुख होगा न परलोक में कि जिन का शास्त्र में अधिकार है और वे शास्त्रार्थ को जान बूझ शास्त्र की विधि को उल्लंघन करते हैं क्योंकि उनको कुछ भी आशा न रहा ज्ञान निष्ठों का यहां प्रसंग नहीं वे विधि निषेधसे मुक्त हैं +

**अर्जुनउवाच। येशास्त्रविधिमुत्सृज्य यजंतेश्रद्धयान्विताः। तेषांनिष्ठातुकाकृष्णसत्त्वमाहोरजस्तमः + १ +**

कृष्ण १ ये २ श्रद्धया ३ अन्विताः ४ शास्त्रविधिं ५ उत्सृज्य ६ यजन्ते ७ तेषां ८ निष्ठा ९ तु १० का ११ सत्त्वं १२ रजः १३ अहो १४ तमः

१५ + १ उ० + यह पूर्वोक्त शंका करके अर्जुन प्रश्न करता है + हे भगवन् १ बहुत लोग + २ श्रद्धा करके ३ युक्त ४ शास्त्र की विधि को ५ उल्लंघन कर ६ अपनी बुद्धिके अनुसार व वेद शास्त्र रहित अपने गुरु मत के अनुसार ईश्वराराधनादि कर्म + करते हैं ७ तिनकी ८ निष्ठा ६। १० क्या है ११ अर्थात् उनका तात्पर्य सिद्धान्त क्या है उनकी निष्ठा + सतोगुणी १२ व + रजोगुणी १३ व १४ तमोगुणी १५ तात्पर्य जो लोग शास्त्र के अर्थ को जान कर शास्त्रोक्त अनुष्ठान नहीं करते प्रत्युत अनादर करते हैं उनका और ज्ञानियों का तो यहां प्रसंग नहीं अनजान पुरुष जो देखा देखी वा नास्तिकादि जो शास्त्रकी विधि को उल्लंघन कर वर्तते हैं उनकी क्या निष्ठा समझनी चाहिये उनकी क्या गति होती है यह अर्जुन के प्रश्न का तात्पर्य है + १ +

**श्रीभगवानुवाच। त्रिविधाभवतिश्रद्धादेहिनांसा स्वभावजा। सात्त्विकीराजसीचैवतामसीचेतितांशृणु+ २+**

देहिनां १ स्वभावजा २ त्रिविधा ३ श्रद्धा ४ भवति ५ सा ६ सात्विकी ७ राजसी ८ च ६ एव १० तामसी ११ च १२ इति १३ तां १४ शृणु १५ + २ +अ० + जीवन के १ स्वभाविक २ अर्थात् अपने आप पूर्व संस्कार से ही + तीन प्रकार की ३ श्रद्धा ४ है ५ सो ६ श्रद्धा + सतोगुणी ७ और रजोगुणी ८। ६। १० और तमोगुणी ११। १२। १३ तिनको १४ सुन १५ कहते हैं अगले श्लोकमें और कार्य भेद से और भी आगे बहुत श्लोकों में कहेंगे तात्पर्य शास्त्र में जिनकी श्रद्धा है यथाशक्ति शास्त्रोक्त जो अनुष्ठान करते हैं उनकी श्रद्धा निष्ठा केवल सतोगुणी समझनी क्योंकि शास्त्र में यह सामर्थ्य है कि स्वभाव को पलट सक्ताहै जिनकी शास्त्रमें श्रद्धा नहीं उनकी श्रद्धा तीन प्रकार की समझनी जो पूर्व संस्कार से वे रजोगुणी तमोगुणी हैं तो बिना वेदोक्त कर्म किये उनका स्वभाव नहीं पलटेगा + २ +

**सत्वानुरूपासर्वस्यश्रद्धाभवतिभारत। श्रद्धामयोयं पुरुषोयोयच्छ्रद्धःसएवसः + ३ +**

भारत १ सर्वस्य २ सत्वानुरूपा ३ श्रद्धा ४ भवति ५ अयं ६ पुरुषः ७ श्रद्धामयः ८ यः ६ यच्छ्रद्धः १० सः ११ एव १२ सः १३ + ३ + उ०+ तीन प्रकार की श्रद्धा ऐसे जानो जैसे अब कहते हैं + हे अर्जुन १

सब के २ अन्तःकरण के अनुसार ३ श्रद्धा ४ है ५ यह ६ जीव ७ श्रद्धावान् है ८ जो ९ जिसकी जैसी श्रद्धा है अर्थात् जो जिस श्रद्धा करके युक्त है १० सो ११ निश्चय १२ सोई १३ है तात्पर्य जिसकी श्रद्धा जैसे कर्मों में सतोगुणी आदि में है उसको वैसाही समझना चाहिये आगे आहारादि का भेद सत्वादि कहेंगे उस निष्ठा और अनुमान से जान लेना कि यह पुरुष ऐसा है और इसकी यह निष्ठा है यह इसकीगति होगी ऐसा कोई पुरुष नहीं कि जिसकी किसी जगह श्रद्धा नहो इसवास्ते सब को श्री भगवान् ने श्रद्धावान् कहा जिनके अन्तःकरण शुद्ध हैं उनकी सतोगुणी श्रद्धा है जिनके मलिन अन्तःकरण हैं उनको तमोगुणी रजोगुणी श्रद्धा है पुरुष के संबंध से श्रद्धा को भी तीन प्रकार का कहा मोक्ष में जो हेतु है और साधन चतुष्टय में जिसकी संख्या है वह केवल सतोगुणी वृत्ति श्रद्धा है परमार्थ में उसीको श्रद्धा कहते हैं यह व्यवहार में तीन प्रकार की श्रद्धा है कि जो कहो ज्ञान में अधिकार सतोगुणी श्रद्धावान् का है + ३ +

**यजन्तेसात्त्विकादेवान्यक्षरक्षांसिराजसाः। प्रेतान्भूतगणांश्चान्येयजन्तेतामसाजनाः + ४ +**

सात्त्विकाः १ देवान् २ यजन्ति ३ राजसाः ४ यक्षरक्षांसि ५ तामसाः ६ जनाः ७ प्रेतान् ८ भूतगणान् ९ च १० अन्य ११ यजन्ते १२ + ४ + उ० + सत्वादि गुणों को कार्य भेद करके दिखाते हैं + सतोगुणी १ देवतोंको २ यजन करते हैं ३ रजोगुणी ४ यक्षराक्षसों को ५ पूजते हैं + तमोगुणी ६ जन ७ प्रेत ८ और भूतगणों को ९। १०। ११ पूजते हैं १२ + ४ +

**अशास्त्रविहितंघोरंतप्यन्तेयेतपोजनाः। दंभाऽहंकारसंयुक्ताः कामरागबलाऽन्विताः + ५ +**

ये १ जनाः २ अशास्त्रविहितं ३ घोरं ४ तपः ५ तप्यन्ते ६ दंभाहंकारसंयुक्ताः ७ कामरागबलान्विताः ८ + ५ + उ० + जो १ जन २ शास्त्र विधि रहित ३ मैला ४ तप ५ करते हैं ६ उसमें कारण यह है कि + दंभ अहंकार करके युक्त हैं ७ फिर कैसे हैं कि + कामरागबल करके युक्त हैं ८ तात्पर्य कोई कोई ऐसे तप करते हैं कि वह कर्मस्वरूप से ही मैला है अर्थात् उस कर्मके करने में ग्लानि आती है और उस

के करने में शास्त्रकी विधि भी कोई नहीं उस कर्म का नाम तप रख कर वृथा तपते हैं हेतु इस में यह है प्रथम यह कि लोगों को दिखाने के लिये दूसरे यह कि जैसा हम कर्म करते हैं किसी से कब हो सक्ता है तीसरे किसी कामना के लिये चौथे रजोगुण के वश से उस कर्म में प्रीति होगई है त्याग नहीं सक्ता वा पुत्र मित्रादि की प्रीति से मित्रादि के रिझाने के लिये करता है पांचवें बलवाला है जो चाहता है सोकरता है + ५ +

**कर्षयन्तःशरीरस्थंभूतग्राममचेतसः। मांचैवाऽन्तःशरीरस्थंतान्विद्ध्यासुरनिश्चयान् + ६ +**

अचेतसः १ शरीरस्थं २ भूतग्रामं ३ कर्षयन्तः ४ च ५ अन्तः ६ शरीरस्थं ७ मां ८ एव ९ तान् १० आसुरनिश्चयान् ११ विद्धि १२ + ६ + अ० + अज्ञानी १ शरीर में जो स्थित २ इन्द्रियादि ३ तिनको + पीड़ा देते हैं ४ और ५ भीतर ६ शरीर के स्थित ७ जोमैंहूं + मुझको ८ भी ९ दुःख देतेहैं + तिनको १० असुरवत् ११ जान १२ तात्पर्य जो विना विचार इन्द्रियादि को दुःख देते हैं और पूर्णब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्द आत्मा को दास और अस्थि चर्मादि का पुतला समझते हैं वेलोग असुरवत् हैं जो असुरों का निश्चय है सो उन के प्रसिद्ध है तपका फल शान्ति है शान्ति के लिये उपवासादि तप करते हैं जिस कर्म करनेसे उलटा तमोगुण रजोगुण बढ़े और उस कर्म का नाम तप कहा जावे यह कभी कपटी पुरुषों का काम है + ६ +

**आहारस्त्वपिसर्वस्यत्रिविधोभवतिप्रियः। यज्ञस्तपस्तथादानंतेषांभेदमिमंशृणु + ७ +**

आहारः १ तु २ अपि ३ सर्वस्य ४ त्रिविधः ५ प्रियः ६ भवति ७ तथा ८ यज्ञः ९ तपः १० दानं ११ तेषां १२ भेदं १३ इमं १४ शृणु १५ + ७ + टी० + सतोगुण बढ़ाने के लिये और रजोगुण तमोगुण कर्म करने के लिये आहार तप यज्ञ दानको सत्वादि तीन तीन भेद करके कहते हैं और इस भेद से सतो गुणी आदि पुरुषों की परीक्षा भी हो सक्तीहै अर्थात् जो सतोगुणी आहार यज्ञ तप दान करता है उस को सतोगुणी जानना चाहिये इसी प्रकार तमोगुण रजोगुण में कल्पना करनी + अ० + आहार १ भी २। ३ सबको ४ तीन प्रकारका ५ प्रिय ६ है ७ और ८ यज्ञ ९

तप १० दान ११ भी सब को तीन प्रकार का प्रिय है हे अर्जुन + तिन का १२ भेद १३ यह १४ है कि जो अगले श्लोकों में कहूंगा + सुन १५ जो तुझ में रजोगुणी तमोगुणी वृत्ति हों उन को त्याग सतोगुणी वृत्ति बढ़ाव कि जिससे तेरी ज्ञाननिष्ठा दृढ़ हो + ७ +

**आयुःसत्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्द्धनाः । रस्याः स्निग्धाःस्थिराहृद्या आहाराःसात्विकप्रियाः + ८ +**

आयुःसत्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्द्धनाः १ रस्याः २ स्निग्धाः ३ स्थिराः ४ हृद्याः ५ आहाराः ६ सात्विकप्रियाः ७ + ८ + उ० + सतोगुणी आहार का लक्षण और फलभी एक ही श्लोकमें कहतेहैं + अ० + अवस्था चित्त की स्थिरता व वीर्य व उत्साह बल आरोग्यता उपशमात्मक सुख प्रभु में प्रीति इन छः पदार्थ का बढ़ाने वाला १ रस वाला २ कोमल तर ३ खाने के पीछे शरीर में उसका रस चिर काल ठहरे ४ जिसके देखने से ही मन प्रसन्न हो जाय ५ यह चार प्रकार का + आहार ६ सतोगुणी को प्रिय लगता है ७ जैसे मोहन भोग तस्मै इत्यादि + ८ +

**कट्वम्ललवणात्युष्णातीक्ष्णरूक्षविदाहिनः । आहारा राजसस्येष्टादुःखशोकामयप्रदाः + ९ +**

कट्वम्ललवणात्युष्णातीक्ष्णरूक्षविदाहिनः १ आहाराः २ राजसस्य ३ इष्टाः ४ दुःखशोकामयप्रदाः ५ + ६ + उ० + रजोगुणी आहार को कहते हैं + अ० + अति चर्फरा खट्टा नमका गरम तीक्ष्ण रूखा दाह करने वाला १ आहार २ जो गुणी को ३ प्रिय है ४ दुःखशोक रोगदेने वाला है अति शब्द सबके साथ लगाना अति खट्टा अति नमका अति-गरम अति तीक्ष्ण अति रूखा अति दाह करने वाला भोजन रजोगुणी को प्रिय है ५ + ६ +

**यातयामंगतरसंपूतिपर्युषितंचयत । उच्छिष्टमपि चामेध्यंभोजनंतामसप्रियम + १० +**

यातयामं १ गतरसं २ पूति ३ पर्युषितं ४ च ५ यत् ६ उच्छिष्टं ७ च ८ अमेध्यं ९ अपि १० भोजनं ११ तामसप्रियम् १२ + १० + उ० + तमोगुणी आहार का लक्षण कहते हैं + अ० + जिसको बनेहुये एक प्रहर बीत जावे १ ठंडा हो जावे सूख जावे २ दुर्गन्ध जिस में आवे

३ बासी ४ और ५ जो ६ जूठा ७ और ८ अभक्ष्य ९ भी १० भोजन ११ तमो गुणी को प्रिय है १२ + १० +

**अफलाकांक्षिभिर्यज्ञोविधिदृष्टोयइज्यते । यष्टव्य-मेवेतिमनःसमाधायससात्त्विकः + ११ +**

अफलाकांक्षिभिः १ यः २ यज्ञः ३ विधिदृष्टः ४ इज्यते ५ यष्टव्यं ६ एव ७ इति ८ मनः ९ समाधाय १० सः ११ सात्त्विकः १२ + ११ + उ० + सतोगुणी यज्ञ कहते हैं + फल की इच्छा रहित पुरुष १ जो २ यज्ञ ३ विधि देख कर ४ करते हैं ५ यज्ञ का करना अवश्य है ६ निश्चय ७ इस प्रकार ८ मनको ९ समाधान करके १० करते हैं + सो ११ यज्ञ + सतोगुणी १२ + ११ +

**अभिसंधायतुफलंदम्भार्थमपिचैवयत । इज्यतेभरत-श्रेष्ठतंयज्ञंविद्धिराजसम् + १२ +**

भरतश्रेष्ठ १ फलं २ अभिसंधाय ३ तु ४ दम्भार्थं ५ अपि ६ च ७ एव ८ यत् ९ इज्यते १० तं ११ यज्ञम् १२ राजसं १३ विद्धि १४ + १२ + उ० + रजोगुणी यज्ञ कहते हैं + हे अर्जुन १ फलको २ अन्तःकरण में धारण करके ३ व ४ लोगों के दिखाने के लिये ५ भी ६ । ७ । ८ जो ९ यज्ञ + किया जाता है १० तिस ११ यज्ञको १२ रजोगुणी १३ जानत१४ + १२ +

**विधिहीनमसृष्टान्नंमंत्रहीनमदक्षिणम् । श्रद्धाविर-हितंयज्ञंतामसंपरिचक्षते + १३ +**

विधिहीनं १ असृष्टान्नं २ मंत्रहीनं ३ अदक्षिणं ४ श्रद्धाविरहितं ५ यज्ञं ६ तामसं ७ परिचक्षते ८ + १३ + उ० + तमोगुणी यज्ञ कहते हैं + अ० + वेदविधिरहित १ सुन्दर अन्न नहींहै जिसमें २ मंत्ररहित ३ दक्षिणारहित ४ श्रद्धा रहित ५ यज्ञ ६ तमोगुणी ७ कहाहै ८ तात्पर्य देखादेखी लोकोंकी लौकिक एकरीति समझकर प्रसिद्धि के लिये कुपात्रों को न्योत कर ठंढा बासी अन्न कच्चा पक्का जिमा देना न उसके सामने खड़ा होना न उनके चरणों का स्पर्श करना न सुन्दर प्रकार बोलना न पीछे दक्षिणा देनी ऐसा यज्ञ तमोगुणी कहलाता है ऐसे निर्भागों के घर जो साधु ब्राह्मण भोजन करने जाते हैं वे इससेभी निर्भाग्य हैं क्योंकि सेरभर आटेके लिये मूर्खोंको दाता लालाजी कहना पड़ता है + १३ +

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनंशौचमार्जवम्। ब्रह्मचर्यम-
हिंसाचशारीरंतपउच्यते + १४ +

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं १ शौचं २ आर्जवं ३ ब्रह्मचर्यं ४ अहिंसा ५ च ६ शारीरं ७ तपः ८ उच्यते ९ + १४ + उ० + शरीर का तपकहते हैं + अ० + देवता ब्राह्मण गुरु प्राज्ञ कोई जाति विद्वान् भक्त ज्ञानी का पूजन करना १ पावन रहना २ नम्ररहना ३ ब्रह्मचर्य रहना ४ ब्रह्मचर्य का लक्षण आनन्दामृत वर्षिणी के पांचवें अध्याय में लिखाहै आठ प्रकार का मैथुन है उससे वर्जित रहना ५ हिंसा न करना ६ इसको + शरीर का ७ तप ८ कहते हैं ९ तात्पर्य देश मकान वस्त्र पात्र सब पवित्रहों जब शरीर की पवित्रता है और अन्न जल वीर्य कुलादि भी पवित्र हों + १४ +

अनुद्वेगकरंवाक्यं सत्यंप्रियहितंचयत्। स्वाध्याया-
भ्यसनंचैववाङ्मयंतपउच्यते + १५ +

यत् १ वाक्यं २ अनुद्वेगकरं ३ सत्यं ४ प्रियं ५ च ६ हितं ७ च ८ स्वाध्यायाभ्यसनं ९ एवं १० वाङ्मयं ११ तपः १२ उच्यते १३ + १५ + उ० + वाणी का तप यहहै + अ० + जो १ वाक्य २ अन्य को + उद्वेग न करे ३ सत्य ४ प्रिय ५ और ६ हित करनेवाला ७ और ८ वेद शास्त्र पढ़ने का अभ्यास ९ भी १० वाणी का ११ तप १२ कहा है १३ तात्पर्य जो बात सच्ची शास्त्र विहित और हित करने वाली है परंतु जो कहते समय किसी को प्रिय न लगे ऐसी बात के कहने में भी दोष है और ऐसी बात के कहने में भी दोष है कि श्रवण समय तो प्रिय प्रतीत हो परन्तु वेद विरुद्ध हो अनुद्वेगकरं सत्यं प्रियं हितं और चकार से मितं अर्थात् बहुत अर्थ को संक्षेप करके थोड़े अक्षरों में कहना यह पांचवां विशेषण वाक्य का चकार से जानना चाहिये + १५ +

मनःप्रसादःसौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः। भावसं-
शुद्धिरित्येतत्तपोमानसउच्यते + १६ +

मनःप्रसादः १ सौम्यत्वम् २ मौनं ३ आत्मविनिग्रहः ४ भावसंशुद्धिः ५ इति ६ एतत् ७ तपः ८ मानसं ९ उच्यते १० + १६ + उ० + मन का तप कहते हैं + अ० + मन प्रसन्न रहना १ सतोगुणी वृत्तिमें मन प्रसन्न रहता है तमोगुणी रजोगुणी वृत्ति में विक्षेप और मोह को प्राप्त

होता है + सरलता सीधापन २ मनन करना ३ विषयों से मनकोरोकना ४ व्यवहार में छल नहीं करना बाहर भीतर सम वृत्ति रखनी ५ यह ६ । ७ तप ८ मनका ९ कहा है १० + १६ +

**श्रद्धयापरयातप्तं तपस्तत्त्रिविधंनरैः । अफलाकांक्षिभिर्युक्तैःसात्त्विकंपरिचक्षते + १७ +**

अफलाकांक्षिभिः १ युक्तैः २ नरैः ३ परया ४ श्रद्धया ५ तत् ६ त्रिविधं ७ तपः ८ तप्तं ९ सात्विकं १० परि चक्षते ११ + १७ + उ० + शरीर मन बाणी करके तीन प्रकार का तप है यह भेद तो पीछे कहा अब तप को सात्विकादि भेद करके तीन प्रकार का कहते हैं इस मंत्र में सतोगुणी तप का लक्षण है + श्र० + फल की इच्छा रहित १ एकाग्रचित्त वाले २ पुरुषों ने ३ परं ४ श्रद्धा करके ५ सो ६ तीन प्रकारका ७ तप ८ अर्थात् मन बाणी शरीर करके जो तप+किया है ९ सो तप + सतोगुणी १० कहा है ११ तात्पर्य परं श्रद्धा के साथ चितको भलेप्रकार एकाग्र करके फल की इच्छा रहित पुरुषों ने शरीर मन बाणी करके जो तप कियाहै सो सतोगुणी है + १७ +

**सत्कारमानपूजार्थंतपोदम्भेनचैवयत् । क्रियतेतदिहप्रोक्तंराजसंचलमध्रुवम् + १८ +**

यत् १ दंभेन २ सत्कार मानपूजार्थं ३ च ४ एव ५ तपः ६ क्रियते ७ तत् ८ इह ९ राजसं १० प्रोक्तं ११ चलं १२ अध्रुवं १३ + १८ + श्र० + जो १ दंभ करके २ अथवा ३ । ४ सत्कार मान पूजा के लिये ५ तप ६ किया है ७ सो ८ शास्त्र में ९ रजोगुणी १० कहाहै ११ क्योंकि + अचलनहीं १२ अनित्य है १३ तात्पर्य अच्छे कर्म अपनी स्तुति कराने के वास्तेलोगों के दिखाने के वास्ते अपने सन्मान पूजा के लिये धनादिकी प्राप्ति के लिये स्वर्गादि पुत्र मित्रादि की प्राप्ति के लिये जो करते हैं वे पुरुष भी रजोगुणी हैं ऐसे कर्मोंका फल तुच्छ अनित्य होगा + १८ +

**मूढग्राहेणात्मनोयत्पीडयाक्रियतेतपः । परस्योत्सादनार्थंवातत्तामसमुदाहृतम् + १९ +**

यत् १ तपः २ मूढग्राहेण ३ आत्मनः ४ पीडया ५ क्रियते ६ परस्य ७ उत्सादनार्थं ८ वा ९ तत् १० तामसं ११ उदाहृतं १२ + १९ + श्र० + जो १ तप २ दुराग्रह करके ३ अविवेकपूर्वक + इन्द्रियों को ४ दुःख

देकर ९ किया है ६ दूसरे के ७ नायार्थ ८ पा ९ सो १० तमोगुणी ११ कहा है १२ + १९ +

**दातव्यमितियद्दानंदीयतेऽनुपकारिणे। देशेकाले चपात्रेचतद्दानंसात्विकंस्मृतम् + २० +**

दातव्यं १ इति २ यत् ३ दानं ४ दीयते ५ देशे ६ काले ७ च ८ पात्रे ९ च १० अनुपकारिणे ११ तत् १२ दानं १३ सात्विकं १४ स्मृतं १५ + २० + उ० + दान तीन प्रकार का है प्रथम सतोगुणी दान कहते हैं + भा० + देना चाहिये १ अवश्य हमको दान + इस प्रकार २ मन में बिचार कर + जो ३ दान ४ दिया है ५ सुन्दर + देश में ६ और उत्तम काल में ७। ८ सुपात्र अनुपकारी को ९। १०। ११ सो १२ दान १३ सात्विकी १४ कहा है १५ + टी० + गंगादि तीर्थों में सुन्दर जगह लिपी पुती हुई में जिस जगह बैठे हुये बुरी वस्तु न दीखे दुर्गन्ध न आवे ६ पूर्णमासी व्यतीपातादि में भूख के समय वा किसी सज्जन का काम अटक रहा है उस समय भोजन कराना मध्याह्न से पहिले ७ जिस को देना उस से उपकार किसी प्रकार का नचाहना जहां तक बन सके अनजान पुरुष को छिपा करदेना ११ विद्वान् साधु ब्राह्मण दान पात्र हैं वा भूखा कोई जाति हो ९ इसदान की व्यवस्था में एक पोथी जिसका नाम राज दूतों की कथा है नागरी अक्षरों में मुंशी शिव नारायण कायस्थ माथुर कि जो आगरेमें श्रीमान् ऐश्वर्यवान् सद्गुणों की खानि ब्रह्मविद्या और अंगरेजी फ़ारसी छापाकी तसवीर अद्भुत बनानी इत्यादि लौकिक बिद्या में नागर प्रभुता पाकर अमानी दयावान् परोपकारी प्रसिद्ध हैं उन की बनाई हुई है और प्राकृत उर्दू बिद्या में भी उन्होंनेही बनाई है जिसका नाम कासदान शाही है उस पोथी के पढ़ने सुनने विचारने से दान की व्यवस्था भले प्रकार प्रतीत होती है तात्पर्य जो नौकरी खेती बनज करते हैं वा जिनके पास किसी प्रकार द्रव्य है उनको अवश्य दान करना चाहिये क्योंकि पन्द्रह अनर्थ द्रव्य में रहते हैं जो वह वेदोक्त दान न किया गया तो पन्द्रह अनर्थों में जो पाप होताहै सो द्रव्यग्राही को लगेगा दान करने से उस पाप की निवृत्ति होती है और दानकर ने के लिये द्रव्य संचय करना यह शास्त्र की आज्ञा नहीं उस का यह फल है कि जैसेकीच में हाथ साना फिर धोया इस समय में दान देना तो पृथक् रहा जो किसी को देता देखते सुनते हैं तो जहां तक उनसेयत्न

हो सक्ता है इसीतर्क्क करके उसको भी वर्जित करते हैं मुमुक्षु को चाहि-ये कि ऐसे दुष्टों का मुख भी न देखे यह विचार करले कि दिन महीने वर्ष की कमाई में से इतना भाग पुण्य करूंगा उस द्रव्य को वा अन्नव-स्त्रादि मोल लेकर दिन दिन प्रति वा वर्ष महीने में जहां तक होसके शुभ सुपात्र को देदिया करे जो प्रवृत्ति में रहकर दान नहीं करते केवल माला तिलक घंटा घड़ियाल से मुक्ति चाहते हैं परमेश्वर उन पर कभी प्रसन्न न होंगे + २० +

**यत्तुप्रत्युपकारार्थंफलमुद्दिश्यवापुनः। दीयतेचपरि-क्लिष्टं तद्राजसमुदाहृतम् + २१ +**

यत् १ तु २ प्रत्युपकारार्थं ३ पुनः ४ वा ५ फलं ६ उद्दिश्य ७ परि क्लिष्टं ८ च ९ दीयते १० तत् ११ राजसं १२ उदाहृतम् १३ + २१ + उ० + रजोगुणी दान कहते हैं अ० + जो १ प्रत्युपकार के लिये २। ३ वा ४।५ फलको ६ उद्देश करके ७ वा+क्लेश कलह सहित ८।९ दिया-है १० सो ११ रजोगुणी १२ कहा है १३ टी०+ दान पात्र से यह इच्छा रखनी कि किसी समय किसी प्रकार यह हमारी सहाय करेगा ३ यह चिंतवन करके कि सन्त महन्तों की टहल करने से धन पुत्रादि मिलते हैं ६। ७ क्या करें जो हमारे आज पिता का श्राद्ध है एक ब्राह्मण तो अवश्य ही न्योतना चाहिये इस प्रकार लौकिक लज्जा से दान करके मन में दुःख मानना तात्पर्य महात्मा जो यह कहते हैं कि दाता कलियुग में नहीं हैं यदि हैं भी तो सेवा करा कर देते हैं तदुक्त दातारोपि न सन्ति सन्ति यदि चेत्सेवानुकूलाः कलौतात्पर्य उनकायह है कि कलियुग में सतोगुणी दाता कम हैं विशेष रजोगुणी हैं बहुत लोग दाता प्रसिद्ध हैं उनके दान की यह व्यवस्था है कि एक पुरुष राजा का नौकर है प्रजा पर उसका हुकम है किसी की कथा कहला देनी वा शुभ काम के नाम से चन्दा करके कुछ उनको देदेना कुछ आप रखलेना कोई कोई सुपात्रों को भी देते हैं अपने सुयश के लिये कोई साधु को अपने मकान पर ठहराय रखते हैं मकान की रक्षा के लिये कोई साधु ब्राह्मण की टहल करते हैं दूसरे साधु ब्राह्मण को दुःख देने के लिये कोई लौकिक लज्जा से देखा देखी करते हैं कोई इस प्रकार दान करते हैं कि ब्राह्मण को नौकर रख लेते हैं वह उसके ब्राह्मणको जिमा देता है और उसके ब्राह्मण को वह जिमा देता है और खिचरी बस्त्रादि भी

इसी प्रकार बांटते हैं कोई ऐसे दानी प्रसिद्ध हैं कि छल दंभ पाखण्ड करके किसी का द्रव्य दबा लिया उस दोष के दबने के लिये दानकरते हैं उनकी वह व्यवस्था है॥ अहरन कीचोरीकरैं करैं सुई का दान। ऊंचे चढ़के देखन लागे कितनी दूर विमान॥ ऐसे दाता सद्गति की कदाचित् आशा न रक्खें + २१ +

**अदेशकालेयद्दानमपात्रेभ्यश्चदीयते । असत्कृत-मवज्ञातंतत्तामसमुदाहृतम् + २२ +**

यत् १ दानं २ अपात्रेभ्यः ३ अदेशकाले ४ च ५ दीयते ६ असत्-कृतं ७ अवज्ञातं ८ तत् ६ तामसं १० उदाहृतम् ११ + २२ + अ० + जो १ दान २ कुपात्रों को ३ और निषिद्ध देशकाल में ४। ५ दिया है ६ अथवा सुपात्रों को भी जो + असत्कारपूर्वक ७ अवज्ञा पूर्वक ८ दिया है + सो ६ तमोगुणी १० कहा है ११+टी० +जिस समय महात्मादैव-योग से अपने घर आवे हाथ जोड़ कर अभ्युत्थान न करे और ऐसा न बोले कि आपने बड़ी कृपा करी ७ किसी आदमी से कह देना कि फ़क़ीर आया है रोटी आटा देकर टालो ८ चौके से बाहर बैठाकर अपवित्र जगह में न्योतकर मध्याह्न से पीछे जिमाना ४ नट बाजीगर बेश्यादि को देना इत्यादि तमोगुणी दान हैं ३ तात्पर्य्य द्रव्य बड़े बड़े दुःख पापों से प्राप्त होता है बन्ध का भी यही साधन है मोक्ष का भी साधन है इसको पाकर मोक्ष सम्पादन करे एक दिन इस से अवश्य वियोग होगा या तो द्रव्य पहिले छोड़ देगा या द्रव्य रक्खा ही रहेगा आप चले जावेंगे श्री भगवान् ने यह तीन प्रकार का भेद इसी वास्ते कहा है कि दान सतोगुणी करना चाहिये क्योंकि उससे परंपरा करके मोक्ष की प्राप्ति होती है जो यह कहतेहैं कि अजी वेदोक्त साधु ब्राह्मण कहां हैं यह उनकी समझ और श्रद्धा पुरुषार्थ यत्नमान बड़ाई में दोष है कि जो उसे सुपात्र नहीं मिलते महात्मा जो यह कहते हैं कि पृथिवी पर असंख्यात अमोल रत्न प्रसिद्ध हैं जिनमें किसी की ममता नहीं निर्भागों को नहीं दीखते उनका तात्पर्य्य सुपात्रों सेही है घरसे बाहर पैर नहीं रखते कोवे कैसी दृष्टि है महात्मा के भजनपाठ पूजा विवेक विद्यादि सहस्राण उनमें जोगुणहैं उनको तो देखते नहीं कहते हैं कि अजी महात्मा किसी के घर क्यों जाते हैं उस निर्भाग से बूझना चाहिये कि जो घर आवें वेतो असाधु हैं और तू मलमूत्र के पात्र स्त्री

पुत्रादि को छोड़कर बाहर पैर न रक्खे तो फिर सुपात्र कैसे मिलैं निर्भागों के घर महात्मा नहीं जाते यह बात सत्य है + २२ +

**ओंतत्सदितिनिर्देशोब्रह्मणस्त्रिविधःस्मृतः । ब्राह्मणास्तेनवेदाश्चयज्ञाश्चविहिताःपुरा + २३ +**

ओम् १ तत् २ सत् ३ इति ४ ब्रह्मणः ५ निर्देशः ६ त्रिविधः ७ स्मृतः ८ तेन ९ ब्राह्मणाः १० वेदाः ११ च १२ यज्ञाः १३ च १४ पुरा १५ विहिताः १६ + २३ + ३० + जो मुमुक्षु यह चाहते हैं कि प्रभुकी आज्ञा से यज्ञ दानादि कर्म वेदोक्त सतोगुणी करैं परंतु देशकाल वस्तु के सम्बन्ध से वा किसी अन्य प्रतिबन्ध से सतोगुणी वेदोक्त अनुष्ठान नहीं हो सक्ता इस हेतु से दुःख पाते हैं उनके लिये परं करुणाकर ब्रजचन्द उत्तम उपाय परं पवित्र गुप्त बतलाते हैं इस मंत्र में + ३० + ओम् १ तत् २ सत् ३ यह ४ ब्रह्म का ५ उच्चारण ६ तीनबेर ७ कहा है ८ ब्रह्मविदों ने + तिस ने ९ अर्थात् ओम् तत् सत्इस मंत्रनेहीं + ब्राह्मण १० और वेद ११।१२ और यज्ञ १३।१४ पहले १५ उत्तम पवित्र किये हैं १६ तात्पर्य स्नान दान भोजन पाठादि करने से पहले और पीछे यह मंत्र ओम् तत्सत् तीन बार कहे अंगहीन क्रियाभी सतोगुणी होके वेदोक्त फल देगी यह विधि अनादि है महात्मा जानते हैं इसके प्रताप से सदा निर्दोष रहते हैं श्री भगवान् अगले मंत्रों में ओम् तत् सत् इनतीनों नामों का माहात्म्य पृथक् पृथक् कहेंगे यह एक एक नाम परमात्माका पवित्र करके ब्रह्म को प्राप्त करता है जो तीनों नाम उच्चारण करेगा उस के पवित्र होने में क्या सन्देह है इससे यही कैमुतिक न्याय है वेदोंमें यह मंत्र आदिसार है जिस मंत्र में इन तीनों नामों में से एक भी नाम होगा उस मंत्र का फल शीघ्र अवश्य होगा मंत्रों में इनही नामों की शक्ति है पोथियों के और मंत्रोंके आदि में इन तीनों नामों में से एक दो नाम अवश्य होताहै जब कि वेदब्राह्मणादि की बड़ाई इस मंत्रके प्रताप से है फिर विना इस मंत्र के जपे कोई क्रिया कब श्रेष्ठ हो सक्ती है इस हेतु से क्रिया के आदि अन्त में इस मंत्र को तीन बेर अवश्य उच्चारण करना योग्य है + २३ +

**तस्मादोमित्युदाहृत्ययज्ञदानतपःक्रियाः । प्रवर्तन्ते विधानोक्ताःसततंब्रह्मवादिनाम् + २४ +**

तस्मात् १ ओम् २ इति ३ उदाहृत्य ४ यज्ञदान तपःक्रियाः ५ वि-
धानोक्ताः ६ सततं ७ ब्रह्मवादिनां ८ प्रवर्तन्ते ९ + २४ + उ० + अब
पृथक् पृथक् नाम का माहात्म्य कहते हैं इस मंत्र में ओम् इस मंत्रका
माहात्म्य है जब कि वेदादि इन नामों से ही श्रेष्ठ पवित्र कियेगयेहैं+
भा० + तिस हेतु से १ ओम् २ यह नाम ३ उच्चारण करके ४ यज्ञदान
तप रूप क्रिया ५ वेदोक्त ६ सदा ७ ब्रह्मनिष्ठों के ८ होती हैं ९ + २४ +

**तदित्यनभिसंधायफलंयज्ञतपःक्रियाः। दानक्रिया-**
**श्चविविधाःक्रियन्तेमोक्षकांक्षिभिः + २५ +**

मोक्षकांक्षिभिः १ तत् २ इति ३ फलं ४ अनभिसंधाय ५ यज्ञतपः
क्रियाः ६ दानक्रियाः ७ च ८ विविधाः ९ क्रियन्ते १० + २५ + भा० +
मोक्ष की इच्छा वाले १ तत् २ यह ३ नाम उच्चारण करके और + फल
का ४ नहीं चिंतवन करके ५ यज्ञ तप रूप क्रिया ६ और दानक्रिया ७।८
नानाप्रकारकी ९ करते हैं १० महा वाक्य में यही नाम है + २५ +

**सद्भावेसाधुभावेचसदित्येतत्प्रयुज्यते। प्रशस्तेक-**
**र्मणितथासच्छब्दःपार्थयुज्यते + २६ +**

पार्थ १ सद्भावे २ साधुभावे ३ च ४ सत् ५ इति ६ एतत् ७ प्रयुज्यते ८
तथा ९ प्रशस्ते १० कर्मणि ११ सत् १२ शब्दः १३ युज्यते १४ + २६ +
भा० + हे अर्जुन १ सद्भाव में २ और साधुभाव में ३।४ सत् ५ यह ६।७
नाम + कहा जाता है ८ और ९ बिवाहादि + मंगल कर्म में १०।११
सत् १२ शब्द १३ कहा जाता है १४ + २६ +

**यज्ञेतपसिदानेचस्थितिःसदितिचोच्यते। कर्मचैव**
**तदर्थीयंसदित्येवाभिधीयते + २७ +**

यज्ञे १ तपसि २ दाने ३ च ४ स्थितिः ५ सत् ६ इति ७ च ८ उच्यते ९
तदर्थीयं १० कर्म ११ च १२ एव १३ सत् १४ इति १५ एव १६ अभिधी-
ते १७ + २७ + उ० + इसमंत्र में भी सत् नामका माहात्म्यहै + भा० +
यज्ञ में १ तप में २ और दान में ३।४ जो + स्थितिः ५ उसको + सत्
६ ऐसा ७।८ कहते हैं ९ ईश्वरार्थ १० कर्म को ११ भी १२।१३ सत्ही
१४।१५।१६ कहते हैं १७ तात्पर्य जो पुरुष यज्ञादि परमेश्वरार्थ सदा करते
रहते हैं उनको सत् फल प्राप्त होगा जो कभी नाश न हो + २७ +

**अश्रद्धयाहुतंदत्तंतपस्तप्तंकृतंचयत् । असदित्युच्यते पार्थनचतत्प्रेत्यनोइह + २८ +**

अश्रद्धया १ हुतं २ दत्तं ३ तप: ४ तप्तं ५ च ६ यत् ७ कृतं ८ इति ९ असद् १० उच्यते ११ पार्थ १२ तत् १३ प्रेत्य १४ न च १५ नो १६ इह १७ + २८ + उ० + श्रद्धापूर्वक जो दानादिनहींकरते केवललौकिकलज्जासेकरते हैं उनको फल न यहां होताहै न मर कर परलोक में यह अर्थ इस मंत्र में प्रकट करते हुये अश्रद्धावान् की निन्दा करते हैं + अ० + अश्रद्धा से १ हवन किया २ दिया ३ तप ४ किया ५ और जो किया ६।७।८ यह ९ सब + असत् १० कहाहै ११ अर्थात् निष्फल निन्दित झूठा वृथा है + हे अर्जुन १२ सो १३ न मर कर के १४ । १५ न १६ इस लोक में १७ मोक्ष मार्ग में सब कर्मों से प्रथम श्रद्धा है जिसकोवेद ब्राह्मणादि में श्रद्धा है सो मोक्ष होगा इत्यभिप्राय: + २८ +

इति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन संवादेश्रद्धात्रयविभागोनामसप्तदशोऽध्याय: + १७ +

इति श्री आनन्द गिरि विरचितायां परमानन्द प्रकाशिकायां सप्तदशोऽध्याय: + १७ +



—*—

## अथ अठारहवें अध्यायका प्रारम्भ हुआ ॥

**अर्जुनउवाच + संन्यासस्यमहाबाहोतत्त्वमिच्छामि वेदितुम् । त्यागस्यचहृषीकेशपृथक्केशिनिषूदन + १ +**

महाबाहो १ हृषीकेश २ केशिनिषूदन ३ संन्यासस्य ४ च ५ त्यागस्य ६ तत्त्वं ७ पृथक् ८ वेदितुं ९ इच्छामि १० + १ + अ० + उ० + इस अध्याय में समस्त गीता का सार संक्षेप है + हे महाबाहो १ हे हृषीकेश २ हे केशिनिषूदन ३ संन्यास ४ और ५ त्यागके ६ तत्त्व को ७ पृथक् ८ जानने की ९ मैं इच्छा करता हूं १० + टी० + १ । २ । ३ ये तीनों नाम श्रीकृष्णचन्द्र के हैं + तात्पर्य हे भगवन् त्याग शब्दका और

संन्यास शब्द का अर्थ मुझसे कहो दोनों पदों का अर्थ पृथक् पृथक् में जाना चाहता हूं +त्याग और संन्यास इन दोनोंपदोंका अर्थ श्रीभगवान् भले प्रकार अगले मंत्र में कहेंगे प्रसंग से चतुर्थ आश्रम संन्यास का अर्थ संक्षेप करके यहां लिखे देते हैं त्याग और संन्यासका अर्थ वास्तव एक ही है संन्यास दो प्रकारकाहै अन्तरङ्ग १ बहिरङ्ग २ और संन्यास ज्ञान-निष्ठा का अङ्ग है अन्तरङ्ग संन्यास का अर्थ तो श्री भगवान् भले प्रकार इस अध्याय में कहेंगे बहिरङ्ग संन्यास का अर्थ यहां लिखा जाता है सो बहुत प्रकार का है + कुटीचर १ क्षेत्र २ बहूदक ३ विविदिषा ४ विद्वत् ५ हंस ६ परमहंस ७ और भी बहुत भेदहैं + इनका अर्थ अङ्क के क्रमसे लिखते हैं + वाणिज्यादि व्यवहार छोड़ ग्रामसे बाहर शरीर यात्रा मात्र कुटीमेंबैठ भगवत् भजन ब्रह्म बिचार करना अपनेसम्बन्धि और औरों को सम समझना कोई घरका वा बाहर का भोजन दे जावे उसी से देह निर्बाह कर लेना यह कुटीचर संन्यासी का लक्षण है और कनिष्ठ अंग उसका यह भी है कि देह यात्रा मात्र कुछ आजीविका का यत्न करके एकान्त में निवास करना १ जैसे कुटीचरका लक्षण कहा वैसेही कुटी शब्द की जगह क्षेत्र समझ लेना चाहिये क्षेत्रमें देहयात्रा के लिये मधुकरी मांग खाने में दोष नहीं २ घरको त्यागकर विचरता रहै एक जगह न रहे ३ वेदान्त शास्त्र श्रवण करने के लिये गृहस्था-श्रम को त्यागना और त्यागके पीछे दिन रात्रि सदा श्रवण मनन निदि-ध्यासन करते रहना ४ जीवन्मुक्ति का जो आनन्द उसकेलिये गृहस्था-श्रम का त्याग करना इसी संन्यास को वे धारण करते हैं जिनको गृह-स्थाश्रम में संशय विपर्यय रहित साक्षात्कार ब्रह्मज्ञान हो जाता है ५ जिस प्रकार हंस दूध और पानी को जुदा करके दूधही पान करता है इसी प्रकार परमहंस महात्मा देहादि पदार्थों से अपने स्वरूपको पृथक् विलक्षण समझ कर सदा स्वरूपही में निष्ठ रहनी इसी को हंस संन्यास कहते हैं ६ वस्त्रादि को भी त्याग करके मौन रहना इस को परमहंस संन्यास कहतेहैं७ यह अर्थ भी संन्यास का एक नाममात्र लिखदिया है जो किसी को कुटीचरादि संन्यास करना हो तो वह उसी की विधि मन्वादि धर्मशास्त्र और उपनिषदों में से श्रवण करके संन्यास करे दण्ड धारण पूर्वक संन्यास में तो कर्मकाण्ड की विधि से ब्राह्मण शरीर को ही अधिकार है क्योंकि कर्मकाण्ड में वेदोक्त कर्म करनेवाले ब्राह्मण जाति को ही बड़ा कहते हैं और उपासक भगवद्भक्त कोही

बड़ा कहते हैं भगवद्भक्त व्यवहार में कोई जातिहो सब से बड़ा है और जो व्यवहार में भी ब्राह्मण जाति होतो क्या ही कहना है विदुर जी सूतजी गुह निषाद शबरी से आदि लेकर सहस्रशः हज़ारों कथा साक्षी हैं और ज्ञानी ब्रह्मवित् को बड़ा कहते हैं ब्राह्मण-शब्द का अर्थ यही है ब्रह्मजानाति ब्राह्मणः जो व्यवहार में ब्राह्मण जाति कहे जाते हैं उनको वैराग्य न भी हो तो भी अवस्था के चतुर्थ भाग में उनको गृहस्थाश्रम छोड़ना चाहिये नहीं तो पाप प्रायश्चित का भागीहोना पड़ेगा और जो वैराग्य हो तो वह कोई जाति हो व्यवहार में सब अवस्था में उसको संन्यास का अधिकार है यदहरेव विरज्येत् तदहरेव प्रव्रजेत् अर्थ इस श्रुति का यह है कि जिस दिन वैराग्य हो उसी दिन संन्यास करे त्याग संन्यास में सब को अधिकार है हज़ारों विरक्त महात्मा कि जो व्यवहार में ब्राह्मण जाति नहीं ब्रह्मवित् ज्ञानी दर्शनीय हैं और हज़ारों होगये विना संन्यास और विरक्त के मुक्ति न होगी परमेश्वर का अनुग्रह और पूर्व संस्कार दूसरी बात है गृहस्थाश्रम में जिसको ज्ञान हुआ यह पूर्व संस्कार और परमेश्वर की कृपा समझनी चाहिये नहीं तो निवृत्ति मार्ग की बड़ाई क्या हुई प्रवृत्ति मार्ग और निवृत्ति मार्ग दोनों बराबर हो गये साधु महात्मा विरक्तों का माहात्म्य वेद शास्त्र और अवतारोंने क्या वृथा ही कहा है तात्पर्य विरक्त अवश्य होना चाहिये विरक्त और निवृत्ति में सब को अधिकार है देश काल वस्तु का नियम प्रवृत्ति मार्ग में है निवृत्ति मार्ग में नहीं + १ +

**श्रीभगवानुवाच । काम्यानांकर्मणांन्यासंसंन्यासंकवयोविदुः । सर्वकर्मफलत्यागंप्राहुस्त्यागंविचक्षणाः + २ +**

कवयः १ काम्यानां २ कर्मणां ३ न्यासं ४ संन्यासं ५ विदुः ६ विचक्षणाः ७ सर्वकर्मफलत्यागं ८ त्यागं ९ प्राहुः १० + २ + अ० + कोई कोई ई पण्डित १ काम्य २ कर्मों के ३ न्यासको ४ संन्यास ५ जानते हैं ६ और कोई कोई + पण्डित ७ सब कर्मों के फल त्याग को ८ त्याग ९ कहते हैं १० टी० + काम्य शब्द का अर्थ कोई तो ऐसा करते हैं कि स्त्री धनादि के निमित्त जो कर्म वह त्यागना योग्य है नित्य प्रायश्चित कर्म करना चाहिये इसी का नाम संन्यास है और कोई महात्मा काम्य शब्द का अर्थ यह करते हैं कि समस्त कर्मों का त्यागना योग्य है इसका नाम

संन्यास है सकाम कर्मों के त्याग में दोनों सम्मत हैं और कुछ न करने से सकाम कर्म भी अच्छा है पुत्र स्वर्गादि की इच्छावाला यज्ञ करे ऐसा वेद में सुना जाता है परन्तु इस जगह काम्य शब्द का अर्थ यही है कि सब कर्मों के त्याग का नाम संन्यास है नहीं तो दोनों जगह कर्म की विधि रहती है जब कि एक कर्म की विधि है और वह किसीहेतु से न बना तो कर्ता को प्रायश्चित्त भी आवश्यक है और जब कि उसको पाप लगा और प्रायश्चित्त करना पड़ा फिर मुक्त कैसे होगा सदा बन्धन में रहा इस हेतु से अधिकार भेद करके इस श्लोक का तात्पर्य यह समझना चाहिये कि शुद्धान्तःकरणवाले निष्काम पुरुष सब कर्मोंके त्याग को संन्यास जानते हैं और इस भूमिका की इच्छावाले सब कर्मों के केवल फल त्याग को संन्यास जानते हैं सब कर्मों के फल का त्याग इसीका नाम जो संन्यास कहते हैं तो चतुर्थाश्रम जो संन्यास है उसकी विधि क्या वृथा ही रही तात्पर्य सब कर्मों के फलका त्यागकरना और कर्म करना इसको कोईकोई पण्डित त्याग कहते हैं और सब कर्मोंको स्वरूपसे त्यागदेना इसको पण्डित संन्यास कहते हैं जब तक अन्तःकरण शुद्ध नहो तब तक कर्म करना उसका फल त्यागदेना और जब अन्तः-करणशुद्ध हो जाय तब सब कर्मों का त्यागदेना इत्यभिप्रायः + २ +

**त्याज्यंदोषवदित्येकेकर्मप्राहुर्मनीषिणः । यज्ञदा-नतपःकर्मनत्याज्यमितिचापरे + ३ +**

एके १ मनीषिणः २ इति ३ प्राहुः ४ दोषवत् ५ कर्म ६ त्याज्यं-७ च ८ अपरे ९ इति १० यज्ञदानतपःकर्म ११ न १२ त्याज्यं १३ + ३ + + अ० + एक १ पण्डित २ यह ३ कहते हैं ४ कि + दोष वाला ५ कर्म ६ त्यागना योग्यहै ७ और ८ अपर अर्थात् कोई एक पण्डित ९ यह १० कहते हैं + कि + यज्ञदानतप कर्म ११ नहीं १२ त्यागना चाहिये १३ तात्पर्य सब कर्मों के त्याग में अन्य मत वालों का भी सम्मत है इसी बात के दृढ़ करने के लिये सांख्य शास्त्र वालों का मत दिखाया सांख्य शास्त्र वाले कहते हैं कि यज्ञादि कर्मों में हिंसा असमतादि दोष हैं इस वास्ते उनका त्यागना योग्य है और पूर्व मीमांसावाले यह कहतेहैं कि वेदकी आज्ञामें शंका करनी न चाहिये यज्ञादि कर्म करना योग्यहै जो वेदोंने कहा यदि उसमें हिंसा भी प्रतीत होती तो भी वह कर्म श्रेष्ठ है अधिकार प्रति दोनों का कहना सत्य है प्रवृत्ति मार्ग वाला

अवश्य यज्ञादि कर्म करे और निवृत्ति मार्ग वाला कर्मों में विक्षेप समझ करत्यागदे शम दमादि का अनुष्ठान करे + ३ +

**निश्चयंशृणुमेतत्रत्यागेभरतसत्तम ।त्यागोहिपुरुष-व्याघ्रत्रिविधःसंप्रकीर्त्तितः + ४ +**

भरतसत्तम १ तत्र २ त्यागे ३ निश्चयं ४ मे ५ शृणु ६ पुरुषव्याघ्र ७ हि ८ त्यागः ६ त्रिविधः १० संप्रकीर्तितः ११ + ४ + अ० + उ० + आस्तिक मार्ग वालोंमें भी जो भेद प्रतीत होताहै कि जो पिछले श्लोक में कहा इस की निवृत्ति के लिये दोनों का सिद्धान्त तात्पर्यार्थ कहते हैं + हे अर्जुन १ तिस २ त्यागके विषय ३ निश्चय ४ मेरे ५ वचनसे+ सुन ६ हे पुरुषों में श्रेष्ठ अर्जुन ७ त्याग का अर्थ जानना कठिन है + क्योंकि ८ त्याग ६ तीन प्रकार का १० कहा है ११ तात्पर्य हे अर्जुन त्याग तीन प्रकार का है इस हेतुसे त्याग का अर्थ कठिन है त्याग और सन्यास इन दोनों शब्दों का एकही अर्थ है मुझसे सुन प्रवृत्तिमार्ग और निवृत्ति मार्ग ये दोनों अनादि हैं वेदों में जहां कर्म का त्याग कहा है वह निवृत्ति विरक्त महापुरुषों के लिये कहा है और जहां कर्म का अनुष्ठान कहा है वह प्रवृत्त रागी जनोंके लिये कहाहै ऐसाऐसा तात्पर्य वेदों का सत्पुरुषों की कृपा से जाना जाताहै शास्त्रोंमें किंचिन्मात्र भेद नहीं अपनी समझ का भेद है + ४ +

**यज्ञदानतपःकर्म नत्याज्यंकार्य्यमेवतत् । यज्ञोदान तपश्चैवपावनानिमनीषिणाम् + ५ +**

यज्ञः १ च २ दानं ३ तपः ४ एव ५ मनीषिणां ६ पावनानि ७ एव ८ तत् ६ यज्ञदानतपःकर्म १० न ११ त्यात्यं १२ कार्यं १३ + ५ + अ० + उ० + तीन प्रकार का त्याग श्री भगवान् अभी आगे कहेंगे प्रथम दो श्लोकों में अपना सिद्धान्त कहते हैं + यज्ञ १ और २ दान ३ तप ४ निश्चय ५ पण्डितों को ६ पवित्र करने वाले ७ हैं इस वास्ते ८ सोई ९ यज्ञ दान तप कर्म १० नहीं ११ त्यागना योग्य है १२ करने योग्य हैं तात्पर्य यज्ञ दानादि कर्म अन्तःकरण को शुद्ध करते हैं इस वांस्तेज्ञान की प्रथम भूमिका वालोंको कर्म त्यागना न चाहिये स्पष्टार्थहै कि पवित्रको विधि अपवित्र वस्तु में होती है पवित्र वस्तु में पवित्र विधि नहीं होती जिनको संसारमें वैराग्य नहीं और भगवत् भक्त जिनको प्राप्तों

की बराबर प्यारे नहीं वे निश्चय करें कि हमारा अन्तःकरण शुद्ध नहीं विरक्तों की सेवा पूजा से हमारा अन्तःकरण शुद्ध होगा + ५ +

**एतान्यपितुकर्माणि संगंत्यक्त्वाफलानिच। कर्त्तव्यानीतिमेपार्थनिश्चितंमतमुत्तमम् + ६ +**

पार्थ १ एतानि २ कर्माणि ३ संगं ४ च ५ फलानि ६ त्यक्त्वा ७ अपि ८ तु ९ कर्त्तव्यानि १० इति ११ मे १२ निश्चितं १३ उत्तमम् १४ मतं१५ + ६ + अ० + हे अर्जुन १ ये २ तप दानादि + कर्म ३ आसक्ति ४ और ५ फलको ६ त्याग करके ७ निश्चय ८।९ करने योग्य हैं १० यह ११ मेरा १२ निश्चय १३ उत्तम १४ मत १५ है तात्पर्य हे अर्जुन तपदानादि अन्तःकरण को शुद्ध करते हैं इस वास्ते मुमुक्षुको अवश्यकरने चाहिये मेरा भी यही उत्तम मत है और औरों का भी कर्म की विधि में यही तात्पर्य है बिना अन्तःकरण शुद्ध हुये जो वेदोक्त बहिरङ्गकर्मों का त्याग कर देते हैं अवैदिक मार्ग वालों की बात सुनकर या निवृत्ति मार्ग वालों को श्रुति स्मृति प्रमाण देकर वे पाप के भागी होतेहैं क्योंकि शास्त्रार्थ उन्हों ने उलटा समझा + ६ +

**नियतस्यतुसंन्यासःकर्मणोनोपपद्यते। मोहात्तस्यपरित्यागस्तामसःपरिकीर्त्तितः + ७ +**

नियतस्य १ कर्मणः २ संन्यासः ३ न ४ उपपद्यते ५ तु ६ मोहात्७ तस्य ८ परित्यागः ९ तामसः १० परिकीर्तितः ११ + ७ + उ० + पीछे भगवान् ने कहा था कि त्याग तीन प्रकार का है उस को कहते हैं + अ० + नित्य संध्यादि १ कर्म का २ त्याग ३ नहीं ४ करना चाहिये ५ और ६ मोहसे ७ तिस का ८ त्याग ९ करदेना + तमोगुणी त्याग १० कहा है ११ तात्पर्य जिज्ञासु मुक्ति की इच्छा वाला नित्य कर्मोंकात्याग न करे और जो भूल या मूर्खता से त्याग करेगा तो वह त्याग तमोगुणी कहा जायगा ऐसे त्याग का फल मोक्ष नहीं पीछे ऐसा त्याग महाक्लेश देता है + ७ +

**दुःखमित्येवयत्कर्मकायक्लेशभयात्त्यजेत्। सकृत्वाराजसंत्यागंनैवत्यागफलंलभेत् + ८ +**

यत् १ कर्म २ कायक्लेशभयात् ३ त्यजेत् ४ दुःखं ५ इति ६ एव ७ सः ८ राजसं ९ त्यागं १० कृत्वा ११ त्यागफलं १२ न १३ लभेत् १४एव

१५ + ८ + अ० + जो १ कर्म २ काया क्लेश के भय से ३ त्यागता है ४ उसमें + दुःख ५ । ६ । ७ समझ कर + सो ८ रजोगुणी ९ त्यागको १० करके ११ त्याग के फलको १२ नहीं १३ प्राप्त होता है १४ निश्चय १५ तात्पर्य रजोगुणी पुरुष मैले अन्तःकरण होने से स्नान दानादि कर्मों को दुःख रूप जानता है यह नहीं समझता कि इन कर्मों से मेरा अन्तःकरण शुद्ध होकर मुझको ज्ञान प्राप्त होगा कि जिस से सबदुःखों की निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति होती है इस वास्ते विना आत्म-बोध हुये ही या काया क्लेश के भय से कर्मों को त्याग देता है विना अन्तःकरण शुद्ध हुये त्याग का फल ज्ञान निष्ठा उसकोप्राप्तनहींहोती +८+

**कार्यमित्येवयत्कर्मनियतंक्रियतेऽर्जुन । संगंत्य-क्त्वाफलंचैव सत्यागःसात्त्विकोमतः + ९ +**

अर्जुन १ यत् २ नियतं ३ कर्म ४ कार्यं ५ इति ६ एव ७ संगं ८ च९ फलं १० त्यक्त्वा ११ क्रियते १२ सः १३ त्यागः १४ एव १५ सात्त्विकः १६ मतः १७ + ९ + उ० + सतोगुणी त्याग यह है + हे अर्जुन १ जो २ नित्य३ कर्म ४ है सो + करना चाहिये ५ यह निश्चय है ६ ७ संग ८ और ९ फल को १० त्याग करके ११ जो कर्म + किया जाता है १२ सो १३ त्याग १४ निश्चय १५ सतोगुणी १६ माना है १७ तात्पर्य हे अर्जुन जो नित्यकर्म है उसको ब्रह्म जिज्ञासु अवश्य करे परन्तु उसमें संग न करे और उसके फल का त्याग करे सो त्याग सतोगुणी है इस प्रकार जो कर्म करते हैं उनका अन्तःकरण शुद्ध होता है फिर साधन चतुष्टय संपन्न होकर ब्रह्मविद्या का श्रवण करके अपने स्वरूप को जान कर कृत कृत्य होजातेहैं उनको फिर कुछ कर्तव्य नहीं रहता + ९ +

**नद्वेष्ट्यकुशलंकर्मकुशलेनानुषज्जते । त्यागीसत्त्व-समाविष्टोमेधावीछिन्नसंशयः + १० +**

अकुशलं १ कर्म २ न ३ द्वेष्टि ४ कुशले ५ न ६ अनुषज्जते ७ त्यागी ८ सत्त्वसमाविष्टः ९ मेधावी १० छिन्नसंशयः ११ + १० + उ० + जिसका शुद्ध अन्तःकरण हो जाता है उसका लक्षण यहहै + बुरा १ जो + कर्म २ उसके साथ + नहीं ३ वैर करता है ४ अच्छे कर्म में ५ नहीं ६ प्रीति करता है ७ बुरे भले दोनों कर्मों का फल त्याग देता है८ आत्मा और अनात्मा का जो विवेक उस करके युक्त अर्थात् विचारवान्

९ आत्मनिष्ठ १० संदेह रहित ११ तात्पर्य जब तक प्राणी को इच्छा रहती है तबतक अच्छे कर्मों में प्रीति रखताहै और उसके वास्ते नाना प्रकार के यत्न करता है अच्छे कर्म और बुरे कर्मों का साथहै बुरे कर्म परवश हो जाते हैं इच्छा पुरुष को बुरा भला कर्म नहीं लगता जोभले कर्मों का फल चाहेगा उसको बुरे कर्मों का फल परवश होगा विवेकी विचारवान् शुद्धान्तःकरण वाला संदेहरहित सदा आत्मनिष्ठ रहताहै परमानन्द स्वरूप आत्मा के सामने सब कर्मोंके फल तुच्छ प्रतीत होते हैं ज्ञानी को + १० +

## नहिदेहभृताशक्यंत्यक्तुंकर्माण्यशेषतः । यस्तुकर्मफलत्यागीसत्यागीत्यभिधीयते + ११ +

देहभृता १ अशेषतः २ कर्माणि ३ त्यक्तुं ४ नहि ५ शक्यं ६ यः ७ तु ८ कर्मफलत्यागी ९ सः १० त्यागी ११ इति १२ अभिधीयते १३ + ११ + उ० + जो कोई यह समझे कि कर्मों का फल त्यागने से कर्मों का ही त्यागदेना अच्छा है इस वास्ते श्रीभगवान् कहते हैं कि अज्ञानी जीव समस्त कर्मों को नहीं त्यागसक्ता फलही का त्याग करसक्ता है कर्मोंका फल त्यागने से अन्तःकरण शुद्ध होता है यह परमफल है और इसी से ज्ञान होता है ज्ञानी समस्त कर्म त्याग सक्ता है क्योंकि कर्मों का फल जो अज्ञान की निवृत्तिथी सो दूर हुई जब तक अज्ञान दूर नहो तब तक कर्मों का त्याग न चाहिये + अ० + वर्णाश्रमाभिमानी अज्ञानी जीव १ समस्त २ कर्म ३ त्यागने को ४ नहीं ५ समर्थ है ६ जो ७ । ८ कर्म के फल का त्यागी ९ है + सो १० त्यागी ११ । १२ कहा है १३ तात्पर्य अज्ञानी जीव कर्मों के त्यागने से बन्धन को प्राप्त होता है क्योंकि अन्तःकरण की शुद्धि का उपाय उसने छोड़दिया और ज्ञानी कर्म कर्ताहुआ भी अकर्ताही है क्योंकि आत्मा सदा असङ्ग अक्रिय है इस ज्ञान के प्रताप से मुक्त होता है + ११ +

## अनिष्टमिष्टंमिश्रंचत्रिविधंकर्मणःफलम् । भवत्यत्यागिनांप्रेत्यनतुसंन्यासिनांक्वचित् + १२ +

अनिष्टं १ च २ इष्टं ३ मिश्रं ४ त्रिविधं ५ कर्मणः ६ फलं ७ प्रेत्य ८ अत्यागिनां ९ भवति १० तु ११ संन्यासिनां १२ क्वचित् १३ न १४ + १२ + उ० + जो कर्मों का फल त्याग करते हैं उनका अन्तःकरण शुद्ध

होकर परमानन्द परम फल की प्राप्ति उनको होती है और जो सकाम कर्म करते हैं उनको इष्ट और अनिष्ट और इष्टानिष्ट अर्थात् मिला हुआ यह तीन प्रकार का फल होता है और जो बिना अन्तःकरण शुद्ध हुये कर्म छोड़ देते हैं वे सदा नरक और पशु पक्षियों की योनियों में जन्म लेले कर बारम्बार मरते हैं इस वास्ते श्री भगवान् बारम्बार जिज्ञासुको निष्काम कर्म का उपदेश फल के सहित करते हैं + अ० + नरकादि १ और २ स्वर्गादि ३ और + मर्त्यलोकमें मनुष्यादि देहों की प्राप्ति ४ यह + तीन प्रकार कर्म का ६ फल ७ मर करके ८ सकामों को ९ होता है १० और११ संन्यासियों को ११कभी १३ नहीं १४ होता है +तात्पर्य स्वर्गादि अनित्य और दुःखदायी पदार्थ हैं भगवत् भजन करके जो अनित्य फल की प्राप्ति हुई तो क्या हुआ नित्य एक रस परमानन्द की प्राप्ति होनी चाहिये सो संन्यासियों को ही होती है, स्पष्ट प्रकट श्रीभगवान् बेसन्देह कहते हैं + १२ +

**पंचैतानिमहाबाहोकारणानिनिबोधमे । सांख्ये कृतांतेप्रोक्तानिसिद्धयेसर्वकर्मणाम् + १३ +**

महाबाहो १ सर्वकर्मणां २ सिद्धये ३ एतानि ४ पंच ५ कारणानि ६ सांख्ये ७ कृतान्ते ८ प्रोक्तानि ९ मे १० निबोध ११ + १३+ उ० + कर्म और कर्मों के फल का जब त्याग होसक्ता है कि जब कर्मों को जड़ का ज्ञान हो इस वास्ते कर्मों के जो कारण हैं तिनको बताते हैं+अ०+ हे अर्जुन १ सब कर्मों की २ सिद्धि के वास्ते ३ ये ४ पंच ५ कारण ६ सांख्य ७ कृतान्त में ८ कहे हैं ९ मुझसे १० सुन ११ तिनको + टी० + भले प्रकार परमात्मा का स्वरूप जाना जावे जिस शास्त्र में उसको सांख्य कहते हैं ब्रह्मविद्या वेदान्त शास्त्र का नाम सांख्य है और कर्मों का अन्त है जिसमें उसको कृतान्त कहते हैं यह उसी सांख्य का विशेषण है + १३ +

**अधिष्ठानंतथाकर्ताकरणंचपृथग्विधम् । विविधा-श्चपृथक्चेष्टादैवंचैवात्रपंचमम् + १४ +**

अधिष्ठानं १ तथा २ कर्ता ३ करणं ४ च ५ पृथक्विधं ६ विविधाः ७ च ८ पृथक्चेष्टाः ९ दैवं १०च ११एव १२ अत्र १३ पंचमम् १४+१४+ उ०+ कर्म करने में ये पांच हेतु हैं + अ० + स्थूल शरीर भौतिक इन्द्रियादि

का आत्मा १ चैतन्य और जड़ की ग्रन्थि अहंकार अर्थात् सोपाधिक चैतन्य २ । ३ और इन्द्रिय ४ । ५ पृथक् स्वरूपवाला ६ और के प्रकारकी ७।८ ये दोनों चौथे पद करण इन्द्रियों के विशेषणहैं मूलमें करणं यह पद है चौथा + और प्राणापानादि ९ औरदैव १० । ११ । १२ इनमें १३ पांचवां १४ अर्थात् इन्द्रियों के देवता + तात्पर्य शरीर इन्द्रिय प्राण + अन्तःकरण अज्ञान इनके साथ मिला हुआ चैतन्य कर्ता है पृथक् अकर्ताहै +१४+

**शरीरवाङ्मनोभिर्यत्कर्मप्रारभतेनरः। न्याय्यंवाविपरीतंवापंचैतेतस्यहेतवः + १५ +**

नरः १ शरीरवाक्मनोभिः २ यत् ३ कर्म ४ प्रारभते ५ वा ६ न्याय्यं ७ वा ८ विपरीतं ९ तस्य १० एते ११ पंच १२ हेतवः १३ +१५+ + अ० + प्राणी १ शरीर मन वाणी करके २ जो ३ कर्म ४ प्रारम्भ करता है ५ या ६ अच्छा ७ या ८ बुरा ९ तिस के १० ये ११ पांच १२ हेतु १३हैं जो पिछले श्लोकमें शरीरादिकहैं + शरीर १ सोपाधिचैतन्य २ इन्द्रिय ३ प्राण ४ दैव ५ अर्थात् आदित्यादि देवता यही पंच कारण हैं केवल आत्मा कारण कर्ता नहीं अगले मंत्रमें भगवान् स्पष्टकहेंगे+ ५+

**तत्रैवंसतिकर्तारमात्मानंकेवलंतुयः। पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्नसपश्यतिदुर्मतिः + १६ +**

तत्र १ एवं २ सति ३ तु ४ यः ५ आत्मानं ६ केवलं ७ कर्तारं ८ पश्यति ९ अकृतबुद्धित्वात् १० सः ११ दुर्मतिः १२ न १३ पश्यति १४ + १६ + उ० + जब कि सबकर्मोंमें ये पंच हेतुहैं फिर केवल आत्मा को कर्ता समझना मूर्खता है + अ० + तहां अर्थात् सब कर्मों में १ इस प्रकार २ हुयेसन्ते ३ फिर ४ जो ५ आत्मा को ६ केवल ७ कर्ता ८ देखताहै ९ इसमें हेतु यहहै कि + सत् शास्त्र सद्गुरु उपदेश रहित होने से अर्थात् गुरुने उसको ब्रह्म ज्ञान उपदेश नहीं किया इस वास्ते अकृत बुद्धि होने से अर्थात् ब्रह्मज्ञान न होने से १० सो ११ मन्द मति १२ आत्मा को यथार्थ + नहीं १३ देखता है १४ + टी०+ जैसे पिछले मंत्र में कहा इस प्रकार तात्पर्य वास्तव आत्मा शुद्ध सच्चिदानन्द निर्विकार अक्रिय है शरीरेन्द्रियादि भ्रान्तिके सम्बन्धसे जलचन्द्रवत्आत्मा कर्ता प्रतीत होता है अज्ञानियों को जिन्होंने वेदान्तशास्त्र श्रद्धा पूर्वक नहीं श्रवण किया + १६ +

**यस्यनाहंकृतोभावोबुद्धिर्यस्यनलिप्यते । हत्वापि सइमांल्लोकान्नहंतिननिबध्यते + १७ +**

यस्य १ अहंकृत: २ भाव: ३ न ४ यस्य ५ बुद्धि: ६ न ७ लिप्यते ८ स: ९ इमान् १० लोकान् ११ अपि १२ हत्वा १३ न १४ हन्ति १५ न १६ निबध्यते १७ + १७ + उ० + सुमति शुद्धान्त:करणवाले जो आत्मा को अक्रिय जानते हैं वे कर्म करते हुये भी अकर्ता ही हैं इस बात को कैमुतिकन्याय से श्री भगवान् दृढ़करते हैं अर्थात् जब बुरे कर्म हिंसादि उसको बन्धन नहीं करते तो भलेकर्म यज्ञादि उसको कैसे बन्धन करेंगे+ भा० + जिसके १ अहंकृत २ भाव ३ नहीं ४ अर्थात् यह कर्म मैंने नहीं किया इस कर्म करने में शरीरादि पंच हेतु हैं मैं शुद्ध असङ्ग अविद्या-रहित हूं ऐसे जो समझता है और + जिसकी ५ बुद्धि ६ नहीं ७ लिपायमान होती है ८ अर्थात् किसी प्रकार का कर्म शुभाशुभ प्रारब्ध-वशात् होजावे किंचित्मात्र हर्ष शोक न होवे जिसको + सो ९ इन १० लोकों को ११ भी १२ मारकरके १३ नहीं १४ मारता है १५ न १६ बन्धन को प्राप्तहोता है १७ तात्पर्य जो मुमुक्षु दिन रात मुक्ति के लिये यथा शक्ति यत्न करते हैं जहां तक होसके देशकाल वस्तु के अनुसार भगवत् भजन पूजा पाठ जप तीर्थ स्नानादि कर्म करते रहते हैं परलोक में आस्तिक्य बुद्धि है और शुभ कर्मों के प्रताप से शुद्धान्त:करण होकर आत्म ज्ञान प्राप्त हुआ है जो कदाचित् किसी पिछले पाप के उदय होने से प्रारब्ध-वशात् कोई कर्म जाने वा बिना जाने बुरा बन जावे ऐसे मुमुक्षु से कि जिसका लक्षण ऊपर कहा तो उस कर्म का दोष कभी उस महात्मा को नहीं लगेगा जो उसको दोष समझेंगे वह फल उनको होगा वेदशास्त्र ईश्वर का इस बात में सम्मत है + १७ +

**ज्ञानंज्ञेयंपरिज्ञातात्रिविधाकर्मचोदना। करणंकर्मकर्तेतित्रिविधःकर्मसंग्रहः + १८ +**

परिज्ञाता १ ज्ञानं २ ज्ञेयं ३ त्रिविधा ४ कर्मचोदना ५ कर्ता ६ कर्म ७ करणं ८ इति ९ त्रिविध: १० कर्मसंग्रह: ११ + १८ + उ० + अब अन्य प्रकार से आत्मा को अकर्ता सिद्ध करते हैं + भा० + ज्ञाता १ ज्ञान २ ज्ञेय ३ तीन प्रकार ४ कर्मकी प्रेरणाहै ५ और + कर्ता ६ कर्म ७ करण ८ यह ९ तीन प्रकार १० कर्म संग्रह ११ है + टी० + जानने

वाला १ जिस करके जाना जावे २ जानने के योग ३ कर्म की प्रवृत्ति में हेतु ४ क्रिया का आश्रय ११ तात्पर्य चिदाभास और अन्तःकरणकी वृत्ति और श्रोत्रादि इन्द्रिय यही कर्म की प्रवृत्ति में हेतु हैं आत्मा कूटस्थ निर्विकार है बन्ध मोक्ष चिदाभास वही है आत्मा बन्ध मोक्षशब्दों का विषय भी नहीं + १८ +

**ज्ञानंकर्मचकर्ताचत्रिधैवगुणभेदतः। प्रोच्यतेगुण-संख्यानेयथावच्छृणुतान्यपि + १९ +**

कर्ता १ च २ कर्म ३ च ४ ज्ञानं ५ गुणभेदतः ६ गुणसंख्याने७ त्रिधा ८ एव ९ प्रोच्यते १० तानि ११ अपि १२ यथावत् १३ शृणु १४ + १९ + उ० + कर्ताकर्मादि सब त्रिगुणात्मक हैं आत्मा त्रिगुण रहित है + कर्ता १ और २कर्म ३ और ४ कर्म ज्ञान५ गुणों के भेद से६ सांख्यशास्त्र में ७ तीन प्रकार के ८।९ कहे हैं १० तिन को ११।१२ यथार्थ १३ सुन१४ तात्पर्य कर्तादि में तीन तीन भेद हैं यह सत्व रज तम और यहतीनों गुण अज्ञान करके कल्पितहैं अज्ञानके दूर होनेसे परमानन्द स्वरूप नित्य प्राप्त आत्माकी प्राप्ति होती है तमोगुण को रजोगुण से दूरकरे रजोगुणको सत्व गुण से सत्व गुणको ब्रह्मविद्या से दूर करे इसी वास्ते यह तीन प्रकार का भेद दिखाकर आत्मा का इनतीनों गुणों से पृथक् दिखलाया है + १९ +

**सर्वभूतेषुयेनैकंभावमव्ययमीक्षते। अविभक्तंविभ-क्तेषुतज्ज्ञानंविद्धिसात्विकम् + २० +**

विभक्तेषु १ सर्वभूतेषु २ येन ३ अविभक्तं ४ एकं ५ भावं ६ अव्ययं७ ईक्षते ८ तत् ९ ज्ञानं १० सात्विकं ११ विद्धि १२ + २० + उ० + सात्विको ज्ञान यह है+अ०+पृथक् पृथक् सब भूतोंमें १।२जिस ज्ञानकर के ३ अनस्यूत ४ एक ५ भाव ६ निर्विकार ७ परमात्मा को + देखता है ८ सो ९ ज्ञान १० सतोगुणी ११ जान तू १२ तात्पर्य जैसे वस्त्र में सूत अनस्यूत है इसी प्रकार ब्रह्मा जीसे ले चींटी तक सब भूतों में सच्चिदा-नन्द स्वरूप शुद्ध निर्विकार परमात्मा एक ही है देहोंकी उपाधिसे पृथक् पृथक् देवता मनुष्य पश्वादि कहा जाता है इसी प्रकार जो आत्मा को जानते हैं जिस ज्ञान करकेसो ज्ञान सतोगुणी है अद्वैतवादियों का यही ज्ञान है + २० +

**पृथक्त्वेनतुयज्ज्ञानंनानाभावान्पृथग्विधान् । वेत्तिसर्वेषुभूतेषुतज्ज्ञानंविद्धिराजसम् + २१ +**

पृथक्त्वेन १ तु २ यत् ३ ज्ञानं ४ तत् ५ ज्ञानं ६ राजस ७ विद्धि ८ सर्वेषु ९ भूतेषु १० नाना ११ भावान् १२ पृथक् १३ विधान् १४ वेत्ति १५ + २१ + उ० + भेद वादियोंके रजोगुणी ज्ञान को कहते हैं + भा० + पृथक् भाव करके १ । २ जो ३ ज्ञान ४ तिस ज्ञान को ५।६ रजोगुणी ७ तू जान ८ इसी बातको फिर स्पष्ट करके कहते हैं + सब भूतों में ९ १० नाना प्रकार के ११ पदार्थों को १२ पृथक् १३ प्रकार १४ जो जानताहै १५ जिस ज्ञान करके तिस ज्ञानको रजोगुणी जान तू तात्पर्य निरवयव पदार्थ सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा से आत्मा को पृथक् भाव करके जानना अर्थात् परमात्मा चिद्घन है और आत्मा चित्कण है इस प्रकार भेद वादी आत्मदृष्टि करके भी अर्थात् निरवयव आत्मा में भी भेद को सिद्धान्त जानते हैं अविद्या की उपाधि से देह दृष्टि करके भ्रान्तिजन्य भेद व्यवहार में प्रतीत होताहै कि जिसको रजोगुणी भेद वादी सिद्धान्त समझते हैं इसी हेतुसे यह ज्ञान रजोगुणी भेद वादियों का है + २१ +

**यत्तुकृत्स्नवदेकस्मिन्कार्येसक्तमहेतुकम् ।अतत्त्वार्थवदल्पंचतत्तामसमुदाहृतम् + २२ +**

यत् १ तु २ एकस्मिन् ३ कार्ये ४ कृत्स्नवत् ५ सक्तं ६ अहेतुकं ७ च ८ अतत्वार्थवत् ९ अल्पं १० तत् ११ तामसं १२ उदाहृतम् १३ + २२ + उ० + तमोगुणी ज्ञान को कहते हैं + भा० + जो १ । २ ज्ञान एक ३ कार्य में ४ सम्पूर्णवत् ५ शक्त ६ हैं अर्थात् एक कार्य में सम्पूर्णवत् जो ज्ञान है जैसे आपको ब्राह्मण संन्यासी देह दृष्टिसे इतनेही स्थूल शरीर को जानना और पाषाण की मूर्तिही को और श्री रामचन्द्रादि सावयव मूर्ति को ही परमार्थ में परमात्मा जानना अर्थात् इनसे परे कुछ अन्य निरवयव सच्चिदानन्द शुद्ध तत्त्व नहीं है मूर्तिमान् ही परमात्माहै यह शरीर ही ब्राह्मण संन्यासी है यह मूर्ति पाषाण की परमेश्वर है यह ज्ञान + हेतु रहित ७ अर्थात् ऐसे ज्ञान में कोई युक्ति नहीं + और ८ परमार्थ सिद्धान्त नहींहै ९ परम तत्व सिद्धान्तकी प्राप्तिका एक साधन है फिर कैसा है कि + तुच्छ है १० क्योंकि इसका फल अल्प है वैराग्यादि साधनों की अपेक्षा करके इस ज्ञान से चिरकाल में अन्तःकरण

शुद्ध होतीहै इस प्रकार का जो ज्ञान + सो ११ तमोगुणी १२ कहा है १३ तात्पर्य यह है कि ज्ञानी भी तीन प्रकार के हैं बिना सात्विकी ब्रह्म ज्ञान हुये रजोगुणी तमोगुणी ज्ञान में अटक जाना इसी ज्ञान से मोक्ष समझ लेनी मूर्खता है जो साधन को सिद्धान्त समझते हैं जिस समझ से वह तमोगुणी ज्ञान है + २२ +

**नियतंसंगरहितमरागद्वेषतःकृतम्। अफलप्रेप्सुना कर्मयत्तत्सात्विकमुच्यते + २३ +**

अफलप्रेप्सुना १ यत् २ नियतं ३ कर्म ४ संगरहितं ५ अरागद्वेषतः ६ कृतं ७ तत् ८ सात्विकं ९ उच्यते १० + २३ + उ० + कर्म तीन प्रकार का है प्रथम सतोगुणी कहते हैं + अ० + नहीं फल की चाहहै जिसको तिसने १ जो २ नित्य ३ कर्म ४ संग रहित ५ बिना रागद्वेषके ६ किया ७ सो ८ सतोगुणी ९ कहाहै १० तात्पर्य स्नान ध्यान पाठ पूजा तीर्थ साधु सेवादि कर्म करना शास्त्रकी आज्ञाहै कर्म में आसक्ति प्रीति करने से फल की चाह करने से बन्धन होता है इस वास्ते कर्ममें प्रीति द्वेष आसक्ति त्याग करनी कि जो वह कर्म अन्तःकरण को शुद्ध करके परमानन्द स्वरूप आत्मा को प्राप्त करे आसक्ति प्रीति उस पदार्थ में चाहिये कि जो नित्य एक रस हो और ऐसे हो फल चाहना करनी फल प्राप्त होने के पीछे भी साधनों से राग द्वेष न चाहिये + २३ +

**यत्तुकामेप्सुनाकर्मसाहंकारेणवापुनः। क्रियतेबहुलायासंतद्राजसमुदाहृतम् + २४ +**

कामेप्सुना १ यत् २ कर्म ३ साहंकारेण ४ क्रियते ५ वा ६ तु ७ पुनः ८ बहुलायासं ९ तत् १० राजसं ११ उदाहृतम् १२ + २४ + उ० + रजोगुणी कर्म कहते हैं + फल की कामना वाले ने १ जो २ कर्म ३ अहंकार के सहित ४ किया है ५ और ६ । ७ । ८ बहुत श्रम हो जिसमें ९ सो १० कर्म + रजोगुणी ११ कहा है १२ तात्पर्य पुत्र स्त्री धन स्वर्गादि भोगों के निमित्त वा यह अहंकार करके कि हमारी बराबर अग्निहोत्री कौन है जितने हमने तीर्थ किये किसी से हो सक्ते हैं ब्रह्म ज्ञानसे क्या होता है जो है सो कर्म ही है अब हम चारों धाम करचुके कृत कृत्य हैं और कर्म करने में इतना श्रम करना कि विचार किंचित् न होसके जैसे कि तीर्थ यात्रा में चार गो कोस चलना चाहिये प्रातःकालसे सायः

काल तक ब्राह्मी मुहूर्त और प्रदोष कालमें भी रस्ता नापना इस प्रकार के कर्म सब रजोगुणी हैं + २४ +

**अनुबंधंक्षयंहिंसामनवेक्ष्यचपौरुषम्। मोहादारभ्यतेकर्मतत्तामसमुदाहृतम् + २५ +**

अनुबंधं १ क्षयं २ हिंसां ३ च ४ पौरुषं ५ अनवेक्ष्य ६ मोहात् ७ कर्म ८ आरभ्यते ९ तत् १० तामसं ११ उदाहृतम् १२ + उ० + तमोगुणी कर्म कहते हैं + अ० + पश्चात् भावि १ द्रव्यादि का खर्च २ हिंसा ३ और ४ पुरुषार्थ ५ इन चारों को + नहीं विचार कर ६ मोह से ७ जो + कर्म ८ आरम्भक्रिया ९ सो १० तमोगुणी ११ कहाहै १२ तात्पर्य औरों की देखा देखी या सुनकर बिना बिचार के अर्थात् जो मैं यह कर्म करूंगा तो मुझको पीछे इसका फल क्या होगा कितना इस कर्म में द्रव्यव्यय होगा मुझको या औरों को कितना दुःखहोगा यहकाम मुझसे होसकेगा वा नहीं यह न बिचार करमूर्खता से कर्मका प्रारम्भ करदेना तमोगुणी कहा है क्योंकि विना विचार के शब्दबोलने में भी किसी जगह न्योता बैर होजाता है इसीप्रकार विना बिचार तीर्थ व्रत मन्दिरादि के आरम्भ करदेने में सिवाय दुःख और पापके कुछ नहीं मिलता खोटे कर्मों का तो कुछ प्रसंग नहीं वेतो विचारपूर्वक और विना विचार किये हुये अनर्थ की मूल हैं + २५ +

**मुक्तसंगोऽनहंवादीधृत्युत्साहसमन्वितः। सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारःकर्तासात्विकउच्यते + २६ +**

मुक्तसंगः १ अनहंवादी २ धृत्युत्साहसमन्वितः ३ सिद्ध्य सिद्ध्योः ४ निर्विकारः ५ कर्ता ६ सात्विकः ७ उच्यते ८ + २६ + उ० + कर्तातीन प्रकार का है प्रथम सतोगुणी कर्ता कहते हैं + अ० + संगरहित १ अहंकाररहित २ धैर्य उत्साह करके युक्त ३ सिद्धि असिद्धि में ४ निर्विकार ५ ऐसा + कर्ता ६ सतोगुणी ७ कहा है ८ तात्पर्य कर्मोंमें आसक्त न होना चाहिये क्योंकि अन्तःकरण शुद्धि के पीछे कर्मों का त्यागना होगा जिसपदार्थ से एक दिन जुदाहोना है उसमें प्राप्ति समय भी प्रीति न रखनी अथवा संगरहित का अर्थ यह समझना 'चाहिये कि मैं असंग हूं अहंकार न करना कि मैं ऐसा वेदोक्त कर्मकरताहूं कर्म करनेमें धैर्य उत्साहरखना जो धैर्यउत्साह न होगा तो कभी कर्ममें प्रवृत्ति स्थिति न

होगी उत्साह से कर्म में प्रवृत्ति होती है धैर्य से कर्म में स्थितिरहती है और कर्मकी सिद्धि असिद्धि में निर्विकाररहना दैवयोगसे जो कर्म प्रत्यक्ष फल देवे कि जैसा फल शास्त्र में लिखा है यावैसा फल न हो तो दोनों में निर्विकार रहना जो पदार्थ नाशवान् है वह हुआ न हुआ सम है प्रत्युत होकर नाश होने से न होना श्रेष्ठ है परम फल अन्तःकरण शुद्ध द्वारा परमानन्द स्वरूप आत्मा पर दृष्टि चाहिये सतोगुणी कर्मजो सतोगुणीकर्ता पुरुष करेगा तो बेसन्देह उसका अन्तःकरण शुद्ध होगा ॥२६॥

**रागीकर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धोहिंसात्मकोऽशुचिः। हर्षशोकान्वितःकर्तारजसःपरिकीर्त्तितः ॥ २७ ॥**

रागी १ कर्मफलप्रेप्सुः २ लुब्धः ३ हिंसात्मकः ४ अशुचिः ५ हर्षशोकान्वितः ६ कर्ता ७ राजसः ८ परिकीर्त्तितः ९ ॥ २७ ॥ उ० ॥ रजोगुणी कर्ता को कहते हैं ॥ अ० ॥ प्रीति वाला १ अर्थात् पुत्रादि की प्रीत्यर्थ कर्म करना ॥ कर्मोंकी फल का चाह वाला २ लोभी पराये धनकीइच्छा वाला ३ दूसरे को दुःख देने वाला ४ अपवित्र ५ हर्ष शोक करके युक्त ६ ऐसा ॥ कर्ता ७ रजोगुणी ८ कहा है ९ तात्पर्यजो पुरुष पुत्र मित्रादिकन के प्रसन्नार्थ अर्थात् यह जो मैं कर्म करताहूं इस कर्मके देखने सुनने से मेरे मित्रादि आनन्द होंगे इस दृष्टि से कर्म करना कर्मोंमें रागरखना फल को चाहना पराई स्त्री धनादि की इच्छा रखनी अर्थात् हम को अच्छा कर्म करता हुआ देख सुन कर राजा प्रजा दान देंगे कर्म करनेके समय दूसरे के दुःख पर दृष्टि न देनी भीतर बाहर से अपवित्र रहना कर्म की सिद्धि में हर्ष करना असिद्धि में शोक करना इस प्रकारका कर्ता रजोगुणी है जो इस प्रकार वेदोक्त कर्म भी करता है वह कर्म मोक्ष का हेतु न होगा ॥ २७ ॥

**अयुक्तःप्राकृतःस्तब्धःशठोनैष्कृतिकोऽलसः। विषादीदीर्घसूत्रीचकर्तातामसउच्यते ॥ २८ ॥**

अयुक्तः १ प्राकृतः २ स्तब्धः ३ शठः ४ नैष्कृतिकः ५ अलसः ६ विषादी ७ दीर्घसूत्री ८ च ९ कर्ता १० तामसः ११ उच्यते १२ ॥ २८ ॥ उ० ॥ तमोगुणी कर्ता को कहते हैं ॥ अ० ॥ कर्म करनेके समय कर्ममें चित्त न रखना १ विवेक रहित २ अर्थात् यह न समझना कि कर्म करने का यथार्थ फल क्या है ॥ अनम्र ३ मायावी ४ अर्थात् कर्मतो वेदोक्त करना

और मनमें यह रखना कि दूसरे को धोखा देकर उसका धन छीनलेना चाहिये इस बात का छिपाने वाला + दूसरे की आजीविका नाश करने वाला अपमान करनेवाला ५ आलसी ६ सदा रोतीसूरत अप्रसन्न रहना ७ जो काम घड़ी के करने का है दोचार पहर लगा दे तात्पर्य तनक से काम का बहुत विस्तार कर दे ८ । ९ ऐसा + कर्ता १० तमोगुणी ११ कहा है १२ टी० + अपने को कर्मनिष्ठ समझ कर ज्ञाननिष्ठ भगवत् भक्तों को शूद्रादि समझ कर उनको नमस्कार न करना + २८ +

**बुद्धेर्भेदंधृतेश्चैवगुणतस्त्रिविधंशृणु । प्रोच्यमानमशेषेणपृथक्त्वेनधनंजय + २९ +**

धनंजय १बुद्धेः २ धृतेः ३ च ४भेदं ५ गुणतः ६ त्रिविधं ७ पृथक्त्वेन ८ प्रोच्यमानं ९ अशेषेण १० शृणु ११ एव १२ + २९ + अ० + हे अर्जुन १ बुद्धि का २ और धीरज का ३ । ४ भेद ५ गुणों से ६ तीन प्रकार का ७ जुदा जुदा ८ कहना है ९ जो अगले छः श्लोकों में उसको + समस्त १० सुन ११ निश्चय १२ तात्पर्य संसार में रजोगुणी तमोगुणी बुद्धिवाले भी बुद्धिमान् कहे जाते हैं सो वह समझ उनकी मोक्ष के लिये नहीं परमार्थ की बात तमोगुणी रजोगुणी बुद्धिवाले नहीं जानते उनको बुद्धिमान् समझकर परमार्थ में उनकी समझ ऊपर अनुष्ठान करना न चाहिये इसीवास्ते बुद्धि का भेद श्रीभगवान् दिखाते हैं + २९ +

**प्रवृत्तिंचनिवृत्तिंचकार्याकार्येभयाभये । बंधंमोक्षंचयावेत्तिबुद्धिःसापार्थसात्त्विकी + ३० +**

पार्थ १ या २ बुद्धिः ३ प्रवृत्तिं ४ च ५ निवृत्तिं ६ च ७ कार्याकार्ये ८ भयाभये ९ बंधं १० च ११ मोक्षं १२ वेत्ति १३ सा १४ सात्त्विकी १५ + ३० + ३० + बुद्धि तीन प्रकार की प्रथम सतोगुणी बुद्धि को कहते हैं + अ० + हे अर्जुन १ जो २ बुद्धि ३ प्रवृत्ति ४ और ५ निवृत्ति को ६ और ७ कार्य अकार्य ८ भय अभय ९ बन्ध १० और ११ मोक्ष को १२ जानती है १३ सो १४ बुद्धिः + सतोगुणी १५ तात्पर्य प्रवृत्ति बन्ध का हेतु है निवृत्ति मोक्ष में हेतु है इस देशकाल में ऐसे पुरुष को यही करना योग्य है यह अयोग्य है खोटे कामकरने में भय होगा भगवत् भजन विवेक वैराग्यादि शुभ कर्मों में भय नहीं इस प्रकार कर्म करने में बन्ध होता है इस प्रकार कर्मों के करने से मोक्ष होती है

ऐसी जिसकी बुद्धि है वह सतोगुणी है बहुत कर्म ऐसे हैं वे किसी के लिये अच्छे हैं किसी के लिये बुरे हैं एक काम किसी देशकाल में कोई करसक्ता है किसी देशकाल में वह काम नहीं हो सक्ता किसीको एक कर्म करने का अधिकार है किसी को उसीके त्यागने का अधिकार है ऐसी बहुत बातें हैं निवृत्ति सतोगुणी महापुरुष जानते हैं केवल वेद शास्त्र के पढ़ने सुनने से तात्पर्यार्थ नहीं जाना जाता है एक बात समझाने की नाना प्रक्रिया रीति हैं महात्मा अनेक दृष्टान्त युक्तियों से समझासक्ते हैं यदि वे प्रसन्न हो जावें + ३० +

**यथाधर्ममधर्मंचकार्यंचाकार्यमेवच। अयथावत्प्रजानातिबुद्धिःसापार्थराजसी + ३१ +**

पार्थ १ यया २ धर्मं ३ अधर्मं ४ च ५ कार्यं ६ च ७ अकार्यं ८ एव ९ च १० अयथावत् ११ प्रजानाति १२ सा १३ बुद्धिः १४ राजसी १५ + ३१ + उ० + रजोगुणी बुद्धि को कहते हैं + अ०+ हे अर्जुन १ जिस बुद्धि करके २ धर्म ३ अधर्म को ४। ५ कार्य और अकार्य को ६। ७। ८। ९।१० संदेह सहित ११ जानता है १२ अर्थात् यथावत् जैसे का तैसा नहीं जानता है + सो १३ बुद्धि १४ रजोगुणी १५ तात्पर्य धर्माधर्म कार्याकार्य में जिसको संदेहबना ही रहता है उसकी बुद्धि रजोगुणी है यह जीव सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्णब्रह्म है वा नहीं वेदशास्त्र में अद्वैत सिद्धान्त सत्य है वा नहीं कर्मों के सन्यास से मोक्ष होता है वा नहीं निष्काम कर्म करने से अन्तःकरण शुद्ध होता है वा नहीं वेद शास्त्र प्रमाण है वा नहीं इस प्रकार सन्देह रहना रजोगुणी बुद्धि का दोष है + ३१ +

**अधर्मंधर्ममितियामन्यतेतमसावृता। सर्वार्थान्विपरीतांश्चबुद्धिःसापार्थतामसी + ३२ +**

सर्वार्थान् १ या २ बुद्धिः ३ तमसावृता ४ अधर्मं ५ धर्मं ६ इति ७ मन्यते ८ च ९ सर्वार्थान् १० विपरीतान् ११ सा १२ तामसी १३ + ३२ + उ०+तमोगुणी बुद्धि कहते हैं +अ०+हेअर्जुन १ जो २ बुद्धि ३ तमोगुण करके ढकी हुई ४ ऐसी बुद्धि करके अधर्म को ही धर्म ५। ६। ७ मानता है ८ और ९ सब अर्थोंको १० विपरीत ११ जिस बुद्धि करके समझता

है + से १२ तमोगुणी १३ बुद्धि है तात्पर्य जो पुरुष सनातन मार्ग और स्मार्त को छोड़ इस कलियुग में जीवन ने जो सम्प्रदाय और पन्थ अपने नाम से चलाये हैं उसको धर्म समझकर उस रस्तेपर चलते हैं विचार करना चाहिये कि श्रौत स्मार्त मार्ग में क्या दोष था जो उसको त्याग कर कल्पित मार्ग को धर्म समझा यही तमोगुणी बुद्धिका दोष है और श्रुति स्मृतियों का अर्थ अपने मतके अनुसार करना यही विपरीत अर्थ है तात्पर्य यह है कि श्रुति स्मृति प्रतिपाद्य मार्ग सनातन धर्म है और कलियुग में जो मत चले हैं वे श्रुति स्मृति से विरुद्ध हैं क्योंकि जो वे श्रुति स्मृतिके अनुसार होते तो उस सम्प्रदाय और पंथ का जुदा एक नाम क्यों बनाया स्पष्ट प्रतीत होता है कि कुछ श्रुति स्मृतियों का आशय लिया कुछ श्रुति स्मृतियों का अर्थ उलटा किया कुछ अपनी बुद्धि से लिख दिया और कह दिया कि यह ग्रन्थ श्रुति स्मृतियों के अनुसार है यही दोष तमोगुणी बुद्धि का है + ३२ +

धृत्यायया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः । योगेना-
व्यभिचारिण्याधृतिःसापार्थसात्विकी + ३३ +

पार्थ १ यया २ धृत्या ३ मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः ४ धारयते ५सा ६ धृतिः ७ सात्विकी ८ योगेन ९ अव्यभिचारिण्या १० + ३३ + उ० + अन्तःकरण की वृत्ति सत्वादि भेद से तीन तीन प्रकार की हैं उन सब वृत्तियों में से एक वृत्ति धृतिको सत्वादि भेदसे तीन प्रकार की दिखाते हैं प्रथम सत्वगुणी धीरज को कहते हैं + अ० + हे अर्जुन १ जिस धृति करके २ । ३ मन प्राण इन्द्रियोंकी क्रियाको ४ धारण करता है ५ सो ६ धृति ७ सतोगुणी ८ कैसी वह धृति + कर्म योग करके ९ अव्यभिचारिणी १० तात्पर्य स्वभाव के वश से अन्तःकरणादि अपने धर्म में प्रवृत्त होते हैं धीरज से सबको वश करना चाहिये क्षुत्पिपासादि समय व्याकुल न हो सके न कि कर्म योगमें अभी कचाईहै अभी अन्तः-करण की वृत्ति सतोगुणी नहीं हुई सतोगुण प्रधान वृत्ति की परीक्षा के लिये यह धृतिभेद श्री भगवान् ने दिखाया है जब तक इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण का निरोध न हो सके तब तक रज तम प्रधान वृत्ति को जानना और उसकी निवृत्तिके लिये कर्म योगका अनुष्ठान करना चाहिये केवल जानलेने से कि धृति तीन प्रकार की है मुक्ति न होगी + ३३ +

**यथातुधर्मकामार्थान्धृत्याधारयतेऽर्जुन प्रसंगेन फलाकांक्षीधृतिःसापार्थराजसी + ३४ +**

अर्जुन १ यया २ धृत्या ३ धर्मकामार्थान् ४ धारयते ५ तु ६ पार्थ ७ प्रसंगेन ८ फलाकांक्षी ९ सा १० धृतिः ११ राजसी १२+ ३४ +उ०+ रजोगुणी धृति को कहतेहैं + हे अर्जुन १ जिस धृति करके २। ३ धर्म काम अर्थ को४धारण करताहै ५ अर्थात् धर्मअर्थ कामहीमें तत्पर रहता है मोक्ष में वृत्ति नहीं करता + और ६ हे अर्जुन ७ धर्मादि के प्रसंग करके धृति + चाह वालीहै ९ सो १० धृति ११ रजोगुणी १२ तात्पर्य शास्त्र श्रवण से तो यह निश्चय किया कि निष्काम कर्म करना चाहिये फिर उस कर्म के प्रसंग से पुत्र धन स्वर्ग वैकुंठादि की इच्छा करनेलगे तो जानना चाहिये कि अन्तःकरण की वृत्ति रज प्रधान है जब तक कर्म योगका फल स्वर्गादि समझता रहेगा परम्परा करके आत्माको फल न समझेगा तब तक वृत्ति को रज प्रधान जानना चाहिये + ३४ +

**ययास्वप्नंभयंशोकंविषादंमदमेवच । नविमुंचतिदुर्मेधाधृतिस्सापार्थतामसी + ३५ +**

पार्थ १ दुर्मेधा २ यया ३ स्वप्नं ४ च ५ भयं ६ शोकं ७ विषादं ८ मदं ९ एव १० न ११ विमुञ्चति १२ सा १३ धृतिः १४ तामसी १५ + ३५ + उ० + तमोगुणी धृतिको कहते हैं + श्लो० + हेअर्जुन १ तमोगुणी बुद्धि वाला २ जिस धृतिकरके ३ स्वप्न ४ और ५ भय ६ शोक ७ विषाद ८ मदको ९। १० न ११ त्याग सक्ता है १२ सो १३ धृति १४ तमोगुणी १५ तात्पर्य जागने के समय ब्राह्मी मुहूर्तादि में भी न जागे सोता ही रहे और कर्म करनेके समयभी भय शोक विषाद मद बनाही रहे तो जानना चाहिये कि अन्तःकरण की वृत्ति तम प्रधान है यावत् वृत्ति तमोगुणी रहे तावत् स्नान ध्यान साधु सेवादि कर्मों को अवश्य करे + ३५ +

**सुखंत्विदानींत्रिविधंशृणुमेभरतर्षभ। अभ्यासाद्रमतेयत्रदुःखान्तंचनिगच्छति + ३६ +**

भरतर्षभ १ इदानीं २ तु ३ सुखं ४ त्रिविधं ५ मे ६ शृणु ७ यत्र ८ अभ्यासात् ९ रमते १० दुःखांतं ११ च १२ निगच्छति १३+ ३६+उ

कर्त्ता कर्म करणादि का भेद सत्वादि भेद से तीन प्रकार का कहा अब उन सब का फल तीन प्रकार कहते हैं + चतुर्दश अध्याय में जो सत्व रज तम का भेद कहा तो वहां यह दिखाया कि ये तीनों गुणआत्मा को बन्धन करते हैं और सत्रहवें अध्याय में जो भेद कहा तो वहां यह दिखाया कि तप यज्ञादि रजोगुणी तामसी न करने सात्विकी करने क्योंकि सतोगुणी पुरुषका ज्ञान में अधिकार है और इस जगह अठारहवें अध्याय में जो यह भेद कार्य कारण का सत्वादि भेद करके कहा और सब का फल सुख तीन प्रकार का कहते हैं यहां यह दिखाते हैं कि कर्ता कर्म करणादि फल सहित सब त्रिगुणात्मक हैं आत्मा का किसी से कुछ किसी प्रकार का वास्तव सम्बन्ध नहीं अविद्यक सम्बन्ध है इस श्लोक के आधे मंत्र में प्रतिज्ञा है और आधे में सतोगुणी सुखका लक्षण है + अ० + हे अर्जुन १ अब २ तो ३ सुखको ४ तीनप्रकार का ५ मुझसे ६ सुन ७ प्रथम सतोगुणी सुखकोडेढ़ श्लोक में कहता हूं+ जिस सात्विकी सुखमें ८ वृत्तिको+ अभ्यास से ९ अर्थात् शनैःशनैः नित्य प्रतिदिन बढ़ाता हुआ + रमता है १० जो सो + दुःखों के अन्तको ११ । १२ प्राप्तहोता है १३ अर्थात् उसको फिर दुःख नहीं होता दुःख के पारहो जाता है सब शास्त्रों के पढ़ने सुनने का और कर्मों के अनुष्ठान करने का यही फल है कि सतोगुणी वृत्ति प्रधान होकर सदा सतोगुणी सुख बना रहे इसी सुखमें रमने से जल्दी अनिर्वाच्य अप्रमेय परात्पर परमानन्दस्वरूप आत्मा की प्राप्तिहोती है + ३६ +

**यत्तदग्रेविषमिवपरिणामेऽमृतोपमम् । तत्सुखंसात्विकंप्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् + ३७ +**

यत् १ अग्रे २ विषं ३ इव ४ तत् ५ परिणामे ६ आत्मबुद्धिप्रसादजं ७ अमृतोपमम् ८ तत् ९ सुखं १० सात्विकं ११ प्रोक्तं १२ + ३७+ अ० + जो १ सुख + प्रथम प्रारम्भ समय २ विषवत् ३४ प्रतीत होता है +सो ५ पीछे ६ अपने अन्तःकरण के प्रसाद से ७ अमृत की सदृश ८ है + सोई ९ सुख १० सतोगुणी ११ कहा है १२ तात्पर्य वैराग्य आत्मध्यान ज्ञान समाधि समय और शरीर इन्द्रिय अन्तःकरण प्राण के निरोध में प्रथम दुःख प्रतीतहोती है जब अन्तःकरणकी वृत्ति रजोगुणी तमोगुणी कमहोजाती है अर्थात् दया क्षमा कोमलता सत्य सन्तोष धीरज शम

दमउपरति तितिक्षा श्रद्धा सावधानता मुक्ति की इच्छा विवेक वैराग्यादि ये वृत्ति जब प्रधानहोती हैं उस समय का सुख अमृत के सदृश इसवास्ते कहा कि वह सुख वास्तव सच्चिदानन्द को दिखादेता है बुद्धिकी प्रसन्नता इसी को कहते हैं कि अन्तःकरण का रजतम दूरहोकर यह सुख प्रकट होता है इस सुखकी अवधि के सामने रजोगुणी तमोगुणी सुख जो आगे कहेंगे वह तुच्छ है और इससुखकी बड़ाई में शास्त्र और अनुभव दोनों प्रमाण हैं जीतेजी इस सुखकी अवधिका अनुभव कर सक्ता है आत्मनिष्ठ और योगी इस सुखकी अवधिको अनुभवकर सक्ते हैं जीतेजी और रजोगुणी सुखकी अवधि में शास्त्र पुराणादि प्रमाण हैं जीतेजी उस सुखकी अवधि का अनुभव प्रत्यक्ष नहीं होसक्ता + ३७ +

**विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमं। परिणामेविषमिवतत्सुखंराजसंस्मृतं + ३८ +**

यत् १ विषयेन्द्रिय संयोगात् २ तत् ३ अग्रे ४ अमृतोपमम् ५ परिणामे ६ विषं ७ इव ८ तत् ९ सुखं १० राजसं ११ स्मृतम् १२ + ३८ + उ० + रजोगुणी सुख को कहते हैं + अ० + जो १ सुख शब्दादि विषय और श्रोत्रादि इन्द्रियों के सम्बन्धसे २ अर्थात् सुनने देखनेबोलने स्त्री संगादि में जो सुखहोता है + सो ३ प्रथम क्षण भोग समय ४ अमृत की बराबर है ५ और + भोग के पश्चात् ६ विषकी बराबर ७। ८ है जो सुख + सो ९ सुख १० रजोगुणी ११ कहा है १२ तात्पर्य विषकेखाने से तो प्राणी एक बेरही मरता है और शब्दादि विषयों के भोगने से बारम्बार मरता है अष्टावक्रजी महात्मा ने कहा है कि हे प्यारे जो मुक्तहुआ चाहता है तो विषयों को विषवत् त्याग + सवियव भगवत् मूर्त्ति और सावयव वैकुंठ लोकादि की जो इच्छा रखते हैं वे इसी रजोगुणी सुखकी अवधि को चाहते हैं उसको सतोगुणी वा दिव्य सुख समझना चाहिये क्योंकि वह सुख श्रवण दर्शनादि से होता है तमोगुणी सुख और मलिन रजोगुणी सुख कि जो इसलोक में स्त्रियादि के सम्बन्ध से होता है इससे सावयव लोक जन्य सुख श्रेष्ठ है पुराणादि में इस हेतुसे माहात्म्य लिखाहै जो कोई शुद्ध सच्चिदानन्द निराकार ब्रह्म की उपासना करनेको समर्थनहीं हैं उन को चाहिये कि मूर्ति मान् राम कृष्णादि की उपासनाकियाकरैं जो निष्काम करेंगे तो अन्तःकरण शुद्धि

द्वारा मोक्ष होगा और जो मन्द सुगन्ध शीतलपवन खानेकी इच्छासे वार्माण माणिकादि सौंदर्यता देखने की इच्छा से सावयव भगवत् मूर्ति का ध्यान करते हैं तो जैसे इस लोकके भोगी वैसेही वे रहे + ३८ +

**यदग्रेचानुबन्धेचसुखंमोहनमात्मनः । निद्रालस्य प्रमादोत्थंतत्तामसमुदाहृतम् + ३९ +**

यत् १ सुखं २ निद्रालस्यप्रमादोत्थं ३ च ४ अग्रे ५ च ६ अनुबन्धे ७ आत्मनः ८ मोहनं ९ तत् १० तामसं ११ उदाहृतं १२ + ३९ + उ०+ तमोगुणी सुख को कहते हैं + अ० + जो १ सुख २ निद्रा आलस्य प्रमाद से उत्पन्न होताहै ३ अर्थात् खेल मनोराज्यहिंसालड़ाई विषादि क्रोधादि जान लेना + और ४ पहले ५ और पीछे ७ आत्माको ८ मोह करने वाला ९ सो १० तमोगुणी ११ कहा है १२ तात्पर्य निद्रा आलस्य मनो राज्य क्रोधादि समय न प्रथम सुख होता है न पीछे जीव को सुख की भ्रान्ति रहती है असंख्यात पशुओ आदमी की सूरत में हैं वे इसी तमोगुणी सुख की भ्रान्ति में मरजाते हैं कभी किसी कालमें रजोगुणी सुखका अनुभवकिया होगा और सतोगुणी सुखकी तो गन्धभी ऐसे पुरुषों के पास नहीं आती जैसे रजोगुणी इस सुखको तुच्छ समझते हैं ऐसेही सतोगुणी पुरुष तमोगुणी रजोगुणी दोनों सुखों को तुच्छसमझता है और ब्रह्मज्ञानी शुद्धानन्द का जानने वाला तीनोंसुखों को तुच्छ जानता है तीनोंगुण सबमें रहते हैं जिसके तमोगुण प्रधान रजसतोगुण कम उसको तमोगुणी कहते हैं रजोगुणी में दो भेद हैं जो इसीलोक के शब्दादि विषयों में तत्पर रहते हैं वे बुरे कहे जाते हैं और जो परलोक में रूप रसादि विषयों को भोगते हैं वा इस लोकसे वेदोक्त भोग भोगते हैं वे अच्छे कहे जाते हैं सतोगुणीभी दो प्रकार के हैं एक ब्रह्म ज्ञान रहित योगी और एक ज्ञान सहित योगी ये दोनों रजोगुणी श्रेष्ठ हैं ब्रह्म ब्रह्म ज्ञान रहित योगी से ब्रह्मवित् श्रेष्ठ है तमोगुणी सब से निकृष्ट है + ३९ +

**नतदस्तिपृथिव्यांवादिविदेवेषुवापुनः । सत्वंप्रकृतिजैर्मुक्तंयदेभिःस्यात्रिभिर्गुणैः + ४० +**

पृथिव्यां १ वा २ दिवि ३ वा ४ देवेषु ५ पुनः ६ यत् ७ सत्त्वं ८ एभिः ९ त्रिभिः १० गुणैः ११ प्रकृतिजैः १२ मुक्तं १३ स्यात् १४ तत् १५ न १६ अस्ति १७ + ४० + उ० + जो जो क्रिया कारक फल देखने सुनने में आताहै सबको त्रिगुणात्मक जानना योग्यहै + अ० + पृथिवी में १ वा २ स्वर्ग में ३ वा ४ देवतों में ५।६ जो ७ पदार्थ ८ इन तीनगुणों करके ९ । १० । ११ किजो + मायासे उत्पन्न हुयेहैं १२ रहित १३ हो१४ सो १५ नहीं १६ है १७ तात्पर्य एक शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप नित्य मुक्त आत्मा स्थूल सूक्ष्म कारण शरीरों से पृथक् तीनों अवस्थाका साक्षीत्रिगुण रहित है उस में पृथक् सब पदार्थ इस लोक पर लोक के जो जो देखने सुनने में आते हैं माया मात्र हैं इस मायाने सबको भ्रान्त कर रक्खा है देवता सतोगुण में भ्रान्त मनुष्य रजो गुण में पशु तमोगुण में भ्रान्त हैं जो मनुष्य सतोगुण में भ्रान्तहैं वह पशु की बराबर है + ४० +

**ब्राह्मणक्षत्रियविशांशूद्राणांचपरंतप। कर्माणिप्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः + ४१ +**

परंतप १ब्राह्मण क्षत्रिय विशां २ च ३ शूद्राणां ४ कर्माणि ५ गुणैः ६ प्रभवैः ७ प्रवि भक्तानि ८ + ४१ + उ० + यह गुणों को भ्रान्तिकिजो पीछे कहे विना ब्रह्म विद्या के नहीं दूर होती और विना अज्ञान दूर हुये परमानन्द स्वरूप आत्मा का साक्षात् कार नहीं होता इस वास्ते अज्ञान की निवृत्ति के लिये ब्राह्मणादि अपने अपने धर्म का अनुष्ठान करें कि जो धर्म ब्राह्मणादि का आगे कहना है + अ० + हे अर्जुन ,१ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यों के २ और ३ शूद्रों के ४ कर्म ५ प्रकृति से उत्पत्ति है जिनकी ६ गुणों करके ७ पृथक् पृथक् ८ हैं अज्ञान की निवृत्तिके लियेउनका अनुष्ठान करना चाहिये इस वास्ते मैं कहता हूं तात्पर्य ब्राह्मणादि के कर्म गुणों के अनुसार पृथक् पृथक् हैं सोई दिखाते हैं सत्व गुण जिसमें प्रधान सो ब्राह्मण रजोगुण जिसमें प्रधान और सत्वगुण उस में कम हो तम सत्वसे भी कम हो सो क्षत्री रजोगुण प्रधान हो जिस में तमोगुण कम हो सत्व उस में भी कम हो सो वैश्य तमोगुण प्रधान है जिस में सो शूद्र स्पष्टार्थ होने के लिये एक-यंत्र लिखे देते हैं जिस गुण के नीचे तीन का अंक उसको प्रधान जानना जिस के नीचे दोका अंक उस को उससे कम जानना जिस के

| | | |
|---|---|---|
| ३ | सत्व | + |
| २ | रज | ब्राह्मण |
| १ | तम | + |
| ३ | रज | + |
| २ | सत्व | क्षत्रिय |
| १ | तम | + |
| ३ | रज | + |
| २ | तम | वैश्य |
| १ | सत्व | + |
| ३ | तम | + |
| २ | रज | शूद्र |
| १ | सत्व | + |

नीचे अंक को अंक उसको उससे भी कम जानना जैसे क्षत्री वैश्य ये दोनों रज प्रधान हैं भेद इन दोनों में यह है कि क्षत्री में सत्व सिवाय तम कम है वैश्य में तम सिवाय सत्व कमहै परमार्थमें तो यही चार विभागहैं और लौकिक व्यवहार में अनेक जाति हैं उसमें ही ब्राह्मण क्षत्री वैश्य भी हैं इस द्वीपमें हिन्दू लोगोंकी यह रीति है कि ब्राह्मण कोजाति की अपेक्षा में बड़ा समझते हैं क्षत्रीको उससे कम वैश्य को उस से कम और फिर अनेक जातिहैं शूद्र व्यवहार में किसी का नाम नहीं कोई कोई कायस्थों को शूद्र कहते हैं परन्तु समस्त ब्राह्मणादि आचार्य लोगोंका इसमें सम्मत नहीं सिवाय इस के व्यवहार में सब लोग उन को कायस्थही कहतेहैं और उनका व्यवहार चाल चलनक्रिया धर्म ब्राह्मण क्षत्री वैश्योंसे कम नहीं मद्य मांस खानेपीने से यह शंका नहीं आसक्ती है कि कायस्थ शूद्र हैं क्योंकि ब्राह्मण क्षत्री बहुत खातेहैं और बहुत कायस्थ मद्य मांस को छूते भी नहीं जैसे क्षत्री ब्राह्मण वैश्य श्रौतस्मार्त काम करते हैं तैसेही वे करतेहैं और जो नहीं करते तो सब ब्राह्मण क्षत्री वैश्यभी नहीं करते यह कायस्थ शब्द संस्कृतहै और जो इनकी जातिके भेद भट नागर माथरादिहैं वे भी सब संस्कृत पद हैं इस हेतुसे अंत्यज भी नहीं होसक्ते लौकिक में बड़ाई द्रव्य ऐश्वर्य हुकुम सौन्दर्यता लौकिक विद्यादि करके होतीहै और परमार्थ में भगवत् भजनादि शुभ कर्म करने से और ज्ञान निष्ठा होनेसे बड़ाई है यह कोई नहीं कह सक्ता कि कायस्थ भगवत् भजन करने से मुक्त न हों तात्पर्य यह कि कायस्थ एक जाति है जैसे ब्राह्मण खत्री बनिये राजपूत ये जाति हैं व्यवहार में बहुतजाति हैं परमार्थ में चारब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र व्यवहार में राजपूत तगादि को भी चारवर्ण मेंसमझते हैं जाटगूजरादिको कोई क्षत्री कोई शूद्र कोई अंत्यज कहतेहैं यमनादि को म्लेच्छ कहते हैं यह सब व्यवहारकी बोलचाल है जैसे मुसल्मान वर्णाश्रमी को काफ़िर कहते हैं ऐसे ही हिन्दू मुसल्मानों को म्लेच्छ कहते हैं परमार्थ दृष्टि में सब द्वीपोंके निवासी गुणों की तार

तम्यता से ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र हैं क्योंकि सब त्रिगुणात्मक हैं और सब प्रजा का स्वामी एकही है वह समहै यह बात कैसे समझमें आवे कि ऐसे स्वामी ने अन्य द्वीप निवासियों के वास्ते परलोक का साधन न कहाहो आगे जो श्रीभगवान् ब्राह्मणादिका धर्म कहेंगे वह ऐसा साधारण है कि अब तक उस धर्मका किसी एकही जातिमें प्रचार नहीं शम दमादि मुसल्मान अँगरेजों में विशेष देखने में आतेहैं शम दमादि धारण करनेसे यह लोग पापके भागी न होंगे इसी प्रकार खेती बनज शूरतादि का यह नियम नहीं कि शूरतादि धर्म क्षत्री ही में हों अन्य में न हों प्रत्युत जो व्यवहार में क्षत्री कहे जाते हैं उनमें शूरतादि नहीं क्योंकि उनका राज बहुत दिनोंसे जाता रहा ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र परमार्थ दृष्टि में परलोक का साधन करने के लिये वे हैं कि जो पीछे ग्रंथ में लिखे हैं व्यवहार में वे कोई जाति हों व्यवहारमें जो ब्राह्मणादि कहलाते हैं इनकी व्यवस्था यह है कि जिस कालमें समस्त मनुष्योंके चार विभाग किये गये थे तो वह विभाग कोई दिन ऐसाचला कि ब्राह्मणका पुत्र सत्त्व प्रधान शूद्रका पुत्र तम प्रधान होता रहा वीर्य क्रियामें बिगाड़ न हुआ अब इस समय में न वीर्यका ठिकानाहै न क्रियाकाऔर न यह नियम रहा कि ब्राह्मण जातिमें सत्त्व प्रधान ही उत्पन्न हो ब्राह्मण तम प्रधान देखनेमें आते हैं म्लेच्छ शूद्र सत्त्वप्रधान देखनेमेंआते हैं जो तम प्रधानको वेद पढ़ाया जावे तो वह कब पढ़ सक्ता है और सत्त्व प्रधान से टहल कराई जावे तो वह कब करसक्ता है तात्पर्य व्यवहार में तो यही समझना कि जैसा प्रचार है अर्थात् ब्राह्मण कैसाही कुपात्र हो उसी के जिमाने से लौकिक दृष्टि में सूतक पाप दूर होता है परमार्थ में यह समझना कि जिसमें शमदमादि होंगे मुक्ति का भागी वह होगा मुमुक्षु का कल्याण भी उसी से होगा तदुक्तं महा भारते अर्थात् सोई महाभारतमें कहाहै बाक्य बादकी कुछ अपेक्षा नहीं। श्लोक। नजातिः कारणं तात गुणाः कल्याण कारणं॥ वृत्तिस्थ मपि चांडालं तंदेवा ब्राह्मणं विदुः + इस श्लोक का अर्थ यह है कि भीष्म जी राजा युधिष्ठिर से कहते हैं कि हे तात मुक्ति में जाति कारण नहीं शम दमादि गुण कारण हैं जो शमादि गुण चांडाल में भी वर्तेंगे तो देवता उस चांडाल को ब्राह्मण कहेंगे जो व्यवहारिक ब्राह्मण शम दमादि साधनों करके युक्त हो तो वह सबसे श्रेष्ठ है उसमें कोई शंका नहीं कर सक्ता + अविद्वो वा सविद्वोवा ब्राह्मणो मामकीतनुः कदापि श्रूयते घोषः द्वारावत्या॥

महानिशम् + इस श्लोक का स्पष्ट अर्थ है कि ब्रह्म का जानने वाला विद्यामान् पढ़ा हुआ हो वा नपढ़ाहो ब्रह्म वित् ब्रह्म ही है ब्रह्मावत् ब्रह्मैव भवति यह श्रुतिहै ब्राह्मण भगवत् स्वरूपहोना तो बहुत कठिन है दसरुपयेमहीनेकीनौकरीभीउसको मिलनीकठिन है सिवाय इसकेऐसेन वाक्यों में हठ करने से शास्त्र से बड़ा विरोध आताहै मूर्खों को मूर्ख ही पसन्द करता है इस देश में जो अन्यद्वीप निवासियोंका राजहुआ ब्राह्मणादि वर्ण उनके दास गुलाम बने उसमें कारण ऐसेही ऐसे मूर्ख हुये शास्त्र का पढ़ना सुनना छोड़दिया मूर्खों के कहने पर चलने लगे जो पुरुष काम क्रोध लोभादि में फँसा हुआ है उस के कहने को सच्चा समझना कितनी बड़ी मूर्खता है यह कब समझ आवे है कि ऐसे आदमी धोखानदें और जो पोथी बहुत दिनों से उनके ही पासरही हैं क्या आश्चर्य है कि उन पोथियों में कुछ का कुछ न बनादिया हो विशेष क्या लिखें इसीको विचारना चाहिये बारम्बार + ४१ +

**शमोदमस्तपः शौचंक्षांतिरार्जवमेवच । ज्ञानंविज्ञा-नमास्तिक्यंब्रह्मकर्मस्वभावजम् + ४२ +**

शमः १ दमः २ तपः ३ शौचं ४ क्षान्तिः ५ आर्जवं ६ एव ७ च ८ ज्ञानं ९ विज्ञानं १० आस्तिक्यं ११ ब्रह्म कर्म १२ स्वभावजं १३ + ४२+ टी० + ब्राह्मणों का कर्म कहते हैं जिसमें शमादि गुणहोंगे सोईब्राह्मण है दुनिया के व्यवहार में वह कोई जाति हो जो ब्राह्मण बना चाहे वह शमादि कर्मों का अनुष्ठानकरे + अ० + अन्तःकरण का निरोध १ इन्द्रियों का निरोध २ विचारकरना वा व्रतादि करके शरीर का निरोध करना ३ बाहर भीतर पवित्र ४ क्षमा ५ कोमलता ६ और ७ । ८ शास्त्राचार्य द्वारा ज्ञान ९ अनुभव १० विश्वास ११ वेद शास्त्राचार्यादि वाक्य में यह + ब्राह्मणका कर्म १२ स्वाभाविक है १३ अर्थात् पूर्वसंस्कार से यह लक्षण ब्राह्मण में अपने आप बे यत्न होते हैं ब्राह्मण की निष्ठा सदा इनही कर्मों में रहती है इस समय में वीर्य और क्रियाका तो ठिकाना नहीं और जो यह लक्षण भी नदोखेंगेतो कहो कैसे उसको ब्राह्मण जान कर उस के वाक्य पर निश्चय किया जावे शमादि कर्म ब्राह्मणोंके साधारण हैं और प्रतिग्रह लेना सूतक पातक में जीमना रसोई करना विवाहादि में समधी के घर आना जाना इस प्रकार के कर्म असाधारण हैं इन कर्मों में अधिकार उनही ब्राह्मणों का है कि जो लौकिक व्यवहारमें

ब्राह्मण कहे जातेहैं सिवाय उनके अन्य जातिको शोभा नहीं देते+४२+

**शौर्य्यंतेजोधृतिर्दाक्ष्यंयुद्धे चाप्यपलायनं। दानमी-श्वरभावश्चक्षात्रंकर्मस्वभावजं + ४३ +**

शौर्य्यं १ तेजः २ धृतिः ३ दाक्ष्यं ४ युद्धे ५ च ६ अपि ७ अपलायन ८ दान ९ ईश्वर भावः १० च ११ क्षात्रं १२ कर्म १३ स्वभावजं १४ + ४३ + उ० + क्षत्रियों का स्वाभाविक कर्म कहतेहैं+ शूरता १ प्रागल्भ्यता २ धैर्य्य ३ चतुरता ४ युद्धमें ५ । ६ । ७ पीछे को भागना नहीं ८ देना सुपात्रों का ९ नियामक शक्ति १० । ११ क्षत्रियों का कर्म १२ । १३ यह + स्वाभाविक है १४ विचार करो ये सब लक्षण आज कल अंगरेजों में वर्तमान हैं जैसे इन कर्मों में अधिकार उनकोथा कि जो व्यवहार में क्षत्री जाति हैं उन्हों से यह कर्म न हो सके जिन्होंने कर्म किये प्रत्यक्ष देख लो राजका भोग करते हैं इसी प्रकार शम दमादि साधन संपन्नहोगा सो बे संदेह परमानन्दब्रह्म सुख को भोगेगा जो कोई यह शङ्काकरे कि ये म्लेच्छ हैं उनको राज्य का अधिकार नहीं मरकर सब नरक गामी होंगे आप्तकाम विद्वान् इस बातको कभी नहींपसन्द करेंगे सत्वादि गुणों की तारतम्यता से सद्गति दुर्गति सबजीवन को होती है और इस लोक में सदा न पुण्यात्मा रहते हैं न पापात्मा अधिकार की व्यवस्था में यह भी सुनाजाता है कि चिकित्सा वैद्यकविद्या के पढ़ने करने का अधिकार ब्राह्मण कोही है अब विचारो कि व्यवहार में हिकमत वैद्यक किनकी अच्छी है और ब्राह्मणजाति से अन्य जो वैद्यक करते हैं उससे रोगकी निवृत्ति होती है वा नहीं इसी प्रकार सब कर्मों की व्यवस्था है + ४३ +

**कृषिगोरक्ष्यवाणिज्यंवैश्यकर्मस्वभावजं। परिच-र्य्यात्मकंकर्मशूद्रस्यापिस्वभावजं + ४४ +**

कृषि १ गोरक्ष्य २ वाणिज्यं ३ वैश्य कर्म ४ स्वभावजं ५ परिचर्या-त्मकं ६ कर्म ७ शूद्रस्य ८ अपि ९ स्वभावजं १० + ४४ + उ० + आधे श्लोक में वैश्य का कर्म अर्द्ध मंच में शूद्र का कर्म कहते हैं + उ०+ खेती १ गो को रक्षा २ बनज करना ३ वैश्य का कर्म ४ स्वभाविक ५ है और + टहल करनी ६ यह + कर्म७शूद्र का ८ । ९ स्वाभाविक १० है तात्पर्य शूद्र वैश्य क्षत्रियों को चाहिये कि शम दमादि संपन्न ब्राह्मण की यथा अधिकार यथा शक्ति सेवा करें तब सब के धर्म बने रहेंगे + ४४ +

**स्वेस्वेकर्मण्यभिरतःसंसिद्धिंलभतेनरः। स्वकर्मनिरतःसिद्धिंयथाविन्दतितच्छृणु ॥ ४५ ॥**

स्वे १ स्वे २ कर्मणि ३ अभिरतः ४ नरः ५ सं सिद्धिं ६ लभते ७ स्वकर्म निरतः ८ सिद्धिं ९ यथा १० विन्दति ११ तत् १२ शृणु १३ ॥ ४५ ॥ उ० ॥ अपने अपने कर्मों का अनुष्ठान करते हैं उसकाफल कहते हैं ॥ अ० ॥ अपने १ अपने २ कर्म में ३ प्रीति करनेवाला ४ नर ५ अन्तष्करण शुद्धि द्वारा भगवत् प्रसाद से ॥ मोक्ष को ६ प्राप्त होता है ७ अपने कर्म में निरन्तर प्रीति करनेवाला ८ मोक्ष को ९ जैसे १० प्राप्त होता है ११ सो १२ सुन १३ ॥ ४५ ॥

**यतःप्रवृत्तिर्भूतानांयेनसर्वमिदंततं। स्वकर्मणातमभ्यर्च्यसिद्धिंविन्दतिमानवः ॥ ४६ ॥**

यतः १ भूतानां २ प्रवृत्तिः ३ येन ४ इदं ५ सर्वं ६ ततं ७ तं ८ स्वकर्मणा ९ अभ्यर्च्य १० मानवः ११ सिद्धिं १२ विन्दति १३ ॥ ४६ ॥ उ० ॥ आधे मंत्र में तटस्थ लक्षण ईश्वर का कह फिर आधे श्लोक में उसीकी भक्ति करने का फल कहते हैं ॥ अ० ॥ जिससे १ भूतों की २ प्रवृत्ति ३ अर्थात् जिसकी सत्ता से सब जगत् चेष्टाकरता है और ॥ जिस करके ४ यह ५ सर्व ६ जगत् ॥ व्याप्त ७ हो रहा है ॥ तिस अन्तर्यामी ईश्वर को ८ अपने कर्म करके ९ अर्थात् अपने कर्म से आराधन करके १० प्राणी ११ अन्तष्करण शुद्धि द्वारा उसी अन्तर्यामी की कृपा से ज्ञाननिष्ठ होकर ॥ परमानन्द स्वरूप आत्मा को १२ प्राप्तहोता है १३ तात्पर्य समस्त जगत् में आनन्द पूर्ण होरहा है कोई पदार्थ ऐसा नहीं कि जिसमें आनन्द न हो और वह आनन्दही साक्षात् भगवत् का स्वरूप है जिसकी तनकसी छाया में त्रिलोकी आनन्द है ॥ ४६ ॥

**श्रेयान्स्वधर्मोविगुणःपरधर्मात्स्वनुष्ठितात्। स्वभावनियतंकर्मकुर्वन्नाप्नोतिकिल्विषम् ॥ ४७ ॥**

स्वनुष्ठितात् १ परधर्मात् २ स्वधर्मः ३ विगुणः ४ श्रेयान् ५ स्वभावनियतं ६ कर्म ७ कुर्वन् ८ किल्विषं ९ न १० आप्नोति ११ ॥ ४७ ॥ उ० ॥ अपने धर्म में अवगुण समझकर पराये धर्म का जो अनुष्ठान करते हैं उनको पाप होता है अर्थात् जो प्रवृत्ति धर्म के योग हैं वे निवृत्ति धर्म को श्रेष्ठ समझकर जो निवृत्ति धर्म अनुष्ठान किया चाहें तो अन्तः-

करण में रजोगुण तमोगुण भरे रहने से निवृत्ति धर्म का अनुष्ठान कब होसक्ता है प्रवृत्ति धर्म को भी छोड़कर दोनों ओर से भ्रष्टहो जाते हैं और जो निवृत्ति धर्म के योग हैं वे कुसंग के बश से वा और किसी संस्कार से अपने धर्म को छोड़ प्रवृत्ति धर्म का अनुष्ठान करेंगे तो फिर गई हुई रजोगुणी तमोगुणी वृत्ति उस के अन्तःकरण में प्रवेश हो जावेगी इसी को पाप कहते हैं इस वास्ते अपने ही धर्म का अनुष्ठान करना चाहिये + अ० + सुन्दर १ पराये धर्म से २ अपनाधर्म ३ गुण-रहित ४ भी + श्रेष्ठ ५ अपने गुण के अनुसार जिसका नियम किया गयाहै उस कर्म को ६ । ७ करता हुआ ८ पाप को ९ नहीं १० प्राप्त होता ११ तात्पर्य जैसे विषमें रहनेवाला जीव विष खाकर नहीं मरता इसीप्रकार अपने गुणके अनुसार कर्म करता हुआ बन्ध को नहीं प्राप्त होता मेवा तस्मै का भोजन बहुत सुन्दरहै परंतु ज्वर वालेके कामका नहीं + ४७ +

**सहजंकर्मकौन्तेयसदोषमपिनत्यजेत् । सर्वारम्भाहिदोषेणधूमेनाग्निरिवावृताः + ४८ +**

कौंतेय १ सहजं २ कर्म ३ सदोषं ४ अपि ५ न ६ त्यजेत् ७ सर्वारंभाः ८ हि ९ दोषेण १० आवृताः ११ धूमेन १२ अग्निः १३ इव १४ + ४८ + उ० + कोई कर्म शुभ अशुभ ऐसा नहीं कि जिस में कुछ दोष न हो इस वास्ते + अ० + हे अर्जुन १ स्वभाव के अनुसार जो गुण अपने में प्रधान हो सत्त्व वा रज वा तम वैसेही कर्म शमादि वा परिचर्या युद्ध कृषि आदि कर्म २ । ३ दोषसहित ४ भी ५ है परंतुयावत् अन्तःकरण शुद्ध नहो तावत् उनको + नहीं ६ त्यागना ७ समस्त कर्म ८ । ९ किसी न किसी + दोष करके १० मिले हुये हैं ११ धूमकरके १२ अग्नि १३ जैसे १४ गुण दोष का फूल कांटे की तरह संग है बुद्धिमान् को चाहियेकि धर्ममें कांटेवत् दोषपर दृष्टि न दे गुणग्राही रहे + ४८ +

**असक्तबुद्धिःसर्वत्रजितात्माविगतस्पृहः । नैष्कर्म्यसिद्धिंपरमांसंन्यासेनाधिगच्छति + ४९ +**

सर्वत्र १ असक्तबुद्धिः २ जितात्मा ३ विगतस्पृहः ४ परमां ५ नैष्कर्म्यसिद्धिम् ६ संन्यासेन ७ अधिगच्छति ८ + ४९ + उ० + इस प्रकार कर्म करें + अ० + सर्वत्र शुभ अशुभ पाप पुण्य जनक किसी कर्ममें १ जिसकी बुद्धि आसक्त नहीं २ जीता हुआ है कार्य कारण संघात जिस

का ३ दूर होगई है इस लोक परलोक के पदार्थों की इच्छा जिसकी ४ सो + परं ५ निष्कामता के अवधि को ६ सब त्याग करके ७ प्राप्त होता है ८ तात्पर्य आनन्द स्वरूप आत्मा निष्क्रियकी प्राप्ति सबपदार्थोंके त्याग करने से होती है सिवाय आनन्द स्वरूप आत्मा के किसी के पंथ मत सम्प्रदाय में आसक्त नहीं होना यही परम सिद्धि है + ४९ +

**सिद्धिंप्राप्तोयथाब्रह्म तथाप्नोतिनिबोधमे। समासे-नैवकौन्तेयनिष्ठाज्ञानस्ययापरा + ५० +**

यथा १ सिद्धिं २ प्राप्तः ३ ब्रह्म ४ आप्नोति ५ तथा ६ कौंतेय ७ या ८ ज्ञानस्य ९ परा १० निष्ठा ११ समासेन १२ एव १३ मे १४ निबोध १५ + ५० + उ० + परानिष्ठा ज्ञानकी श्री भगवान् अब आगे पांच श्लोकों में कहेंगे इस वास्ते अर्जुन को सम्बोधन करके कहते हैं कि हे कौंतेय चेतन्य हो चित्त को एकाग्र कर परम सिद्धान्तको सुन + अ० + जैसे १ सब कर्मों का यथा अधिकार अनुष्ठान करके और उनका फल त्याग करके नैष्कर्म्य की + सिद्धि को २ प्राप्त हुआ ३ ब्रह्म को ४ प्राप्त होता है ५ तैसे ६ हे अर्जुन ७ जो ८ ज्ञान की ९ परा १० निष्ठा ११ है सो + संक्षेप से १२ ही १३ मुझ से सुन १४ + ५० +

**बुद्ध्याविशुद्धयायुक्तो धृत्यात्मानंनियम्यच। श-ब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वारागद्वेषौव्युदस्यच + ५१ +**

विशुद्धया १ बुद्ध्या २ युक्तः ३ च ४ धृत्या ५ आत्मानं ६ नियम्य ७ शब्दादीन् ८ विषयान् ९ त्यक्त्वा १० च ११ रागद्वेषौ १२ व्युदस्य १३ + ५१ + उ० + सोई ज्ञान की परानिष्ठा श्री भगवान् कहते हैं + अ० + सतोगुणी बुद्धि करके युक्त १।२।३ और ४ सतोगुणी + धृति करके ५ कार्य कारण संघात को ६ निरोधकर ७ शब्दादि विषयोंको ८।९ त्याग करके १० और ११ रागद्वेष को १२ दूर करके १३ ब्रह्मको प्राप्तहोता है तीसरे श्लोक के साथ इसका सम्बन्ध है तात्पर्य शब्दादि के त्याग में देह यात्रा मात्र क्रिया का निषेध नहीं शरीर का निरोध यह है कि शौच स्नानादि समय तो अवश्य उठना रात्रिके बीच में डेढ़ प्रहर सोना सिवाय इसके एक जगह एकान्त आसनपर विना आश्रय सीधा बैठकर आत्मा का ध्यानकरना चाहिये संन्यासी एक जगहजो न रहें तो चारगो कोस से सिवाय न चलें + ५१ +

विविक्तसेवीलध्वाशीयतवाक्कायमानसः। ध्यान-योगपरोनित्यंवैराग्यंसमुपाश्रितः ॥ ५२ ॥

विविक्तसेवी १ लघ्वाशी २ यतवाक्कायमानसः ३ नित्यं ४ ध्यान-योग परः ५ वैराग्यं ६ समुपाश्रितः ७ ॥ ५२ ॥ अ० ॥ बन जंगल पहाड़ नदी के किनारे इत्यादि देश में कि जिस जगह स्त्री चोरबालक मूर्ख सिंह सर्पादि का भय सम्बन्ध न हो ऐसे देश के सेवन करने का स्वभाव है जिस का १ ऐसा हो ॥ दो भाग अन्न करके और एक भाग जल करके पूर्ण करे और एक भाग श्वास के आने जाने के लिये अवशेष खाली रक्खे तात्पर्य थोड़ी सी क्षुधा बनी रहे अर्थात् कम भोजन करने का स्वभाव है जिस का उसको लघ्वाशी कहते हैं २ जीते हुये हैं वाक् शरीर मन जिसके अर्थात् जो लक्षण सत्रहवें अध्याय में सतोगुणी तपका लिखा है उसी प्रकार वर्तते हैं ३ आत्म ध्यान योग को अर्थात् निदि-ध्यासन को परात्पर जान कर ॥ नित्य ४ ध्यान योग परायण रहते हैं ५ नित्य शब्द कहने का यह तात्पर्य है कि पढ़ना पढ़ाना जपपाठादि कर्मों का त्याग चाहिये ज्ञान निष्ठ को ॥ वैराग्य का ६ बहुत अच्छी तरह आश्रय कर रक्खा है ७ सिवाय परमानन्द स्वरूप आत्मा के यावत् पदार्थ इस लोक परलोक के देखे सुने हैं सब को अनित्य दुःख दायी अनात्म धर्म वाला जान कर किसी में न कुछ प्रीति करता है न द्वेष करता है परमज्ञाननिष्ठ का यह लक्षण है ॥ ५२ ॥

अहंकारंबलंदर्पंकामंक्रोधंपरिग्रहम्। विमुच्यनिर्म-मःशान्तोब्रह्मभूयायकल्पते ॥ ५३ ॥

अहंकारं १ बलं २ दर्पं ३ कामं ४ क्रोधं ५ परिग्रहं ६ विमुच्य ७ निर्ममः ८ शान्तः ६ ब्रह्मभूयाय १० कल्पते ११ ॥ ५३ ॥ अ० ॥ देहादि में अहं बुद्धि अर्थात् हम विरक्त संन्यासी ब्राह्मण जगत्के गुरु श्रीमान्विद्या वाले हैं ऐसाऐसा अहंकार १ योगके बलसे किसीका बुरा भला करना विद्या के बलसे दूसरे का मत खंडन करना २ विद्या विरक्त धन ऐश्व-र्यादि का मन में गर्व रखना ३ इस लोक परलोकके पदार्थों की इच्छा ४ नास्तिकादि के साथ द्वेष ५ देह यात्रा से सिवाय संचय करना ६ जो ऊपर कहे इन सब अहंकारादि को मन से त्याग कर ७ संन्यासादिधर्म और अद्वैत वाद मतादि में ॥ ममता रहित ८ भूतादि कालकी चिंता-

रहित ६ पुरुष + ब्रह्म को १० प्राप्त वत् मान कर यह कहा जाता है कि ब्रह्म को प्राप्त होता है वास्तव ब्रह्म सदा एक रस है + ५३ +

**ब्रह्मभूतःप्रसन्नात्मानशोचतिनकांक्षति । समःसर्वेषुभूतेषुमद्भक्तिंलभतेपराम् + ५४ +**

ब्रह्मभूतः १ प्रसन्नात्मा २ न ३ शोचति ४ न ५ कांक्षति ६ सर्वेषु ७ भूतेषु ८ समः ९ परां १० मद्भक्तिं ११ लभते १२ + ५४ + उ० + ब्रह्म को जो प्राप्त होता है उसका फल निरूपण करतेहैं दो श्लोकोंमें + अ० + ब्रह्मस्वरूप हुआ १ प्रसन्न चित्तहै जिसका २ सो बीतीहुई बातोंका + नहीं शोचकरता है ४ आगे को कुछ नहीं ५ चाहता है ६ सब भूतों में ७८ सम ९ है जो श्री भगवान् कहते हैं कि वह मेरी पराभक्तिको १०।११ प्राप्त होता है १२ सातवें अध्याय में चार प्रकार की भक्ति कही है चारों में जो पीछे परे कही उसको पराभक्ति कहते हैं ज्ञान की परानिष्ठा कहो वा पराभक्ति कहो बात एकही है इस जगह पाषाणादि मूर्तियों का पूजनादि और राम कृष्णादि सावयव मूर्तिमान् भगवत् की भक्ति इस जगह भक्ति नहीं ज्ञाननिष्ठा का नाम यहां भक्ति है यह पराभक्ति फल है और सेवा पूजादि साधन हैं प्रकरण देख कर अर्थ समझना चाहिये इस अध्याय में पचास के श्लोक में श्री भगवान् ने स्पष्ट कहा है कि हे अर्जुन ज्ञान की परा निष्ठा मुझसे सुन और वह प्रकरण अब तक समाप्त नहीं हुआ पचपन के श्लोक में समाप्त होगा वहांतक ज्ञाननिष्ठा का वर्णन है + ५४ +

**भक्त्यामामभिजानाति यावान्यश्चास्मितत्त्वतः । ततोमांतत्त्वतोज्ञात्वाविशतेतदनन्तरम् + ५५ +**

तत्त्वतः १ यावान् २ च ३ यः ४ अस्मि ५ मां ६ भक्त्या ७ अभिजानाति ८ ततः ९ तत्त्वतः १० मां ११ ज्ञात्वा १२ तदनन्तरं १३ विशते १४ + उ० + श्री भगवान् कहते हैं कि जो मेरा यथार्थ स्वरूपहै वह इसी ज्ञाननिष्ठा से कि जो पीछे चार श्लोकों में कही जाना जाता है और सब वेद विधि इसका साधन है + अ० + वास्तव १ जैसा २ और ३ जो ४ हूं मैं ५ वैसा + मुझको ६ ज्ञान लक्षण + भक्ति करके ७ भले प्रकार जानता है ८ पीछे उसके ९ अर्थात् + यथार्थ १० मुझको ११ जान कर १२ फिर १३ मुझमें ही + मिल जाता है १४ तात्पर्य जैसे

परमानन्द स्वरूप आत्मा उपाधि सहित और उपाधि रहितहै सो ज्ञान निष्ठा से ही जाना जाता है जो आत्माका जानना वही उसमें मिलना है पहिले जानना और पीछे उसमें मिलना यह एक बोली की रीति है ब्रह्म का जानने वाला ब्रह्म स्वरूप ही है यह वेदार्थ है + ५५ +

**सर्वकर्माण्यपिसदाकुर्वाणोमद्व्यपाश्रयः। मत्प्रसादादवाप्नोतिशाश्वतंपदमव्ययम् + ५६ +**

सदा १ सर्वकर्माणि २ मद्व्यपाश्रयः ३ कुर्वाणः ४ अपि ५ मत्प्रसादात् ६ अव्ययं ७ शाश्वतं ८ पदं ९ अवाप्नोति १० + ५६ +उ०+ ज्ञाननिष्ठा भगवत् की कृपा से प्राप्त होती है जब प्रथम वेदोक्त निष्काम कर्म करे वह परमपद का मार्ग श्री भगवान् दिखाते हैं + अ० + सदा १ सब कर्मों को २ मुझ भगवत् का आश्रालेकर ३ करता हुआ ४ निश्चय ५ भगवत् प्रसाद से ६ निर्विकार नित्य पदको ७। ८। ९ प्राप्त होताहै १० तात्पर्य प्रभु की आज्ञा लेकर यथाशक्ति देशकाल वस्तुके अनुसारनिष्काम कर्म करना चाहिये बिना आश्रय कर्मों का निर्बाह कठिन है और इस समय में तो सिवाय परमेश्वर के और किसी कर्म धर्म का भरोसा नहीं केवल उसी करुणाकर की कृपा से सब अनर्थ दूर हो सक्तेहैं और परमपद परमानन्द स्वरूप आत्माकी प्राप्ति होनी उसीकी कृपा का फल समझना चाहिये अकृत उपासक को ज्ञाननिष्ठा का कभी परिपाक नहीं होता + ५६ +

**चेतसासर्वकर्माणिमयिसंन्यस्यमत्परः। बुद्धियोगमुपाश्रित्यमच्चित्तःसततंभव + ५७ +**

मत्परः १ चेतसा २ सर्वकर्माणि ३ अपि ४ संन्यस्य ५ बुद्धियोगं ६ उपाश्रित्य ७ सततं ८ मच्चित्तः ९ भव १० + ५७ + अ० + मुझमेंपरायण होकर १ चित्त २ सब कर्मों को ३ मेरे विषय ४ त्याग करके ५ और + ज्ञान योग को ६ आश्रय करके ७ सदा ८ मुझमेंचित्तवाला ९ हो १० अर्थात् तेरा चित्त सदा मुझमें ही लगा रहे ऐसाही तात्पर्य यह कि सब धर्म कर्म वास्ते अन्तःकरण की शुद्धिके हैं जिसका अन्तःकरण शुद्ध होजाता है उस पर परमेश्वर प्रसन्न होते हैं तब ज्ञान में निष्ठा होती है फिर उस ज्ञाननिष्ठा के परिपाकार्थ कर्मों का त्याग अवश्यहै यह प्रभु की आज्ञा है प्रभु की आज्ञा से कर्मों का त्याग करना यही प्रभु में कर्मों

का सन्यास करना कर्मों का संन्यास करके फिर निरन्तर भक्ति करनी चाहिये ज्ञान योग का आश्रा यह है कि हरि भक्ति से मुझको ज्ञाननिष्ठा अवश्य प्राप्त होगी ऐसे ज्ञान निष्ठा की आशा रखनी यही ज्ञान योग का आश्रा करना है इस प्रकरण में यही अर्थ है ज्ञान योग का आश्रय करने का + ५७ +

**मच्चित्तःसर्वदुर्गाणिमत्प्रसादात्तरिष्यसि । अथचेत्त्वमहंकारान्नश्रोष्यसिविनंक्ष्यसि + ५८ +**

मच्चित्तः १ सर्वदुर्गाणि २ मत्प्रसादात् ३ तरिष्यसि ४ अथ ५ चेत् ६ त्वं ७ अहंकारात् ८ न ६ श्रोष्यसि १० विनंक्ष्यसि ११ + ५८ + अ० ॥ मुझमें चित्त लगाकर १ सब दुर्गमों को २ मेरे प्रसादसे ३ तरजायगा तू ४ और ५ जो ६ तू ७ अहंकार से ८ नहीं ६ सुनेगा १० नाश होजायगा तू ११ तात्पर्य परमेश्वर मोक्ष मार्ग का सुगम उपाय अपनी भक्ति बताते हैं जो वर्णाश्रम के अहंकार से भक्ति का आदर न करेंगे तो उनका पुरुषार्थ भ्रष्ट हो जायगा विना प्रसाद प्रभुके अपने मतलब को न पहुंचेंगे हरि की कृपा ऐसा पदार्थ है कि कैसाही कठिन पदार्थ हो भगवत् भक्त को सुलभ हो जाता है भगवान् की आज्ञा माननी यही भक्तिहै चतुरता का भक्ति में कुछ काम नहीं + ५८ +

**यदहंकारमाश्रित्यनयोत्स्यइतिमन्यसे । मिथ्यैवव्यवसायस्तेप्रकृतिस्त्वांनियोक्ष्यति + ५६ +**

यद् १ अहंकारं २ आश्रित्य ३ इति ४ मन्यसे ५ न ६ योत्स्ये ७ ते ८ एव ६ व्यवसायः १० मिथ्या ११ प्रकृतिः १२ त्वां १३ नियोक्ष्यति १४ + ५६ + अ० + जिस अहंकार को १ । २ आश्रय करके ३ यह ४ तू मानता है ५ कि + नहीं ६ युद्धकरूंगामें ७ तेरा ८ यह ६ निश्चय १० झूठा ११ है तेरास्वभाव १२ तुझ से १३ युद्ध करावेगा १४ तात्पर्य जिस का जो धर्म है उसको उसी का अनुष्ठान करना चाहिये अन्य धर्म का अनुष्ठान उससे नहीं हो सकेगा जैसे अर्जुन क्षत्री है भिक्षा मांगनी उस से कठिन है क्योंकि क्षत्री में रजोगुण प्रधान होता है वह शूरतादि धर्म में ही प्रेरता है और वही अन्तःकरण की शुद्धि का हेतु है + ५६ +

**स्वभावजेनकौन्तेयनिबद्धःस्वेनकर्मणा । कर्तुं नेच्छसियन्मोहात्करिष्यस्यवशोऽपितत् + ६० +**

कौन्तेय १ स्वभावजेन २ स्वेन ३ कर्मणा ४ निबद्धः ५ यत् ६ कर्तुं ७ न ८ इच्छसि ९ मोहात् १० अवशः ११ तत् १२ अपि १३ करिष्यसि १४ + ६० + अ० + हे अर्जुन १ स्वाभाविक २ अपने ३ कर्म करके ४ बँधा हुआ ५ जो ६ युद्ध + करनेको ७ नहीं ८ इच्छा करता है तू ९ अविवेक से १० अवश हुआ ११ सोई १२। १३ युद्ध + करेगा तू १४ तात्पर्य इस समय तेरे अन्तःकरण में सतोगुणी वृत्ति का आविर्भाव होरहा है कि जिस से तुझ को दया आरही है युद्ध अच्छा नहीं लगता भिक्षामांगना प्रिय प्रतीत होता है जब यह वृत्ति तिरोभाव होगी रजोगुणी वृत्ति कि जो विशेष करके तेरे अन्तःकरण में प्रधान रहतीहै उसका जब आविर्भाव होगा उस समय यह दया तेरी सब जाती रहैगी रजोगुण के वश होकर अवश्य युद्ध करेगा तू + ६० +

**ईश्वरःसर्वभूतानांहृद्देशेऽर्जुनतिष्ठति। भ्रामयन्सर्वभूतानियंत्रारूढानिमायया + ६१ +**

अर्जुन १ ईश्वरः २ सर्वभूतानां ३ हृद्देशे ४ तिष्ठति ५ सर्वभूतानि ६ मायया ७ भ्रामयन् ८ यंत्रारूढानि ९ + ६१ + उ० + प्रकृति के वश जीवहै और प्रकृति ईश्वर के बश है सोई कहते हैं कि + अ० + हे अर्जुन १ ईश्वर २ सब भूतोंके ३ हृदय में ४ बिराजमानहै ५ सब भूतों को ६ मायाकरके ७ भ्रमा रहा है ८ कैसे हैं वे भूतकि जैसे + यंत्र में आरूढ़ अर्थात् कलमें लगी हुई पुतली को बाजीगर खिलारी नचाता है तात्पर्य जीवस्वतंत्र नहीं शास्त्र मार्ग को छोड़ अपनी बुद्धि से बुरे भले कर्मों को नहीं जान सक्ता श्रुतिस्मृति दो ईश्वरकी आज्ञा हैं जो दोनों को सत्य समझ कर वेदोक्त मार्ग पर चलता रहेगा उस को ईश्वर सबबखेड़ों से छुड़ा कर परमानन्द प्राप्त करदेंगे और जो अपनी चतुराई चलावेगा वह बेसंदेह धोखा खावेगा + ६१ +

**तमेवशरणंगच्छसर्वभावेनभारत । तत्प्रसादात्परांशांतिंस्थानंप्राप्स्यसिशाश्वतम् + ६२ +**

भारत १ सर्वभावेन २ तं ३ एव ४ शरणं ५ गच्छ ६ तत्प्रसादात् ७ परां ८ शांतिं ९ शाश्वतं १० स्थानं ११ प्राप्स्यसि १२ + ६२ + उ० + जबकि जीव स्वतंत्र नहीं तो उसको अवश्य परमेश्वर की आज्ञा चाहिये इस हेतु से हे अर्जुन तूभी परमेश्वर को शरण ले + अ० + हे अर्जुन

१ सब भाव करके २ अर्थात् तन मन धन करके + तिस ३ हि ४ रक्षा करने वाले को ५ प्राप्त हो ६ अर्थात् उसी अन्तर्यामी की शरणहो + उन अन्तर्यामी के प्रसाद से ७ परं शान्ति को ८ । ९ और + नित्य स्थानको १० । ११ प्राप्त होगा तू १२ + ६२ +

**इतितेज्ञानमाख्यातंगुह्याद्गुह्यतरंमया । विमृश्यै-तदशेषेणयथेच्छसितथाकुरु + ६३ +**

इति १ मया २ गुह्यात् ३ गुह्यतरं ४ ज्ञानं ५ आख्यात ६ ते ७ एतत् ८ अशेषेण ९ विमृश्य १० यथा ११ इच्छसि १२ तथा १३ कुरु १४+ ६३ + भ० + यह १ मैंने २ गुप्त से ३ अतिगुप्त ४ ज्ञान ५ कहा ६ तुझसे ७ इस ८ समस्तको ९ विचार करके १० जैसी ११ तेरी इच्छाहो १२ तैसाकर १३ । १४ तात्पर्य ग्रंथको आदि से अन्तलों भलेप्रकार विचा-रना चाहिये तब ग्रंथ का तात्पर्य प्रतीत होता है दो चार पत्र वा दो चार अध्याय के विचारने से वक्ता का तात्पर्य नहीं जाना जाता है प्रत्युत मूर्ख लोग पूर्वपक्ष को सिद्धान्त समझ बैठतेहैं क्योंकि बहुतजगह पूर्वपक्ष कई २ पत्रों से होता है इसी हेतुसे साधनों को सिद्धान्त समझ बैठते हैं बहुत लोग + ६३ +

**सर्वगुह्यतमंभूयःशृणुमेपरमंवचः । इष्टोसिमेदृढमि-तिततोवक्ष्यामितेहितम् + ६४ +**

सर्वगुह्यतमं १ मे २ परमं ३ वचः ४ भूयः ५ शृणु ६ इति ७ दृढं ८ मे ९ इष्टः १० असि ११ ततः १२ ते १३ हितं १४ वक्ष्यामि १५ + ६४ + उ० + जो तुझसे समस्तगीता शास्त्रका विचार न होसके इसवास्ते मैंही समस्तगीता का सार दो श्लोकों में कहताहूं तू मेरा प्यारा है तेरे हितकेवास्ते बारम्बार कहताहूं + भ०+ प्रथम तो कर्म मार्गही बतलाना गुप्त है और भक्ति मार्ग उससे भी गुप्ततर है और ज्ञाननिष्ठा सबसे गुप्त-तम है ऐसे गुप्ततम १ मेरे २ परं ३ वचन को ४ फिर ५ सुन ६ अत्यन्त ७ । ८ मेरा ९ प्यारा १० है तू ११ इसवास्ते १२ तेरे १३ हितके लिये १४ कहूंगा १५ + ६४ +

**मन्मनाभवमद्भक्तोमद्याजीमांनमस्कुरु । मामेवैष्य-सिसत्यंतेप्रतिजानेप्रियोसिमे + ६५ +**

मन्मना १ मद्भक्तः २ मद्याजी ३ भव ४ मां ५ नमस्कुरु ६ मां ७ एव ८ एष्यसि ९ ते १० सत्यं ११ प्रतिजाने १२ मे १३ प्रियः १४ असि १५ + ६५ + उ० + इस मंच में कर्मनिष्ठाका सार कहतेहैं + ब० + मुझमें मनवाला १ हो अर्थात् मुझ परमेश्वर में मनलगा और + मेराभक्त २ हो अर्थात् मेरी भक्तिकर और + मेरा पूजन करने वाला ३ होतू ४ अर्थात् मेरा पूजन कर और + मुझको ५ नमस्कार कर ६ मुझ को ७ ही ८ प्राप्त होगा ९ तुझसे १० सत्य ११ प्रतिज्ञा करताहूं मैं १२ मेरा १३ प्यारा १४ हैतू १५ तात्पर्य ज्ञाननिष्ठा का साधन कर्मनिष्ठा है कर्मोंमें भगवद्भक्ति सारहै सो दो प्रकार की है अन्तरंग बहिरंग नमस्कार पूजनादि बहिरंग हैं भगवत् में मन लगाना आदि अन्तरंग यावत् परमेश्वर के स्वरूप में भले प्रकार मन न लगे तावत् पाठ मंत्रों का जप भगवत् भक्तों की सेवा शास्त्र को श्रवण करता रहै यद्यपि ज्ञानकेसाधन बहुत हैं परन्तु सबमें ये तीन सार हैं भगवद्भक्ति साधु सेवा शास्त्रका श्रवण और तीनों में भी साधु सेवा सार है कि जिसके प्रतापसे सबसाधन हो जाते हैं ये तीनों साधन सुगम प्रत्यक्ष फल देने वाले हैं और इस समय में इनका ही अनुष्ठान हो सक्ता है यज्ञादि कर्म और वर्णाश्रम विहित धर्म का अनुष्ठान होना कठिन है साधु सेवादि साधनों में जो प्रतिबन्धहै सो दिखातेहैं बहुत जीव भगवत् से विमुख तो इस वास्ते हैं किनिराकार एक रस नित्य मुक्त शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप भगवत् का तो उनकी समझ में नहीं आता दुराग्रह अश्रद्धा मन्द भाग्य कम समझ से और राम कृष्णादि साकार भगवत् रूपको मनुष्य समझते हैं और उस स्वरूप में नाना प्रकार की तर्क करते हैं भगवद्भक्ति में यही प्रतिबन्ध है यावत् भगवत् का स्वरूप शुद्ध सच्चिदानन्द नित्यमुक्त शास्त्र की रीति पूर्वक समझ में आवे तावत् मूर्तिमान् ईश्वर की उपासना आवश्यक है और शास्त्र के श्रवण से इस हेतु से विमुख हैं कि ब्रह्म विद्या वेदान्त शास्त्र उपनिषद सांख्य पातंजलादि शास्त्र तो उनकी समझ में आते नहीं प्रत्युत बहुतलोग यह भी नहीं जानते कि उन पोथियोंमें क्या बातहै और रामायण महाभारत श्रीमद्भागवतादि ग्रंथोंको कहानीबताते हैं उन ग्रंथों के तात्पर्य को इतना तो समझतेही नहीं कि जैसे समुद्र में से एक बूंद जल होता है यावत् वेदान्त शास्त्र का अर्थ भले प्रकार समझमें न आवे तावत् महाभारतादि ग्रंथों को श्रवण करना चाहिये और साधु सेवा से इस वास्ते विमुख हैं कि साधु को कम जाति और

वेविद्या के स्वरूप मानकर संग सेवा साधुओं की नहीं करते अनेकमान बड़ाई अहंकारादि में फँसे रहते हैं जैसे आप सदोष हैं साधुओं को भी अपनी ही सदृश जानते हैं मन्दभाग होने से उनके शुभ कर्म पूजा पाठ जप शमदमादि वैराग्य क्रियापर दृष्टि नहीं जाती गुण देखने को आंखों से अंधे हैं कुकर्मों से कोवेकी सी दृष्टि उनकी हो रही है और एक बड़ा आश्चर्य यहहै कि साधुको तो वेदोक्त निर्दोष तलाश करते हैं और जो पुत्र मित्रादि में हज़ारों दोष भरे हुये हैं उनको मोक्षका साधन समझतेहैं मूर्ख यह नहींसमझते कि निर्दोष महात्मा निर्दोषों को ही मिलते हैं मुझ से निर्भागोंको दर्शन भी नहीं देते और बहुत लोग ऐसी साधुसेवा करते हैं कि जहां तक उनसे हो सके साधुओं की बुराई करनी और साधुओं को दुःखदेना इसी को मोक्षका साधन समझते हैं तात्पर्य इस समय में साधुबहुतहैं हंस कैसी चाल जिनकी है उनको दीखते हैं और जिनकोकौवे कैसी दृष्टिहै उनको न कभी साधु मिलेंगे न शास्त्रार्थ इनकोसमझमें आवेगा न भगवत् भक्ति उन से हो सकेगी जैसे माता अपने पुत्रके मुख पर दुष्टोंकी दृष्टि बचने के लिये स्याही की विन्दी लगा देती है इसीप्रकार जो कदाचित् किसी साधु में कोई दोष अपने दोष से प्रतीत हो तो उस दोष को स्याही की विन्दीवत् समझना चाहिये भगवत् भक्त भगवत् के पुत्र की सदृश हैं + ६५ +

**सर्वधर्मान्परित्यज्यमामेकंशरणंव्रज । अहंत्वांसर्व-पापेभ्योमोक्षयिष्यामिमाशुचः + ६६ +**

उ०+समस्त गीतामें कर्म निष्ठा और ज्ञाननिष्ठा का वर्णनहै कर्मनिष्ठा का सारार्थ तो पिछले मंत्र में कहा अब ज्ञान निष्ठा का सारसंक्षेप इस मंत्रमें कहते हैं + अ० + सब धर्मोंको १ त्याग कर २ मुझ एक शरण को ३ । ४ । ५ प्राप्त हो ६ मैं ७ तुझ को ८ सब पापों से ९ छुड़ादूंगा१० मत शोच कर ११ तात्पर्य शरीर इन्द्रिय प्राण अन्तःकरण के जो जो धर्म हैं उन सब धर्मों को त्याग कर जो आश्रय लेना चाहिये सो कहते हैं शरण, और, एक, ये दोनों मां शब्द के विशेषण हैं शरणं गृहरक्षि-त्रोरित्यमरः अमरकोश में शरण का अर्थ गृह अर्थात् आश्रय और रक्षा करने वाला ये दोअर्थ हैं श्री भगवान् कहते हैं कि मुझको प्राप्त हो कैसा हूं मैं कि, एक, अर्थात् अद्वैत, कभी किसी काल में जिस में दूसरा नहीं और फिर कैसा हूं मैं कि आश्रय शरण हूं वा रक्षा करने वाला हूं

द्वितीयाद्वैभयंभवति दूसरे से अवश्य भय होता है यह वेद ने कहा है इस वास्ते तू अद्वैत प्राप्त हो वह रक्षा करने वाला है वहां भय नहीं यही आशय है इस मंत्र का तात्पर्य बे सन्देह अभेदमें है और कहने सुनने में इसका तात्पर्यार्थ भेद में प्रतीत होता है जहां तक वाणी है वहां तक व्यवहारिक द्वैत है परमार्थ में द्वैत नहीं सिवाय इसके अक्षरार्थ से भी इस श्लोक का अर्थ अद्वैत विषय है सो भी सुनो अहम्शब्द और माम्शब्द ये दोनों अस्मत् शब्दके प्रयोग हैं श्री भगवान् स्पष्टकहते हैं कि अहं यह शब्द अर्थात् केवल माया अविद्या रहित शुद्ध अहंकार अर्थात् अहं ब्रह्मास्मि यह महा वाक्यार्थ यह निष्ठा तुझको संसारसे छुड़ावेगी शरीरादि के जो धर्म उनके त्याग में मत शोच कर यह अर्थगीता भाष्य में बहुत विस्तार पूर्वक सिद्धान्त अभेद अद्वैत ज्ञान निष्ठामें किया है क्योंकि सब धर्मों का त्याग धर्मनिष्ठ से नहीं हो सक्ता ज्ञानी से ही हो सक्ता है व्याकरण की रीति से युष्मत् अस्मत् शब्दों के अर्थको और शब्द धर्म अर्थ धर्म को जो समझते हैं— वे ॥ माम् ॥ अहम् ॥ त्वाम् ॥ त्वम् ॥ इन शब्दों के अर्थको समझेंगे और जो किसी को यह हठ और निश्चय है कि इस मंत्रका अर्थ भी भेद में है तो उसको उचित है कि कहे हुये का अनुष्ठान करे हम को भगवद्भक्ति से विरोध नहीं भेदवादी को यदि ज्ञाननिष्ठा से विरोधहै उसमें भी हमको लाभहै क्योंकि अज्ञानी बना रहेगा तो सेवा करेगा ज्ञानी बन बैठेगा तो हमको क्या लाभ होगा ज्ञाननिष्ठा का उपदेश तो दूसरे के लाभार्थ है श्रद्धा करो वा मत करो ॥ अश्रद्धावान् को ज्ञान का उपदेश करना निषेध करते हैं श्री भगवान् + ६६ + टी + पांच श्लोकों का अर्थ अन्य प्रकार दूसरेढंग से लिखते हैं उस रीति से अर्थ शीघ्र समझ में आवेगा पण्डित शंकरलाल विष्णु नागर ब्राह्मण की बेटीबीबी जानकी ने समस्त गीता का अर्थ उसी रीतिसे लिखाहै उस टीका का नाम जानकी विनिर्मिता प्रसिद्ध है +६६+

१+ २। ४+ ३ १५+ ६ । ७ १०।८+ ९

इदन्तेनातपस्कायनाभक्तायकदाचन । नचाशुश्रू-

। ११ । १६।१२।१४। १३। १५

षवेवाच्यंनचमांयोऽभ्यसूयति + ६७ +

| | वि० | प० | | अ० | |
|---|---|---|---|---|---|
| १ | १ | इदम् | १ | यः | १ |
| | | | | गीता शास्त्र | + |
| ६ | १ | ते | २ | तुमने | २ |
| ४ | १ | अतपस्काय | ३ | जिसकेतपनहोउसवहिर्मुखको | ३ |
| अ | | न | ४ | नहीं | ४ |
| | | | | सुनाना चाहिये | + |
| अ | | न | ५ | न | ५ |
| ४ | १ | अभक्ताय | ६ | अभक्त को | ६ |
| | | | | जो गुरु भगवत् का | + |
| | | | | भक्त नहो उसको | + |
| | अ | कदाचन | ७ | कभी | ० |
| | | | | सुनाना न चाहिये | |
| | अ | च | ८ | और | ८ |
| | | | | जो | + |
| ४ | १ | अशुश्रूषवे | ९ | शुश्रूषाटहलनकरे अथवाजिसको उसको सुनने की इच्छा न हो | ९ |
| | | | | | |
| | अ | न | १० | नहीं | १० |
| | १ | वाच्यम् | ११ | कहना योग्य है | ११ |
| | | | | अर्थात् पूर्वोक्तों को सुनाना न चाहिये | + |
| अ | | च | १२ | और | १२ |
| १ | १ | यः | १३ | जो | १३ |

टी० जो मन्त्र के अनधिकारी कहे वही इस टीका के अनधिकारी हैं + ६७ +

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| र | १ | माम् | १४ | मुझको | १४ |
| | | | | अर्थात् मेरा | + |
| क | १ | अभ्यसूयति | १५ | निन्दा करता है | १५ |
| | | | | उसको भी | + |
| अ | | न | १६ | नहीं | १६ |
| | | | | सुनाना योग्य है यह मेरी आज्ञा है | + |

उ० तपस्वी भक्त शुश्रुषु जिज्ञासु निन्दा रहित इस गीताशास्त्र के पढ़ने सुनने के अधिकारी हैं ऐसे अधिकारियों को जो यह गीतापढ़ाते सुनाते हैं उनकी महिमा दो श्लोकों में कहते हैं + ६० +

१।२। ३। ४। ५ ४ ६ ७। ७ ८

यइमम्परमंगुह्यंमद्भक्तेष्वभिधास्यति । भक्तिंमयि

९। १० १।११+ए१२+ए१३+ १४

परांकृत्वामामेवैष्यत्यसंशयः + ६८ +

| | वि | प० | | अ० | |
|---|---|---|---|---|---|
| १ | १ | यः | १ | जो | १ |
| २ | १ | इमम् | २ | इस | २ |
| २ | १ | परमम् | ३ | परम् | ३ |
| २ | १ | गुह्यम् | ४ | गुप्त | ४ |
| ७ | ब | मद्भक्तेषु | ५ | मेरेभक्तों के विषय | ५ |
| क | १ | अभिधास्यति | ६ | धारण करावेगा | ६ |
| | | | | अर्थात् गीता का अर्थ भले-प्रकार प्रेमपूर्वक बिनालोभ जो भगवद्भक्तों को समझावेगा सो | + |
| ७ | १ | मयि | ७ | मुझमें | ७ |
| २ | १ | पराम् | ८ | परा | ८ |
| २ | १ | भक्तिम् | ९ | भक्ति | ९ |
| क | १ | कृत्वा | १० | करके | १० |
| २ | १ | माम् | ११ | मुझको | ११ |
| अ | | एव | १२ | ही | १२ |
| क | १ | एष्यति | १३ | प्राप्त होगा | १३ |
| १ | १ | असंशयः | १४ | नहीं है संशय इसमें | १४ |

टी० तात्पर्य गीता शास्त्र को जो पढ़ाते हैं वे परमभक्त महानुभाव हैं + ६८ +

७ । १ २ ० + ६ । २ + ४ । ५ ८ ।

नचतस्मान्मनुष्येषुकश्चिन्मेप्रियकृत्तमः । भविता

१३।१०। ३ + ११। १२ । १ ।

नचमेतस्मादन्यःप्रियतरोभुवि + ६९ +

| | वि | प० | १ | अ० | |
|---|---|---|---|---|---|
| ७ | १ | भुवि | १ | पृथिवी के ऊपर | १ |
| अ | | कश्चित् | २ | कोई | २ |
| ५ | १ | तस्मात् | ३ | तिससे | ३ |
| | | | | अर्थात् गीता पढ़ानेवाले से | |
| | | | | सिवाय | + |
| ६ | १ | मे | ४ | मुझको | ४ |
| १ | १ | प्रियकृत्तमः | ५ | अत्यन्त प्रसन्न करनेवाला | ५ |
| ७ | ब | मनुष्येषु | ६ | मनुष्यों में | ६ |
| अ | | नच | ७ | नहीं | ७ |
| क | १ | भविता | ८ | है | ८ |
| | | | | और | + |
| ५ | १ | तस्मात् | ९ | तिससे | ९ |
| | | | | अर्थात् गीता पढ़ानेवाले से | + |
| ६ | ० | मे | १० | मुझको | १० |
| १ | १ | अन्यः | ११ | दूसरा अन्य | ११ |
| १ | १ | प्रियतरः | १२ | प्यारा विशेष | १२ |
| अ | | नच | १३ | नहीं | १३ |

टी० तात्पर्य जो गीताका अर्थ जानते हैं उनको कुछ कर्तव्य नहीं वेदकी विधि उनपर है उनको इसलोक के पदार्थों की इच्छा भी नहीं ऐसे जो महात्मा किसी को बिना प्रयोजन दुःख विशेष सहकर गीता शास्त्रपढ़ावें सुनावें तो बेसन्देह उनसे सिवाय परमेश्वर को और कौन प्यारालगेगा ऐसे महात्मा भगवत्का नित्य अवतार कहलाते हैं + ६९ +

६ । ७।१।२.।३ । ५ + ४ ९

**अध्येष्यतेचयइमंधर्म्यंसंवादमावयोः । ज्ञानयज्ञेन**

८+१०+ ११ । १२ + १३ । १४ । १५।

**तेनाहमिष्टस्स्यामितिमेमतिः + ७० +**

| | वि | प० | | भ० | |
|---|---|---|---|---|---|
| १ | १ | यः | १ | जो | १ |
| २ | १ | इमम् | २ | इस | २ |
| २ | २ | धर्म्यम् | ३ | धर्म के मिलेहुये | ३ |
| ६ | २ | आवयोः | ४ | मेरे और तेरे | ४ |
| २ | १ | संवादम् | ५ | संवाद को | ५ |
| क्रि | १ | अध्येष्यते | ६ | पढ़ैगा | ६ |
| अ | | च | ७ | | ७ |
| ३ | १ | तेन | ८ | तिसने | ८ |
| ३ | १ | ज्ञानयज्ञेन | ९ | ज्ञान यज्ञ से | ९ |
| | | | | मुझको प्रसन्न किया अर्थात् जैसा ज्ञानयज्ञसे मैंप्रसन्नहोता हूं वैसाहीगीता पढ़नेवाले से | + + |
| १ | १ | अहम् | १० | मैं | १० |
| १ | १ | इष्टः | ११ | प्रसन्न | ११ |
| क्रि | १ | स्याम् | १२ | होता हूं | १२ |
| अ | | इति | १३ | यह | १३ |
| ६ | १ | मे | १४ | मेरी | १४ |
| १ | १ | मतिः | १५ | समझ | १५ |
| | | | | है | + |

टी० चकारःपादपूर्णार्थम् ० तात्पर्य चतुर्थअध्यायमें बारह यज्ञ प्रभुने कहे सब यज्ञोंसे ज्ञानयज्ञको बड़ाकहा क्योंकि ज्ञानमें सबकर्मकी समाप्ति है

गीता को जो पढ़ते हैं उनके कर्म भी समाप्त हो जाते हैं गीता का पढ़ना पाठ करना यही सबसे बड़ा कर्म है इसी एक शुभ कर्म से भगवत् पूजा किये गये होकर प्रसन्न हो जाते हैं + ७० +

उ०+जो गीता शास्त्र को श्रवण करते हैं उनकी स्तुति श्री महाराज अपने मुख से करते हैं +

५ + ४ + ३। ६ + ७।१।२। ८। ९।१०।

**श्रद्धावाननसूयश्च शृणुयादपि यो नरः। सोऽपि मुक्तः**

१२ ० + १३ + १४ ११ ।

**शुभांल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम् + ७१ +**

| | वि | प० | | अ० | |
|---|---|---|---|---|---|
| १ | १ | यः | १ | जो | १ |
| १ | १ | नरः | २ | पुरुष | २ |
| अ | | च | ३ | | ३ |
| १ | १ | अनसूयः | ४ | निन्दा रहित | ४ |
| १ | १ | श्रद्धावान् | ५ | श्रद्धासहित | ५ |
| क | १ | शृणुयात् | ६ | सुने | ६ |
| अ | | अपि | ७ | भी | ७ |
| १ | १ | सः | ८ | सो | ८ |
| अ | | अपि | ९ | भी | ९ |
| | | | | सब झगड़ों से | + |
| १ | १ | मुक्तः | १० | छूट | १० |
| ६ | ब | पुण्यकर्मणाम् | ११ | धर्मात्माओं के | ११ |
| २ | ब | शुभान् | १२ | शुभलोकों को | १२ |
| २ | ब | लोकान् | १३ | | १३ |
| क | १ | प्राप्नुयात् | १४ | प्राप्त होगा | १४ |

टी० चकारः पदपूर्णार्थम् ३

+ ७१ +

**कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा। कच्चिदज्ञानसंमोहः प्रणष्टस्ते धनंजय + ७२ +**

पार्थ १ त्वया २ एकाग्रेण ३ चेतसा ४ कच्चित् ५ एतत् ६ श्रुतं ७ धनंजय ८ ते ६ अज्ञानसंमोहः १० कच्चित् ११ प्रणष्टः १२ + ७२ + टी० + परम करुणाको खानि श्री भगवान् अर्जुन से इस श्लोकमें यह बूझते हैं कि हे अर्जुन इस उपदेश से तुम्हारा अज्ञान नाश हुआ वा नहीं जो अज्ञाननाश न हुआहो तो फिर दूसरे प्रकारसे उपदेश करूं यह अपनी कृपा और आचार्यों का धर्म दिखातेहैं जब तक शिष्यका अज्ञान दूर न हो तब तक गुरु को चाहिये कि फिर बारम्बार दूसरे प्रकार से उपदेश करें यह आचार्यों का धर्म है + अ० + हे अर्जुन १ तुमने २ एकाग्र ३ चित्तकरके ४ कुछ ५ यह ६ कि जो मैंने उपदेश किया + सुना ७ अर्थात् तुम्हारी समझमें आया वा नहीं + आवृत्तिरस तुम्हारा ६ तत्त्व ज्ञान का विपर्यय या अज्ञान संमोह १० कुछ ११ नाश हुआ १२ वा नहीं + आवृत्ति रस कृदुपदेशात् शारीरक भाष्य का यह सूत्रहै तात्पर्य इसकायहकि जबतक अज्ञान भले प्रकार नाश नहो तबतकबारम्बार वेदान्त शास्त्र का श्रवण करे श्रवण करे से अज्ञान मनन से संशय निदिध्यासन से विपर्यय का नाश होता है + ७२ +

**अर्जुनउवाच + नष्टोमोहःस्मृतिर्लब्धात्वत्प्रसादान्मयाऽच्युत। स्थितोऽस्मिगतसन्देहःकरिष्येवचनंतव ७३ +**

अच्युत १ त्वत्प्रसादात् २ मोहः ३ नष्टः ४ मया ५ स्मृतिः ६ लब्धा ७ गतसन्देहः ८ स्थितः ६ अस्मि १० तव ११ वचनं १२ करिष्ये १३ + ७३ + टी० + अज्ञान संशय विपर्यय रहित कृतार्थ हुआ अर्जुन श्री भगवान् से कहता है कि आप की कृपा से मेरा अज्ञान और संशय विपर्यय असंभावना विपरीत भावना प्रमाण गत प्रमेय गत सब नाश हुये और आप की कृपा से मैं कृत कृत्य हुआ अब मुझको कुछ करनेकेयोग्य नहीं मैं अक्रिय असंग हूं + अ० + हे अविनाशी १ आपकी कृपा से २ मोह ३ मेरा + नाश ४ हुआ और + मुझको ५ अपने स्वरूप की + स्मृति ६ प्राप्तहुई ७ अब + सन्देह रहित ८ स्थित ६ हूं मैं १० आप के ११ वचन को १२ करूंगा १३ + टी० + चौथेअध्याय में अर्जुन ने कहा था कि आप का जन्म तो अब हुआ है और इस जगह अविनाशी कहा यह ज्ञान का प्रताप है १ मूलाज्ञान समस्त संसार की जड़ २ स्मरण याद ६ कमसमझ यह समझते हैं कि अर्जुन ने यह कहा कि आप के वचन को करूंगा अर्थात् युद्धकरूंगा और विद्वान् यह समझते

हैं कि अर्जुन ने यह कहा कि आप का वचन करूंगा अर्थात् जो आपने कहा उसी प्रकार अनुष्ठान करूंगा अर्थात् जो आपने कहा मुझको कुछ कर्तव्य नहीं यह युद्धादि ज्ञानियों की दृष्टि में है इस आप के उपदेश का अनुष्ठान करूंगा जो अर्जुनको कुछ युद्धादि कर्तव्यरहा तो कृतकृत्य का अर्थ क्या किया जावेगा + ७३ +

**संजयउवाच । इत्यहंवासुदेवस्यपार्थस्यचमहात्मनः । संवादमिममश्रौषमद्भुतंरोमहर्षणम् + ७४ +**

इति १ वासुदेवस्य २ महात्मनः ३ पार्थस्य ४ च ५ इमं ६ अद्भुतं ७ रोमहर्षणं ८ संवादं ९ अहं १० अश्रौषं ११ + ७४ + उ० + संजय धृतराष्ट्र से कहता है कि +अ०+ इस प्रकार १ श्रीकृष्णचन्द्र २ महात्मा ३ और अर्जुन को ४ । ५ यह ६ अद्भुत ७ रोमका हर्ष करनेवाला ८ सम्वाद ९ मैंने १० सुना ११ + ७४ +

**व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्यमहंपरम् । योगंयोगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतःस्वयम् + ७५ +**

एतत् १ परं २ योगं ३ गुह्यं ४ स्वयं ५ साक्षात् ६ कथयतः ७ योगेश्वरात् ८ कृष्णात् ९ व्यासप्रसादात् १० श्रुतवान् ११ अहम् १२ + ७५ + अ० + यह १ परं २ योग ३ गुप्त ४ आप ५ साक्षात् ६ कहते हुये ७ योगेश्वर ८ श्रीकृष्णचन्द्र महाराज से ९ व्यास जीके प्रसाद से १० सुना ११ मैंने १२ तात्पर्य यह ब्रह्म विद्या परं योग है और गुप्त है महात्मा इसको गुप्त रखते हैं साधन चतुष्टय सम्पन्नसे कहते हैं पहले यह विद्या ब्रह्म लोक में ही थी मुनीश्वरों ने तप करके इस लोक में इस विद्या का प्रचार कियाहै ब्रह्म विद्या ने आकाशमें आन कर मुनीश्वरोंसे यह कहा कि मर्त्य लोक में तब आऊंगी मैं कि जब तुम मुझको पुत्री की सदृश समझ कर अधिकारीको दो मुनीश्वरोंने यह बाक्य अंगीकार किया तब ब्रह्म विद्या इस लोक में आई सिवाय इस द्वीपके और किसी द्वीप में नहीं और सिवाय ब्रह्म लोकके और किसीलोकमें नहीं जो इसविद्या को लालच या आशा से अनधिकारी को पढ़ाते सुनाते हैं वे अधम हैं क्योंकि कंगालभी अपनी पुत्री अनधिकारीको नहीं देता जो पुरुष लालच से सीखतेहैं इस विद्या को सो विद्या भोग के लिये है मुक्ति के लिये नहीं जैसे वर्णसङ्कर पुत्र इसी लोक की शोभा है + ७५ +

**राजन्संस्मृत्यसंस्मृत्यसंवादमिममद्भुतम् । केशवार्जुनयोःपुण्यंहृष्यामिचमुहुर्मुहुः + ७६ +**

राजन् १ इदं २ केशवार्जुनयोः ३ पुण्यं ४ अद्भुतं ५ संवादं ६ संस्मृत्य ७ च ८ संस्मृत्य ९ मुहुर्मुहुः १० हृष्यामि ११ + ७६ + अ० + हे राजन् १ इस २ केशव अर्जुन के ३ पुण्यरूप ४ अद्भुत ५ सम्वाद को ६ स्मरण करके ७ फिर ८ स्मरण करके ९ बारम्बार १० आनन्द होता हूं मैं ११ तात्पर्य हे राजन् श्रीकृष्णचन्द्र अर्जुन का यह सम्वाद पुण्यरूप है इसके श्रवण मात्र से पुण्य होताहै इस वास्ते मुझ को बारम्बार स्मरण होता है स्मरण करने से परमानन्द होता है + ७६ +

**तच्चसंस्मृत्यसंस्मृत्यरूपमत्यद्भुतंहरेः । विस्मयोमेमहान्राजन्हृष्यामिचपुनःपुनः + ७७ +**

तत् १ हरेः २ अति अद्भुतं ३ रूपं ४ संस्मृत्य ५ च ६ संस्मृत्य ७ मे ८ महान् ९ विस्मयः १० च ११ राजन् १२ पुनः १३ पुनः १४ हृष्यामि १५ + ७७ + अ० + तिस १ श्रीमहाराजके २ अतिअद्भुत ३ रूपको ४ अर्थात् विश्वरूप को + स्मरण करके ५ फिर ६ स्मरण करके ७ मुझको ८ बड़ा ९ आश्चर्य १० होता है + और ११ हेराजन् १२ क्षणक्षण प्रति १३ । १४ में हर्षित होताहूं १५ तात्पर्य हे राजन् वह अद्भुत विश्वरूप श्रीमहाराज का मुझ को बारम्बार याद आता है और उसका जब मैं ध्यान करता हूं मेरे रोम खड़े होजातेहैं मुझको बड़ा आनन्द होताहै वह रूप बड़ा आश्चर्यित है + ७७ +

**यत्रयोगेश्वरःकृष्णोयत्रपार्थोधनुर्धरः । तत्रश्रीर्विजयोभूतिर्ध्रुवानीतिर्मतिर्मम + ७८ +**

यत्र १ योगेश्वरः २ कृष्णः ३ यत्र ४ धनुर्धरः ५ पार्थः ६ तत्र ७ श्रीः ८ विजयः ९ भूतिः १० नीतिः ११ ध्रुवा १२ मम १३ मतिः १४ + ७८ + अ० + जिस सेना में ४ धनुषधारी ५ अर्जुन ६ हैं + उसी सेना में ७ लक्ष्मी ८ विजय ९ ऐश्वर्य १० न्याय ११है यह + मेरी १३ निश्चय १२ मति १४ है + तात्पर्य संजय धृतराष्ट्रसे कहताहै कि हे राजन् तुम्हारे पुत्रों को जय न होगी अपनी विजय को आशा छोड़ो जिस तरफ़ श्री कृष्णचन्द्र महाराज हैं उनकी विजय होगी जिनपर कृपादृष्टि श्रीभगवान्

को है वे सदा इस लोक और पर लोक में परमानन्द भोगते हैं यह सिद्धान्त है ॥ ७८ ॥

इति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायांयोग शास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे मोक्षसंन्यासयोगो नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥



## समस्तगीता का सार समाप्ति का मंगलाचरण ॥

परमानन्द परमात्मा जीव आत्मा से अभिन्न है परमानन्द की इच्छा वाला सदा परमानन्द की उपासना कियाकरे परमानन्दमें सबका सम्मत है ब्रह्मवादी ज्ञानी उपासक कर्मी विषयी बालक मूर्ख पशु सब मत वाले पंथाई सम्प्रदाई दिन रात्रि आनन्द के लिये यत्न करते हैं सर्व कर्म बुरे भले ईश्वर के भजन तक सब की बोली से साधन हैं और आनन्द फल हैं सब यह कहतेहैं कि इस बातमें बड़ा आनन्दहै कि जो हमकहते हैं करते हैं इस हेतु से आनन्द सबसे बड़ा और परात्पर पदार्थहै सब को प्रिय है किसी का आनन्द से बैर नहीं बात भी वही सच्ची है कि जिस को विद्वान् श्रुति युक्ति सहित कहें और अनुभव समझमेंआवे बहुत लोग तो ऐसा कहते हैं कि वह बात वेद शास्त्र में तो लिखी है परंतु समझ में नहीं आती इस वास्ते उसमें निश्चय नहीं होता सबका अनुष्ठान करने में मन कच्चा रहता है और बहुत लोग ऐसा कहते हैं कि वह बात समझ में तो आवे है परंतु वेद विरुद्ध है इस वास्ते वह बात अच्छी नहीं समझी जाती इसजगह वह बात लिखी जातीहै कि जो वेदोक्त भी हो और अनुभव समझ में भी आवे जिस आनन्द के वास्ते सब यत्न करते हैं वह आनन्द अपना आपा आत्मा ही है और सदा प्राप्त है अज्ञान से कंठ भूषणवत् उस को अप्राप्त अपनेसे जुदा मान कर उस की प्राप्तिके लिये नाना प्रकार के लौकिक वैदिक यत्न करते हैं जो वह अज्ञान जाता रहे तो आनन्द सदा प्राप्त है यह बात विद्वान् वेदोक्त कहते हैं परंतु यह बात किसी किसी की समझ में रजोगुण तमोगुण प्रधान होने से नहीं आती उस रजोगुण तमोगुण दूर होने के लिये उनका कारण अज्ञान का स्वरूप सुनो अज्ञान सत्व रज तम तीन गुणों वाला है संसार में स्थूल सूक्ष्म जितने पदार्थ हैं सब इन तीनगुणों का कार्य हैं परमानन्द इन तीन गुणों से परेहै देवता मनुष्य पशुआदि इन तीन गुणों में मोहित होकर तमोगुणी रजोगुणी सतोगुणीआनन्द के

कि जिस सुख का लक्षण अठारहवें अध्याय में ३७ । ३८ । ३९ के श्लोक में निरूपण हुआ है बड़ा समझते हैं परमानन्द को नहीं जानते परमानन्द को ज्ञानी मुक्त महापुरुष जानतेहैं रजोगुणी आनन्द दोप्रकार का है अच्छा बुरा सावयव भगवत् मूर्ति वैकुंठ स्वर्गादि में जो आनन्द मानते हैं वह आनन्द अच्छा है लौकिक पदार्थों में जो आनन्द मानते हैं सो बुरा है कोई कोई मत वाले रजोगुणी आनन्द को ही परात्पर मानते हैं और कोई मत वाले सतोगुणी आनन्द को परे से परे मानतेहैं रजोगुणी आनन्द को क्षणिक तुच्छ अल्प समझते हैं यह कहते हैं कि तमोगुणी आनन्द से परलोकजन्य रजोगुणी आनन्द अच्छाहै इसीवास्ते उसको अच्छा कहते हैं इस बात में लौकिक वैदिक दोनों पुरुषों का सम्मतहै और रजोगुणी आनन्दकी अवधि को जो परेसेपरे मानतेहैं इस बातमें केवल वैदिक मार्गवालोंका सम्मतहै यौक्तिक लोगोंका सम्मतनहीं कभी विशेषता आनन्द के दृष्टान्त से समझो तमोगुणी आनन्द रजोगुणी सतोगुणी परमानन्द जैसे तीन घटमें जलहै एकमेंमैला दूसरेमें सामान्य करके दीखताहै तीसरेमें भलेप्रकार दीखताहै ऐसेही तमोगुणमें सुखप्रतीत नहीं होता रजोगुणमें सामान्यकरके प्रतीत होताहै सतोगुणमें भलेप्रकार प्रतीत होता है तीनों गुणमें दर्पण मुखवत् आनन्द की छाया प्रतीत होती है जिस की वह छाया है वास्तव परमानन्द वही है सो नित्य है जितना जल निर्मल ठहरा हुआ होगा उतनाहीमुख अच्छा दीखेगा इसी प्रकार जितनी अन्तःकरणकी वृत्ति निर्मल और स्थित होगी उतना ही सुख सिवाय प्रतीत होगा आनन्द की प्राप्ति में अन्तःकरणकी निर्मलता और स्थिति कारण है कोई पदार्थ सावयव इस लोक परलोक का कारण नहीं वृत्ति पदार्थ के संबन्ध से भी स्थित होती और विचारज्ञान से भी होती है परन्तु पदार्थ के सम्बन्ध से जो होतीहै स्थित वह क्षण क्षण में नाशहोतीरहती है इस हेतुसे पदार्थ जन्यआनन्द क्षणिक है एक रस नहीं थोड़ी देर रहता है विचार ज्ञान योग से जो वृत्ति स्थित होती है उसमें आनन्द ठहरता है परमानन्द के ज्ञानसे जब मूल अज्ञानका नाश होजावे तब ये तीनों वृत्तिनाश हों फिर केवल परमानन्दकीप्राप्ति सदाको होजाती है इसी परमानन्द के वास्ते सब इसी लोक परलोक के झगड़ेहैं समस्त वेदकी विधि निषेध को बिचार देखो सबका तातपर्य दुःखकी निवृत्ति और परमानन्द की प्राप्ति में है शरीर इन्द्रिय मनसे बुरे भले जितने कर्म यत्न और विना यत्नके होतेहैं सबमें

दुःखहै सुखहै किसी में दुःख बहुत सुख थोड़ा किसीमें सुख बहुत दुःख थोड़ा जिस कर्ममें ४९ भाग दुःखहै और ५१ भाग सुखहै वेदमें उसकी भी स्तुति है जिस कर्ममें सुखबहुत है उसके आदि में दुःख तनक है और पीछे सुख बहुत है और जिसकर्म में ५१ भाग दुःख है और ४९ भाग सुख है उसकी निन्दा है जिस कर्म में सुखकम है उसके आदि में ही सुख प्रतीतहोता है अन्त में दुःख होताहै यह व्यवस्था यहां तकहै कि ९९ वा ९८ वा ९७ भाग किसी किसी कर्म में सुख है १ वा २ वा ३भाग दुःख है और किसी किसी कर्ममें ९९ व ९८ व ९७ भाग दुःखहै और १ वा २ वा ३ भागसुख है इसी प्रकार ६० । ४० । ७० । ३० । ८० । २० ।९० १० इत्यादि भाग से कल्पना करलेनी परमानन्द पूर्ण सुख एक रस है कर्म करने से वह नहीं प्राप्त होता क्रिया के अभाव में प्राप्त होता है जिस कर्ममें ५१ भागदुःखहै उसकी वेदमें किसी जगह स्तुतिहोगी और ५२ भागकी अपेक्षासे किसी जगह उसकी निन्दाहोगी इसीप्रकार परमानन्दकी अपेक्षासे सब कर्मोंकी निंदाहै जो परमानन्द प्राप्तहै तो सतोगुणी सुख उस के सामने तुच्छहै और सतोगुणी सुख के सामने रजोगुणी सुख तुच्छ है रजोगुणी सुख के सामने तमोगुणी सुखतुच्छ है मूर्ख वेदोंके तात्पर्यको न समझ कर सिद्धान्त की श्रुतियें का प्रमाण दे देकर मूर्तिमान् परमेश्वर श्री कृष्णचन्द्रादि और पाषाणादि मूर्तियों की और तीर्थव्रतों की निन्दाकरने लगते हैं यह नहीं समझते कि यह उपदेश कैसेपुरुषों के लिये है आप तो मल मूत्रके पात्रोंमें सक्त होकर नीचों के सामनेवन्दर की नाईं नाचते हैं और पुत्रस्त्री मित्रादि के साथ ममता करके उन के लिये दिन रात्रि तेली के बैल की नाईं घूमते हैं वहां यह नहीं समझते कि इनअनित्य दुःखदायी दुर्गन्ध रूप कुपात्रों के सम्बन्ध से मुझको क्या प्राप्तहै बहुत जीव तो ज्ञाननिष्ठा की श्रुति स्मृतियें का अर्थ सीखसीख कर्मों की निन्दा करने लगतेहैं और बहुत जीव ज्ञान निष्ठाके महत्वको न जान कर अपनी मूर्खता से ज्ञान निष्ठा और ज्ञानियों से बैर बांधकर दोनोंकी निन्दा करने लगते हैं यह सबनिन्दक पापात्मा वृथा पाप और दुःख के भागी होतेहैं उन से अनजान अच्छे हैं सब मत वाले आपस में लड़ते झगड़ते हैं जैसे होसके दूसरे की निंदा न करे वेदान्त और ज्ञान निष्ठा और भक्ति और वेद विधि का + जानने वाला परमानन्द देवका उपासक नित्य निर्विकार परमानन्द को भोगता है परमानन्ददेव के उपासकों से किसी से बैर नहीं क्योंकि सब को आनन्दका उपासक

जानता है वास्तव सब का इष्टदेव परमानन्द देव है कर्म भक्ति ज्ञान ईश्वरादि ये उस के साधन हैं आनन्द का उपासक सब कर्मों में अपने इष्टदेव परमानन्द कोही देखता है कोई कर्म ऐसा नहीं कि जिसमें कुछ आनन्द नहो और जो कोई कर्म करता है वह यही समझकर करता है कि इसमें आनन्द मिलेगा यद्यपि कर्ममें यथार्थ परमानन्द की प्राप्तिनहीं परन्तु जैसे मित्र को सदृश अन्य को देख कर वा उसके एक अंगके सदृश देखकर वा उसकी छाया देखकर वा उसकी तसवीर को देख कर वा उस के वस्त्रादि को देख सुनकर उस वास्तव मित्रका स्मरण होताहै ऐसे ही सब काम में परमानन्द देवका उपासक अपने इष्टदेव परमानन्द कोही स्मरण ध्यान करता है सब विषयी मतवालों से उसका सम्मत है जो कोई किसी मतवाला उससे बूझे कि तुम किसके उपासकहो तुम्हाराक्या मत है परमानन्द का उपासक यह उत्तर देता है जिसके तुम उपासक हो उसीका मैं हूं जो तुम्हारा मत इष्टदेव है वही मेरामत इष्टदेव है फिर वे लोग अपने मत इष्टदेव राम कृष्णादि को बताते हैं तब परमा-नन्द का उपासक कहता है कि इष्ट फल होता है साधन इष्ट नहीं होता जिस परमानन्द के लिये तुमभक्ति करते हो वही परब्रह्म परमात्मा प्रभु तुम्हारा परमानन्द इष्टदेव सम्पूर्ण फलों का दाता पीछे फल में सम्मत होजावेगा तुम लोग मूर्ख होकर परमानन्द को फल और ब्रह्म परात्पर न कहो इस प्रकार बालक और विषयी मूर्खों के साथ भी उसका सम्मतहै क्योंकि परमानन्द को सब चाहते हैं परमानन्द सब का उपास्य है इस जगह परमानन्द अपने स्वामी इष्टदेव का निरूपण और माहात्म्य संक्षेप करके कहा है आनन्दामृतवर्षिणी में और इस परमानन्द प्रकाशिका टीका मेंभी किसी किसी जगह परमानन्द की प्राप्ति का साधन और कहींकहीं साक्षात् परमानन्द का स्वरूप माहात्म्य निरूपण कियाहै आनन्दगिरिने पढ़ने सुनने वालों को परमानन्दकी प्राप्ति हो परमानन्दाय नमोनमः॥

इति श्री स्वामी आनन्दगिरि विरचितायां श्रीभगवद्गीता भाषाटीकायांअष्टादशोऽध्यायः॥ १८॥

श्लोक **पदच्छेदःपदार्थोक्तिर्विग्रहोवाक्ययोजना**
**आक्षेपस्यसमाधानंव्याख्यानम्पंचलक्षणम्॥**

इसपुस्तकको पं०रामविहारी, पं०बन्दीदीन, पं०बदरीनाथजीनेशुद्धकियाहै॥
मुंशीनवलकिशोर प्रेसलखनऊ में छपा जनवरी सन् १८८० ई० इति॥

द्वे रूपे वासुदेवस्य चलं चाचलमेव च
चलं संन्यासिनो रूपमचलं प्रतिमा
दिकम् ॥ देवताप्रतिमां दृष्ट्वा या
ति दृष्ट्वा च दंडिनं प्रणिपातमकु
र्वाणो रौरवं नरकं व्रजेत् ॥